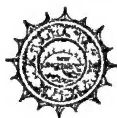


एस
आर
चिचिहार
किरिङ
किरिङ
चहार
जेहोल
मुकडन
सुइयुआङ
पेपिङ्ग
कोरिया
होपेई
चिनाङ
काल्फेङ
होनाङ
शङ्घाई
जापान
हूपे
चाङ्शा
हुनाङ
फूचउ
फूकेङ
कुनमिङ्ग
काङ्गची
फ़ारमोसा
हाङ्काङ्ग
चीन
हाइनाङ
दक्खिनी चीन सागर
फ़िलिपीन

चीन और च्याङ



श्री कमलापति त्रिपाठी

२०००

प्रकाशक—

सरस्वती प्रकाशन मन्दिर,

मुद्रक—

शालिग्राम वर्मा, एम ए बी एस-सी

सरस्वती प्रेस,

जार्जटाउन, इलाहाबाद

पहला संस्करण

पौष, २०००

मूल्य ५)

प्रस्तावना

आधुनिक रूस जिस प्रकार लेनिन और स्टालिन से तथा नव भारत जिस प्रकार महात्मा गान्धी और पंडित नेहरू द्वारा अनुप्राणित, प्रभावित और व्यवस्थापित हुए हैं उसी प्रकार अर्वाचीन चीन और उसकी राष्ट्रीय जागृति चीनी प्रजातन्त्र के जनक डाक्टर सुन्यातसेन और उनके पद चिह्नों पर चलने वाले उनके उत्तराधिकारी जनरलेसिमो च्याङ्कईशेक से हुई है।

जनरलेसिमो सारे संसार में महान राजनीतिज्ञ और योद्धा प्रसिद्ध हैं, परन्तु जैसे ब्रिटिश मन्त्री मिस्टर विन्स्टन चर्चिल ने एक बार कहा था वह शायद पूर्वी भूखंड-एशिया—के ऐसे सर्वोत्कृष्ट सेना नायक और राजनीतिज्ञ हैं जिनकी टक्कर का न केवल इस समय बल्कि भविष्य में भी कई पीढ़ियों तक दूसरा न मिल सकेगा। परन्तु चीन वासियों के लिए तो वे इस सबसे भी बढ़ कर कुछ अधिक हैं। चीनियों ने जनरलेसिमो में न केवल एक महान राजनीतिज्ञ और सैनिक के दर्शन किये हैं बल्कि उनके विचार से वे बड़े विद्वान, पंडित, ओजस्वी व्याख्याता और स्फूर्तिमयी लेखक हैं। चीनियों के लिए च्याङ्कईशेक एक महान शिक्षक हैं जिन्होंने प्राचीन चीन के प्रतिनिधि होते हुए भी अपनी एकनिष्ठा और अध्यवसाय से भविष्य के नव चीन का निर्माण किया है। जनरलेसिमो के राजनीतिक कौशल की अपेक्षा उनके लेखों और उनकी वक्तृताओं ने चीनी जन वर्ग को अधिक प्रभावित और प्रोत्साहित किया है। चीनी राष्ट्र पर जनरलेसिमो की सैनिक शक्ति की अपेक्षा उनके पण्डिताऊ सद्गुणों का अधिक प्रभाव पड़ा है। उनके 'कर्मयोग विधान' से आज सारा सभ्य संसार परिचित है। *चीन का भाग्योदय* (चाइनाज़ डेस्टिनी) नामक उनकी पुस्तक आज समस्त चीनी जनता को सजीवन प्रदान कर रही है।

हिन्द और चीन की ऐतिहासिक धाराओं में बहुत कुछ समानता है। जब कभी भारतवर्ष का गगन मंडल तिमिराच्छन्न हो जाता है तभी भारतीय जनता के उत्कर्ष और उसमें नव जागृति और नवचेतना लाने के लिए एक महान विभूति का आविर्भाव होता है। चीन के इतिहास में भी यही होता आया है। जब कभी चीन में अव्यवस्था हुई है तभी चीनी राष्ट्र को व्यवस्थित करने तथा उसके उत्कर्ष और उत्थान का मार्ग प्रदर्शित करने के लिए एक महान आत्मा का जन्म हुआ है। दोनों देशों की परिस्थितियों में अन्तर

केवल इतना ही कहा है कि जहाँ भारतवर्ष की भावना की प्रवृत्ति अधिक ज्ञान की ओर या धार्मिक और आध्यात्मिक रही है वहाँ चीनी जनता का शान्ति, न्याय और नीति, कुशल शासन की व्यवस्था, सुनीति और समन्वयवाद की ओर अधिक झुकाव रहा है। वर्तमान समय में जनरलिसिमो ही वह अद्वितीय महापुरुष हैं जिन्होंने दोनों राष्ट्र भारत और चीन को एक सूत्र में पुनः बाँधा और आध्यात्मिक सम्बन्धों में बाँधा है जिसका सुन्दर और विस्तृत वर्णन दोनों के प्राचीन इतिहास में भरा हुआ पड़ा है।

सन् १९४२ में जनरलिसिमो और मदाम च्याङ्-काई-शेक का भारत में शुभागमन हुआ था। यह यात्रा भारत और चीन जैसे दो प्राचीन देशों के पारस्परिक सम्बन्ध में युगान्तर उपस्थित करने वाली साबित हुई है। इन दोनों महान देशों के युगानुयुग से चले आने वाले सांस्कृतिक और धार्मिक सम्बन्ध और सतत पारस्परिक आदान प्रदान का उदाहरण संसार के और किन्हीं भी दो देशों में नहीं मिलता। आज यह स्पष्ट प्रतीत हो रहा है कि पाशविक क्रूरता के इस भीषण संग्राम में सारी मानवीय सभ्यता पतनोन्मुख हो विनाश के गर्त में गिरने जा रही है क्या ही अच्छा हो यदि भारत और चीन दोनों मिलकर संसार में शान्ति और न्याय, समता और सामंजस्य के पुनीकरण और प्रचार का गौरवपूर्ण दायित्व फिर उसी प्रकार अपने ऊपर लें जैसे उन्होंने प्राचीन काल में लिया था और मानवता के विकास में दोनों विश्व के रंगमंच पर सम्मिलित अभिनय करने का श्रेय प्राप्त करें।

परन्तु यह सब किया कैसे जाय? इस कार्य के सम्पादन के लिए सबसे पहली और सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता है इन दोनों प्राचीन राष्ट्रों में एक दूसरे के सम्बन्ध की जानकारी बढ़ाने और एक दूसरे के प्रति उत्तरोत्तर सहानुभूति उत्पन्न कराने की, और मुझे विश्वास है कि सरस्वती प्रकाशन मन्दिर द्वारा प्रकाशित श्री कमलापति त्रिपाठी की मशहूर पुस्तक "चीन और भारत" इसमें बहुत कुछ उपयोगी साबित होगी। इसलिए मैं बड़े हर्ष के साथ इसके लेखक और प्रकाशक को बधाई देता हूँ और उनके इस सत्साहस की हृदय से सराहना करता हुआ अपने भारतीय बन्धु और मित्रों का ध्यान इस सामयिक और उपादेय पुस्तक की ओर आकर्षित कराना चाहता हूँ।

विश्व भारती, चीना भवन,
शान्ति निकेतन
२१ फरवरी, १९४४

ताइयुङ्शान

प्रकाशक की ओर से

'नया संसार' माला का यह पहला पुष्प पाठकों के सामने है। जिस समय इस पुस्तक के प्रकाशित करने का भार मैंने अपने ऊपर लिया था उस समय यह कल्पना भी नहीं की थी कि इसके प्रकाशन से श्रीगणेश होगा इस नयी पुस्तकमाला का जिसका उद्देश्य है हिंदी पाठकों के समक्ष भविष्य के उस 'नये संसार' की रूप रेखा उपस्थित करना जो इस २०वीं अर्द्धशती के अन्त में प्रसरित हो रहा है।

संसार के इतिहास में जहाँ प्राचीन साम्राज्यों की संस्थापना में व्यैयक्तिक वीरता, क्षमता, कौशल और बुद्धिमत्ता का बोलबाला रहा, मध्य युग में जहाँ यही सब गुण सूर-सामन्तों के एकाधिकार रहे—वहीं बारूद के आविष्कार, नवज्ञान और नव-विधान तथा औद्योगिक क्रान्ति ने युद्ध-प्रणाली और शस्त्रास्त्रों में ऐसा आश्चर्यजनक परिवर्तन कर दिया कि अब दिग्विजय और साम्राज्य स्थापना राजनीतिज्ञों की कृपा से एक अद्भुत कला में विकसित हो गयी। इस कला में प्रदर्शन और कूट नीति का कुछ ऐसा तारतम्य १८वीं १९वीं शतियों में चला कि इसके प्रवर्त्तक और महा पंडित युरोपीय राष्ट्र जो अब इसे लोकव्यापी रूप देने की चेष्टा कर रहे थे, नये औद्योगिक पुनर्जीवन के कारण साम्राज्य-स्थापन-कला को एक और नयी मंजिल तक पहुंचाने में समर्थ हुए। यह सत्य है कि प्राचीन दिग्विजय और साम्राज्य स्थापना का मुख्य आधार था युद्ध तथा उस समय की राज्य व्यवस्था और शासन तन्त्र बहुत कुछ अवलम्बित थे आतंक और नियन्त्रण पर, परन्तु १९वीं शती के औपनिवेशिक साम्राज्य-स्थापन ने सिर्फ़ युद्ध प्रणाली को ही एक नया रूप नहीं दिया बल्कि शासनतन्त्र का एक नया आधार या अस्त्र भी खोज निकाला। इस नये साम्राज्य-संस्थापन-उपादान को 'नवयुग

औद्योगिक उन्नति से विमुख जातियों का 'आर्थिक शोषण' नाम दिया गया है अर्थात् यह 'आर्थिक शोषण' साम्राज्य स्थापना का प्रमुख साधन बन गया है और फिर ब्रिटिश जाति तो सारे सभ्य संसार में इस साम्राज्य स्थापन-नीति में सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त कर चुकी है।

पिछले महायुद्ध ने युरोपीय संस्कृति की पोल खोल दी थी, परन्तु उसका कोई स्थायी प्रभाव साम्राज्यवादी राष्ट्रों पर नहीं पड़ा और उन्होंने उस समय की बला टल जाने के बाद युद्ध के बीच किये गये वायदों और किये जाने वाले सुधारों को भुला सा दिया या ठंडी तिजोरी में बन्द कर रखा। इसी नीति के परिणामस्वरूप आज संसार को यह दूसरा महायुद्ध देखना पड़ा और इस समय भी जो वायदे किये जा रहे हैं तथा नव निर्माण की जो मोहिनी योजनायें संसार के सामने उपस्थित की जा रही हैं, कौन जाने महायुद्ध के बाद उनमें से कितनी वास्तविक रूप ग्रहण कर सकें।

इस दिग्विजय और साम्राज्य-स्थापना के इतिहास में भारतवर्ष ने आज से दो हजार वर्ष पूर्व सम्राट् अशोक के समय में और उसके बाद भी जिस 'सांस्कृतिक दिग्विजय' का युग स्थापित किया था उसका वैसा दूसरा उदाहरण अभी तक संसार के इतिहास में नहीं मिलता। इस बीच में अनेकों संकटापन्न परिस्थितियों में से गुजरते हुए भी भारतवर्ष अपनी आत्मा को नहीं भुला सका है। सैकड़ों वर्षों से दलित और पतित अवस्था में रहने पर भी भारतवर्ष को अपने गौरवपूर्ण अतीत की स्मृति हरी बनी हुई है। उसे विश्वास है कि भारतवर्ष को अभी अपनी नव-युग प्रवर्तक योजना आने वाले संसार के समीप रखनी है। भारतवर्ष अपनी इस पतनोन्मुख विपत्ति में भी अपने इस दायित्वपूर्ण भावी कार्यक्रम को नहीं भूल सका है और यही भाव हमारे राष्ट्रीय जीवन में अब भी संजीवन डाले हुए है।

संसार के विभिन्न देशों में इस नये जागरण ने क्या रूप धारण किया है तथा यह किन किन परिस्थितियों में से गुजरता हुआ 'भावी नव संसार' के जन्म का शंखनाद है—यही कुछ इस माला के प्रकाशन का उद्देश्य है।

पूर्वाभास

प्रस्तुत ग्रंथ जेल में लिखा गया है। चीन का आधुनिक इतिहास और उस देश के एक मात्र नेता तथा उसके प्राण च्याङ्ग काई शक का उस इतिहास निर्माण में भाग इसका विषय है।

बहुधा राष्ट्रों के पुनरुद्धार में व्यक्तिविशेष को प्रमुख अभिनेता होने का सौभाग्य प्राप्त हो जाता है। यह सच है कि इतिहास बहुत सी प्राकृतिक, सामाजिक और राजनैतिक घटनाओं का प्रवाह हुआ करता है। समय समय पर परिस्थितियाँ बदला करती हैं, नयी आवश्यकताएँ उत्पन्न हुआ करती हैं और समाज उन परिस्थितियों और आवश्यकताओं के अनुकूल अपने को परिवर्तित और विकसित करने को बाध्य होता है। यह संघर्ष ही मानव-समाज के इतिहास का आधार है।

इस सत्य सिद्धान्त के अनुसार किसी देश अथवा राष्ट्र का कहानी की ओर देखना पड़ता है। अक्सर हम किसी कालविशेष से किसी महान राष्ट्र को आन्दोलित हुआ पाते हैं। हम देखते हैं कि उस देश का कण कण सक्रिय और सचेष्ट हो उठा है। यह क्रियाशीलता उस संघर्ष का ही नाम है जो स्वभावत विकास की धारा में पड़े मानव समाज की परिवर्तित परिस्थिति के फल स्वरूप उत्पन्न होता है।

पर जहाँ यह सत्य है वहीं हम यह भी पाते हैं कि उस उथल-पुथल का सजीव रूप व्यक्तिविशेषों में मूर्तमान दिखायी देता है। इस क्रांति धारा का नेतृत्व करने का श्रेय उसी को प्राप्त हो जाता है जो क्रान्ति के रंग मंच पर आकर प्रमुख अभिनेता का पद ग्रहण कर लेता है। नेता परिस्थितियों को उत्पन्न नहीं करता और न क्रान्ति का बीजारोपण ही कर सकता है। प्रकृति के महा प्रवाह में व्यक्ति की गणना ही कहाँ है? पर जहाँ वह परिस्थितियों को पैदा नहीं कर पाता वहाँ उसकी एक विशेषता यह होती है कि वह आगत प्रवाह का और उसकी गति विधि को भली भाँति भाँप लेने की सामर्थ्य रखता है। फलत वह अपने को उसके अनुकूल बना लेता है और इस प्रकार बहनेवाली धारा का प्रतिनिधि बन जाता है। उसकी यही

विशेषता उसे नेतृत्व प्रदान करती है। वह व्यक्ति अपने काल की, उस काल के पुकार की, बहनेवाले ऐतिहासिक प्रवाह की और उस प्रवाह में पड़े हुए राष्ट्र की आकांक्षा, भावना और लालसा की सजीव मूर्ति बन जाता है। फिर तो उसके मुख से राष्ट्र बोलने लगता है और उसकी नीति तथा क्रियाशीलता में सामयिक इतिहास मूर्तमान हो उठता है। ऐसे व्यक्तिविशेष की जीवनी फिर उसकी जीवनी मात्र नहीं रह जाती, बल्कि उसकी कहानी वस्तुत राष्ट्रीय जीवन की कहानी हो जाती है। आज हम ऐसे ही एक महान व्यक्ति की जीवन गाथा लिखने बैठे हैं।

एशिया महाद्वीप के चीन प्रदेश से भारतवासी हजारों वर्ष पूर्व से परिचित हैं। चीन और भारत का सांस्कृतिक सम्बन्ध बहुत पुराना है। संस्कृति के हाट में इन दोनों का पारस्परिक आदान प्रदान शताब्दियों पहले से होता रहा है। मानव जाति और मानव समाज के विकास की यात्रा में इन दोनों ने जो गौरवपूर्ण भाग अति आरम्भिक काल से लिया है वह इतिहास की सामग्री है जिसके लिए मानवता सदा इनकी ऋणी रहेगी।

समय के प्रचंड आघात से दोनों गिरे और आज पुन, दोनों की स्थिति बहुत कुछ एक-सी है। आश्चर्य है कि उत्थान और उत्कर्ष के युग में जिस प्रकार दोनों की स्थिति समान थी उसी प्रकार पतन और अपकर्ष के काल मे दोनों प्राय एक-से रहे हैं। पर अब ऐसा ज्ञात होता है कि दोनों के समय ने पलटा खाया है। नयी चेतना और नव जागृति की लहर दोनों के राष्ट्रीय जीवन को झकझोर दे रही है और निकट भविष्य में सम्भवत दोनों विश्व के रंगमंच पर अभिनय अभिनव करनेवाले हैं। इस स्थिति में चीन के आधुनिक इतिहास और उसके भाग्य विधाता च्याङ्कई शेक के सम्बन्ध में यह कुछ पृष्ठ लिखना सामयिक और उचित प्रतीत होता है।

हाल में कुछ वर्षों के बीच चीन में जो घटनाएँ घटी हैं वे यह सिद्ध करती हैं कि वर्तमान युग में च्याङ्कई शेक पूर्वी भूखंड के सर्वोत्कृष्ट योद्धा और राजनीतिज्ञ हैं। सभी इस बात को स्वीकार करते हैं कि चीन ने उनके नेतृत्व में गत २० वर्षों के छोटे से युग में वह प्रगति की है और उतना काम किया है जितना पहले एक शती में भी न हो पाया रहा होगा।

च्याङ्कई शेक ने वर्तमान चीन का निर्माण किया है। उन्होंने अव्यवस्था के गर्भ से व्यवस्था का सृजन करके चीन में एक राष्ट्र की स्थापना की है और बाहरी दुनिया में चीन के प्रति आदर की भावना जगा कर उसका मस्तक ऊँचा किया है। आज चीन के राजनैतिक आकाश में वे उज्ज्वल

प्रभात-नक्षत्र की भाँति चमक रहे हैं। गत २० वर्षों तक उन्होंने उस अभिनय को सफलतापूर्वक करने की गहरी तैयारी की थी जिसे वे आज पूरा कर रहे हैं। चीनी महाक्रान्ति के आदर्शों की प्राप्ति के लिए उन्होंने वह तपस्या की है जिसकी मिसाल महामानवों के जीवन में ही मिला करती है। चीन की राष्ट्रीय जागृति के जनक और नेता स्वर्गीय डाक्टर सुनयात सेन के पद चिह्नों पर वे दृढ़तापूर्वक उस समय भी एकाकी चलते रहे हैं जब दूसरे बहुत से हताश होकर पथ से ही अलग हो गये। अनेक कठिनाइयों, बाधाओं और असफलताओं तथा निराशाओं का सामना करते हुए वे राष्ट्रीयता की पताका दृढ़तापूर्वक पकड़े हुए आगे बढ़ते रहे हैं। साधारण जनता में व्यक्तिगत तथा प्रादेशिक भावना के स्थान पर राष्ट्रीयता की लहर लहराते रहने में वे कभी श्रान्त नहीं हुए। इसी अथक परिश्रम के फल स्वरूप वे नव चीन का निर्माण करने में सफल हुए हैं।

धीरे धीरे उन्होंने विभिन्न हिस्सों में विभक्त हुए चीन पर केन्द्रीय राष्ट्रीय सरकार का प्रभाव स्थापित किया। अपनी तपस्या, अध्यवसाय और व्यक्तित्व के द्वारा वे विभिन्न चीनी प्रान्तों के निवासियों के मन में यह भाव तथा विश्वास उत्पन्न करने में समर्थ हुए हैं कि यदि राष्ट्र का सामूहिक हित सुरक्षित है तो अलग अलग प्रान्तों का हित भी उसी में निहित है। विघातक प्रान्तीयता का उन्मूलन करने का श्रेय जनरलेसिमो को ही प्राप्त है। एक ओर नव-चेतना आन्दोलन चलाकर तथा दूसरी ओर जनता की आर्थिक व्यवस्था सुधारने का प्रयत्न करके उन्होंने चीन के स्वार्थी महाजनों, व्यवसायियों और ज़मीन्दारों की स्वार्थान्धता का परिहार करने में सफलता प्राप्त की है। जहाँ कुछ लोग यह समझते थे कि तलवार के ज़ोर से तत्काल नयी व्यवस्था स्थापित कर लेनी चाहिए वहाँ जनरलेसिमो ने यह अनुभव किया कि धैर्य और सहनशीलता के साथ प्रदर्शन रहित आन्दोलनों के द्वारा जनभाव पर वह रंग चढ़ाया जाना चाहिए जिस पर आगे चल कर राष्ट्रीयता और राष्ट्र-हित का भव्य भवन निर्मित होगा।

इसीलिए आपने नये प्रकार के आन्दोलनों का सूत्रपात किया और आर्थिक दशा सुधारने की चेष्टा आरम्भ की। इसके साथ साथ सरकार की शक्ति भी बढ़ायी। शक्ति की अभिवृद्धि केवल दमन और तलवार के बल पर नहीं की, बल्कि उसमें व्यवस्था, कार्य क्षमता और कर्तव्य भावना का भी उदय किया। नयी राष्ट्रीय सेना संगठित करके और उसे आधुनिक अस्त्र शस्त्रों से यथासम्भव सुसज्जित करके देश की रक्षा का आयोजन किया।

विशेषता उसे नेतृत्व प्रदान करती है। वह व्यक्ति अपने काल की, उस काल क पुकार की, बहनेवाले ऐतिहासिक प्रवाह की और उस प्रवाह में पड़े हुए राष्ट्र की आकांक्षा, भावना और लालसा की सजीव मूर्ति बन जाता है। फिर तो उसके मुख से राष्ट्र बोलने लगता है और उसकी नीति तथा क्रियाशीलता से सामयिक इतिहास मूर्तमान हो उठता है। ऐसे व्यक्तिविशेष की जीवनी फिर उसकी जीवनी मात्र नहीं रह जाती, बल्कि उसकी कहानी वस्तुत राष्ट्रीय जीवन की कहानी हो जाती है। आज हम ऐसे ही एक महान व्यक्ति की जीवन गाथा लिखने बैठे हैं।

एशिया महाद्वीप के चीन प्रदेश से भारतवासी हजारों वर्ष पूर्व से परिचित हैं। चीन और भारत का सांस्कृतिक सम्बन्ध बहुत पुराना है। संस्कृति के हाट में इन दोनों का पारस्परिक आदान प्रदान शताब्दियों पहले से होता रहा है। मानव जाति और मानव समाज के विकास की यात्रा में इन दोनों ने जो गौरवपूर्ण भाग अति आरम्भिक काल से लिया है वह इतिहास की सामग्री है जिसके लिए मानवता सदा इनकी ऋणी रहेगी।

समय के प्रचण्ड आघात से दोनों गिरे और आज पुन, दोनों की स्थिति बहुत कुछ एक सी है। आश्चर्य है कि उत्थान और उत्कर्ष के युग में जिस प्रकार दोनों की स्थिति समान थी उसी प्रकार पतन और अपकर्ष के काल में दोनों प्राय एक-सी रहे हैं। पर अब ऐसा ज्ञात होता है कि दोनों के समय ने पलटा खाया है। नयी चेतना और नव जागृति की लहर दोनों के राष्ट्रीय जीवन को झकझोरे दे रही हैं और निकट भविष्य म सम्भवत दोनों विश्व के रगमच पर अभिनव अभिनय करनेवाले हैं। इस स्थिति में चीन के आधुनिक इतिहास और उसके भाग्य विधाता च्याङ्ग काई शेक के सम्ब ध में यह कुछ पृष्ठ लिखना सामयिक और उचित प्रतीत होता है।

हाल म कुछ वर्षो के बीच चीन में जो घटनाएँ घटी हैं वे यह सिद्ध करती हैं कि वर्तमान युग में च्याङ्ग काई शेक पूर्वी भूखण्ड के सर्वोत्कृष्ट योद्धा और राजनीतिज्ञ हैं। सभी इस बात का स्वीकार करते हैं कि चीन ने उनके नेतृत्व में गत १० वर्षों के छोटे से युग म वह प्रगति की है और उतना काम किया है जितना पहले एक शती में भी न हो पाया रहा होगा।

च्याङ्ग काई शेक ने वर्तमान चीन का निर्माण किया है। उन्होंने अव्यवस्था क गर्भ से व्यवस्था का सृजन करके चीन में एक राष्ट्र की स्थापना की है और बाहरी दुनिया में चीन के प्रति आदर की भावना जगा कर उसका मस्तक ऊँचा किया है। आज चीन के राजनैतिक आकाश में वे उज्ज्वल

प्रभात-नक्षत्र की भाँति चमक रहे हैं। गत २० वर्षों तक उन्होंने उस अभिनय को सफलतापूर्वक करने की गहरी तैयारी की थी जिसे वे आज पूरा कर रहे हैं। चीनी महाक्रान्ति के आदर्शों की प्राप्ति के लिए उन्होंने वह तपस्या की है जिसकी मिसाल महामानवों के जीवन में ही मिला करती है। चीन की राष्ट्रीय जागृति के जनक और नेता स्वर्गीय डाक्टर सुनयात सेन के पद चिह्नों पर ये दृढ़तापूर्वक उस समय भी एकाकी चलते रहे हैं जब दूसरे बहुत से हताश होकर पथ से ही अलग हो गये। अनेक कठिनाइयों, बाधाओं और असफलताओं तथा निराशाओं का सामना करते हुए वे राष्ट्रीयता की पताका दृढ़तापूर्वक पकड़े हुए आगे बढ़ते रहे हैं। साधारण जनता में व्यक्तिगत तथा प्रादेशिक भावना के स्थान पर राष्ट्रीयता की लहर लहराते रहने में वे कभी शान्त नहीं हुए। इसी अथक परिश्रम के फल स्वरूप वे नव चीन का निर्माण करने में सफल हुए हैं।

धीरे धीरे उन्होंने विभिन्न हिस्सों में विभक्त हुए चीन पर केन्द्रीय राष्ट्रीय सरकार का प्रभाव स्थापित किया। अपनी तपस्या, अध्यवसाय और व्यक्तित्व के द्वारा वे विभिन्न चीनी प्रान्तों के निवासियों के मन में यह भाव तथा विश्वास उत्पन्न करने में समर्थ हुए हैं कि यदि राष्ट्र का सामूहिक हित सुरक्षित है तो अलग अलग प्रान्तों का हित भी उसी में निहित है। विघातक प्रान्तीयता का उन्मूलन करने का श्रेय जनरलेसिमो को ही प्राप्त है। एक ओर नव-चेतना आन्दोलन चलाकर तथा दूसरी ओर जनता की आर्थिक व्यवस्था सुधारने का प्रयत्न करके उन्होंने चीन के स्वार्थी महाजनों, व्यवसायियों और ज़मीन्दारों की स्वार्थान्धता का परिहार करने में सफलता प्राप्त की है। जहाँ कुछ लोग यह समझते थे कि तलवार के ज़ोर से तत्काल नयी व्यवस्था स्थापित कर लेनी चाहिए वहाँ जनरलेसिमो ने यह अनुभव किया कि धैर्य और सहनशीलता के साथ प्रदर्शन रहित आन्दोलनों के द्वारा जनभाव पर वह रंग चढ़ाया जाना चाहिए जिस पर आगे चल कर राष्ट्रीयता और राष्ट्र-हित का भव्य भवन निर्मित होगा।

इसीलिए आपने नये प्रकार के आन्दोलनों का सूत्रपात किया और आर्थिक दशा सुधारने की चेष्टा आरम्भ की। इसके साथ साथ सरकार की शक्ति भी बढ़ायी। शक्ति की अभिवृद्धि केवल दमन और तलवार के बल पर नहीं की, बल्कि उसमें व्यवस्था, कार्य क्षमता और कर्तव्य भावना का भी उदय किया। नयी राष्ट्रीय सेना संगठित करके और उसे आधुनिक अस्त्र शस्त्रों से यथासम्भव सुसज्जित करके देश की रक्षा का आयोजन किया। सरकारी

नौकरियों में व्यक्तिगत स्वार्थपरता के स्थान पर सेवा के आदर्श की स्थापना की। इस प्रकार व्यवस्था को जन्म देकर स्वयम् अपने विशुद्ध, सचेष्ट तथा दृढ़ जीवन के द्वारा साधारण रूप से सारे राष्ट्र के सामने ऐसे आदर्श की स्थापना की जो चीन के बच्चे बच्चे में नव जीवन और स्फूर्ति फूँक रहा है।

च्याङ्काई शेक के घोर राजनैतिक विरोधी भी उन्हें चीन के सुधार आन्दोलन के प्रवर्तक का श्रेय प्रदान करने को बाध्य होते हैं। यही कारण है कि आज वे उन महान देशभक्त चीनी युवकों के समूह के एक मात्र प्रिय और पूज्य नेता हैं जिनने चीनी राष्ट्र का पथ प्रदर्शन करते हुए उसे राष्ट्रीय एकता और स्वतन्त्रता के पुनीत पद पर स्थापित करने के कार्यों में अपने को उत्सर्ग कर दिया। राजनैतिक, आर्थिक तथा सामाजिक आन्दोलनों के जनक होकर च्याङ्काई शेक ने अपने जीवन को राष्ट्रीय जीवन की धारा में पूर्णतः मिला दिया है। यही कारण है कि राष्ट्र के जीवन के विविध अंगों की उन्नति की कहानी ही उसके नेता के जीवन की कहानी हो गयी है।

पर च्याङ्काई शेक की विशेषता केवल इतनी ही नहीं है। भावी विश्व में उनका स्थान कहाँ होगा इस पर आज कौन भविष्य वाणी कर सकता है। वसुधा की छाती पर इतिहास का जो नग्न नृत्य हो रहा है वह अभी समाप्त नहीं हुआ है। चारों ओर जो भयावनी आग लगी हुई है उसके बुझने पर शेष रहे भग्न का क्या स्वरूप होगा इसकी कल्पना करना भी आज सम्भव नहीं है। ऐसा मालूम हो रहा है कि दुनिया जल कर राख हुआ चाहती है। यह हालत देखकर स्वभावतः मानवता निराश होती है, पर प्रकृति के नियामक प्रवाह में हम अपनी आस्था नहीं खो सकते। हम यह स्वीकार करने को तैयार नहीं हैं कि मानवता का भविष्य अन्धकारमय है और इस पृथ्वी पर मनुष्य जाति का समय पूरा हो चुका है। ऐसी स्थिति में वर्तमान के अन्धकार और विनाश के लय में हमें पुनरुज्जीवन और प्रकाश की हलकी किरण दिखायी दे जाती है। अब तक इतिहास ने जो कुछ शिक्षा दी है यदि वह सत्य है और आजतक की घटनाओं के सम्बन्ध में उसका जो फैसला हुआ है वह सही है तो हम यह आशा कर सकते हैं कि इस उथल पुथल के उदर से नयी व्यवस्था का जन्म होने वाला है। यदि नव युग का सूत्रपात होना है तो सम्भवतः आज की चीत्कार और क्रन्दन उस प्रसव वेदना का उपक्रम मात्र है जिसका अनुभव मानव की ऐतिहासिक धारा कर रही है। —

जब यह होनेवाला है तो आज जो लोग आनेवाले युग के अग्रदूत हैं उनके सम्बन्ध में अभी से कुछ नहीं कहा जा सकता कि वे कहाँ रहेंगे। चीन च्याङ्कई शेक के नायकत्व में आज विश्व में और उसकी महाशान्ति में महत्त्वपूर्ण भाग ले रहा है। गत ५ वर्षों से जापानी साम्राज्यवादिता की रक्त पिपासा शमन करने के लिए वह अपने बच्चों का खून बहाता रहा है। दुनिया की किसी कौम ने उसका साथ नहीं दिया। उसका पड़ोसी यह भारत उसके प्रति सच्ची और हार्दिक सहानुभूति अवश्य प्रदर्शित करता रहा है, पर निकम्मे और असहाय लोगों की सहानुभूति का भौतिक मूल्य क्या हो सकता है—भले ही उसका नैतिक मूल्य कुछ ही क्यों न रहा हो। किन्तु भारत के सिवा दूसरों ने चीन में होनेवाले इस अनर्थ की ओर एक आवाज भी न उठायी। उस समय लोगों का लोकतन्त्र प्रेम और न्याय भावना न जाने कहाँ मर गयी थी। चीन पर आये हुए इस संकट ने उसकी बड़ी हानि की, पर साथ-साथ उसने उसका कल्याण भी किया।

विपत्ति बहुधा मनुष्य की छिपी और दबी हुई शक्तियों का उद्बोधन कर देती है। जापानी आक्रमण ने भी चीन को जगा दिया। इस संकट की आग में मानो पुरातन चीनी राष्ट्र का सारा कलुष—उसका तम और उसका मोह जलकर भस्म हो गया। आज वह तपाये हुए सोने की तरह एक महान राष्ट्र के रूप में इस जगत के रंगमंच पर अवतीर्ण हो रहा है। इस संकट ने उसे एकता प्रदान की, उसमें चरित्र का प्रादुर्भाव किया और पवित्र आदर्श के लिए जीवन को तिनके के समान होम देने की कला सिखा दी। ये ही उपादान और तत्त्व हैं जिनसे महान चीनी राष्ट्र निर्मित हो रहा है।

आज शक्ति और श्रेष्ठता का दम्भ करनेवाली जगत की महाशक्तियाँ चीन की मित्रता के लिए लालायित हैं। जो उसकी ओर आँख उठाकर देखना नहीं चाहते थे और भेड़िये की तरह उसे नोच खाने के लिए मुँह बाये रहते थे वे ही उसकी खुशामद करते भी नहीं थकते। इस युद्ध ने जमाने में चीन संयुक्त राष्ट्रों का आदर पात्र सदस्य है। पर वह केवल इतना ही नहीं है। आज चीन प्रगतिशीलता का प्रतिनिधित्व कर रहा है। साम्राज्यवादी शोषण तथा दासता के प्रति जगत की विद्रोही शक्तियों का नेतृत्व उसे प्राप्त हो गया है। पूर्वी भूखण्ड की आशा, आकांक्षा और लालसा उसमें सन्निहित हो गयी है। एशिया की दलित और अपमानित जातियाँ उसकी ओर उत्सुकता के साथ देख रही हैं। भारत अपना भाग्यसूत्र उसके साथ बँधा हुआ समझ कर उसे अपनी सारी सद्भावना का पात्र मान चुका है।

इस विशेष युग में चीन क्या है यह उपर्युक्त पृष्ठों में स्पष्ट हो जाता है। निश्चित है कि भविष्य में विश्व के निर्माण में उसका प्रभावकर और निर्णयकारी भाग होगा। उसी चीन का प्रतिनिधित्व और नयन करने का सौभाग्य च्याङ्ग शेक को प्राप्त है। परन्तु भावी विश्व में उनका स्थान कहाँ होगा यह काल के गर्भ में है। मैं आज उस व्यक्ति व देश और उसके जीवन की कहानी लिखकर अपना काम समाप्त करता हूँ जिसकी ओर न केवल चीन की बल्कि दुनिया भर की दबी हुई कौमों की निगाह लगी हुई है।

इसके पहले कि इन पंक्तियों को समाप्त करूँ दो बातें और निवेदन कर देना चाहता हूँ। जैसा कि लिख चुका हूँ यह ग्रन्थ जेल में लिखा गया है। इसके प्रकाशन के समय में भी मैं अनुपस्थित रहा हूँ। प्रूफ आदि देखने की सुविधा भी नहीं थी। चीन के सम्बन्ध में आवश्यक ग्रन्थों आदि की सन्तोषजनक उपलब्धि भी नहीं हो सकती थी। इस कारण प्रस्तुत पुस्तक में त्रुटियों का रह जाना अनिवार्य है। सम्भवतः उन तमाम बातों का समावेश भी न हो पाया होगा जो इस ग्रन्थ को सर्वांगपूर्ण बना सकतीं। फलतः मेरे लिए सिवा इसके और कोई मार्ग नहीं है कि मैं पाठकों की सहज उदारता की शरण जाऊँ। परिस्थितियों द्वारा उत्पन्न लाचारी के लिए उनसे क्षमा की आशा करता हूँ।

पुस्तक में जनरलिसिमो च्याङ्ग शेक की जीवन सम्बन्धी घटनाओं का जो रूप है वह प्रसिद्ध चीनी लेखक श्री हालिङ्गटन के-तुङ्ग की 'च्याङ्काई शेक' नामक पुस्तक से लिया गया है। यह पुस्तक जनरलेसिमो की प्रामाणिक जीवनी मानी जाती है अतः उनके जीवन की व्यक्तिगत तथा अन्य आवश्यक बातों को उसी स्रोत से लेना उचित जान पड़ा। इसके लिए मैं उस लेखक का हृदय से कृतज्ञ हूँ।

लेखक—

विषय-सूची

चित्र पृष्ठ

* इस पुस्तक में प्रकाशित चित्र नम्बर १ से २० श्री सी. एच. लोव, डाइरेक्टर चीनी सूचना मन्त्रि विभाग के सौजन्य से हमें प्राप्त हुए हैं। इसके लिए हम उनके आभारी हैं और अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

प्रकाशक



युद्धित चीन के प्रसिडेंट और जनरलसिमो च्याङ्काई शेक

चीन और च्याङ

पहला अध्याय

जागृति का सूत्रपात और च्याङ्ग का जन्म

१९ वीं शती के अन्तिम चरण में मञ्चू राजवंश चीन में शासन कर रहा था। इस समय चीन की दशा बुरी तरह गिरी हुई थी। बहुधा देखा गया है कि अनुत्तरदायी राजतन्त्र की व्यवस्था में अनेक प्रकार की बुराइयों का पैदा हो जाना साधारण सी बात होती है। शासकों के चारित्रिक ह्रास से न केवल उनमें ही विलासिता, पक्षपात और दम्भ आ जाता है बल्कि उनकी शासन संस्थाओं का भी नैतिक पतन होकर वह निर्जीव और निकम्मी बन जाती हैं। इतिहास में ऐसे राजकुलों के धराशायी होने के अनेक उदाहरण मिलते हैं। परन्तु इस पतन के अनेक कारणों में से मुख्य कारण उनकी अपनी चरित्र-भ्रष्टता ही हुआ करती है।

मञ्चू राजवंश भी इन दोषों से विमुक्त न था। उसके शासनकाल में १९ वीं शती का अन्तिम भाग उसके विनाश का युग था। इस समय दुष्प्रबन्ध और कुशासन तथा शासक वर्गों की विलासता चरम सीमा पर पहुँची हुई थी। इसके फलस्वरूप सारे देश में अशान्ति और असन्तोष के भाव फैल रहे थे। देश की आन्तरिक दशा ही गिरी हुई नहीं थी बल्कि विदेशी आक्रमण से सारा चीनी राष्ट्र क्षत-विक्षत हो रहा था। सन् १८८४ में चीन और फ्रान्स में युद्ध हुआ जिसमें चीन की करारी हार हुई। इसी प्रकार सन् १८९४ में जापान ने चीन पर आक्रमण किया और उसे बुरी तरह पराजित किया।

फिर सन् १८९८ में जर्मनी ने किआचाऊ की खाड़ी तथा उसके प्रदेश में अपना पैर घुसेड़ा। इसी तरह रूस ने पोर्ट आर्थर ले लिया तथा ब्रिटेन ने विहेईवेई और हाङ्गकाङ्ग के पट्टे लिखा कर वहाँ अपनी सत्ता स्थापित की। फ्रान्स ने क्वाङ्गटुङ्ग के पश्चिमी किनारे की क्वाङ्गचाऊ की खाड़ी के प्रदेश अपने अधिकार में लिखा लिये। इधर जापान ने फार्मोसा पर नियन्त्रण स्थापित कर फूके प्रान्त में अपने विशेषाधिकार का दावा पेश किया। धीरे धीरे चीन के कतिपय भागों में विदेशी साम्राज्यवादी शक्तियों ने विशेषाधिकार तथा विशेष सुविधाएँ प्राप्त बस्तियाँ स्थापित कीं। निर्जीव और गिरे हुए मञ्चू शासकों के अधीन अब चीनी राष्ट्र ऐसी स्थिति को पहुँच गया कि नाम मात्र की स्वतन्त्रता रखते हुए उसे विदेशी शक्तियों के सामने अपने राष्ट्रीय अभिमान को तिलांजलि देकर नाक रगड़ने के लिए बाध्य होना पड़ता।

ऐसे समय साधारण चीनी जनता में असन्तोष की लहरा का लहरा उठना स्वाभाविक ही था। चीन का अपना उज्ज्वल अतीत था। सहस्रों वर्ष तक पुरानी संस्कृति तथा सभ्यता का क्रीड़ास्थल बन कर उसने गौरवमय इतिहास का सृजन किया था। पुराना चीनी राष्ट्र अपने उत्कर्ष के दिनों को भूला नहीं था। उसे ज्ञात था कि वह बहु मूल्य सम्पत्ति का उत्तराधिकारी है। ऐसा राष्ट्र जब ठोकर खाकर अपमानित हुआ तो उसके हृदय में असन्तोष की उत्पत्ति होना अस्वाभाविक बात न थी। अपनी मातृभूमि की दयनीय और दलित स्थिति के कारण प्रत्येक चीनी देशभक्त का हृदय विकल होने लगा।

इस क्षोभ की लहर यद्यपि सारे देश में फैल हो गयी थी फिर भी चीन की राजनीतिक स्थिति में किसी प्रकार का सुधार होना अत्यन्त दुष्कर ज्ञात होरहा था। पुरातन राष्ट्र होने के कारण चीन अनेक रूढ़ियों, अन्ध परम्पराओं, कुसंस्कारों और व्यर्थ के रीत रिवाजों के बन्धन में बुरी तरह फँसा था। पुराने राष्ट्रों का यह अभिशाप है कि वे अतीत के शव से चिपटे रहकर अपने को बेतरह निर्बल बना डालते हैं। पुरातन का प्रेम बहुत सी बातों में कल्याणकारक भी होता है। इस प्रेम से ही राष्ट्रों में स्थिरता आती है। जिस राष्ट्र का अतीत उज्वल होता है उसकी सांस्कृतिक जड़ इतनी गहरी चली जाती

हैं कि आने वाले अनेक बाहरी झकोरों को सहन करती हुई भी ये अपने को जीवित बनाये रखती हैं। पर जहाँ यह लाभ है वहीं इस प्रवृत्ति से कुछ हानि भी होती है। पुरातन से प्रेम करते हुए हम उन बन्धनों और रूढ़ियों से भी प्रेम करने लगते हैं जो किसी युग में भले ही उपयोगी रही हों परन्तु वर्तमान की परिवर्तित स्थिति में निश्चय ही बाधक और हानिकारक सिद्ध होती हैं। प्रगति की धारा निरन्तर गतिशील है। जगत हर क्षण आगे बढ़ता चलता है और अपने स्वरूप में परिवर्तन करता जाता है। अपने को इस गति के अनुकूल न बनाना विनाश को आमन्त्रित करना होता है। पुरातन से प्रेम करके यदि हम वर्तमान और भविष्य के प्रति आँखें मूँद लें तो प्रगति का कुंठित हो जाना निश्चित ही है।

बस, चीन की भी यही दशा हो गयी थी। देश भर में अज्ञान का अन्धकार छाया हुआ था। हजारों वर्ष पुराने रहन-सहन और रीति रिवाज में पली हुई जनता पर जब ऐसे समय में विदेशी शक्तियों ने पदाघात करके उसे अपमानित किया तो चीनियों ने अनुभव किया कि उनका और पुरातन का सारा गौरव और देशाभिमान विचूर्ण हुआ चाहता है। बाहर से आने वाली शक्तियों का बल और उनका साहस तो उन्होंने देखा ही, फिर विज्ञान ने उन्हें जो विभूति प्रदान की थी तथा विदेशी शक्तियों ने उसके प्रसार से जो बल प्राप्त किया था उसका भी आभास उन्हें मिला। यही कारण है कि इस युग में चीन में एक नयी चेतना का प्रादुर्भाव हुआ। जिनके हृदय में देश की हीन दशा देख कर क्लेश उत्पन्न हुआ वे अनुभव करने लगे कि राष्ट्र की रक्षा यदि करनी है और उसे विनष्ट होने से बचाना है तो अपने में आमूल परिवर्तन करना होगा। इसी भावना ने चीनियों को व्यापक रूप से सुधार करने तथा विदेशी संस्कृति की ओर आकर्षित होने दिया। एक ओर जहाँ यह भावना फैली कि राष्ट्र की रक्षा के लिए पतित और बल हीन मञ्चू शासकों से अपना पिंड छुड़ाना होगा वहीं दूसरी ओर यह आकांक्षा व्याप्त हो उठी कि देश में पश्चिमी शिक्षा और विशेष रूप से नयी सैनिक शिक्षा का प्रसार होना चाहिए।

इस प्रकार १८९६ ई० के निकट चीन में सार्वदेशिक आन्दोलन की उत्पत्ति हुई जो देश में पश्चिमी शिक्षा का प्रसार करने की माँग

ले कर खड़ा हुआ। हूपे और हूनान के तत्कालीन वाइसराय चाङ-चि-तुन् के नेतृत्व में यह आंदोलन जोरों से चल पड़ा। इस व्यक्ति ने *"सीखो"* शीर्षक एक पुस्तिका लिखी जिसकी लाखों प्रतियाँ सारे देश में वितरित की गयीं। चीन के सुदूर प्रान्तों के गाँवों तक में किसान इस पुस्तिका को पढ़ते या सुनते देखे जाते थे। लेखक ने अपने देशवासियों को सावधान किया था कि वे अपनी दशा की ओर देखें और विदेशियों द्वारा की हुई चीन की पराजय से शिक्षा ग्रहण करें। इसमें यह भी कहा गया था कि चीनियों को अपनी पराजय पर लज्जित होना और जापान की भाँति बल संचय करके शक्तिशाली होना सीखना चाहिए।

यद्यपि इस समय चीन में शिक्षा का प्रसार बहुत ही कम था, आने-जाने के साधन नहीं के बराबर थे, नयी रोशनी तथा जीवन सम्बन्धी नये भाव और आदर्श वहाँ पहुँच भी नहीं पाये थे फिर भी चीनी अपने अपमान के कारण विकल होकर इस उठती हुई लहर के प्रभाव से प्रभावित हो रहे थे। सुधार की नयी भावना से ओतप्रोत होकर राष्ट्रीय जीवन के अंग प्रत्यंग में परिवर्तन के लक्षण दिखायी देने लगे। देश में नयी शिक्षा पद्धति का सूत्रपात हुआ और नये आधार पर बहुत सी पाठशालाएँ स्थापित हुईं। इस प्रकार इसी समय जब एक ओर राष्ट्रीय जीवन में सुधार का आन्दोलन छिड़ा तो दूसरी ओर राजनीतिक क्रान्ति का बीज भी बोया गया। क्रान्तियों का बीजारोपण प्रायः ऐसे ही समय हुआ करता है। चीनी देशभक्तों के हृदय में यह भाव पैदा हो गया था कि भ्रष्ट शासकों का अन्त किये बिना देश के पतन का मार्ग अवरुद्ध न किया जा सकेगा। इसलिए सरकार के प्रति विद्रोही भाव जड़ पकड़ने लगे। सरकार इन बातों से अभिज्ञ थी और सदा की भाँति स्वाभावानुसार उसने दमन का सहारा लिया। बहुत से चीनी देशभक्त बागी करार देकर गिरफ्तार किये गये। बहुतों ने देश से भाग कर अपनी जान बचायी। ऐसे ही कुछ भागे हुए क्रान्तिकारियों ने सन् १८९४ में हवाई द्वीप में बैठ कर सङ्ग चुङ्ग हुई नामक एक क्रान्तिकारी समिति की स्थापना की। इसका लक्ष्य था कि मञ्चू राजकुल को गद्दी से उतार कर प्रजातन्त्रात्मक राष्ट्रीय सरकार की स्थापना के लिए प्रयत्न किया जाय और इस कार्य में प्रवासी चीनियों का

सहायता प्राप्त की जाय। यद्यपि यह समिति अधिक सफलता न प्राप्त कर सकी पर इसने भावी चीनी क्रान्ति का बीज अवश्य ही बो दिया।

संक्षेप में चीन की यही दशा थी जब सन् १८८७ की ३१ अक्टूबर को चोकियाङ्ग प्रान्त के फेङ्गुआ जिले के चिङ्काऊ नामक गाँव के एक किसान गृहस्थ के घर में चीन के विधाता च्याङ्गकाई-शेक ने जन्म ग्रहण किया। च्याङ्गकाई-शेक के पितामह न केवल सम्भ्रान्त किसान थे वरन् अपने गाँव तथा पास-पड़ोस के अन्य अनेक गाँवों में प्रतिष्ठित और आदरणीय व्यक्ति। वे बड़े विद्वान् और चरित्रवान सज्जन थे। उनके पुत्र—च्याङ्गकाई-शेक के पिता ने भी अपने पूज्य पिता का पदानुसरण किया। च्याङ्गकाई शेक के पिता का नाम सुआङ था। उनकी सार्वजनिक प्रवृत्ति और सेवा भावना की कहानियाँ आज तक प्रसिद्ध हैं। सुआङ अपने गाँव वालों की सेवा में इस प्रकार लगे रहते थे कि आज भी उनका नाम उस प्रदेश में आदर के साथ लिया जाता है।

गाँववालों में छोटी मोटी बातों के लिए बहुधा झगड़े हुआ करते हैं। आजकल की अदालतें तो प्राय गाँव वालों के झगड़ों और मुकदमेबाजियों ही से चलती हैं। अपनी गाढ़ी कमाई का बहुत बड़ा अंश वकीलों और अदालत के कर्मचारियों की जेबों में भर कर किसान स्वयम् अपने आप को तबाह करता है। साथ ही गाँवों में मनमुटाव और पारस्परिक झगड़ा बढ़ कर वहाँ की शान्ति नष्ट कर देते हैं। अपने देश में भी हम इस दृश्य को व्यापक रूप से फैला हुआ पाते हैं। चीन की दशा भी कुछ ऐसी ही थी। सुआङ का मुख्य काम गाँव वालों को इस संकट से उबारना था। अपनी विद्वत्ता और चरित्र के बल पर अपने पिता की भाँति वह भी आदर और प्रतिष्ठा का पात्र हुआ। कहते हैं कि वह शान्ति स्थापक के नाम से प्रसिद्ध था। गाँव वाले नित्य प्रति एक न एक झगड़ा लेकर उसके पास आते, वह सब की बात सुनता और समझा बुझा कर झगड़े को शान्त कर देता।

च्याङ्गकाई शेक की माता भी प्रतिष्ठित कुल की कन्या थीं और थीं बड़ी धार्मिक प्रवृत्ति की महिला। वह बौद्ध धर्म की अनुयायिनी थीं और अपना समय अधिकतर पूजा पाठ और घर गृहस्थी के

काम काज में लगाती थी। चीन के सामाजिक जीवन में गृह और कुटुम्ब का प्रमुख स्थान है। जिस प्रकार हमारे देश में घर को ही आधार मान कर सामाजिक जीवन का विशाल भवन स्थापित किया गया है वैसे ही चीन में भी है। पारिवारिक जीवन को इसी कारण यहाँ भी बड़ा महत्व दिया जाता है और अपने से बड़े गुरुजनों के प्रति आदर और श्रद्धा के भाव की बड़ी महिमा मानी जाती है।

बालक पर माता पिता के चरित्र का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। च्याङ्काई-शेक के जीवन पर अपनी माता के चरित्र का बहुत अधिक प्रभाव पड़ा। कहा जाता है कि उनकी माँ बड़ी देश भक्त थीं। एक बार उन्होंने अपने पुत्र को पत्र लिखते हुए कहा "तुम्हारे लिए मैं ईश्वर से एक ही प्रार्थना करती हूँ। मेरी यह इच्छा नहीं है कि तुम बहुत सा धन उपार्जन करो या किसी बड़े पद पर प्रतिष्ठित हो। मैं तो सिर्फ इतना ही चाहती हूँ कि तुम अपने देश से प्रेम करो और अपने उन पूर्व-पुरुषों के नाम की रक्षा करो जिनके कुल में तुम्हारा जन्म हुआ है।"

इस एक वाक्य से ही पाठक यह समझ सकते हैं कि च्याङ्काई के जीवन पर उनकी सच्चरित्रा और बुद्धिमती माता किस प्रकार की छाप डालना चाहती थीं।

च्याङ्काई-शेक जब आठ वर्ष के थे तभी उनके पिता का देहान्त हो गया और परिवार के भरण-पोषण तथा बाल बच्चों के लालन पालन का सारा बोझ उनकी माँ पर आ पड़ा। व्यक्ति के आरम्भिक जीवन को ढालने में उसकी माता का सबसे अधिक हाथ होता है। किसी भी तेजस्वी व्यक्ति के जीवन को लीजिये। आप देखेंगे कि उसके निर्माण में उसकी माता ने प्रमुख भाग लिया होगा। च्याङ्काई-शेक के जीवन में भी हम इस सत्य की आवृत्ति देखते हैं। उन्होंने एक बार भाषण करते हुए अपनी माता के इस प्रभाव का इस प्रकार वर्णन किया था। "मेरी माँ मुझसे स्नेह के साथ ही साथ कठोर अनुशासन का पालन कराती थीं। मकान में झाड़ू देने, फर्श साफ करने, रसोई बनाने तथा बरतन तक साफ कराने का काम मुझसे लेती थीं। यदि मैं अपने कर्तव्य की अवहेलना करता तो कठोर दंड भी देती थीं।"

ऐसे वातावरण और प्रभाव में च्याङ्ग-काई-शेक के बाल-जीवन का निर्माण हुआ।

च्याङ जन्म से ही तेजस्वी रहा। बचपन में यह बालक अत्यन्त खुराफाती, क्रीडाप्रिय और असाधारण रूप से साहसी था। उसके बाल्य जीवन की जो कहानियाँ अब तक कही जाती हैं उनसे पता चलता है कि यह बालक अनेक बार खेल-खिलवाड में अपनी जान तक खतरे में डाल चुका था। उसके इस स्वभाव के कारण माता पिता बहुत ही सशंक रहा करते थे। जिन लोगों ने चीनियों को भोजन करते देखा होगा वे जानते हैं कि चीनी लोग लम्बी लम्बी खपाँचियों से खाना खाते हैं। दूसरे जो काम चिम्मच से लेते हैं अथवा भारतीय जो काम खाने के समय अपनी अँगुलियों से लेते हैं वही काम चीनी लेते हैं एक बालिश्त लम्बी इन पतली खपाँचियों से। खपाँचियों से चावल उठा कर वे जिस प्रकार मुँह में रख लेते हैं वह देखने वालों के लिए बड़े कुतूहल का विषय होता है।

तीन साल के इस बालक ने एक दिन भोजन करने वाली खपाँची अपने गले के भीतर डाल ली। इस खपाँची को अपने गले में बालक च्याङ ने यह जानने के लिए डाल लिया था कि वह कहाँ तक पहुँचती है। जब लकड़ी गले में फँस गयी तो बच्चे की आँखें उलट गयीं और ऐसा मालूम हुआ कि अब इसका प्राण न बचेगा। बड़ी कठिनाई से यह खपाँची निकाली जा सकी। डाक्टर को यह आशंका हुई कि कहीं उसकी ध्वनि-नली क्षतिग्रस्त न हो गयी हो। दूसरे दिन प्रातःकाल बच्चे के पितामह घर के भीतर आये और महिलाओं से पूछा कि बच्चे की हालत कैसी है। बालक बिस्तर में लेटा हुआ था। दादा की आवाज सुनकर कूद कर उठ खड़ा हुआ और चिल्लाया, "मैं गूँगा नहीं हूँ, देखिये बोल सकता हूँ।"

ऐसा ज्ञात होता है कि बचपन से ही उसके हृदय में वह बीज जम चुका था जिसने आज च्याङ्ग-काई-शेक को महान् योद्धा और सेनापति बनाया है। यह बालक युद्ध का ही खेल खेला करता। बालकों की सेना बना स्वयम् उसका सेनापति बन और लकड़ी की तलवार और बर्छे लेकर लड़ाई का नाटक रचता। उसकी इस प्रवृत्ति को देखकर उसके गुरुजन सशंक हो उठते।

इस प्रवृत्ति को दूसरी दिशा में मोड़ने के लिए घर वालों ने बालक को स्कूल में भरती करा दिया। वहाँ भी दूसरों की अपेक्षा इस बालक में विशेषता रही। पढ़ने लिखने में तो उसकी विशेष रुचि नहीं थी पर खेल कूद में नेतृत्व ग्रहण करने की चेष्टा तो इस बालक का प्रधान लक्ष्य ही था। इसके साथ ही इस आरम्भिक काल में ही उसके नैतिक गुण स्पष्ट दिखायी देने लगे। मज़बूत लड़कों के मुकाबिले में निर्बल और दुबले पतले साथियों की सहायता करने के लिए बालक च्यांङ्ग काई शेक उत्साहपूर्वक आगे बढ़ता। दुर्बलों की रक्षा के लिए सबलों से भिड़ जाना और मार पीट कर देना उसके लिए साधारण सी बात थी। बड़ी से बड़ी शरारत करने पर च्यांङ्ग काई शेक झूठ बोल कर उसे छिपाने के लिए तैयार न होता। वह जानता था कि अपनी ग़लती स्वीकार करने पर दंड मिलेगा, पर वह झूठ का आश्रय न लेता और प्रसन्नतापूर्वक बिना किसी प्रकार की शिकायत किये हुए दंड भोग लेता। इन्हीं गुणों के कारण पाठशाला में च्यांङ्ग काई शेक को एक प्रकार का सहज नेतृत्व प्राप्त हो गया और उसके चरित्र की धाक जम गयी।

च्यांङ्ग काई शेक शरीर से हृष्ट पुष्ट था। उसका जन्म चोक्यांङ्ग के पहाड़ी प्रदेश में हुआ था। चेकाङ्ग पर्वत की उपत्यका में बसे हुए इस गाँव के चारों ओर उत्तुंग शिखर थे, जो शीत ऋतु में हिम से आच्छादित रहते। गरमी के दिनों में यह बरफ गल कर सुन्दर जल प्रपातों और वेगपूर्ण पहाड़ी नदी नालों की रचना किया करती। इसी मोहक और आकर्षक प्राकृतिक दृश्य की छाया में च्यांङ्ग काई शेक ने अपना बाल्यकाल बिताया। पर्वतीय प्रदेश की स्वच्छ वायु और शीतल जल में पालन पोषण होने के कारण उसका शरीर परिपुष्ट हुआ। ऐसे प्रदेशों में रहने वाले लोगों का कठोर और परिश्रमशील जीवन ही उन्हें कठिनाइयों या सकटों का सामना करने योग्य बना देता है। यह स्वीकार करने में कि नगरों के अप्राकृतिक और विलासमय वातावरण में उत्पन्न होने वालों की अपेक्षा उपयुक्त प्रकार के लोग स्वभावत अधिक सहनशील और साहसी होते हैं किसी को ऐतराज़ न होगा। फिर कौन कह सकता है कि आगे चल कर क्रान्ति और उथल पुथल तथा युद्ध सम्बन्धी

कठिनाइयों का निर्भयतापूर्वक सामना करने वाले च्यांग्काई शेक के जीवन के निर्माण में यह प्राकृतिक दृश्य सहायक न हुए होंगे ?

किसी व्यक्ति के चरित्र निर्माण में परिस्थितियों का बहुत कुछ प्रभाव हुआ करता है। पर साथ ही साथ व्यक्ति की अपनी चेतना भी विशेष महत्व रखती है। च्यांग्काई शेक का जन्म जिस क्रान्तिकारी युग में हुआ था उसकी चर्चा आरम्भ में की गयी है। सम्भवतः उस युग की छाया उसके कोमल अन्तःकरण पर शुरू से ही पड़ने लगी थी। कहते हैं कि एक बार उसके एक अध्यापक अमेरिका के सम्बन्ध में कुछ बातें बताते हुए तिरस्कार के साथ बोल गये कि अमेरिका का राष्ट्रपति अपने को जनता का सेवक समझता है और अपने पद गौरव को भूल कर साधारण नागरिकों की भाँति जीवन बिताता है। राजतन्त्र-वादी चीन के बालकों के लिए यह बात चकित कर देने वाली थी। दूसरे विद्यार्थी आश्चर्य में पड़े हुए थे कि सहसा दस वर्ष के बालक च्यांग्काई शेक ने उठ कर कहा "अमेरिका का राष्ट्रपति मनुष्य है और यदि साधारण नागरिकों की भाँति वह जीवन यापन करता है तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है।"

बालक के इस वक्तव्य को सुनकर अध्यापक स्तब्ध रह गये। यह घटना इस होनहार बालक की प्रवृत्ति पर अच्छा प्रकाश डालती है।

गाँव के स्कूल में पढ़ने के बाद च्यांग्काई उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए हाई-स्कूल में भेजा गया। इस समय उसके स्वभाव में परिवर्तन होने लगा था। यद्यपि खेल कूद और दौड़ धूप करने में वह अब भी पहले की भाँति भाग लेता परन्तु अब उसके स्वभाव में गम्भीरता का उदय हो चला था। पढ़ने लिखने में अब उसका ध्यान अधिक लगता और वह मननशील प्रकृति का भी दिखायी देने लगा। पढ़ने लिखने और खेलने-कूदने के बाद शेष समय में वह बहुधा विचार मग्न देखा जाता। अपने भावी जीवन के सम्बन्ध में कदाचित् इसी समय से उसका हृदय अपना लक्ष्य निर्धारित करने लगा था। उसके साथियों और गुरुजनों को यह आभास मिलने लगा कि यह किशोर सैनिक शिक्षा प्राप्त करने और आगे चलकर सैनिक वृत्ति को अपनाने का अपना उद्देश्य स्थिर कर

इस समय चीन में क्रान्ति की लहर अच्छी तरह फैल चुकी थी। बहुत से चीनी विद्यार्थी विदेशों में शिक्षा प्राप्त कर रहे थे। पश्चिम की तुलना में अपने देश की गिरी हुई दशा को देखकर वे विकल हो उठते। डाक्टर सडयात सेन के क्रान्तिकारी विचारों का प्रभाव शिक्षित चीनियों पर तेजी से बढ़ रहा था। उनके हृदयों में देश के उद्धार और उसकी स्वतन्त्रता के लिए आग सुलगने लगी थी। चीन में क्रान्तिकारी आन्दोलन में भाग लेने वालों का दल बढ़ता जा रहा था। विदेश में पढ़ने वाले चीनी विद्यार्थी भी शान्त नहीं थे। सन् १९०५ में बेल्जियम के ब्रुसेल्स नगर में प्रवासी चीनियों का सम्मेलन हुआ और एक क्रान्तिकारिणी समिति की स्थापना की गयी। इसके बाद तो फिर कई देशों में ऐसे ही सम्मेलन हुए। बर्लिन में, पेरिस में और फिर उसी साल जुलाई में जाकर टोकियो में जो आखिरी सम्मेलन हुआ उसमें तुङ मिङ हुई नामक क्रान्तिकारिणी समिति संगठित हुई। इसके मन्त्री स्वयम् डाक्टर सडयातसेन हुए। इस समिति ने डाक्टर सडयात के नेतृत्व में अपना उद्देश्य और कार्यक्रम छापकर वितरित किया। इसके फल स्वरूप चीन में भी उसकी अनेक शाखाएँ स्थापित हुई। यही जमाना था जब च्यांङ्काई शेक सन् १९०^ में हाई स्कूल की शिक्षा समाप्त करके निकला।

इस तेजस्वी किन्तु ग्रहणशील प्रवृत्ति के युवक के मन पर देश में व्याप्त परिस्थिति का प्रभाव पड़ने लगा था। उसके हृदय में देश की दारुण दुर्दशा का दलन करने के लिए सङ्कल्प विकल्प उठने लगे। जब वायुमंडल क्रान्तिकारी भावों से परिपूर्ण होता है तो उसके कीटाणु न जाने कितने और कौन से अनुकूल प्रवृत्ति के युवकों में प्रवेश कर जाते हैं। अनजानते हुए और अप्रत्यक्ष रूप से वे हृदय में बार-बार पैठते और फिर जीवन की सारी धारा को ही बदल देते हैं।

च्यांङ्काई शेक ने स्कूल की शिक्षा समाप्त करने के बाद विदेश में जाकर सैनिक शिक्षा ग्रहण करने का सङ्कल्प प्रकट किया। कहा जाता है कि उसने अपने मित्रों तथा निकट सम्बन्धियों को अपने हृदय की कल्पना का कुछ आभास भी दे दिया। वह इसलिए विदेश में सैनिक शिक्षा प्राप्त करना चाहता था कि चीन की निस्तेज शासन प्रणाली का अन्त करके राष्ट्र में वह बल उत्पन्न करने में सहायक हो जिसके

द्वारा उसका देश भी आधुनिक महान् राष्ट्रों की पंक्तियों मे स्थान पाने योग्य हो जाय।

उसकी इस महत्वाकांक्षा को देख कर उसके सम्बन्धी और मित्र त्रस्त से हो गये। स्वयम उसकी माता भी एक बार घबड़ा उठीं। पर युवक च्याङ्कई शेक अपने पथ से डिगने वाला नहीं था। हिन्दुओं की भाँति चीनी भी सिर पर शिखा रखा करते थे। च्याङ्कई-शेक ने उस समय अपने संकल्प को दृढ प्रतिज्ञा का रूप देने के लिए अपनी शिखा काट कर फेंक दी। आखिर उसकी माता तथा अन्य अभिभावक भी उसकी विदेश-यात्रा की आकांक्षा पूरी करने के लिए बाध्य हुए।

सन् १९०६ में च्याङ्कई-शेक सैनिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए जापान गया। यद्यपि वहाँ सैनिक शिक्षा की प्राप्ति में पहले उसे बड़ी असुविधाओं का सामना करना पड़ा, पर बाद में वह किसी प्रकार 'पाओरिङ्ग मिलिटरी एकेडेमी' मे भर्ती हो गया। इस शिक्षा काल में च्याङ्कई शेक ने सैनिक कला सीखने में अपने समय का अच्छा उपयोग किया। प्रकृति से ही सिपाही होने के कारण वह अपने साथियों तथा अन्य विद्यार्थियों में अपेक्षाकृत अधिक सफल दिखायी देता था।

जापान के इस सैनिक कालेज में और भी बहुत से चीनी विद्यार्थी थे पर च्याङ्कई शेक उन सब में विशिष्ट ज्ञात होता था। एक बड़ी विशेषता तो शिखाविहीन उसका मस्तक ही था। अनायास ही अधिकारियों का ध्यान इस बात की ओर आकर्षित हो जाता। किसी पुरानी परम्परा के विरुद्ध आचरण करना मनुष्य के साहसी और स्वतन्त्रचेता होने का लक्षण हुआ करता है। इन छोटी छोटी बातों मे भी विद्रोही प्रवृत्ति की झलक दिखायी दे जाती है। यह सिद्ध करती है कि वह पुरातन रूढियों को तोड़ फोड़ कर नवीन की स्थापना का हिमायती है। फिर उस समय तो शिखा काट कर फेंक देना खतरनाक समझा जाता था। बहुधा ऐसे लोग जो सरकार के लिए खतरनाक और विद्रोही माने जाते बिना शिखा के हुआ करते थे। यह तेजस्वी युवक भी शिखाविहीन होने के कारण अधिकारियों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करता था—यद्यपि उसके विरुद्ध किसी प्रकार की कार्रवाई करने का कोई अवसर अब तक उन्हें प्राप्त नहीं हुआ था।

जापान में रहते हुए च्याङ्ग-काई-शेक के मन पर अपने देश की अपमान-जनक स्थिति के कारण बार-बार ठेस लगा करती। वह पग-पग पर अनुभव करता कि किसी स्वतन्त्र और प्रबल तथा निर्बल और दलित राष्ट्र में कितना भेद हुआ करता है। जापानियों का कितना आदर उनके अपने देश तथा विदेश में था यह वह नित्य ही अनुभव करता रहता और यह भी अनुभव करता कि चीनी किस प्रकार अन्य राष्ट्रों की उपेक्षा और उनके तिरस्कार के पात्र बने हुए हैं। इससे कभी कभी उसका हृदय क्षुब्ध भी हो उठता। एक दिन की घटना उसके इस वैमनस्य और क्षोभ पर अच्छा प्रकाश डालती है। उसके रहने में एक दिन एक जापानी अध्यापक स्वास्थ्य विज्ञान पर व्याख्यान दे रहा था। अध्यापक ने पढ़ाते हुए एक मुट्ठी मिट्टी लेकर मेज पर रख दी और उस की ओर संकेत करके बताया कि इतनी सी मिट्टी में करीब चालीस करोड़ कीटाणुओं का निवास हो सकता है। अध्यापक वास्तव में यह बता रहा था कि कीटाणुओं की भरमार कैसे होती है और किस तरह उनसे सावधान होने की आवश्यकता है। पर अपनी धुन में वह यह कह गया कि इस मुट्ठी भर मिट्टी की तुलना चीन से की जा सकती है। जिस प्रकार चीन में चालीस करोड़ आदमी कीड़े-मकोड़ों की तरह रहते हैं उसी प्रकार इतनी सी मिट्टी में चालीस करोड़ कीटाणु शरण पाते हैं।

अध्यापक द्वारा इस प्रकार चीन का अपमानपूर्ण उल्लेख किया जाना च्याङ्ग-काई-शेक के लिए असह्य हो उठा। नवयुवक देशभक्त का रक्त राष्ट्रीय अपमान से खौलने लगा। वह सहसा अपने स्थान से उठा और कूद कर अध्यापक के निकट जा पहुँचा। उसने मेज पर रखी हुई मिट्टी को आठ बराबर भागों में बाँट कर अलग अलग रख दिया और गरज कर अध्यापक से पूछा, "जापान की जन संख्या पाँच करोड़ है न? तब क्या ये इस मिट्टी के अष्टमांश में रहने वाले पाँच करोड़ कीटाणुओं की भाँति ही कीड़े मकोड़े नहीं हैं?" अध्यापक इस छात्र का रोष देख कर सहम गया। उसके मुँह से केवल इतना ही निकला, "क्या तुम बागी हो?" च्याङ्ग ने दृढ़ता पूर्वक कहा, "मैं पूछना चाहता हूँ कि आपने जो उपमा दी थी वह क्या उचित थी? इस बात का उत्तर दीजिये।" मगर सवाल उठा कर इस प्रश्न का

आप नहीं टाल सकते।" अध्यापक सन्न रह गया और उस रोज पढ़ाई समाप्त करके चुपचाप दरवाजे से निकल गया। सुनते हैं कि बाद में अध्यापक ने कालेज के उच्च अधिकारियों से च्याङ्ग की शिकायत की पर अधिकारी भी चेतावनी दे देने के सिवा इस छात्र के विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं कर सके। उन्होंने अनुभव किया कि अध्यापक ने इस प्रकार की तुलना करके अनुचित किया। इसलिए वे किसी प्रकार की कार्रवाई करने का अवसर न पा सके।

'पाओरिङ्ग एकडमी' में च्याङ्ग शेक ने अपने परिश्रम, अध्यवसाय और अध्ययनशीलता तथा दृढ़ चरित्र द्वारा प्रायः सभी अध्यापकों का अनुग्रह और उनकी प्रशंसा प्राप्त की। इसका फल यह हुआ कि उसने एक वर्ष के अन्दर ही उच्च सैनिक शिक्षा के लिए चुने जाने वाले विद्यार्थियों में स्थान प्राप्त कर लिया। १९०९ ई० में उसने अपनी शिक्षा समाप्त करके जापानी सेना में प्रवेश किया। जो चीनी विद्यार्थी जापान में सैनिक शिक्षा प्राप्त कर रहे थे उनके लिए आवश्यक था कि एक सीमा तक अध्ययन करने के बाद व्यावहारिक सैनिक शिक्षा के लिए जापानी सेना में भरती हों। इस व्यावहारिक शिक्षा में सफलता प्राप्त करने पर फिर विद्यार्थी जापानी मिलिट्री कालेज में भर्ती होता और सैनिक अफसर तैयार होकर निकलता। जापानी सेना में भरती होकर च्याङ्ग शेक ने पूर्ण सैनिक नियन्त्रण तथा अनुशासन का पालन करना आरम्भ किया। सैनिक जीवन बड़ा कठोर हुआ करता है। अपने को समस्त कठिनाइयों और विघ्न बाधाओं का सामना करने योग्य बनाने के लिए सैनिक को अपने जीवन को विशेष कठिनाइयों में ढालना पड़ता है। सैनिक जीवन में विश्राम कहाँ ? उसे तो गरमी सरदी, आँधी वर्षा, सब कुछ सहन करने योग्य होना चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर अथक और विकट परिश्रम करने की भी सामर्थ्य वांछित है।

च्याङ्गईशेक ने इसमें कोई कसर नहीं उठा रखी। वह शत्रु की भांति निर्दय होकर अपना शरीर कसते रहने की चेष्टा करता रहा। पर ऐसा करते हुए भी वह जापानी अधिकारियों का ध्यान विशेष रूप से अपनी ओर आकर्षित करने में असमर्थ रहा। कुछ बरसों बाद जब च्याङ्गईशेक चीन के प्रसिद्ध क्रान्तिकारी नेता और सेनापति के

रूप में विख्यात हुआ तो नगाओका ने जो उसके शिक्षक और अधिकारी रह चुके थे उसके संस्मरण में कुछ बातें लिखीं।

इन्होंने लिखा—"जिस समय च्याङ्ग काई शेक एक साधारण सिपाही की भाँति मेरे अधीन काम कर रहा था उस समय मैंने कभी स्वप्न में भी यह कल्पना नहीं की थी कि यह व्यक्ति कभी भी इस उच्च स्थान को प्राप्त करेगा जहाँ यह आज पहुँचा हुआ है। इस व्यक्ति ने उस समय में इसके सिवा और कोई विशेषता भी प्रदर्शित नहीं की कि यह अनुशासन का परिपालन बड़ी कठोरता के साथ किया करता था। मैं बहुधा यह सोचता रहा कि च्याङ्ग शेक में ऐसा कौन सा गुण है जिसके कारण यह इतना बड़ा आदमी हो गया। इसका उत्तर हमें तब मिला जब यह सन् १९२७ में जापान आया। उस समय उसे एक दिन मैंने अपने यहाँ निमन्त्रित किया। मैंने देखा कि उस समय भी वह मेरे प्रति इस प्रकार व्यवहार कर रहा था जैसे मैं आज भी उसका अफसर होऊँ। गुरु जनों के प्रति उसका यह भाव उसके चरित्र की विशेषता रही है और मैं समझता हूँ कि इसी ने उसे इतना बड़ा बनाया है।"

यद्यपि च्याङ्ग-काई-शेक छात्रावस्था में अपने शिक्षकों को किसी विशेषता से प्रभावित न कर सका पर अनुशासन और नियन्त्रण प्रियता उसके स्वभाव में थी। इस प्रकार करीब पाँच वर्ष तक उसने जापान में प्रवास करके सैनिक शिक्षा प्राप्त की और अपने भावी जीवन की तैयारी। पर इस समय उसका एक और काम इससे भी अधिक महत्वपूर्ण था। तोकियो में तुङ्ग मिङ्ग-हुई नामक चीनी क्रान्तिकारिणी समिति की स्थापना डाक्टर सनयातसेन के नेतृत्व में हो चुकी थी। बहुत से चीनी युवक जो भावी क्रान्ति की तैयारी में लगे हुए थे इस संस्था के सदस्य थे। चेङ्गचीमेई इस संस्था के प्रमुख सदस्य और आदरणीय क्रान्तिकारी नेता थे।

च्याङ्ग-काई शेक ने जापान के चीनी क्रान्तिकारियों से भेंट मुलाकात की और छिपे छिपे उनके कार्य में भाग लेने लगा। चेङ्गचीमेई से उसका विशेष परिचय होगया। उस के व्यक्तित्व तथा उसकी आदर्श प्रियता तथा त्याग और देशभक्ति की उज्ज्वल भावनाओं ने च्याङ्ग-काई-शेक को आपाद-मस्तक प्रभावित किया। बचपन से ही देश के प्रति उसमें

जो अनुराग भरा था उसे इस काल में बड़ा बल मिला। चेञ्ची-मेई भी युवक च्याङ्कई से प्रभावित हुए। उन्होंने इस युवक को तुङ-मिङ-हुई का सदस्य बना लिया और अपने क्रान्तिकारी कार्यों में अधिकाधिक भाग लेने का अवसर प्रदान करना आरम्भ किया।

इसी समय तोकियो में चीनी राज्य-क्रान्ति के जनक और आधुनिक चीन के प्रवर्तक डाक्टर सङ्यातसेन से च्याङ्कई की मुलाकात हुई। तुङ-मिङ-हुई की एक बैठक में इन दोनों व्यक्तियों का सम्मिलन हुआ। आगे चलकर डाक्टर सङ्यातसेन के नेतृत्व में च्याङ्कई शेक जिस महान कार्य में योग देने वाला था उसका सूत्रपात इसी क्षण से हुआ। इतिहास इस बात का साक्षी है कि च्याङ्क डाक्टर सङ्यात के आदर्श और उनके महत्वपूर्ण कार्य के परिपूरक हैं और वह देशभक्त जिस कार्य को अधूरा छोड़ कर मर गया उसे अब इस युवक ने पूरा किया। हर बड़े नेता का यह गुण हुआ करता है कि वह उपयुक्त आदमी को ढूँढ़ निकाले। जिनमें नेतृत्व करने की सहज विशेषता होती है उन्हें मानो इस सम्बन्ध में दिव्य चक्षु प्राप्त होते हैं। उनके सहारे वे तत्काल ही योग्य व्यक्ति को पहचान लेते हैं। डाक्टर सङ्यातसेन ने प्रथम दर्शन में ही इस युवक को पहचान लिया।

कहा जाता है कि डाक्टर सङ्यातसेन से थोड़ी देर के लिए च्याङ्क की जो बातचीत हुई उसी से उन्होंने इस युवक की उपयोगिता समझ ली। उन्होंने यह अनुभव कर लिया कि च्याङ्क में नेतृत्व के गुण हैं और जब कठोर कर्म पथ पर अग्रसर होने की आवश्यकता होगी उस समय यह युवक परमोपयोगी सिद्ध होगा। सुनते हैं कि उसी दिन डाक्टर सङ्यातसेन ने चेञ्चीमेई से इस युवक की ओर संकेत करते हुए कहा था "किसी समय यह व्यक्ति क्रान्ति की धारा का प्रवर्तक और नायक होगा। हमें अपने कार्य के लिए ऐसे ही एक आदमी की जरूरत थी।"

अपने विद्यार्थी-जीवन के इस युग में अनजाने ही च्याङ्कई शेक उस भविष्य की ओर बहा जा रहा था जिधर जाने के लिए प्रकृति और परिस्थितियों ने उसका निर्माण किया था। चीनी महाराष्ट्र के भाग्य निर्माण के जिस नाटक में उसे प्रमुख अभिनय आगे चलकर करना था उसके प्रथम दृश्य में वह अब रंगमंच पर

अवतीर्ण होने लगा। अब न्याङ्गईशेन का गम्भीर, मननशील हृदय और उसका सहज तेजस्वी तथा साहसी चरित्र अपनी सारी शक्ति से भावी क्रान्ति की रूपरेखा की कल्पना में व्यस्त हो रहा था। उसके उर्वर मस्तिष्क में उसकी योजना भी निर्मित होने लगी थी। पाँच बरस तक जापान में निवास कर एक ओर सैनिक शिक्षा तथा दूसरी ओर क्रान्ति की दीक्षा ग्रहण करने के बाद वह अब सक्रिय कार्यक्षेत्र में उतरने के लिए उतावला हो रहा था।

पर अधिक समय तक उसे इसकी राह नहीं देखनी पड़ी। चीनी राज्यक्रान्ति के सूत्रपात का मुहूर्त आ पहुँचा था। डाक्टर सनयत् सेन तथा उनके क्रान्तिकारी साथी जापान में ही थे कि सन् १९११ ई० की १० अक्टूबर को वूचाङ नामक प्रदेश में सहसा विद्रोह की पताका लहरा उठी। इस विद्रोह की प्रतिध्वनि जापान तक पहुँची। अब च्याङ्गईशेन के लिए जापान में पड़े रहना असम्भव हो गया। वहाँ के क्रान्तिकारियों ने निश्चय किया कि डाक्टर सनयत्सेन अभी चीन न जाय। उपयुक्त अवसर आने पर वे जायगे पर सम्प्रति तोकियो में ही रहकर क्रान्ति का सञ्चालन करते रहने का कार्य उन पर छोड़ा गया। और च्याङ्ग तथा अन्य बहुत से क्रान्तिकारियों के लिए यह निश्चय हुआ कि वे एक क्षण का विलम्ब किये बिना चीन पहुँच जाय।

च्याङ्ग शेक ने अपने अधिकारियों से ४८ घंटे की छुट्टी माँगी, पर उन्हें अवकाश नहीं मिला। तब उसने चुपके चुपके जापान से निकल जाने की ठानी। पास में पैसे का अभाव था। निकल जाना भी आसान नहीं था। बिना छुट्टी के सैनिक होकर जापानी तट को छोड़ना और समुद्र का लघन करके स्वदेश पहुँचना सरल काम नहीं था। पर जिसे कुछ करना होता है उसे साहस से काम लेना ही पड़ता है। खतरा उठाने के लिए तैयार होकर ही वह विघ्न बाधाओं पर विजय प्राप्त करने में समर्थ होता है। च्याङ्ग अपने एक और साथी चाङ्गचुङ्ग के साथ अपना बैरक से चुपचाप निकल भागा। तोकियो पहुँच कर उसने कुछ लोगों से कर्ज लेकर थोड़े से द्रव्य का प्रबन्ध किया। अपनी सैनिक वर्दी उतार कर नागरिकों की पोशाक उसी पैसे से खरीदी और तट पर पहुँचकर चीन जानेवाले जहाज पर चढ़ गया।

इधर बैरक में च्याङ्ग की गैरहाजिरी देखकर अधिकारियों ने उसकी ढूँढ़ आरम्भ की। शाम हो गयी और वह लौटकर नहीं आया। आता कैसे? इस समय तक तो वह समुद्र के वक्षस्थल को चीरता हुआ चीनाभिमुख हो चला था। बैरक में गैरहाजिर होने के अपराध में उसकी गिरफ्तारी की आज्ञा जारी की जा रही थी। जिस समय यह आज्ञा जारी हो रही थी उसी समय अधिकारियों के पास एक पारसल पहुँचा। उस पारसल में सैनिक वर्दी और एक तलवार बड़े सुरक्षित ढंग से रखी हुई थी। इस पारसल का भेजने वाला च्याङ्ग था जो अपने देश की यात्रा करते समय अपनी सैनिक वर्दी और अपनी तलवार उचित अधिकारियों के पास पारसल द्वारा वापस करके गया था।

यहीं से चीनी राष्ट्र के जीवन का नया अध्याय आरम्भ होता है। इसीके साथ साथ च्याङ्ग शेक भी परिस्थितियों की लहर में बह चला।

दूसरा अध्याय

प्रथम क्रान्ति और उसकी असफलता

१० अक्तूबर सन् १९११ ईसवी को वूचाङ्ग में मञ्चू शासकों के विरुद्ध क्रान्ति की भेरी बज उठी। उस समय तक चेङ्गचीमेई गुप्त रूप से चीन पहुँच चुके थे और क्रान्ति का नेतृत्व उन्होंने अपने हाथों में ले लिया था। चेङ्ग ने क्रान्ति की योजना भी बनाली थी। उनका इरादा था कि चेक्याङ्ग प्रान्त की राजधानी हाङ्गचउ नगर में क्रान्तिकारियों का अड्डा तथा क्रान्ति का मुख्य गढ़ स्थापित किया जाय। हाङ्गचउ नगर पर अधिकार स्थापित करके और उसे अड्डा बना कर फिर वहाँ से शङ्घाई के शस्त्रागार पर आक्रमण किया जाय तथा उसे भी अपने अधिकार में कर लिया जाय। एक बार शङ्घाई के शस्त्रागार पर अधिकार होने तथा अस्त्र शस्त्रों के हाथ लगने पर फिर क्रान्तिकारियों का रास्ता सरल हो जाता। उन अस्त्र शस्त्रों से वे अपने को सुसज्जित करते और क्रान्तिकारिणी सेना बनाकर शङ्घाई नानकिङ्ग रेल पथ के किनारे बसे हुए नगरों पर अपना झंडा गाड़ते। अन्त में

नानकिङ्ग पर अधिकार स्थापित कर वहाँ क्रान्तिकारी सरकार की स्थापना की जाती।

संक्षेप में येङ्क्वीमेई की यही योजना थी। इसी को कार्यान्वित करने के लिए वे दत्तचित्त थे और हाङ्गकाङ पहुँचकर इसी तैयारी में लगे हुए थे। यह महीना अक्तूबर का था। इसी समय च्याङ्काईशेक चुपचाप जापान से निकल भागे थे और जिस समय चीन में येङ्क अपना कार्यक्रम सिखा रहे थे उसी समय उन्होंने अपने सवा सौ क्रान्तिकारी साथियों के साथ चीन की भूमि पर कदम रखा था। च्याङ्काईशेक शङ्घाई में उतरे। यह नगर समुद्रतटवर्ती प्रमुख बन्दरगाह था। विद्रोह का शंख फूँका जा चुका था, अतः सरकार की ओर से कड़ी देख रेख और छान बीन आरम्भ हो गयी थी। क्रान्ति ने अब तक न तो कोई सफलता प्राप्त की थी और न चीन में उसका अधिक प्रभाव ही स्थापित हुआ था। शङ्घाई का तट गुप्तचर विभाग के अनुचरों से भर उठा था। ये बाहर से आने वाले चीनी क्रान्तिकारियों की खोज में अपनी गीध दृष्टि लगाये हुए ताक में बैठे रहते थे। इस स्थिति में च्याङ्काईशेक का अपने सैकड़ों साथियों के साथ शङ्घाई में उतरना कितना खतरनाक रहा होगा इसकी कल्पना सहज में ही की जा सकती है। पर 'मनस्वी कार्यार्थी गणयति न दु खम् न च सुखम्' जिसे कुछ करना होता है और जिसे कुछ करने का श्रेय प्राप्त होने वाला होता है उसकी सहायता अदृश्य शक्तियाँ भी करती हैं।

गुप्तचरों के बिछे हुए जाल का भेदन कर और उनकी आँखों में धूल झोंक च्याङ्काईशेक न केवल तट पर उतर गये बल्कि चुपचाप शहर में भी प्रविष्ट हो गये। तोक्यो में च्याङ्काईशेक की कार्रवाइयाँ सरकार को अज्ञात नहीं थीं। वह यह जान चुकी थी कि डाक्टर सनयातसेन जैसे प्रसिद्ध क्रान्तिकारियों से उनका मिलना-जुलना हुआ करता है। यद्यपि च्याङ्काईशेक के विरुद्ध अब तक कोई सबूत सरकार को नहीं मिला था पर क्रान्तिकारियों से मिलना-जुलना ही क्या कम था? उनके शंका और सन्देह उत्पन्न कर देने के लिए तो इतना ही काफी से अधिक था। जिस समय जापान से वे भागे उसी समय से चीनी गुप्तचर विभाग इस चेष्टा में था कि च्याङ्काईशेक यदि आयें तो चीनी तट पर चरण रखने के पहले ही गिरफ्तार कर लिये जायँ। पर गुप्तचर ताकते ही रह गये और च्याङ्काईशेक शङ्घाई में सुरक्षित प्रविष्ट हो गये। प्रवेश करते ही उन्होंने

पहला काम यह किया कि चेङ को अपने पहुँचने की सूचना दी और उनसे गुप्त तथा सुरक्षित स्थान में भेंट की।

चेङ से च्याङ की मुलाकात तोक्यो में हो चुकी थी। वे च्याङ को जानते थे और उनके व्यक्तित्व से प्रभावित हो चुके थे। उन्हें इस युवक पर विश्वास था और उसकी बुद्धि, ईमानदारी तथा सचाई पर भरोसा। चेङ ने अपनी योजना च्याङ तथा अन्य साथियों के सम्मुख रखी, पर उस योजना से ये लोग सहमत नहीं हो सके। इन लोगों का कहना था कि हमारा पहला लक्ष्य शङ्घाई के शस्त्रागार पर अधिकार स्थापित करना ही होना चाहिए। एक बार जहाँ यह शस्त्रभंडार अधिकार में आ गया कि फिर दूसरी तमाम बातों को पूरा करने में विलम्ब न होगा। चेङ ने साथियों की यह बात स्वीकार कर ली और अब पहला कदम शङ्घाई के शस्त्रभंडार पर आक्रमण के रूप में उठाना निश्चय किया। च्याङ्ङ शेक को उन्होंने क्रान्तिकारी सेना का सेनापति बनाया और उन्हींके साथ मिलकर उन्होंने इस आक्रमण की योजना तैयार करनी आरम्भ की।

दूसरी ओर सरकार को भी यह भय था कि क्रान्तिकारी इस शस्त्रागार पर आघात करेंगे, इसलिए उसकी रक्षा का समुचित आयोजन उधर से भी होने लगा। शस्त्रागार के रक्षकों की संख्या बढ़ा दी गयी, विशेष पुलिस तैनात की गयी और नदी में एक अग्नि-बोट लाकर छोड़ दिया गया, जिसमें समय आने पर यह रक्षा के कार्य में सहायता प्रदान कर सके। वुसुङ्ग के क़िले तथा अन्य सरकारी इमारतों की रक्षा का प्रबन्ध भी बड़ी सावधानी के साथ किया गया। शङ्घाई में रहने तथा बाहर से आने वालों पर केवल कड़ी निगाह ही नहीं रखी जाने लगी बल्कि उनकी गहरी छानबीन भी आरम्भ की गयी। होटल में, पार्कों में तथा अन्य सार्वजनिक स्थानों में क्रान्तिकारियों की खोज के लिए गुप्तचरों के झुंड के झुंड घूमते दिखायी देने लगे। शङ्घाई में अन्य राष्ट्रीय बस्तियाँ भी थीं। क्रान्तिकारियों के लिए यह लाभप्रद साबित हुआ। उन्हें वहाँ छिप रहना आसान ज्ञात हुआ। वहाँ से उनके परचे और समाचार पत्र निकलने लगे। इन परचों में मञ्चू सरकार को उखाड़ फेंकने तथा चीन में प्रजातन्त्र की स्थापना करने के लिए बार बार लोगों को उभाड़ा जा रहा था। धीरे धीरे परचों की संख्या बढने लगी और उनकी भाषा

तथा विद्रोहियों की सहायता करने के लिए जनता से अपील की जाने लगी। सरकार इस स्थिति को देखकर दहल उठी। क्रान्तिकारियों के प्रचार को रोकना उनके लिए कठिन हो गया। फलत उनकी ओर से भी विरोधी प्रचार होने लगा। जनता से सरकार की सहायता करने की अपील की जाने लगी। सम्भ्रान्त नागरिकों, बड़े बड़े महाजनों, श्रीमानों और धनिकों को सम्बोधन करके उन से सरकार की सहायता करने की प्रार्थना की जाने लगी। उन्हें क्रान्ति का भय दिखाया जाने लगा। कहा जाने लगा कि ये क्रान्तिकारी सब की सम्पत्ति लूट लेंगे, इसलिए भलाई इसी में है कि सरकार की सहायता की जाय।

शासक वर्ग के कार्य करने का ढंग और उनकी नीति प्राय सर्वत्र एक ही प्रकार की होती है। क्रान्ति के वेग को रोकने के लिए वे एक ओर दमन और दूसरी ओर स्थिरस्वार्थी वर्ग की सहायता पर सदा भरोसा करते हैं। ऐसा करते हुए वे इस ऐतिहासिक सत्य को भूल जाते हैं कि मानव प्रकृति का अटूट नियम है। वह विकास की चाहती है। मानव समाज का कल्याण इसी के द्वारा होता रहा है। आवश्यकताएँ और परिस्थितियाँ बदलती रहती हैं। परिवर्तित स्थिति एक नयी व्यवस्था की आकांक्षा करती है जो नवीन समस्याओं को [illegible] मानवता और सामाजिक हित रहती है [illegible] स्वयम् [illegible] हो जाती है। वे प्रगति के पथ में रोड़े का काम करने लगती है। इसी लिए प्रगति की धारा के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वह पुरानी व्यवस्थाओं का उन्मूलन करके [illegible] आरम्भ करे। यही ऐतिहासिक सत्य है। जिन्हें देखने की आँखें और विचार करने की बुद्धि होती है वे काल की प्रगति को समझ लेते हैं और तदनुसार परिवर्तन को अनिवार्य मान कर अपने को भी उसी सांचे में ढालने लगते हैं। पर जो मोह से अन्धे हुए रहते हैं वे निर्जीव साधनों से इस वेग को रोकने की चेष्टा करते हैं। यह चेष्टा प्रवाह के आघात को और अधिक तीव्र कर देती है और इसके धक्के से वह स्वयम् विचूर्ण हो जाना पड़ता है।

चीन की सरकार भी अब यही करने लगी थी। क्रान्तिकारी तो नवयुग के प्रतीक होते हैं। वे नवजीवन की आभा और नवचेतना का

स्पन्दन लेकर आते हैं। उनके मार्ग का अवरोधन सड़े, गले और जर्जर तत्वों से कैसे हो सकता है? फिर भी सरकार ने चेष्टा तो की ही—यद्यपि उसका कोई परिणाम नहीं हुआ। चेङचीमेई और च्याङ्काई शेक ने जो योजना बनायी थी वह अग्रसर हो चली।

योजना थी कि ३ नवम्बर को एक साथ ही हाँङ्चउ और शङ्घाई पर आक्रमण करके उन पर अधिकार स्थापित कर लिया जाय। शङ्घाई पर आक्रमण करने का भार चेङ ने स्वयम् अपने ऊपर लिया और हाङ्चउ को हथियाने की व्यवस्था च्याङ के ऊपर छोड़ी गयी। इस समय तक क्रान्तिकारियों के सामने बड़ी कठिनाइयाँ थीं। सरकार का भय तो था ही पर साथ ही साथ वे साधन हीन भी थे। उन के पास न अस्त्र-शस्त्र थे, न काफी धन और न अधिक संख्या में योग्य आदमी ही। फिर भी उनके पास जो कुछ उपलब्ध था उसे ही लेकर आगे बढ़ने का निश्चय उन्होंने किया।

अक्तूबर के अन्त में च्याङ चुपचाप हाङ्चाऊ के लिए रवाना हुए क्योंकि वहाँ जाकर आक्रमण की तैयारी करनी थी। इधर शङ्घाई का काम पूरा करने के लिए चेङ ने चेष्टा आरम्भ की। धीरे-धीरे तीन नवम्बर आ गयी। उस दिन दोपहर बाद तक सारा नगर शान्त भाव से अपने साधारण काम काज में लगा हुआ था। चेङ के नेतृत्व में [illegible] क्रान्तिकारियों ने चापेई के पुलिस थाने पर धावा किया और उस में आग लगा दी। फिर इसके बाद ही उस पर अधिकार स्थापित कर लिया। [illegible] प्रसिद्ध [illegible] क्रान्तिकारियों का सामना किया। उनकी संख्या इनसे कहीं अधिक थी, फिर भी वे विरोध में टिक न सके। विद्रोहियों ने नगर के मुख्य द्वार पर अधिकार स्थापित कर लिया और भीतर घुस कर मजिस्ट्रेट के वास स्थान पर धावा किया। शाम को ६ बजते बजते मजिस्ट्रेटालय भी उनके कब्जे में आ गया। फिर तो बागी आगे बढ़े और १०० से पचास की एक टुकड़ी ने शस्त्रागार के द्वार पर आक्रमण किया। रक्षकों ने प्रत्याक्रमण किया और आक्रमणकारियों पर एकबारगी गोलियों की वर्षा करना आरम्भ कर दिया। विद्रोहियों में से आठ तथा इस टुकड़ी के नेता तत्काल ही धराशायी हो गये। परन्तु वे गोलियों की बौछार से तनिक भी विचलित नहीं हुए और बड़े वेग से शस्त्रभण्डार

की ओर बढ़े। रक्षकों की गोलियाँ उनका हृदय चीर कर रक्त पान करने लगीं। इधर यह हत्याकांड मचा हुआ था और उधर पाकी के पचास विद्रोहियों की टुकड़ी शङ्घाई के गवर्नर तथा उनके सैनिक आफिस और भवनों पर अधिकार स्थापित कर रही थी।

पर क्रान्तिकारियों का मुख्य लक्ष्य तो था शस्त्रागार जिस पर अधिकार स्थापित करने में वे अब तक असमर्थ हुए थे। रक्षकों की संख्या क्रान्तिकारियों से कहीं अधिक थी। उनकी गोलियों से कतिपय क्रान्तिकारी अब तक परलोक सिधार चुके थे। चेङ ने देख लिया कि वह लड़ कर शस्त्रागार पर अधिकार स्थापन म समर्थ न हो सकेंगे। उन्होंने अनुभव किया कि व्यर्थ ही अपने आदमियों की हत्या कराने से कोई लाभ नहीं है। पर दूसरी ओर यह भी निश्चय था कि शास्त्रागार पर अधिकार किये बिना वह आगे का अपना काम चला ही नहीं सकते थे। इसलिए चेङ ने दूसरी नीति ग्रहण करने का निश्चय किया। निःशस्त्र और एकाकी वे शस्त्रागार के भवन में घुस गये और रक्षकों के सामने जाकर खड़े हो गये। रक्षकों से उन्होंने मातृभूमि के नाम पर अपील की और शस्त्र भंडार को विद्रोहियों के हाँथ सुपुर्द कर देने की प्रार्थना। परन्तु इस प्रार्थना का कोई प्रभाव उन पर नहीं हुआ। इसके विपरीत उन्होंने चेङ को गिरफ्तार कर लिया और एक कुरसी पर बैठा कर उन्हें जकड़ कर बाँध दिया। उन्होंने निश्चय किया कि विद्रोही नेता को अगले दिन अधिकारियों के हाथ सौंप दिया जाय।

चेङ की गिरफ्तारी का समाचार विद्रोहियों को मिला, तो इस घटना ने उनमें स्फूर्ति भर दी। उसने बिजली का सा काम किया। मुट्ठी भर विद्रोही रणोन्मत्त हो अपने प्राणों का मोह छोड़ कर शस्त्रागार पर टूट पड़े और सारी रात वे आक्रमण पर आक्रमण करते रहे। जो प्राणों का मोह छोड़ देता है उसके सामने किसी का टिकना कठिन हो जाता है। विद्रोहियों की दृढ़ता और शौर्य देखकर रोटियों के लोभ में रक्षक बने लोगों का धैर्य जाता रहा। भोर होते-होते रक्षकों का दम टूट गया और वे हट गये। विद्रोही विजय वैजयन्ती फहराते हुए शस्त्रागार के भवन में प्रविष्ट हुए और न केवल उस पर अधिकार कर लिया बल्कि सम्मानपूर्वक अपने नेता को भी छुड़ा लाये।

इधर चेङ ने सफलता प्राप्त की और उधर क्याङ्ङ्ई-शेक ने ऐसे ही सौ विद्रोहियों की टोली का नेतृत्व ग्रहण कर हाङ्गचउ पर आक्रमण

किया। च्याङ्कई ने ४ नवम्बर को दोपहर बाद अपना आक्रमण आरम्भ किया। इस समय तक शङ्घाई में चेक को सफलता मिल चुकी थी।

हाङ्गचउ में सरकारी रक्षकों की संख्या विद्रोहियों से कहीं अधिक थी। उनके पास अस्त्र शस्त्र भी काफी थे, पर इन विघ्नों की चिन्ता किये बिना ही च्याङ्कई ने अपनी टुकड़ी को लेकर धावा बोल दिया। विद्रोहियों की इस टुकड़ी में दो महिलाएँ भी थीं। शस्त्रों में विद्रोहियों के पास विशेष रूप से बहुत से हाथ से फेंकने वाले बम ही थे। बस उन्होंने बम फेंकना आरम्भ कर दिया। बमों के धड़ाके, विस्फोट और आघात से रक्षक हतबुद्धि हो गये। विद्रोहियों ने बढ़कर हाङ्गचउ के गवर्नर के वास स्थान पर भी आक्रमण कर दिया। भयभीत रक्षक प्राण बचाने के लिए भागे और विद्रोहियों ने गवर्नर के भवन पर कब्जा कर लिया। फिर क्या था, एक के बाद दूसरे सरकारी भवनों पर वे अपना झंडा गाड़ते गये। थोड़ा बहुत विरोध करके रक्षकों ने आत्म-समर्पण कर दिया। चौबीस घंटे भी नहीं बीत पाये थे कि सारा नगर विद्रोहियों के झंडे के नीचे आ गया और च्याङ्कई ने तुरन्त दूसरे ही दिन ५ नवम्बर को हाङ्गचउ में अस्थायी क्रान्तिकारी सरकार बना ली।

इन मुट्ठी भर विद्रोहियों की दृढ़ता ने कमाल कर दिया। शताब्दियों की सत्ता और अधिकार से अधिकृत मञ्चू राज्य व्यवस्था चौबीस घंटों में गिनती के विद्रोहियों की हुँकार से आपाद मस्तक हिल उठी। दो दिन पहले किसी को स्वप्न भी न था कि चीन के शासक के मस्तक पर इतना प्रचण्ड पदाघात करने की बात भी कोई सोच सकता है। पर आज शेर के मुख में हाथ घुसेड़ कर उसके जबड़े को तोड़ डालने वाले सामने खड़े थे। च्याङ्कई शेक के लिए जीवन का यह प्रथम अवसर था जब उसे बरसती हुई आग में नेतृत्व करने का काम मिला। जिस दृढ़ता, वीरता और स्वाभाविकता के साथ उसने युद्ध का संचालन किया उसे देखकर विद्रोही स्वयम् दंग रह गये। एक ही रात में च्याङ्कई सारे देश में वीर योद्धा के रूप में प्रसिद्ध हो गये। विद्रोहियों की यह विजय क्रान्ति के रथ को तीव्र वेग से आगे बढ़ाने में समर्थ हुई। लोगों का ध्यान तो आकर्षित हुआ ही, साथ ही यह भी विश्वास उत्पन्न हो गया कि दृढ़ संकल्प लेकर आगे बढ़े हुए लोग, प्राणों की बाजी लगा देने पर, असम्भव को भी सम्भव कर दे सकते हैं।

ह्वाङ्ग शेन ने अस्थायी क्रान्तिकारी सरकार की स्थापना तो की पर स्वयम् कोई पद ग्रहण नहीं किया। दूसरे साथियों पर सरकार के सचालन का भार छोड़कर वे तुरन्त शङ्घाई लौट आये। चेंङ इस समय शङ्घाई में थे। अब दोनों के सामने दूसरा कदम उठाने का प्रश्न उपस्थित था। क्रान्ति की एक मंजिल समाप्त हो गयी थी पर अब इससे अधिक आवश्यक और महत्वपूर्ण तथा कठिन काम सामने था।

विद्रोहियों का दूसरा लक्ष्य था नानकिङ। वे अब इस पर अधिकार प्राप्त करने की तैयारी करने लगे। पर नानकिङ को कब्जे में करना सरल काम नहीं था। यहा सरकारी शक्ति काफी अधिक थी और उसका सामना करना साधारण आन्दोलन के बूते की बात नहीं थी। क्रान्तिकारियों के पास न धन-जन था और न दूसरे साधन। पर कठिनाइयाँ चाहे जो रही हों उन्होंने तो अपना लक्ष्य पूरा करने का निश्चय किया था। ह्वाङ्ग शेन के ऊपर यह भार डाला गया कि वे क्रान्तिकारी सैनिकों को सैनिक शिक्षा दें और नानकिङ पर आक्रमण करने के योग्य बनावें। विद्रोहियों ने कुछ लोगों को भरती कर सेना की एक टुकड़ी खड़ी की थी। पर जो लोग भरती किये गये थे न उपयुक्त ही थे, और न योग्य ही। लफङ्गे, गरीब और समाज की निम्न श्रेणी के ही लोग तो आये थे। भूखे नङ्गे लोगों को छोड़कर इस कार्य में योग देने वाला और कौन था? जो आये थे वे यद्यपि मलिन और शोषित होने के कारण प्रकृति से ही सरकार तथा स्थापित व्यवस्था के विरोधी थे फिर भी वे केवल क्रान्ति भाव को ही लेकर नहीं आये थे। वे लड़ने को तैयार थे, पर साथ साथ भोजन, वस्त्र और पुरस्कार भी तो चाहते थे। अपढ़ और निरक्षर तथा दबे हुए लोगों से इससे अधिक और क्या आशा की जा सकती थी? ऐसे ही लोगों को लेकर क्रान्ति करनी थी और उस महत्कार्य के लिए उन्हें सिखा पढ़ाकर तैयार करने का भार ह्वाङ्ग शेन पर छोड़ा गया था।

उत्साह और धीरता के साथ ह्वाङ्ग शेन ने इस भार को उठाया। बरसों जापान में रहकर उन्होंने जो विद्या सीखी थी और जिसका उपयोग देश की स्वतन्त्रता के कार्य में करने का स्वप्न वे देखा करते थे उसे आज पूरा करने का अवसर उन्हें प्राप्त हुआ था। ५ नवम्बर को हाङ्गचउ में अस्थायी क्रान्तिकारी सरकार की स्थापना हुई। अब नानकिङ पर आघात करना था। क्रान्तिकारी जानते थे कि



फ़रवरी १९१२ की याङचे की शान्ति सेना के चीनी सैनिकों की वेश भूषा



याङ्चे पर क्रांतिकारियों का अधिकार हो जाने के बाद चानी छात्रों और छात्राओं
का क्रान्तिकारी पताका लिये हुए जुलूस

ध्वनि और नगर की सजावट मानों उन्हीं का स्वागत कर रही थी। शंघाई पहुँच कर वे सीधे नानकिंग गये। १ ली जनवरी सन् १९१२ को चीनी प्रजातन्त्र के प्रथम अध्यक्ष पद पर उनका अभिषेक किया गया।

नव वर्ष नव आशा और नवजीवन लेकर आया था। डाक्टर सनयात का अभिषेक बड़ी धूमधाम से किया गया। सारे शहर में उत्साह उमड़ा पड़ता था। नगर का कोना-कोना सजाया गया, रात को दीपावली मनायी गयी और तोपों ने गरज कर नये चीन के जन्म ग्रहण करने की शुभ सूचना दी। इधर आतिशबाजियाँ छूट रही थीं और लोग रँगरेलियाँ कर रहे थे और उधर क्रान्तिकारी नेतावृन्द अपने सिर बड़ी जिम्मेदारी के बोझ से दबे जा रहे थे। वे हर्ष के अतिरेक में यह नहीं भूल सके थे कि क्रान्ति का काम अभी आरम्भ ही हुआ है, मञ्चू सरकार अभी तक स्थापित है और उसे उखाड़ फेंकने के लिए अभी भारी युद्ध करना है जिसकी तैयारी में उन्हें अपनी सारी शक्ति लगानी पड़ेगी! फिर यह तैयारी भी छोटी मोटी नहीं थी। वह बड़ी जटिल और घनी थी। न उसका मार्ग ही सरल था और न उसका कार्यक्रम भारी प्रशस्त! आवश्यक साधनों को जुटाने का बड़ा भारी काम अभी सामने था।

मञ्चू सरकार ने भी क्रान्तिकारियों का सामना करने के लिए अपना क्रम निश्चय कर लिया था। उन्हें कुचलने के लिए उसकी सेना तैयार हो रही थी। सरकार का एक विश्वासघाती क्रान्तिकारी भी मिल गया था। इस व्यक्ति का नाम युआनशिकाई था। यह पहले मञ्चू सरकार का उच्च सैनिक पदाधिकारी था। पर था यह व्यक्ति बड़ा महत्वाकांक्षी। राज दरबार को निर्बल देखकर वह स्वयम् शासन-सत्ता को अपनाने की छिपे छिपे चेष्टा करने लगा था। सेना तो उसके हाथ में ही थी। मगर राज दरबार उसकी इस चाल से परिचित हो गया और उसे निकाल बाहर करने में ही उसने अपना कल्याण देखा। फलतः युआन बर्खास्त कर दिया गया और बरखास्त होने पर वह सरकार का विरोधी होने का दम भरने लगा। पर ज्योंही विद्रोह की आग भड़की और मञ्चू राजकुल ने यह अनुभव किया कि वह इस आग से अपने को बचाने में असमर्थ हो रहा है कि उसने पुनः युआन को अपनी सहायता के लिए बुलाया।

युआन ने देखा कि मौका अच्छा है। मञ्चू राजाओं से उसे प्रेम नहीं था पर साथ ही क्रान्तिकारियों से भी उसे भय था। उसने भाँप

होगी। ऐसी दशा में यदि कोई रास्ता निकल सके तो वे उसके ऊपर विचार करने तथा उस पर आरूढ़ होने के लिए तैयार थे। एक बात पर तो वे अवश्य अड़े थे। उनका लक्ष्य था कि मञ्चू शासन सत्ता समाप्त की जाय और चीन में प्रजातन्त्र स्थापित हो। इस से अधिक वे कुछ नहीं चाहते थे। युआन ने भी रास्ता सोच लिया था। उसने विचार किया कि मञ्चुओं से प्रजातन्त्र के पक्ष में राजपद का त्याग कराया जाय और क्रान्तिकारियों से कहा जाय कि व स्वयम् उसे ही उसका अध्यक्ष स्वीकार करें। इस विचार से उसने यही लक्ष्य सामने रखकर कार्य करना आरम्भ किया। मञ्चू राजकुल के युवक राजा पर दबाव डालकर १२ फरवरी सन् १९१२ को यह घोषणा करा दी गयी कि वे प्रजातन्त्र के पक्ष में अपनी गद्दी का त्याग करते हैं और युआन को अधिकार देते हैं कि प्रजातन्त्रात्मक सरकार की स्थापना करे।

इस घोषणा से विद्रोहियों का तात्कालिक लक्ष्य पूरा हो गया। डाक्टर सनयातसेन के जीवन का लक्ष्य था मञ्चू कुल को गद्दी से उतार कर प्रजातन्त्र की स्थापना करना। अब यह दोनों उद्देश्य पूरे होते दिखायी दिये। अब प्रश्न यह था कि प्रजातन्त्र के अध्यक्ष वे बने रहें या युआन को होने दें। यदि दो प्रजातन्त्रात्मक सरकार बनती हैं तो देश में अशान्ति फैली रहेगी और युद्ध जारी रहेगा। डाक्टर सनयातसेन को युआन पर विश्वास नहीं था। वे जानते थे कि यह व्यक्ति महत्वाकांक्षी अवश्य है परन्तु निरंकुशवादी भी और प्रतिगामी है। यह राय जानते हुए भी उनके सामने प्रश्न यह था कि यदि युआन को प्रजातन्त्र सरकार नहीं बनाने दी गयी तो गृहयुद्ध की आग भड़कती है। वे यह भी अनुभव कर रहे थे कि विद्रोहियों के पास इतनी शक्ति तो है नहीं कि निश्चित रूप से उनकी विजय की बात कही जा सके। इसलिए डाक्टर सनयात ने यह निश्चय किया कि अस्थायी पार्लियामेन्ट भंग कर दी जाय और युआन के पक्ष में वे उसके अध्यक्ष पद से त्यागपत्र दे दें। परन्तु उनके साथियों ने उनकी इस नीति का विरोध किया। च्याङ्गई ने भी इसका समर्थन नहीं किया, पर डाक्टर सनयात के समझाने-बुझाने पर लोग मान गये। इस परिस्थिति में १४ फरवरी को उन्होंने अध्यक्ष पद को त्याग करते हुए युआन को प्रथम प्रजातन्त्र सरकार की स्थापना

करने के लिए आमन्त्रित किया। अस्थायी पार्लियामेन्ट ने अपने नेता का त्यागपत्र सशंक हृदय और भयग्रस्त मन के साथ स्वीकार किया तथा प्रजातन्त्र का भविष्य युआङ्ग के हाथों में समर्पण कर दिया।

इस प्रकार युआङ्गशिकाई चीनी प्रजातन्त्र के अध्यक्ष हो गये। अध्यक्ष होते ही उन्होंने अपनी स्थिति को सुदृढ करने का निश्चय किया। एक बार क्रान्तिकारी मार्ग स्थापित हो गया था और अब क्रान्ति का कार्यक्रम ऐसी मंजिल पर पहुँच गया था जहाँ प्रगतिशील शक्तियों को थोड़ा विश्राम करने के लिए रुकना आवश्यक था। यह तो स्पष्ट था कि क्रान्ति ने सर्वांश में अपना लक्ष्य पूरा नहीं कर पाया था। यह सच है कि उसने राज्यतन्त्र की जड़ खोद कर फेंक दी और मञ्चू राजा पदच्युत कर दिये गये, पर उसका काम इतना ही नहीं था। इससे भी महान कार्य था देश के भाग्य का सूत्र वास्तविक प्रजातन्त्रात्मक सरकार के हाथों में समर्पित करना। यह लक्ष्य अभी पूरा होने को बाकी पड़ा था। आज तो एक दकियानूसी व्यवस्था से देश का पिंड छूटा था, पर सत्ता दूसरे प्रतिगामी के हाथ में चली गयी थी। पर विद्रोहियों के लिए उपयुक्त अवसर आने तक इस स्थिति के सामने सिर झुकाने के सिवा दूसरा मार्ग भी नहीं रह गया था।

अक्सर क्रान्ति के बाद यह स्थिति उत्पन्न हो ही जाती है। अनेक देशों के इतिहास में हम ऐसी ही घटना घटित होते देखते हैं। रूस में अक्तूबर की बोलशेवी क्रान्ति के पहले एक क्रान्ति और हो चुकी थी जिसमें ज़ारशाही विनष्ट हो गयी थी, पर शासन सत्ता वास्तविक क्रान्तिकारियों के हाथों में आने के पूर्व केरेन्स्की की मुट्ठी में पहुँच गयी। इसलिए अक्तूबर में पुनः क्रान्ति करके केरेन्स्की का निष्कासन करने में बोलशेविकों को अपनी सारी शक्ति लगा देनी पड़ी थी। तुर्की में सन् १६०८ में नवतुर्क क्रान्ति हुई, पर नवतुर्कों के नेता अनवर और कमाल के हाथों में शासन-सत्ता नहीं आयी। उसे बीच में लोक लेने वाले दूसरे ही थे जिन्हें बाद में निकालने का काम अनवर को करना पड़ा। तुर्की में तो क्रान्ति की पूर्णाहुति इसके भी दस वर्ष बाद हुई जब महायुद्ध के बाद कमाल पाशा को अनवरबे को निकाल बाहर कर तुर्क प्रजातन्त्र की स्थापना करनी पड़ी। फ्रान्स की प्रसिद्ध राज्यक्रान्ति भी आगे चल कर नैपोलियन को जन्म देने में सफल हुई और वास्तविक तथा शुद्ध प्रजातन्त्र की स्थापना तो नैपोलियन के

पतन के बाद ही हो सकी। इसलिए यदि इतिहास की ओर देखा जाय तो घटनाओं का प्रवाह प्राय इसी प्रकार बहता दिखायी देता है। चीन म भी यही घटना हुई। युआङ के आगमन ने द्वितीय और तृतीय क्रान्ति का बीजारोपण कर दिया। क्रान्ति के विधाताओं ने भी इसी समय मे यह समझ लिया कि उन्हे भविष्य में अभी काफी लड़ाई लडनी पडेगी क्योंकि उनका लक्ष्य पूर्णांश में सफल होना बाकी था।

चीन क इन विद्रोहियों को विश्राम करने के लिए छोड़ कर अब युआङ की ओर दृष्टिपात करना आवश्यक है। नवनिर्मित चीनी प्रजातन्त्र की अध्यक्षता ग्रहण करके युआङ ने अपनी स्थिति को सुरक्षित करने की ठानी। वह यह तो जानता ही था कि समय पैर फूँक फूँक कर रखने की अपेक्षा कर रहा है। डाक्टर सङ्यातसेन ने प्रजातन्त्र की स्थापना के बाद तुङ्मिङहुई नामक क्रान्तिकारी समिति का पुनर्संगठन करना चाहा। इस समिति की स्थापना तोक्यो म सन् १९०५ में हुई थी और इसका लक्ष्य मञ्चू सरकार को खतम करके प्रजातन्त्र की स्थापना करना था। जब डाक्टर सङ्यात चीन आये और प्रजातन्त्र स्थापित हो गया तो उन्होंने यह अनुभव किया कि अब देश में ऐसा राजनीतिक दल बनाने की आवश्यकता है जो पार्लियामेन्टरी काम भी कर सके। इस दृष्टिकोण को लेकर उन्होंने तुङ्मिङ हुई का विघटन किया और कुओमिङताङ के नाम से अपना एक नया राजनीतिक दल बनाया।

यह वस्तुत चीन के प्रगतिशील पक्ष का राजनीतिक दल बना। देश में इस दल का प्रभाव बढ़ता जा रहा था। युआङ ने अनुभव किया कि वह सहसा कोई काम ऐसा नहीं उठा सकता जो जन मत के विरुद्ध हो, इसलिए ऊपर-ऊपर जन पक्ष का समर्थक होने का ढोंग रचते हुए वह अपनी स्थिति सुदृढ़ कर लेने की तिकड़म रचने लगा। उसने यह समझ लिया कि राष्ट्रीय उथल पुथल के जमाने में विजय उसी की होती है जिसके हाथ म सैनिक शक्ति हो। इसलिए सेना का ऐसा सुदृढ़ और सुआयोजित सगठन करने की चेष्टा की जाने लगी जो हर हालत में उसका ही समर्थन करे। देश के कुछ प्रतिष्ठित और होशियार सैनिक अफसर युआङ के साथी थे। उन्हें लेकर उसने सेना का नये सिरे से सगठन आरम्भ किया। इस सगठन करने में इस बात पर भी दृष्टि रखी गयी कि यथा सम्भव उन अधिकारियों और

सैनिकों को छाँट दिया जाय जो क्रान्तिकारियों के नेता अथवा उन नेताओं के नेतृत्व में रहे हैं। यह छँटाई शुरू हुई और चुन-चुनकर ऐसे लोग अलग किये जाने लगे। इसका नतीजा यह हुआ कि च्याङ्कई-शेक भी पद त्याग करके अलग हो गये। धीरे धीरे इस नीति की सफलता के साथ साथ युआङ का बल और प्रभाव बढने लगा।

पर उसने अपनी स्थिति को दृढ़ आधार पर स्थापित करने के लिए एक और नया दाव खेला। आर्थिक दृष्टि से इस समय चीन का दिवाला निकल चुका था। सरकार के पास पैसा बिलकुल नहीं था और जनता की गरीबी भूख तथा तबाही नये नये टैक्स लगाने के मार्ग में बाधक थी। युआङ ने देख लिया कि बिना धन के वह अपनी योजनाओं को पूरा नहीं कर सकता। उसने यह भी अनुभव किया कि जनता की आर्थिक दशा का सुधार करने के लिए भी कुछ आर्थिक कार्यक्रम चलाना चाहिए। भूखी और नगी जनता भयावनी होती है। असन्तोष, बगावत और उपद्रव के कीटाणु भूखे लोगों पर जल्दी असर करते हैं। इस विचार से वह धन-सचय की फिकर करने लगा। उसने अनुभव किया कि धन की प्राप्ति का एक ही उपाय है और वह है विदेशों से ऋण लेना।

चीन पर पूँजीवादी देशों के बड़े-बड़े पूँजीपतियों, आर्थिक नेताओं और महाजनों की दृष्टि लगी हुई थी। पूँजीवाद तो मूलतः ही पिछड़े देशों के शोषण पर फलता फूलता है। उत्पादन के नये वैज्ञानिक साधनों से उत्पन्न वस्तुओं से उसने सारे संसार के बाजारों को पाट दिया है। इसलिए पूँजीवादी देश पारस्परिक प्रतिस्पर्द्धा की आग में जला करते हैं। पूँजीवादी नये हाट, नये बाजार तथा औद्योगिक दृष्टि से अनुन्नत देशों की खोज मे भटकते रहते हैं। जहाँ ऐसे प्रदेश मिले कि सबके सब उसी प्रकार टूटते हैं जैसे बाज सवा पक्षी पर। एशिया के अनुन्नत देशों में चीन और भारत से बढ़कर क्षेत्र दूसरा कहाँ मिल सकता है। भारत तो अँगरेजों का अधीन और अधीन प्रदेश हो ही चुका था पर चीन स्वतन्त्र होते हुए भी उनकी दुर्नीति का शिकार बन रहा था। विशेषाधिकारों और विदेशी प्रभाव-क्षेत्रों की सृष्टि इसी कारण तो हुई थी। ऐसी हालत में विदेशी पूँजीपति तो मुँह बाये खड़े थे कि उन्हें चीन के मामले में नाक घुसेड़ने का मौका मिले। युरोप के सब देश चीन में अपनी पूँजी लगाने को तैयार थे। युआङ ने देखा कि वह न केवल विदेशी पूँजीपतियों से धन प्राप्त

सकता है बल्कि उनका समर्थन भी उसे मिलेगा। जो लोग रुपये लगायेंगे व स्वभावत चाहेंगे कि ऐसे आदमी के हाथों में शासन सत्ता रहे जो उनके इशारे पर चले, क्योंकि इसी में उनके स्वार्थ की रक्षा थी। वे यह भी चाहेंगे कि शासन उसी के हाथ में हो जो सुदृढ व्यवस्था बनाये रखे और चीन में क्रान्तिकारी विचार की सरकार न हो जो प्रति दिन उथल पुथल करती रहे तथा देश के सम्मान के लिए विदेशियों के हस्तक्षेप का विरोध करे।

यह सब समझ बूझकर युआन ने अन्तर्राष्ट्रीय ऋण लेने का निश्चय किया। इसके फलस्वरूप ६ राष्ट्रों ने मिलकर चीन को ऋण देने की व्यवस्था बनायी। यह ६ अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रान्स, जर्मनी, रूस और जापान। उस समय रूस भी जारशाही के अधीन था। इन राष्ट्रों ने मिल कर एक अन्तराष्ट्रीय समिति बनाया जिसका काम यह था कि चीन को दिये जाने वाले अन्तराष्ट्रीय ऋण की व्यवस्था और नियन्त्रण करे। ऋण पत्र का मसविदा बना और शर्तें तय की गयीं। यह शर्तें देखने में तो बड़ा उदार थीं पर व्यवहार में बडी कठोर और दम घोटनेवाली। या या कहा जाय कि ये शर्तें स्वतन्त्र चीन की अक्षुण्ण सत्ता पर कुठाराघात करने वाली थीं क्योंकि इनका अर्थ यह था कि देश में प्रजातन्त्र के बढ़ते हुए वेग का अवरोधन किया जाय। पाठक देखेंगे कि चीन कैसे भेडियों का ग्रास हुआ जा रहा था। एक प्रकार से चीन के मामले में इन विदेशी राष्ट्रों का हस्तक्षेप अवश्यम्भावी हो रहा था।

स्वयम् अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति विलसन ने यह बात स्वीकार की थी। उन्होंने अपने देश के महाजनों से कहा था, "सरकार उन महाजनों का समर्थन न करेगी जो चीन को दिये जाने वाले इस ऋण में शरीक होंगे, क्योंकि यह कर्ज ऐसी शर्तों को लगा कर लिया जा रहा है जो चीन की स्वतन्त्रता पर स्पष्ट आघात करती हैं। हमारा देश ऐसी नीति में सहायक नहीं हो सकता।"

विलसन प्रगतिशील विचारों के व्यक्ति थे। उनकी इस फटकार से अमेरिकन महाजन आग चल कर इस कुचक्र से हट गये। परन्तु युआन को इसकी क्या चिन्ता थी। वह तो अपना अधिकार जमाने की फिक्र में अन्धा हो रहा था। ऋण सम्बन्धी शर्तनामे पर २ अप्रैल को युआन ने हस्ताक्षर कर दिये। जिस अस्थायी शासन विधान के अनुसार युआन प्रजातन्त्र का अध्यक्ष बना था वह उसे

बिना पार्लियामेन्ट से पूछे और उसकी स्वीकृति प्राप्त किये किसी प्रकार का ऋण लेने का अधिकार प्रदान नहीं करता था। विदेशी सरकारें इस वैधानिक स्थिति से अपरिचित नहीं थीं, फिर भी इसकी चिन्ता न युआङ ने की और न विदेशी सरकारों ने। दोनों का स्वार्थ एक दूसरे का समर्थन करने में था। परस्परम् भावयन्त में ही उनका काम बनता था। विदेशी सरकारों ने घोषणा की कि चीन की रक्षा करने का एक मात्र उपाय यही है कि इस उथल पुथल के युग में उसका भाग्य-सूत्र बलशील हाथों में हो। उनके विचार में ऐसा व्यक्ति युआङ ही था और वही चीन की नौका पार लगा सकता था। इस प्रकार वैध और अवैध की चिन्ता छोड़ कर उन्होंने चीनी पार्लियामेन्ट की स्वीकृति के बिना ही कर्ज देना उचित समझा।

विदेशी सरकारों की राजधानियों में चीन के लिए कर्ज देने की घोषणा कर दी गयी और कुछ ही समय में ढाई करोड़ पाउँड युआङ के सुपुर्द कर दिया गया। वास्तव में युआङ ने यह बड़ी रकम अपने लिए उधार ली थी। इसी के द्वारा वह अपनी सेना तैयार कर के चीन में अपना राज-वंश स्थापित करने की योजना बना चुका था। यह धन पाते ही उसने अपना काम भी आरम्भ कर दिया। कतिपय प्रान्तीय गवर्नरों को उसने इस रकम में से खासा हिस्सा दिया और घूस देकर उन्हें अपनी ओर मिला लिया। कतिपय गवर्नरों से उसने अपनी रिश्तेदारी स्थापित की। बड़े-बड़े सैनिक अफसर लम्बी तनख्वाह पाकर उसके भक्त बने। थोड़े ही दिनों में एक लम्बी चौड़ी सेना एकत्र हुई और युआङ ने उन स्थानों पर जहाँ विद्रोहियों का प्रभाव था अपने सैनिकों को ले जाकर स्थापित कर दिया। विद्रोही तो युआङ की यह नीति देखकर घबड़ा उठे, पर अभी तक समय नहीं आया था कि वे कुछ कर सकते। इसी बीच और भी घटनाएँ घटीं। युआङ ने धीरे-धीरे विद्रोहियों का दमन करना आरम्भ कर दिया। जिनसे उसे भय था उन का लोप कर देना ही बुद्धिमानी समझी गयी। चीनी अस्थायी पार्लियामेन्ट में डाक्टर सुन्यात सेन की पार्टी कुओमिङ्-ताङ के सदस्यों का बहुमत था। पार्लियामेन्ट का प्रधान मन्त्री इसी समय निर्वाचित होने वाला था। कुओमिङ्ताङ ने अपनी बैठक में यह निश्चय किया कि वह प्रधान मन्त्रित्व के लिए अपना प्रतिनिधि खड़ा करे। इसके लिए उसने अपने एक नेता सुङ्-च्याव-जेङ को उम्मीदवार बनाया।

सुङ्ग तथा कुओमिङ्ताङ का मत यह था कि पार्लियामेन्ट की पद्धति के अनुसार मन्त्रिमंडल की स्थापना की जाय। युआङ दलगत सरकार के संगठन का विरोधी था। उसने अनुभव किया कि इस प्रकार दलगत सरकार बनने से सारा शासनाधिकार ऐसे दल के हाथ में केन्द्रीभूत हो जायगा जो उसका विरोधी है। पर कुओमिङ्ताङ के प्रभाव से भी वह परिचित था। इसलिए उसने सोचा कि भावी प्रधान मन्त्री को ही क्यों न खतम कर दिया जाय। २१ मार्च को जब सुङ्ग शङ्घाई के रेलवे स्टेशन पर पेकिङ्ग जाने के लिए इन्तजार कर रहे थे एक आततायी ने उन पर आक्रमण किया और उन्हें बुरी तरह घायल कर दिया। सुङ्ग इस आघात से उबर न सके और दूसरे ही दिन उनकी मृत्यु हो गयी। आक्रमणकारी भी गिरफ्तार कर लिया गया था तलाशी में उसके घर में जो कागजात मिले उनमें कुछ तार भी थे जिनसे सिद्ध होता था कि इस हत्या के षडयन्त्र में युआङ का भी हाथ था। इस घटना से देश में, और विशेष कर दक्षिण चीन में, जहाँ क्रान्तिकारियों का अच्छा प्रभाव था, व्यापक क्षोभ फैल गया। डाक्टर सनयात सेन स्वयम् बेतरह क्रुद्ध हुए। उनके लिए भी अब युआङ की दुर्नीतियों को सहन करना असम्भव होने लगा। उन्होंने तुरन्त युआङ को रोषपूर्ण तार भेजा जिसके शब्दों से ही डाक्टर सुनयात के भावों का पता चलता है। लिखा था 'आप देश के साथ और उसके हित के प्रति विश्वासघात कर रहे हैं। जिस प्रकार मैंने मञ्चू राजवंश का विरोध किया था उसी प्रकार मुझे आपका विरोध करना भी आवश्यक हो गया है।"

पर युआङ पर इन धमकियों का कुछ भी प्रभाव न हुआ। वह अपनी दुर्नीति पर अड़ा रहा और देश में गड़बड़ी तथा दमन और अत्याचार का बाजार गरम रहा। पर जुल्म की नौका वहीं तक चल सकती है। युआङ की नीति के विरुद्ध अब देशव्यापी असन्तोष फैलने लगा था। ऊपर कहा जा चुका है कि कतिपय प्रदेशों के गवर्नरों का घूस देकर तथा उनके परिवार से रिश्तेदारियाँ कायम करके युआङ ने उन्हें मिलाने की चेष्टा की थी। पर कुछ गवर्नर ऐसे भी थे जो इस पाप में सहायक नहीं हुए। क्याङ्सी के लि सिङ-चुङ, अङ्हवेई के पोवेङ्हुई तथा क्वाङ्तुङ के हू हान मिङ्ग आदि ने युआङ की स्वार्थ रो की नीति तथा शासन के ढंग का विरोध किया। इसलिए उस

ने इन विरोधियों को भी उखाड़ फेकने का निश्चय किया। एक दिन आज्ञा निकाल दी गयी कि ये लोग अपने पदों से बर्खास्त कर दिये गये। बर्खास्तगी के साथ साथ युआङ के सैनिक इनके अधीन प्रदेशों को अधिकृत करने के लिए आगे बढ़े। चीन महादेश है और वहाँ के विभिन्न प्रदेशों मे गवर्नरों के रूप में सामन्त लोग शासन करते चले आते हैं। ये केन्द्रीय सरकार के अधीन होते थे। ये क्षत्रप न केवल प्रान्तीय शासन के सर्वोच्च अधिकारी होते वरन् ये अपने प्रदेशों की रक्षा के लिए स्थानीय सेना के भी अधिपति बने थे। इस व्यवस्था में जो दोष था वह स्पष्ट है। केन्द्रीय सरकार के निर्बल होने पर बहुधा ये क्षत्रप स्वतन्त्र हो जाया करते। यों भी केन्द्रीय सरकार इनकी शक्ति से सदा त्रस्त रहा करती। चीन में यह व्यवस्था बहुत दिनों से थी। च्याङ्काई शेक ने इसके खतरों को देखकर प्रथम क्रान्ति के बाद ही यह आवाज उठायी थी कि चीन की केन्द्रीय सरकार की दृढ़ता के लिए इस नीति में परिवर्तन करना आवश्यक है। बीस वर्ष बाद जब वे देश के भाग्य सूत्र के ग्रहणकर्ता बने तो उन्होंने प्रान्तीय क्षत्रपों के दमन का काम पूरा किया। पर इस समय तो ये शासक भी बहुत कुछ बल रखते थे। इसलिए उन्होंने युआङ की चुनौती स्वीकार की और अपनी बर्खास्तगी की आज्ञा के उत्तर मे अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा कर दी। क्याङसी, अङ्हवेई तथा क्वाङतुङ्ग के गवर्नरों ने एक के बाद दूसरे ने स्वतन्त्रता घोषित की और युआङ की आती हुई सेना का मुकाबला किया। नाङकिङ्ग, फूकेङ, तथा हूनाङ्ग के गवर्नरों ने भी इनका साथ दिया और अपनी स्वतन्त्रता घोषित कर दी।

च्यांङ्ई शेक इस समय जापान में थे। युआङ के पदासीन होने के बाद वे अपने सैनिक पद का त्याग कर चुके थे और पद त्याग करके वे पुन जापान चले गये थे। वहाँ वे उच्च सैनिक शिक्षा ग्रहण कर रहे थे और साथ-साथ राजनीति, इतिहास था शासन-तन्त्र विधान का भी उन्होंने अध्ययन प्रारम्भ किया था। वहीं से वे सैन्य विज्ञान के सम्बन्ध म एक मासिक पत्र भी निकालने लगे जिसमे चीन के विविध राष्ट्रीय प्रश्नों की विवेचना करते और उसके भविष्य के लिए अपना मत प्रकट करते थे। च्याङ्कई शेक के लेख गम्भीर, विद्वत्तापूर्ण और दूरदर्शिता से भरे हुए होते। पच्चीस वर्ष के इस युवक मे इतना

गम्भीर चिन्तन था यह देखकर लोग चकित होते। पर इस समय च्याङ्कई भावी सैन्य संगठन तथा एशिया की उत्कृष्ट राजनीति के सम्बन्ध की तैयारी कर रहे थे। जिस समय चीन में, गवारों का विद्रोह शुरू हुआ वे जर्मनी जाने की तैयारी में लगे थे।

यह विद्रोह चीन के क्रांतिकारी दल की ओर से नहीं हुआ था और न उनके द्वारा आयोजित तथा संचालित था। वास्तव में वे उसके लिए न तो तैयार थे और न यह जानते थे कि ऐसी घटना होने वाली है। पर चाहे किसी क्षेत्र से हो, जब जागरण हो गयी तो उन्होंने यह निश्चय किया कि बागियों की सहायता करनी चाहिए। च्याङ्कई ने जर्मनी की यात्रा स्थगित की और वे चीन जा पहुँचे। यह महीना था जुलाई का। फरवरी में युआड ने प्रजातंत्र की अध्यक्षता स्वीकार की और जुलाई के तृतीय सप्ताह में यह विद्रोह हो गया। च्याङ्कई शीघ्र शङ्घाई में उतरे और अपने पुराने साथी चेन्चिमेई से मिले।

शङ्घाई पर युआड की सेना का अधिकार था। चेन और च्याङ्क ने मिलकर योजना बनायी और उन्होंने पुनः शङ्घाई के शस्त्रभंडार पर अधिकार स्थापित करने का कार्यक्रम स्थिर किया। इस योजना के अनुसार चेन ने शङ्घाई की स्वतन्त्रता घोषित कर दी। लुङ्हुआ नामक स्थान में क्रान्तिकारी सैनिक एकत्र हुए और एक बार फिर च्याङ्क के सेनापतित्व में बागियों की छोटी सी सेना शस्त्रागार की ओर बढ़ी। पर इस बार उसका सामना गिरे हुए मञ्चुओं की सेना से नहीं था। युआड, जो भारी तिकड़म समझता था, पहले से ही इसका प्रबन्ध कर चुका था। २८ जुलाई को विद्रोहियों ने आक्रमण किया। करीब ३६ घंटे तक लड़ाई होती रही पर विद्रोही शस्त्रागार पर अधिकार स्थापित न कर सके। विद्रोहियों की वीरता प्रशंसनीय थी, च्याङ्कई का साहस देखने लायक था। डाक्टर सुङ्यात तो इस युवक का शौर्य, उसकी धीरता और दृढ़ता देखकर मुग्ध हो गये; स्वयम् विरोधियों ने उसका लोहा माना, पर क्रान्तिकारी अपने लक्ष्य में सफल न हुए। अन्त में उन्हें हट जाना पड़ा।

युआङ ने इस विद्रोह को दबा दिया क्योंकि उसने सैनिकों का सुदृढ़ संगठन कर लिया था। विद्रोही प्रान्तीय शासक भी दबा दिये गये। डाक्टर सुङ्यातसेन जो देश की स्वतन्त्रता के लिए अपने जीवन को अर्पण कर चुके थे अब तक सफल नहीं हो पाये थे। समुद्र के

ज्वार की भाँति उमड़ता हुआ युवक न्याङ्ग्ई भी अपने लक्ष्य को पूरा नहीं कर सका। एक बार ये दोनों फिर असफल रहे, पर असफलता के साथ साथ दोनों को एक वस्तु मिल गयी। सुङ्यात सेन ने अपनी आँखों से न्याङ की वफादारी, निष्ठा और दृढ़ता देखी। न्याङ ने भी डाक्टर सुङयात की सत्यप्रियता, तपस्या और देश के लिए उनके हृदय की गहरी वेदना का अनुभव किया। फलतः दोनों का हृदय देश हित के प्रगाढ़ प्रेम-सूत्र में बँध गया। एक ने पाया अनुयायी और दूसरे ने पाया अपना नेता। दोनों के हृदय ने इस सम्पत्ति को प्राप्त कर अपना लक्ष्य पूरा करने का दृढ़ संकल्प किया। यद्यपि इस बार असफलता ही हाथ लगी पर उसी ने उन्हें भविष्य के लिए प्रोत्साहित किया। वे अपना काम पूरा किये बिना चैन न लेंगे यह भीष्म प्रतिज्ञा करके दोनों आगे बढ़े। दोनों के लिए अब चीन में स्थान न था। दोनों जापान चले गये और दोनों ने वहाँ शरण ली।

तीसरा अध्याय

गृह-युद्ध और निराशा

युआङ के विरुद्ध हुई क्रान्ति का दमन हो गया और अब उसकी शक्ति अक्षुण्ण हो गयी। बागियों को पीट पाट कर वह चीन का एकछत्र अधिपति बन बैठा। अब युआङ के लिए विद्रोहियों के विरुद्ध खुल्लम खुल्ला युद्ध छेड़ देने का मार्ग प्रशस्त हो गया। उसने निश्चय कर लिया कि जैसे भी हो देश में स्थित क्रान्तिकारी तत्वों का समूल ही उन्मूलन कर देना चाहिए। अब तक जो पार्लियामेन्ट थी उसमें कुओमिन्-ताङ्ग के सदस्यों का बहुमत था। कुओमिङ ताङ्ग डाक्टर सुङयातसेन का दल था। युआङ ने निश्चय किया कि इस दल का भी सफाया करना चाहिए। ४ नवम्बर, सन् १९१३ ई० को उसने तीन हुकुमनामे निकाले। इन आज्ञापत्रों द्वारा उसने सारे देश में कुओमिङ-ताङ्ग को गैरकानूनी घोषित करते हुए उसके विघटन का हुकुम दिया। उसने घोषणा की कि यह संस्था विद्रोहिणी है और सरकार के विरुद्ध बगावत फैलाया करती है। इसके साथ ही उसने यह भी हुकुम दिया कि कुओ मिङ ताङ्ग के जो सदस्य पार्लियामेन्ट में

हैं उनकी सदस्यता का तमगा और निर्वाचित होने का प्रमाणपत्र रद्द किया जाता है क्योंकि वे एक ऐसी संस्था के सदस्य हैं जो गैरकानूनी है और गैरकानूनी कामों में लगी रहती है।

विचार करने की बात है कि इस समय युआन ने उसी संस्था को गैरकानूनी करार दिया जिसके सदस्यों के मत से वह कुछ महीने पूर्व प्रजातन्त्र के अध्यक्ष पद पर निर्वाचित हुआ था। उसके इस कार्य का अप्रत्यक्ष अर्थ यह था कि पार्लियामेन्ट के विघटन की कोई घोषणा जानिते से नहीं की गयी पर जब उसके अधिकतर सदस्य पदच्युत कर दिये गये और उसके अधिवेशन के लिए आवश्यक कोरम की पूर्ति के लिए भी सदस्यों की संख्या नहीं रह गयी तो पार्लियामेन्ट आप से आप ही भंग हो गयी। इसके बाद फिर पार्लियामेन्ट का अधिवेशन नहीं बुलाया जा सकता था। फलत वह आपसे आप बे मौत मर गयी। यह दशा हुई उस संस्था की जिसकी स्थापना और जिसका सिंचन विद्रोही देशभक्तों ने अपने रक्त से किया था।

इस प्रकार अपने सैनिक तथा नागरिक विरोधियों का खातमा करके जब युआन ने देखा कि उसका रास्ता निष्कन्टक हो गया है तो वह अपने लक्ष्य की पूर्ति की चेष्टा में लगा। अब उसकी यह इच्छा हुई कि वह चीन में राजतन्त्र की स्थापना करके स्वयम् सम्राट बने। इसके लिए पहला काम यह था कि देश में निरंकुश शासन स्थापित किया जाय। इसलिए सन् १९१४ के प्रारम्भ में उसने एक काउन्सिल बनायी जिसके सदस्यों की नियुक्ति स्वयम् की। इस छोटी सी काउंसिल के जिम्मे यह काम दिया गया कि वह युआन को परामर्श दे कि देश में किस प्रकार का शासन विधान बनाया जाय। यह काउन्सिल क्या थी, इसमें तो सब युआन के पिट्ठू भरे थे जो वही राय देते जो वह चाहता था। उसे करना तो अपने ही मन का था पर एक ढोंग रच दिया गया था लोगों की आँखों में धूल झोंकने के लिए। इस काउन्सिल ने भी पाखंड का आश्रय लिया और उसने युआन की सेवा में भावी विधान के सम्बन्ध में अपनी सिफारिश उपस्थित की। इन सिफारिशों में कहा गया कि एक निर्वाचित काउंसिल बनायी जाय जिसमें कुल ५६ सदस्य हों। इस काउन्सिल का निर्माण भी इसीलिए किया गया था कि युआन प्रतिनिधिमूलक शासन-व्यवस्था की आड़ में निरंकुशता का खेल खेले। चुनांचे

इस काउन्सिल ने पहला काम यह किया कि नाइकिङ्ग पार्लियामेन्ट द्वारा निर्मित शासन विधान को उलट कर उसके स्थान पर नया विधान बनाकर स्थापित कर दिया। इस नये विधान ने यह व्यवस्था की कि एक निर्वाचित व्यवस्थापक सभा बने और उसके साथ एक और संस्था हमारे यहाँ की काउन्सिल ऑव स्टेट की तरह स्थापित हो। व्यवस्थापक सभा तो निर्वाचित हो पर काउन्सिल ऑव स्टेट के सदस्यों की नियुक्ति स्वयम् अध्यक्ष युआन करें। इस दूसरी संस्था का काम यह हो कि वह व्यवस्थापक सभा को परामर्श दिया करे और साथ साथ कानूनों के निर्माण में भी हिस्सा ले। इससे भली भाँति समझा जा सकता है कि यह सब कुचक्र किस लक्ष्य के लिए रचा गया और उसका असली उद्देश्य क्या था। निरंकुशता का नंगा नाच नाचना तो उद्देश्य था, पर उस पर परदा डाला गया था वैधानिकता का। इसीलिए यह 'आधी तीतर आधी बटेर' वाली शासन-व्यवस्था स्थापित हुई।

इसके साथ-साथ युआन ने एक और नयी तिकड़म रची। उसे तो स्वयम् चीन का सम्राट बनना था पर यकायक सम्राट पद की घोषणा करना खतरनाक था, इसलिए सोचा गया कि धीरे धीरे जनता को एक दिन यह बात सुनने के लिए अभ्यस्त किया जाय। फल यह हुआ कि युआन की सत्प्रेरणा से राजतन्त्र के पक्ष में प्रचार आरम्भ हुआ। समाचार पत्रों में, सभाओं में और पुस्तिकाओं द्वारा विविध व्यक्तियों ने राजतन्त्र के लाभ तथा प्रजातन्त्रात्मक व्यवस्था की हानियों का प्रचार आरम्भ किया। अभी यह विवाद शास्त्रार्थ के रूप में ही आरम्भ किया गया और देखा जाने लगा कि इसका साधारण जन वर्ग पर क्या प्रभाव होता है।

यह स्थिति थी जिसमें अब क्रान्तिकारियों ने अपने को तथा अपने देश को पाया। उनको अपनी तपस्या और वह बलिदान जिसके बल पर उन्होंने प्रजातन्त्र का उपार्जन किया था नष्ट होते दिखायी दिये। चीनी राष्ट्र की स्वतन्त्रता और जनसत्ता की सारी आशा पर तुषारपात होता मालूम पड़ा। किसी महान पथ का पथिक यदि अपने लक्ष्य तक पहुँच कर उसे अपनी मुट्ठियों से निकलता हुआ पाय तो उसकी जो दशा होगी वही दशा इन देशभक्तों की हुई। चीन में उनका रहना दुस्तर हो गया। उनके लिए उस देश में अब कहीं स्थान नहीं था जिसके कण कण की सेवा वह अपने [illegible] करने को आगे बढ़े थे। कोई पूछने वाला नहीं, कहीं

रहने का स्थान नहीं। गुप्तचर उनकी खोज में थे, किसी पर वे विश्वास नहीं कर सकते थे—यहाँ तक कि अपनी छाया से भी उन्हें भय लगा हुआ था। क्रान्ति का द्वितीय प्रयत्न विफल होने की प्रतिक्रिया से सारा देश व्याप्त था।

ऐसी भयावह परिस्थिति में कूओमिङ्ग-ताङ्ग के सब प्रमुख सदस्यों ने यही निश्चय किया कि उन्हें देश से बाहर चला जाना चाहिए। इसी में कल्याण था और यही एक मात्र उपाय था अपने को बचाने का। इसीलिए डाक्टर सुङ्यातसेन, चेङ्ग चिमेई, ब्याङ्कईशेऊ, जनरल हुओङ्सेङ् आदि जापान चले गये। इस समय कूओमिङ्गताङ्ग विघटित हो गया था, नेताओं का दल छिन्नभिन्न था और उनका भविष्य अन्धकारमय। उनके पास जीवन यापन की अति साधारण और आवश्यक सामग्री भी प्रस्तुत न थी। इस स्थिति में कोई भी प्राणी निराश हो जाता पर डाक्टर सुङ्यात की आदर्शवादिता, अदम्य सत्य प्रियता और लक्ष्य के प्रति उनकी निश्चल निष्ठा उनके साथियों को बल प्रदान करती रही। वे कष्ट मे रहते हुए भी अपने निर्धारित पथ से विचलित नहीं हुए और न उस काम को ही छोड़ने को तैयार हुए जिसकी पूर्ति के लिए उन्होंने अपना और अपने साथियों का जीवन उत्सर्ग कर दिया था। जापान में खाक छानते हुए भी वे एक साथ एकत्र होकर भावी कार्यक्रम निर्धारित करने की चेष्टा करते थे। विफलता यदि निराशा की जननी हो जाय तो उसे अभिशाप ही मानना चाहिए, पर कभी कभी यह उत्प्रेरणा सृजन करती है। दृढ़ चित्तवाले लोगों के लिए विफलता आत्मसमीक्षण और स्थिति विश्लेषण का कारण बनती है। वे अपनी विवेचना करते हैं और उन दोषों तथा दुर्बलताओं को ढूँढ निकालते हैं जिनका परिणाम यह विफलता होती है।

चीन के कार्यार्थी विद्रोहियों पर भी विफलता का यही प्रभाव हुआ। वे अपनी समीक्षा में लग गये। उन्होंने अपनी पद्धति और अब तक की नीति को हाल में हुए अनुभवों की कसौटी पर कसना आरम्भ किया और यह जानने का यत्न करने लगे कि अन्तत वे क्यों अपने लक्ष्य को नहीं पा सके। अस्तु इस प्रश्न के तमाम पहलुओं पर विचार करके भावी कार्यक्रम निर्धारित किया गया। नेताओं ने निश्चय किया कि अपने प्रिय राष्ट्र को

बचाने के लिए यत्न तो करना ही है, फिर इस यज्ञ में चाहे अपना प्राण ही होमना क्यों न पड़े जब तक जीवन है तब तक यत्न करना है और सफलता यदि नहीं मिलती तो भी यत्न करते हुए ही मरना है। वे जानते थे कि मर कर भी वे जीवित रहेंगे और भावी सन्तति के लिए उज्ज्वल आदर्श तथा महान कर्तव्य पथ का निर्णय कर जाँयगे। इस भाव से प्रभावित हो कर उन्होंने आगे का कार्यक्रम बनाया। निश्चय यह किया गया कि इस बार क्रान्ति का क्षेत्र केवल दक्षिण चीन में ही परिमित न किया जाय। अब तक दक्षिण चीन पर ही उनका सारा ध्यान केन्द्रित किया गया था। इससे हानि भी हुई। उत्तरी चीन के लोग क्रान्ति-भावना से अछूते बने रहने के कारण उनका दमन करने में क्रान्ति के विरोधियों की सहायता करते रहे। फिर एक ही क्षेत्र में क्रान्ति का झंडा ऊँचा करने से शासक अपनी सारी शक्ति वहीं एक स्थान पर लगा देता है। यदि एक साथ ही व्यापक रूप से बगावत की आग फैले तो सर्वत्र उसको शान्त करना किसी सरकार के लिए असम्भवप्राय हो जायगा।

इस धारणा को लेकर कूओमिङताङ्ग के जापान स्थित नेताओं ने यह निश्चय किया कि कुछ कार्यकर्ता पुन चीन भेजे जाँय और इस बार उत्तर में विशेष रूप से काम किया जाय। इस कार्यक्रम के अनुसार चेङ चिमेई और ताई चिङ ताउ हैरेन भेजे गये और च्याङ्ग्ईशेक तथा तिङ्गुङ-स्योङ्ग हारबिन। इन नेताओं के लिए इस समय चीन में जाकर काम करना भयावह था। वहाँ तो इस समय युआङ की तूती बोल रही थी। उसने अपने आपको सुदृढ़ बना लिया था। फिर वह इन नेताओं की जान का ग्राहक था। ऐसे समय ये लोग अपने महान नेता डाक्टर सुन्यात की आज्ञा और आशीर्वाद लेकर पुन चीन की ओर अग्रसर हुए। वे जानते थे कि काम खतरनाक है। एक गलत कदम उठा और जान जाते देर न लगेगी, पर मातृभूमि की मुक्ति तथा क्रान्ति की सिद्धि के लिए उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक इस खतरे को अपनाया। कुछ दिनों तक अपने अपने क्षेत्र में काम करके उपर्युक्त नेता तोक्यो वापस आये। सबने अपनी रिपोर्ट डाक्टर सुंङयातसेन के सामने रखी। च्याङ्ग्ई शक ने मन्चूरिया में अच्छा आरम्भिक काम किया था। चेङचिमेई ने अपनी रिपोर्ट में इस ओर संकेत किया कि

शङ्घाई में पुन किसी प्रकार क्रान्ति का केन्द्र स्थापित करना आवश्यक है। इन रिपोर्टों पर बहुत विचार के बाद निश्चय किया गया कि चेङ्ग शङ्घाई जाँय और वहाँ किसी प्रकार अपना केन्द्र स्थापित करें।

एक बार पुन चेङ्गचिमेई और च्याङ्गई शेक अपना मस्तक अपनी हथेली पर लेकर शङ्घाई के लिए रवाना हुए। अपने नेता से अलग होते समय ये अदमनीय क्रान्ति के पुजारी विकल हो उठे! इस बार ये शेर की माँद में अपना सिर डालने जा रहे थे। कोई नहीं कह सकता था कि फिर इन लोगों की परस्पर मुलाकात हो सकेगी या नहीं। विदा होते समय डाक्टर सुनयात ने आँखों में आँसू भरकर इनको रवाना किया और आशा प्रकट की कि वह शुभ दिवस आयगा जब सब पुन मिलेंगे। शङ्घाई की हालत इस समय बहुत खराब थी। युआङ्ग की सत्ता का आतंक सब ओर छाया हुआ था। वह जानता था कि क्रान्ति की चिनगारी सदा यहीं से छिटककर आग लगाती रही है। इसलिए उसने इस नगर को सेना के अधिकार में कर रखा था और उसकी सुरक्षा का समुचित प्रबन्ध कर दिया था। उसका एक परम विश्वास पात्र सैनिक अफसर चेङ्गजुचेङ्ग यहाँ का प्रधान रक्षक था। इस व्यक्ति ने शङ्घाई को अपने आतङ्क से बखूबी दबा रखा था। पहले चेङ्गजु जल सेना में नियुक्त था। उसका नाविक सिपाहियों पर अच्छा प्रभाव भी था। युआङ्ग ने इस ख्याल से भी चेङ्गजु को यहाँ नियुक्त किया था कि यदि कभी फिर बगावत हुई तो उस के कारण जल-सैनिक तथा युद्धपोतों की सहायता और समर्थन उसे अवश्य प्राप्त होगा।

चेङ्ग जब शङ्घाई पहुँचे और बाद में गुप्त रूप से च्याङ्गई भी आकर मिले तो दोनों ने मिलकर छिन्न भिन्न हुए क्रान्तिकारियों को पुनरसंगठित करना आरम्भ किया। शीघ्र ही उन्हें कुछ पुराने साथी भी मिल गये। इन लोगों ने निश्चय किया कि क्रान्तिकारियों का पहला काम यह होना चाहिए कि चेङ्गजु का खातमा किया जाय। क्योंकि जब तक यह व्यक्ति रहेगा तब तक शङ्घाई से युआङ्ग की सत्ता को हिलाना कठिन है। फलत चेङ्गजु की हत्या करने का निश्चय हो गया। आदमी भी तैयार कर लिये गये और उपयुक्त अवसर की राह देखी जाने लगी। शीघ्र ही यह मौका भी आ पहुँचा। शङ्घाई के जापानी दूतावास में सन् १९१५ की १० नवम्बर को चेङ्गजु को दावत दी गयी थी। यह खबर थी कि वे इस आमन्त्रण को स्वीकार कर चुके और उसी रोज

आने वाले हैं। जिस समय चेङ्जु मोटरकार से जापानी दूतावास को जा रहे थे उन्हें 'गार्डेन ब्रिज' नामक पुल को पार करना पड़ा। इसी पुल पर दो क्रान्तिकारी नियुक्त थे। पुल पर भीड़ थी इसलिए चेङ्जु की मोटर रुक-रुक कर आगे बढ़ रही थी। ऐसे ही एक बार ज्योंही मोटर रुकी कि एक क्रान्तिकारी ने बम फेंका। परन्तु बम का निशाना चूक गया यद्यपि गाडी का शोफर मारा गया। निशाना चूका देखकर दूसरे क्रान्तिकारी ने रिवालवर से तुरन्त वार किया और लगातार दस गोलियाँ दाग कर चेङ्जु को वहीं पर ढेर कर दिया।

आक्रमणकारियों ने अपना काम पूरा किया पर भागने की कोई चेष्टा उन्होंने नहीं की। उन्होंने वीरता के साथ अपने को पुलिस के हवाले कर दिया। अपने बयान में इन वीरों ने कहा कि हमने जान बूझकर चेङ्जु को मारा और अपनी समझ में हमने जो किया वह उचित था। देश की मुक्ति के लिए हमने जो क्रान्ति की थी उसे युआङ ने नष्ट करके राष्ट्र के साथ विश्वासघात किया है। चेङ्जु इस पाप-कर्म में उसका सहायक था इसलिए हमने उसकी हत्या की है।

इस घटना से युआङ भी काँप उठा। उसने खतरा सामने देखा। सारे दक्षिणी चीन में एक बार पुनः सनसनी फैल गयी। युआङ ने चेङ्जु के स्थान पर याङ्ग शाङ-तेह नामक व्यक्ति को नियुक्त किया, पर वह न तो चेङ्जु के समान योग्य था और न उतना प्रभावशाली ही। अब शङ्घाई में चेङ और च्याङ्कई अधिक स्वतन्त्रता से काम करने लगे। याङ की कमजोरी देखकर च्याङ्कई ने चेङ को यह राय दी कि इस परिस्थिति से लाभ उठाया जाय और यदि हो सके तो ह्वाङ्गफू में खड़े जलपोतों को मिलाने की चेष्टा की जाय। इनको बिना मिलाये बाहर से विद्रोहियों का आना बहुत ही कठिन हो गया था। च्याङ्क की यह सलाह मान ली गयी और इस दिशा में प्रयत्न आरम्भ किया गया।

विद्रोहियों को इस प्रयत्न में अधिक सफलता नहीं मिली फिर भी चाओहो नामक क्रूजर का कप्तान हुआङ मिङ शू क्रान्तिकारियों की ओर आ गया। उसने ५ दिसम्बर को सहसा अपने क्रूजर पर विद्रोही पताका फहरा दी और शङ्घाई के शस्त्रागार पर गोलाबारी शुरू कर दी। दूसरे रणपोत जो अब तक युआङ के समर्थक थे चाओहो पर गोले फेंकने लगे। वीरतापूर्वक चौबीस घंटों तक लड़ता

रहा पर बाद में छतिमत्त होकर हट गया। इधर येवचिमेई ने भी आक्रमण कर दिया। उन्होंने सोचा कि जल और स्थल दोनों ओर से आघात किया जाय तो फिर उनके वेग को रोकना असम्भव हो जायगा। पर उनकी यह धारणा भी गलत सिद्ध हुई। ऐसे विद्रोहों में जब तक सेना विद्रोहियों का साथ न दे तब तक उसकी सफलता में भारी सन्देह होता है। सेना युआङ के ही साथ थी। उसने जमकर बागियों का सामना किया। साधनहीन और संख्या में कम विद्रोही क्या करते ? थोड़ी देर तक युद्ध करने के बाद उन्हें हट जाना पड़ा। अब शङ्घाई की गली-गली, कोना-कोना विद्रोहियों की खोज के लिए छाना जाने लगा। बीसियों विद्रोही मारे गये। जो बाकी बचे छिप कर निकल भागे।

शङ्घाई में असफल होकर भी विद्रोही अब तक अपने प्रयत्न से बाज नहीं आये थे। शङ्घाई नाइकिङ् के बीच याङ्सी नदी के दक्षिणी किनारे पर स्थित क्याङ्विन के किले पर न्याङ्ई-शेरु ने धावा करके उस पर अधिकार स्थापित कर लिया। उनका इरादा था कि याङ्सी की तराई में क्रान्तिकारी कार्य करने के लिए इस किले को ही अड्डा बनाया जाय। पर यहाँ पर मिली हुई सफलता भी पुनः असफलता में परिवर्तित हो गयी। पाँच दिन भी नहीं बीत पाये थे कि किले की सेना ने बगावत कर दी। स्वयम् न्याङ्ई-शेरु का प्राण खतरे में पड़ गया पर वे किसी प्रकार निकल गये और पुनः शङ्घाई वापस चले आये। एक बार पुनः इन कर्मठों का प्रयत्न विफल हुआ। स्वतन्त्रता की देवी कितनी पूजा और कितना बलिदान चाहती है, इसका एक ज्वलन्त उदाहरण यह भी है। किसी महान पथ के यात्री में कितना धैर्य, साहस और दृढ़ता होनी चाहिए इसे जिन्हें सीखना हो इन कर्मवीरों से सीखें। बार बार असफलता उनके गले पड़ती रही, विघ्न और बाधाएँ उनके काम का हनन करती रहीं, स्वयम् उनके देशवासी, जिनके लिए वे मर रहे थे सहायता देना तो दूर रहा शत्रु सदृश व्यवहार करते रहे, पर वे अपने मार्ग पर अविचल भाव से बढ़ते जा रहे थे। कहने को तो कहा जा सकता है कि इन असफलताओं के लिए वे स्वयम् दोषी हैं क्योंकि उपयुक्त अवसर आने के पूर्व ही वे कदम उठा लेते अथवा अविचारपूर्ण अयोजित ढंग से काम करते थे। जिसकी तबियत में जो आवे सो कहे पर इतना तो स्पष्ट है कि वे मनसा-वाचा

कर्मेना किसी लक्ष्य की ओर प्रेरित थे। एक बार जिस काम को उठाया उसे प्राण रहते बीच में छोडने को तैयार नहीं थे। उत्तम मनुष्यों का यही लक्षण हुआ करता है तथा किसी महान् आदर्श के प्राप्त करने का ढंग भी यही होता है।

एक बार पुन असफल होकर डाक्टर सुइयातसेन और उनके साथियों ने अपनी स्थिति की आलोचना की। इस बार उन्हें अनुभव हुआ कि जापान मे बैठकर चीन की क्रान्ति का काम नहीं किया जा सकता। उन्होंने इस बात की आवश्यकता महसूस की कि चीन में ही कुओमिङ्-ताङ्ग का सुदृढ सगठन करना चाहिए और पहले इसके कि कोई कदम उठाया जाय यह आवश्यक है कि देश मे अच्छा खासा प्रचार कर लिया जाय। सरकार तो विरोधिनी रहेगी ही, फिर यदि देश की जनता भी साथ न रहे तो भला सफलता मिल ही कैसे सकती है। किसी महती क्रान्ति के लिए देश की जनता की सहानुभूति आवश्यक होती है। अस्तु यह जरूरी है कि उसका राजनीतिक हृदय उद्बोधित किया जाय। फिर क्रान्तिकारियो के मार्ग में और भी कई कठिनाइयाँ थीं। धन की कमी के कारण उनका काम आगे नहीं बढ़ रहा था। डाक्टर सुइयातसेन यह समझते थे कि उनके काम में विदेशों से मदद मिलेगी। पर जो अपनी सहायता नहीं कर सकता उसकी सहायता ईश्वर भी नहीं करता। भला बार-बार असफल होने वाले की सहायता कौन करता है? यदि क्रान्तिकारी कुछ कर सके और अपना बल बढ़ा सके होते तो दूसरे भी उनकी ओर देखते। इसलिए यह आवश्यक था कि विदेशों की आशा छोड कर पहले अपने ही पैरों पर खड़े होने की चेष्टा की जाय। च्याङ्कईशेक ने इस सम्बन्ध में डाक्टर सुइयातसेन को स्पष्ट शब्दों में लिखा, 'आप जापान और अमेरिका से तो अधिक आशा करते हैं पर जिस भूमि पर क्रान्ति को विकसित पल्लवित तथा पुष्पित करना है उसकी उपेक्षा क्यों। मेरी तुच्छ राय मे तो कुछ दिनों के लिए हमें अपनी सारी शक्ति चीन में ही लगा देनी चाहिए।''

डाक्टर सुइयातसेन को भी साथियों की यह बात पसन्द आयी। निश्चय हुआ कि चीन मे अपने दल का जबरदस्त सगठन किया जाय। सुइयात स्वयम् जापान से चीन आये। क्रान्तिकारी सगठन बना। सदस्यों ने क्रान्ति का लक्ष्य पूरा करने के लिए तथा अपने नेता के

प्रति सच्चे बने रहने की शपथ ली। पार्टी के मन्त्री और खजाँची नियुक्त हुए तथा उसकी कार्यसमिति का निर्माण किया गया। इस प्रकार बाकायदा सगठित होकर अब उसने प्रचार का काम आरम्भ किया। दक्खिनी चीन के कोने कोने म प्रचार करने तथा भावी क्रान्ति की तैयारी के लिए कार्यकर्त्ता भेजे गये। डाक्टर सुङ्यातसेन ने स्वयम् क्वाङ्गतुङ और क्वाङ्गसी प्रान्तों में दौरा किया। बार बार की असफलताओं के कारण जनता में निराशा का भाव भर गया था और उनमें नैतिक अध पतन के लक्षण दृष्टिगोचर होने लगे थे। डाक्टर सुङ्यात ने दौरा करके, गाँव गाँव जाकर सभा करके और परचे और पुस्तिकाएँ निकाल कर, लोगों में नयी जान फूँकने की चेष्टा की। इसका बड़ा प्रभाव हुआ। युआङ तथा उसके साथियो ने जब देखा कि क्रान्तिकारियों का दल अब फिर बढ रहा है तो उसने उन्हें खतम करने या गिरफ्तार करने की चेष्टा की, पर सफलता नहीं मिली। बार बार की असफलता ने इन देशभक्तों को और नहीं तो इतना अवश्य सिखा दिया था कि यह काम सावधानी के साथ करना चाहिए। क्रान्ति का प्रयत्न करते करते क्रान्तिकारियों को जो अनुभव हुए थे उनसे उन्होंने काफी शिक्षा ग्रहण की थी।

इस प्रकार इनका बल बढ़ने लगा। पर युआङ भी चुप रहने वाला व्यक्ति नहीं था। उसने जब देखा कि क्रान्तिकारी पकड में नहीं आते तो दूसरी नीति बर्तने की ठानी। डाक्टर सुङयातसेन तथा चेङ चिमेई क्रान्ति के दो प्रसिद्ध नेता थे। यदि डाक्टर सुङ्यात को क्रान्ति का मस्तिष्क कहा जाय तो चेङ उसके हाथ-पाँव थे। एक आदर्शवादी विचारक था तो दूसरा अप्रतिहत कर्मठ। युआङ ने सोचा कि इन दोनों को किसी प्रकार खतम कर दिया जाय तो क्रान्ति की नैया बीच मे ही डूब जाय। इस काम के लिए उसने कुछ विश्वासपात्र अनुचरों को नियुक्त किया। गुप्तचर विभाग के लोग इस ताक मे बैठे कि जैसे भी हो इनका सफाया कर दिया जाय। आखिर चेङ चिमेई के सिर पर बला आ पहुँची। गुप्तचर यह जानते थे कि चेङ चिमेई को क्रान्ति का काम चलाने के लिए धन की आवश्यकता है। उन्होंने यह समझकर एक तिकड़म रची। चेङ से यहाँ कहलाया गया कि चीन में एक खान का मालिक बड़ा धनवान व्यक्ति है जो अपने रोजगार के लिए कर्ज लेना चाहता है।

संगठन सुदृढ़ बनाना, अपना प्रचार करना तथा कभी कोई आतंकपूर्ण काम कर देना था। यदाकदा किसी दुष्ट अधिकारी की हत्या कर देना, कहीं बम फेंक देना तथा कहीं रेल की पटरी उखाड़ डालना उनका काम था। आयोजित और सुसंघटित ढँग से विद्रोह का झंडा ऊँचा करने के लिए उपयुक्त अवसर अभी नहीं आया था। सन् १९१५ का सारा वर्ष इसी प्रकार बीता। इस समय युरोप में महायुद्ध हो रहा था। जापान युद्ध में तो उतरा नहीं पर उसकी सहानुभूति मित्र-राष्ट्रों के साथ थी। चीन के विद्रोही जापान से यह आशा करते थे कि वह उनकी सहायता करेगा। पर इसी समय कुछ घटनाएँ घटीं जिनके कारण युआन के प्रति चीनी जनता में असन्तोष बढ़ गया। जनवरी सन् १९१५ में जापान ने चीन के प्रति अपनी प्रसिद्ध २१ माँगें पेश कीं। जापान की ये माँगें क्या थीं चीन की परतन्त्रता का परवाना थीं। उन से स्पष्ट था कि जापान चीन के नक्शे को अपने हाथ में लेकर उसे एक अधीन प्रदेश की हैसियत में पहुँचा देना चाहता था।

जापान की इस नीति से विद्रोहियों की आँखें खुल गयीं। उन्होंने देख लिया कि वे जिसे अपना मित्र समझते थे वह तो युआन से भी कहीं प्रबल शत्रु है। अस्तु उन्होंने निश्चय कर लिया कि एक दिन अवश्य उन्हें जापान से लड़ना पड़ेगा। सम्भवत आज उसी का यह परिणाम है कि च्याङ्गई शेक को जापान के सैन्य शक्ति वादियों की स्वार्थाग्नि में अपने को होमना पड़ रहा है। उस समय उन्हें यह भय हुआ कि कहीं युआन अपने स्वार्थ के लिए देश के हित को न बेच दे। उनके मन में आया कि चीन को जापान से बचाने के लिए यह भी आवश्यक है कि युआन की निरंकुश सत्ता जल्दी समाप्त कर जनता की सरकार स्थापित की जाय। इसी समय एक और मार्के की घटना घटी। युआन ने इतने दिनों बाद अपना असली स्वरूप प्रकट किया। पहले कहा जा चुका है कि युआन राजतन्त्र के पक्ष में प्रचार कराने लगा था जिसमें एक दिन वह राजा बन बैठे और जनता की सहानुभूति प्राप्त कर सके। उसने सोचा था कि अगर सहानुभूति न भी मिले तो कम से कम विरोध तो न हो। अन्त में यही हुआ। सन् १९१५ के दिसम्बर में पेकिङ्ग में युआन की उस नयी पार्लियामेन्ट का अधिवेशन हुआ जिसका उल्लेख किया जा चुका है। यह पार्लियामेन्ट क्या थी युआन द्वारा निर्मित उसका खिलौना थी जिससे वह मनमाना खेल खेल सकता था। इस

चेङ की मृत्यु का समाचार उन्हें वहीं मिला। वे बड़े दुखी हुए क्योंकि यह देशभक्त उनका सच्चा मित्र, ईमानदार साथी और क्रान्ति का दाहिना हाथ था। उसकी मृत्यु से कुओमिंटांग तथा क्रान्ति के काम को कितना गहरा धक्का लगा होगा, इसकी कल्पना सहज ही की जा सकती है। ल्याङ्ग्ई शेर भी बहुत दुखी हुए। गत बारह वर्षों से वे इस व्यक्ति के नेतृत्व में रह कर काम करते रहे थे। दोनों ने साथ साथ न जाने कितने भीषण दिन और अमावस्या रातें बितायी थीं। दोनों ने साथ साथ न जाने कितने रोमांचकारी खतरों का सामना किया था—बरसती हुई आग में एक दूसरे की बगल में खड़े रहे थे।

आज ऐसे साथी की मृत्यु से उनका दिल टूट गया। पर जो हुआ सो तो हुआ। अब दोनों के लिए उस कार्य को और तेजी से चलाना नितान्त आवश्यक हो गया जिसकी पूर्ति का प्रयत्न करते हुए चेङ ने अपने बहुमूल्य प्राणों की बलि चढ़ा दी थी। डाक्टर सेन तुरन्त जापान से शङ्घाइ वापिस आये और चेङ का काम ल्याङ्ग्ई के सुपुर्द किया। अब से ये नेता विशेष रूप से सावधान रहने लगे। चेङ की हत्या करने में सफलता प्राप्त करके युआन्ह के अनुचरों ने ल्याङ्ग्ई को भी परलोक भेजने की अनेक बार चेष्टाएँ कीं। एक बार तो वे बाल बाल बच गये। वाङनिङ्ग का नामक एक क्रान्तिकारी ल्याङ का साथी था। कि हेङ की भाँति युआन् के अनुचरों ने इसे भी मिला लिया था और ल्याङ की हत्या करने में मदद ले रहे थे।

एक बार ल्याङ एक मित्र से मिलने जाने वाले थे। यह बात वाङ को छोड़कर और किसी को मालूम न थी। वाङ ने इसकी सूचना खुफिया विभाग वालों को दे दी कि ल्याङ अमुक समय पर अमुक व्यक्ति से मिलने उसके घर जा रहे हैं। सौभाग्य से ल्याङ जब अपने मित्र के यहाँ पहुँचे तो वह घर में मौजूद न था। ल्याङ ने बैठकर उसकी राह देखना पसन्द नहीं किया और चुपचाप वहाँ से चल दिये। गुप्तचरों ने यह सोचा कि ल्याङ को बात चीत में अवश्य विलम्ब होगा, इसलिए उनके पहुँचने के समय से थोड़ी देर बाद वे दलबल सहित पहुँचे और उस मकान को घेर लिया, पर ल्याङ तो पहले ही निकल गये थे इसलिए उन्हें निराश होकर वापस लौटना पड़ा। इस प्रकार पूरे साल भर तक क्रान्तिकारी अपना काम करते रहे और युआन् तथा उनके बीच खींचातानी होती रही। इस समय क्रान्तिकारियों का काम अपना

की सृष्टि कर दी थी जो स्वयम् अधिकारों के लोलुप थे। जब तक उसका सुदृढ़ पंजा मौजूद था वे चुप रहे पर उसके हटते ही घोर अव्यवस्था, प्रतिस्पर्द्धा और छीना झपटी आरम्भ हुई। जो लोग उसके जीवन-काल में उसके साथी थे वे ही अब अधिकार प्राप्त करने के लिए लड़ने लगे। युआङ ने प्रान्तों में जिन्हें अपना आदमी समझ कर सैनिक तथा मुल्की शासन का अधिकारी नियुक्त किया था वे अपने अपने क्षेत्र में स्वतन्त्र होकर मनमाना शासन करने लगे। केन्द्र में जिन लोगों को उसने उपाध्यक्ष अथवा प्रधान मन्त्री और मन्त्री बनाया था वे यहाँ एक दूसरे के विरुद्ध कुचक्र रचने लगे और एक दूसरे के हाथ से अधिकार छीन लेने की चेष्टा में संलग्न हुए। यह स्थिति इतनी बिगड़ी कि देश में न कोई व्यवस्था रह गयी, न सरकार और न अधिकार। उत्तरी चीन में तो पहले से ही सैन्यशक्तिवादी प्रान्तीय शासकों का बोल बाला था, पर यह बला अब दक्षिण में भी फैल गयी। चारों ओर प्रान्त प्रान्त में छोटे-छोटे स्वतन्त्र और निरंकुश शासक हो गये जो परस्पर लड़ते रहते और एक दूसरे पर अधिकार स्थापित करने की कोशिश करते।

फलतः तृतीय क्रान्ति जहाँ इस बात में सफल हुई कि उसने युआङ की सत्ता खतम कर दी वहाँ वह देश में सुव्यवस्था तथा केन्द्र में एक सुदृढ़ प्रजातन्त्रात्मक सरकार की स्थापना करने में समर्थ नहीं हो सकी। डाक्टर सुङ्यात सेन ने देखा कि इस बार पुनः सब किया-कराया नष्ट हुआ चाहता है। विद्रोही नेता इस स्थिति से देश को निकालने का मार्ग खोजने लगे। वे सब इस राय पर आये कि देश की रक्षा करने के लिए महत्वाकांक्षी सैन्यशक्तिवादी प्रान्तीय क्षत्रपों का दमन करने के सिवा दूसरा रास्ता नहीं है।

कभी-कभी किसी मुल्क का बड़ा होना भी उसके लिए अभिशाप हो जाता है। यदि चीन छोटा सा देश होता तो कदाचित विद्रोही शासन सत्ता पर अधिक सरलता के साथ अधिकार स्थापित कर सकते, पर चालीस करोड़ नर-नारियों से परिपूर्ण महादेश को एक सूत्र में बाँधना आसान नहीं था। दर्जनों अवसरवादी तथा सैनिक सामानों से सुसज्जित प्रान्तीय शासकों के हाथ-पैर तोड़ कर उन्हें धर दबाने के लिए जितने गहन साधनों और उपकरणों की आवश्यकता थी? ये साधन विद्रोहियों को कहाँ प्राप्त थे? देश के लिए हितकर मार्ग तो यह अवश्य था कि एक सुदृढ़ केन्द्रीय सरकार स्थापित होती, पर इस लक्ष्य की पूर्ति

पार्लियामेन्ट के मत से एक दिन युआङ्ग चीन के सम्राट पद पर सुशोभित हो गये।

युआङ्ग की इस दुर्नीति से सारे देश में आग सी लग गयी। जनता ने देखा कि विद्रोही जो कह रहे थे वही बात सच निकली। दक्षिणी चीन में जहाँ गत कई वर्ष से क्रान्तिकारी काम कर रहे थे, भारी क्षोभ फैल गया और सहसा विद्रोह की आग भड़क उठी। युन्नान प्रान्त में पहले विद्रोह का डंका बजा और इस प्रान्त ने अपनी स्वतन्त्रता घोषित कर दी। युन्नान के स्वतन्त्रता घोषित करते ही क्वाङ्गतुङ्ग, क्वाङ्गसी क्वेईचाउ तथा दूसरे कतिपय दक्षिणी प्रान्तों ने भी अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा की। विद्रोह की आग बढ़ती हुई देख युआङ्ग घबड़ा उठा। क्योंकि इस बार तो मामला कुछ दूसरा ही था। विद्रोह किसी एक स्थान में नहीं फूटा था कि युआङ्ग उसे कुचल देता। स्थिति को काबू से बाहर जाते देख कर युआङ्ग ने राजतन्त्र की समाप्ति की सूचना देते हुए पुनः प्रजातन्त्र की घोषणा की। युआङ्ग के पदासीन होने के बाद यह पहला अवसर था जब उसे मुँहकी खानी पड़ी। उसने बढ़ाया हुआ कदम पीछे अवश्य हटाया पर उतने से ही शान्ति होने वाली नहीं थी। सारे दक्षिण से आवाज उठी कि युआङ्ग पदत्याग करे। उसके उन साथियों ने भी जिन पर उसने भरोसा किया था उसका साथ छोड़ दिया। विश्वास घात करने की शिक्षा तो पहले उसी ने दी थी। जो स्वयम् विश्वासघाती हो, जिसने अपने स्वार्थ और अपनी महत्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए कोई बात उठा न रखी हो और जिसने नैतिक, अनैतिक का विचार किये बिना पद और प्रतिष्ठा के लोभ में समस्त मानवीय आदर्शों का हनन किया हो उसका अन्त सिवा इस प्रकार के और कैसे होता? उसके साथियों ने जब देखा कि उसका बल क्षीण हो रहा है तो स्वयम् धाक जमायी और स्वतन्त्र बन बैठे। उन्हें भी पद प्रतिष्ठा का लोभ था और उनमें भी स्वार्थ तथा महत्वाकांक्षा थी। उसी की पूर्ति के लिए वे युआङ्ग के साथी बने थे और आज उसी की पूर्ति के लिए उसे ठुकरा देने को तैयार हो गये। जो नीति और जो मार्ग किसी समय युआङ्ग ने ग्रहण किया था वही उन्होंने भी अपनाया।

युआङ्ग अपनी असहाय अवस्था देखकर पागल हो गया और थोड़े ही दिनों बाद पेकिङ्ग में उसकी मृत्यु हो गयी। उसके मरते ही चीन की दशा सहसा डाँवाडोल हो चली। युआङ्ग ने बहुत से ऐसे लोगों

लगा। उसने डाक्टर सेन को यहाँ तक परेशान किया कि उन्होंने प्रधान सेनापतित्व के पद से त्याग पत्र दे दिया। पार्लियामेन्ट का अधिवेशन हुआ और दूसरी सरकार बनायी गयी। सात सदस्यों की एक समिति बनी जिसे 'कमिशन ऑफ डाइरेक्टर्स' का नाम दिया गया। डाक्टर सेन इस समिति के एक साधारण सदस्य मात्र रह गये और इसका अध्यक्ष चुना गया चेङचुङ हुआङ नामक व्यक्ति जो डाक्टर सेन का कट्टर विरोधी था। धीरे धीरे काङतुङ की पार्लियामेन्ट में दलबन्दी बढ़ती गयी। आखिर एक ऐसा दल बन गया जो सब प्रकार से डाक्टर सेन के बल को समाप्त करने की सतत चेष्टा में लगा रहता। इस दल के लोग स्वार्थी थे जो अधिकार की लोलुपता तथा अपनी व्यक्तिगत आकांक्षा की पूर्ति के लिए डाक्टर सेन के हाथों को कमजोर करना चाहते थे। वे जानते थे कि डाक्टर सेन के हाथों में यदि अधिकार बना रहा तो फिर किसी को उभड़ने का अवसर न मिलेगा। फलतः जितने भी स्वार्थी थे धीरे धीरे एक होने लगे। लू युङ ने तो इसी विचार से डाक्टर सेन के परम समर्थक तथा उनकी शक्ति के बहुत बड़े कारण जल सेना के सेनापति चेङपिङुआङ की हत्या तक करा डाली कि डाक्टर सेन निर्बल हो जाँय।

इस समय जहाँ आवश्यकता यह थी कि सब मिल जुल कर और अपनी सारी शक्ति एकत्र कर एक निर्धारित योजना तथा कार्यक्रम को लेकर देश में व्यापक रूप से व्याप्त अव्यवस्था का दमन और क्रान्तिकारी प्रजातन्त्रात्मक सरकार की सत्ता स्थापित करते, वहाँ डाक्टर सेन अपने चारों ओर स्थित विश्वासघातियों से घिर गये। जो उनके साथी थे और जिन्हें लेकर वे आगे बढ़े थे वे ही उन्हें धोखा दे रहे और उनका सत्यानाश करने पर तुले हुए थे। भीतर भीतर वे शत्रुओं से मिले हुए थे और डाक्टर सेन के विरुद्ध स्वयम् ही बगावत फैला रहे थे। लू युङटिङ के सिवा चेङचियङमिङ नामक एक और व्यक्ति भी डाक्टर सेन को धोखा दे रहा था। यह व्यक्ति अच्छा सैनिक था और डाक्टर सेन ने इसके अधीन स्थल सेना इसलिए कर रखी थी कि उसके द्वारा फूके, क्वाङसी तथा अन्य दक्षिणी प्रान्तों को, जहाँ के पुराने शासक स्वतन्त्र होकर मनमाना राज्य कर रहे थे, दमन करें और उन्हें काङतुङ की सरकार की अधीनता में लायें।

किस प्रकार की जाती ? बहुत सोचने विचारने पर डाक्टर सुन्यात सेन इस परिणाम पर पहुँचे कि उन्हें एक राष्ट्रीय सरकार स्थापित करनी चाहिए। बिना किसी आधार की स्थापना किये भविष्य में काम करना सम्भव न होगा। यह विचार करके उन्होंने निश्चय किया कि काङ्तुङ में प्रजातन्त्र सरकार की पार्लियामेन्ट स्थापित की जाय।

कुछ सैनिक अधिकारी उनके साथ थे। उन्हीं के बल-बूते पर प्रान्तीय शासकों को दबाने की चेष्टा करने का निश्चय करके वे काङ्तुङ में राष्ट्रीय सरकार की स्थापना करने के लिए चल पड़े। जल सेना के सेनापति चेङ्पिङ्क्वाङ्ग डाक्टर सेनके साथी और समर्थक थे। अपने अधीनस्थ जहाजों पर वे डाक्टर सन, क्याङ्ई तथा अन्य विद्रोहियों को काङ्तुङ ले आये। काङ्तुङ पहुँच कर डाक्टर सुन्यात ने दक्षिणी चीन की स्वतन्त्रता घोषित की और एक नयी पार्लियामेन्ट बना कर उसका अधिवेशन बुलाया। इस पार्लियामेन्ट ने एक नयी सरकार बनायी। देश की असाधारण स्थिति समझकर यह सैनिक सरकार बनी और उसने डाक्टर सेन को अपना प्रधान सेनापति तथा ताङ्क्याङ और लू-युङ तिङ्ग को उनका सहायक निर्वाचित किया। डाक्टर सेन ने काङ्तुङ की सरकार के अध्यक्ष पद से पहली घोषणा यह की कि चीन की वास्तविक सरकार काङ्तुङ में है और पेकिङ्ग में जो सरकार बनी है तथा जिसके अध्यक्ष चेङ्चाङ्ग हैं वह देश द्रोहिणी है। इस प्रकार डाक्टर सुन्यात ने शासनकारिणी सरकार की स्थापना का एक आधार स्थापित किया। पर इतने से ही मामला हल होने वाला नहीं था।

चीन की हालत कितनी खराब हो गयी थी और व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा तथा स्वार्थपरता का बाजार कितना गरम था इसका पता स्वयम् काङ्तुङ की सरकार के पदाधिकारियों के कार्यों से चलता है। उत्तर की हालत तो खराब थी ही, पर दक्षिण में भी यह रोग खूब फैला हुआ था। सारा वायुमण्डल ही दूषित था। लू-युङ तिङ प्रसिद्ध क्रान्तिकारी था और उसे काङ्तुङ की पार्लियामेन्ट ने डाक्टर सेन का सहायक चुना था। वह भी उत्तर की सरकार के अध्यक्ष चेङ्चाङ्ग के साथ कुचक्र रच रहा था। लू-युङ तो धीरे धीरे डाक्टर सेन का प्रतिस्पर्द्धी बन गया। दक्षिण के क्वाङसी प्रान्त का दल उसका साथी था। इस दल को लेकर वह पग पग पर डाक्टर सेनका विरोध करने और उनके हर काम में अड़ंगेबाजी करना अपना कर्त्तव्य समझने

बाद ही डाक्टर सुडयात ने उन्हें बुला भेजा और वे अपने नेता के निकट आ खड़े हुए। युआङ की मृत्यु सन १९१६ में हुई थी। अब तक उसको मरे चार साल बीत चुके थे पर चीन की दशा में कोई सुधार नहीं हो सका था। काइन्तुङ में सरकार कायम थी पर दक्षिण के ही अधिकार-लोलुप सैनिक, सामन्तों तथा महत्वाकांक्षी स्वार्थी कुचक्रियों का दमन डाक्टर सुड्यात नहीं कर सके तो फिर उत्तर की बात कौन कहे। विदेशी शक्तियाँ चीन की दशा देखकर उसके भविष्य के सम्बन्ध में सशंक हो गयी थीं। वे समझ रही थीं कि इस देश के सत्यानाश होने में सन्देह नहीं है। देश में गृह युद्ध की आग सुलगी हुई थी। दक्षिण और उत्तर में युद्ध चल रहा था, उत्तर में स्वयम् वहाँ के अनेक सामन्त और दक्षिण में वहाँ के प्रान्तपति लड़ रहे थे। उत्तर और दक्षिण की सरकारों के जो जो विधातागण थे वे आपस में एक दूसरे की जड़ खोद रहे थे और कुचक्र रच कर अधिकार हथियाने की चेष्टा में थे। घोर अव्यवस्था, अराजकता और भयावने नैतिक अध पतन का नगा दृश्य दिखायी दे रहा था।

काइन्तुङ की सरकार में भी कई गुट बन गये थे। कुछ डाक्टर सेन का पतन कराने की फिक्र में थे, कुछ उत्तर के सैन्य शक्तिवादियों से मिलकर अपना काम निकालना चाहते थे और कुछ स्वयम् अधिकार की प्राप्ति के लिए अपनी सरकार के विरुद्ध षडयन्त्र रच रहे थे। डाक्टर सेन के विश्वासपात्र साथी, जिनमें च्याङ मुख्य थे, बार बार अपने नेताओं को आगाह कर रहे थे। वह भविष्य की घटनाओं की कल्पना करते और हवा का रुख किधर है इसे समझते थे। वह अनुभव कर रहे थे कि एक दिन डाक्टर सेन के बने हुए साथी उन्हें धोखा देकर उनके हाथ से शक्ति छीनने की चेष्टा करेंगे। इन बातों से उन्हें सचेत करने पर भी यह दुर्भाग्य की बात है कि वे अपने मित्रों की चेतावनियों की उपेक्षा करते। वे चेङ चिउङ के प्रति अपना विश्वास अधिकाधिक प्रकट करते और सेना सम्बन्धी अधिकार उसे सौंपते जाते।

सन् १९२० में मामला कुछ-कुछ साफ होने लगा। इस समय कुछ ऐसी घटनाएँ घटीं जिनसे डाक्टर सेन को भी शंका हुई। काङ्गसी गुट्ट के नेता लूयुङतिङ्ग का उल्लेख पहले किया जा चुका है। यह व्यक्ति उत्तर के नेताओं से गुप्त रूप से बातचीत चला रहा था, इसकी चर्चा भी की जा चुकी है। सन् १९२० में इसने खुल्लम-खुल्ला डाक्टर सेन के विरुद्ध आवाज उठायी। एक दिन उसने घोषणा कर दी कि काइन्तुङ

पर यह व्यक्ति तो डाक्टर सेन को खुले आम धोखा दे रहा था। च्याङ्काई शेक इस समय चेन चिउङ मिङ के अधीन सेना का संचालन कर रहे थे। उन्होंने चेनचिउङ की चालबाजी और तिकड़म से उनको यह आभास मिलने लगा कि यह व्यक्ति देश, समय और डाक्टर सेन सभी के साथ विश्वासघात कर रहा है। युद्ध स्थल से उस समय च्याङ्काई ने अपने विश्वसनीय मित्रों को कई पत्र लिखे थे। उन पत्रों से ज्ञात होता है कि चेन-चिउङ किस प्रकार धोखा दे रहा था और किस प्रकार च्याङ देश के दुर्भाग्य को देखकर खिन्न हो रहे थे। अपने एक मित्र सेकरेङ को उन्होंने यहाँ तक लिख दिया "मैं अब पूरी तरह परेशान हो गया हूँ और चाहता हूँ कि यह काम छोड़ कर मैं अलग हो जाऊँ। जिस प्रकार समय और शक्ति का अपव्यय हो रहा है और जैसी गन्दगी तथा स्वार्थपरता आ गयी है उससे तो मुझे ऐसा मालूम होता है कि देश का उद्धार सम्भव ही नहीं है।"

च्याङ्काई शेक ने स्वयम डाक्टर सुनयातसेन से भी ये बातें कहीं और उन्हें कई पत्र लिखे। उन्होंने डाक्टर सुनयात को बार-बार सचेत किया कि वे चेन चिउङ से सावधान रहें और उस पर भरोसा न करें। च्याङ्काई के हृदय में डाक्टर सेन के प्रति अपार स्नेह और आदर था। डाक्टर सेन भी इस युवक पर विश्वास करते और उस पर पूरा भरोसा रखते थे। फिर भी उन्होंने उसकी चेतावनियों पर ध्यान नहीं दिया। वे महान् व्यक्ति थे। नैतिक दृष्टि से उनका चरित्र बहुत ऊँचा और हृदय परम उदार था। वे नहीं चाहते थे कि अपने किसी साथी को शंका की दृष्टि से देखें और उसकी नीयत पर सन्देह करें। च्याङ्काई की चेतावनियों का वे यह कह कर उत्तर दे देते थे, "हम एक महान लक्ष्य की पूर्ति में लगे हैं। हमारा पथ पुनीत है। हमारे हृदय में अपने किसी स्वार्थ की भावना नहीं है। हम जो कुछ कर रहे हैं कर्तव्य समझ कर कर रहे हैं। फिर कोई कारण नहीं है कि हमारे साथ विश्वासघात किया जाय। इतने पर भी यदि कोई दगा करता है तो स्वयम् उस देश की जनता उसे दंड देगी। हम क्यों किसी पर सन्देह करें।"

च्याङ्काई डाक्टर सेन की उदारता से परेशान हो जाते। एक बार नाराज हो व सब काम काज छोड़ कर सन् १९२० के आरम्भ में अपने घर चले गये, पर अधिक दिन वे अलग न रह सके। कुछ महीनों के

च्याङ्ग ने उस समयकी स्थिति का जो वर्णन दिया और तत्कालीन सम स्याओं तथा उनके हल के लिए जो उपाय बताये उनसे पता चलता है कि इस युवक की सूक्ष्म बुद्धि परिस्थिति को समझने में कहाँ तक सफल हुई थी और किस प्रकार उसकी दृष्टि बहुत से नेताओं से कहीं अधिक दूर तक पहुँच गयी थी। च्याङ्ग ने डाक्टर सेन को साफ-साफ लिख दिया कि सेना का सुधार करना आवश्यक है। उन्होंने बताया कि सबसे बड़ी समस्या इस समय यह है कि क्वाङतुङ में ऐसे लोगों की भीड़ है जो अपने व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए देश के व्यापक हित को नष्ट कर रहे हैं। इन्हीं लोगों के हाथों सेना में अनियन्त्रण और अनुशासनहीनता का भाव फैल रहा है। जब तक ऐसे तत्वों का दमन दृढता पूर्वक और आयोजित ढग से नहीं किया जायगा तब तक क्रान्ति का सकट आगे ही बढ़ेगा। उन्होंने डाक्टर सेन को तो यहाँ तक लिख दिया कि "चेङचिउङ्ग और तू-चुङ' ऐसे लोगों पर आप आवश्यकता से अधिक भरोसा कर रहे हैं। इसका परिणाम यह होगा कि एक दिन आप और आपका किया हुआ अब तक का सारा काम खतरे में पड़ जायगा। आवश्यकता इस बात की है कि आप समय रहते अपने सच्चे मित्रों और साथियों को लेकर ऐसा बल सचय करें कि इन लोगों को चूर कर दिया जा सके। क्वाङसी के गुट्ट का ऐसा खातमा कर दिया जाय कि वह पनप ही न सके। यह काम करने के बाद तब उत्तर के सैन्य शक्तिवादियों से मोरचा लिया जाय। दक्खिन को निष्कण्टक बना कर क्वाङतुङ की क्रान्तिकारी सरकार को निरापद करने के बाद तब उत्तर की सामन्तशाही और सैन्य शक्तिवादियों को उद्ध्वस्त करनेका काम उठाया जाय।"

च्याङ्गई ने यद्यपि सब बातें साफ-साफ और दृढ़ भाषा में लिखी थीं पर डाक्टर सेन ने उस पर अधिक ध्यान न दिया। वे चेङ-चिउङ को मिलाये रखने की चेष्टा करते और क्वाङसी गुट्ट के दमन के लिए सेना ले जाने के लिए उस पर दबाव डालते रहे। जब चेङचिउङ ने हाँ हूँ करते हुए टाल मटोल में बहुत समय गँवा दिया तो स्वयम् डाक्टर सेन ने क्वाङसी के विरुद्ध सेना का सचालन करने की तैयारी की। यह देख कर चेङ चिउङ तैयार हुए और क्वाङसी के विरुद्ध कार्रवाई आरम्भ हुई। अन्तत सन् १९२१ के आरम्भ में क्वाङसी के कुचक्रियों का दमन करने में कूओमिङताङ सफल हुई। यदि चेङचिउङ्ग का वश चलता तो कदाचित यह

का सैनिक सरकार खत्म कर दी गयी उत्तर तथा दक्षिण में सन्धि होगी और दोनों को मिलाकर एक राष्ट्रीय सरकार बनेगी। उसने इस घोषणा में साफ़ साफ़ कह दिया कि उत्तर के स्वतन्त्र सैनिक नेताओं से मित्रता करके वह इस नयी सरकार की स्थापना करेगा।

अब डाक्टर सेन की आँखें खुलीं और उन्होंने देखा कि मामला किस हद तक बढ़ गया है। पर चेङचिङ्ग पर उन्हें अब भी भरोसा था। वे यह नहीं मानते थे कि यह व्यक्ति लू युङ शिन से मिला हुआ है। डाक्टर सेन ने चेङचिङ्ग को गुप्त आदेश भेजा कि वह अपनी सेना लेकर बढ़े और क्वाङ्गसी गुट को, जिसने खुल्लम-खुल्ला विद्रोह का झंडा ऊँचा किया है दबा दे। चेङचिङ्ग ने अब न जाने कितने बहाने करके डाक्टर सेन की आज्ञा का पालन न करने के कारण ढूँढ निकाले। छिपे छिपे वह क्वाङ्गसी गुट के लोगों से स्वार्थ समझौता कर उन्हें डाक्टर सेन के विरुद्ध और अपनी ओर मिलाने की चाल चलता रहा। पर बाद में डाक्टर सेन की दृढ़ता देख कर उसने क्वाङ्गसी पर आक्रमण करने की योजना बनायी। च्याङ्काई शेक पुनः उसके अधीन सेनापतित्व करने के लिए नियुक्त किये गये पर च्याङ्ग की पटरी पुनः नहीं बैठी। उन्होंने देखा कि वे जो योजना बनाते हैं उसे चेङचिङ्ग उलट देते हैं। सेना में चेङचिङ्ग के आदमी भरे हुए थे और वे अफ़सर जो च्याङ्ग के अधीन थे चेङचिङ्ग की शह पाकर च्याङ्ग की आज्ञा का उल्लंघन करने में तथा उनके प्रति अभद्र व्यवहार करने में भी नहीं चूकते थे। च्याङ्ग जब इस प्रकार की अनियन्त्रणप्रियता और अनुशासनहीनता की ओर चेङचिङ्ग का ध्यान आकर्षित करते तो उसे दबाना तो दूर रहा वह उसकी उपेक्षा कर देता।

च्याङ्ग ने इस स्थिति की ओर डाक्टर सुङयात का भी ध्यान आकर्षित किया पर कोई परिणाम न निकला। सारी सेना चेङचिङ्ग के हाथ में थी और डाक्टर सेन के लिए सम्भव नहीं था कि वह कुछ कर सकते। परेशान होकर च्याङ्ग ने एक बार पुनः पद त्याग कर दिया और अपने घर चले गये। कई वर्षों तक लगातार काम की उलझना में फँसे रह कर च्याङ्ग ने अपना स्वास्थ्य खो दिया था। उन्हें अब विश्राम की सख्त जरूरत थी। वे अपने गाँव चेङ्काउ चले गये। यहाँ से च्याङ्ग ने कूओमिङ्ताङ्ग के कतिपय नेताओं को पत्र लिखे। उन्होंने डाक्टर सुङयात को भी एक पत्र लिखा। इन पत्रों में

चेडचिउडमिङ के जिम्मे केवल यह काम दिया गया कि वे पीछे से आगे बढ़ने वाली सेना को रसद सामग्री पहुँचाया करें।

चेडचिउङ भीतर ही भीतर इस सेना और आक्रमण के विरुद्ध काम कर रहा था। उसे ज्ञात था कि यह सेना उत्तर की ओर किस पथ से जायगी। फलत हुनान के गवर्नर से मिल कर उसने यह कुचक्र रचा कि जब यह सेना उक्त प्रान्त की सीमा पर पहुँचे और आगे जाने के लिए प्रवेश करे तो वह रास्ता देने से इनकार कर दे। चुनाँचे यह सेना हुनान की सीमा पर पहुँच कर रुक गयी। अब उन्हें चेडचिउड पर सन्देह हो गया था इसलिए डाक्टर सेन ने अपने एक अति विश्वसनीय साथी तेङकेङ को रसद आदि पहुँचाने के काम पर उसके साथ लगा दिया था। डाक्टर सेन की सेना हुनान की सीमा पर जाकर रुकी और इधर चेड चिउड ने काङतुङ के स्टेशन पर तेङकेङ की हत्या करा दी। अब डाक्टर सेन के सामने विचित्र परिस्थिति उपस्थित थी। उनकी सेना हुनान प्रान्त मे रुकी थी उसका गवर्नर रास्ता देने को तैयार न था और रास्ता पाने के लिए युद्ध अनिवार्य ज्ञात हो रहा था। इधर चेड चिउङ ने रसद आदि आवश्यक सामग्री भेजने से इनकार कर दिया। इस स्थिति में जब अपनी ही सेना के पीछे विद्रोह के लक्षण दिखायी दे रहे थे तो डाक्टर सेन के लिए आगे बढ़ना असम्भव हो गया।

डाक्टर सेन चेडचिउड के सामने झुके। उन्होंने उससे समझौते की बातचीत आरम्भ की। चेडचिउड की माँग थी कि वह युद्ध सचिव बना दिया जाय। डाक्टर सेन ने उसे सन्तुष्ट करने के लिए युद्ध सचिव का पद प्रदान किया। परन्तु इस पद को प्राप्त कर लेने पर भी चिउड ने शान्ति लाभ नहीं किया। वह तो डाक्टर सेन को हरा कर सारे दक्खिन का अधिपति बनने की चेष्टा में सलग्न था। फिर भी इस पद से लाभ उठा कर वह अलग से अपनी सेना चुपके-चुपके सगठित करने लगा। एक बार पुन च्याङ्ग ने डाक्टर सेन को समझाने की चेष्टा की। उन्होंने कहा, 'चिउङ गुप्त रूप से विद्रोह की तैयारी कर रहा है। इसलिए उत्तर का कार्यक्रम रोक कर पहला काम उस पर ही आक्रमण कर देना होना चाहिए। उसका उन्मूलन करने के बाद उत्तर की ओर ध्यान देना उचित होगा।" पर दुर्भाग्य से डाक्टर सेन ने पुन इधर ध्यान न दिया। उन्होंने जवाब दिया "चेड चिउङ ने अब तक

काम पूरा ही न होता, पर डाक्टर सेन के कतिपय विश्वासपात्र साथी चेङ चिउङ्ग के अधीन उच्च सैनिक पदों पर स्थित थे। उन्होंने यह काम पूरा किया।

क्वाङसी को अधिकार में कर लेने के बाद डाक्टर सेन ने उत्तर की ओर कदम उठाने का निश्चय किया। पर इसके पहले उन्होंने काङतुङ पार्लियामेन्ट का अधिवेशन बुलाया और उसके सामने अध्यक्ष के निर्वाचन की बात रखी। पार्लियामेन्ट ने डाक्टर सेन को ही अध्यक्ष चुन लिया। उनका विचार तो यह था कि काङतुङ में सरकार की स्थापना हो जाने पर विदेशी सरकारें जिस प्रकार पेकिङ की गवर्नमेन्ट को स्वीकार करती हैं उसी प्रकार काङतुङ की भी स्वतन्त्र सत्ता स्वीकार करेंगी और इसके फलस्वरूप उन्हें उनसे सहायता तथा सहानुभूति मिलेगी पर उनकी यह धारणा गलत निकली। जापान ने तो इधर ध्यान ही नहीं दिया। अमेरिका से डाक्टर सेन को बहुत आशा थी और अमेरिका काङतुङ की सरकार की सत्ता को स्वीकार भी करना चाहता था पर ब्रिटेन के खुल्लम खुल्ला विरोध और असहमति के कारण वह भी मौन हो गया।

चीनियों को अब अपने ही बल पर राष्ट्रीय एकता की स्थापना के लिए आगे बढ़ना था। डाक्टर सेन ने उत्तरी सरकार से युद्ध की तैयारी आरम्भ की। इस समय च्याङ्ग अपने गाँव में ही थे। उनकी वृद्ध माता रोगग्रस्त होकर परलोक सिधार चुकी थीं। उनकी बीमारी के समय च्याङ्ग उनकी शैया के निकट पहुँच गये थे। उनकी मृत्यु के बाद वे उनके क्रिया कर्म में लगे थे। सन १९२१ के नवम्बर में डाक्टर सेन कुईलिङ प्रदेश में सेना का संगठन कर रहे थे। चेङ चिउङ मिङ आरम्भ से ही उत्तर पर आक्रमण करने के विरोधी थे इसलिए उन्होंने इस सेना का सेनापतित्व लेने से इनकार कर दिया। डाक्टर सेन ने इस समय दृढ़ता से काम लिया और निश्चय किया कि वे स्वयम् सेनापतित्व ग्रहण करेंगे। इसी समय च्याङ्ग भी माता की उत्तर क्रिया करके काङतुङ पहुँचे और आक्रमण की तैयारी में डाक्टर सेन की सहायता करने लगे। चेङ चिउङ के हट जाने से नये सिरे से संगठन आरम्भ किया गया और दक्खिन के विभिन्न प्रान्तों की सेना तैयार की जाने लगी। यूनान की सेना के संचालन का भार चुहपेइ तेह पर छोड़ा गया। इसी प्रकार क्वाङसी, कईचई तथा क्वाङतुङ की सेनाएँ बनीं, जिनके नये नये सेनापति नियुक्त किये गये। काङतुङ की सेना के उच्च अधिकारी च्याङ्ग नियुक्त हुए।

उनके कुछ भक्त और प्रिय साथियों ने उन्हें बड़ी सावधानी के साथ उनके निवास स्थान से हटाया और बागियों के रक्तपिपासु नेत्रों से बचा कर ह्वामपोआ में खड़े एक गनबोट तक पहुँचा दिया। जिस समय यह घटना घट रही थी च्याङ शङ्घाई में थे। विद्रोह का समाचार पाकर वे क्वाङतुङ आये और वहाँ की हालत अपनी आँखों से देखी। पर इस समय जो आग लगी हुई थी उसे वे काबू में नहीं कर सकते थे। वे भी ह्वामपोआ चले गये और उन्होंने भी अपने नेता के साथ अपना भाग्य सूत्र जोड़ दिया।

च्याङ्ई ने इस घटना का उल्लेख इस मनोरंजक ढंग से किया है। "१६ जून १६२२ ईसवी की बात है। क्वाङतुङ के सैनिक अधिकारी उस दिन सहसा चेङ चिउङमिङ्ग का आमन्त्रण पाकर एकत्र हुए और उनका गुप्त सम्मेलन शुरू हुआ। इस सम्मेलन में यह निश्चय किया गया कि अध्यक्ष का निवास स्थान घेर कर तमाम सरकारी कार्यालयों पर कब्जा कर लिया जाय और इन इमारतों पर सन्तरी बैठा दिये जाँय। उसी रात को दस बजे एक सरकारी कर्मचारी को इस गुप्त षड्यन्त्र का पता लग गया। उसने डाक्टर सेन को टेलिफोन से इस आयोजन की सूचना दी और उनसे अनुरोध किया कि वे अपने वास स्थान से हट जाँय नहीं तो उनका जीवन सङ्कटापन्न होगा। पर इस समय भी डाक्टर सेन ने उस अफसर की चेतावनी पर विश्वास नहीं किया। आधी रात बीत गयी। करीब एक बजे के डाक्टर सेन के प्रिय भक्त और साथी लिङ-चिङ और लिङ शूवेई उनके घर पहुँचे और उन्हें परिस्थिति की भयकरता समझायी। उन्होंने प्रार्थना की कि डाक्टर सेन उनके घर चलें। पर वे पर्वत की भाँति अटल थे। उन्होंने कहा, "चेङ चिउङ यदि मेरा प्राण लेना चाहता है तो उसे हिंसा का आश्रय ग्रहण करने की जरूरत नहीं। और यदि वह उपद्रव ही करना चाहता है तो मेरा यह कर्तव्य है कि मैं उसका दमन करूँ। यदि मैं यह करने की शक्ति नहीं रखता तो मुझे अपना कर्तव्य करते हुए प्राण देना चाहिए। इस समय भागना तो देश के साथ विश्वासघात करना होगा"।

मित्रों के बहुत समझाने पर भी जब वे नहीं माने तो अन्त में एक और अफसर आया जिसने सूचना दी कि सेना अध्यक्षावास को घेरने आरही है और चेङ चिउङ ने डाक्टर सेन की हत्या करने वाले को २ लाख डालर का इनाम देने की घोषणा की है। यह समाचार पाकर

विद्रोह नहीं किया है फिर उससे झगड़ा मोल लेने की कोई आवश्यकता नहीं।"

इधर दक्खिन की यह दशा थी तो उधर उत्तर में भी घटना चक्र तीव्र गति से चल रहा था। पेकिङ्ग की सरकार के अध्यक्ष, एक के बाद दूसरे, बड़ी शीघ्र गति से बदलते जा रहे थे। यहाँ तो यह हाल था कि आज एक ने शासन सत्ता पर अधिकार किया तो कल किसी दूसरे साथी ने उसे निकाल कर स्वयम् अपने को प्रतिष्ठित कर दिया। जिस समय की घटना का यह उल्लेख किया जा रहा है उस समय यूशिह-ज्याङ्ग पेकिङ्ग की सरकार का अध्यक्ष था। यूपेइन्-फू नामक एक व्यक्ति ने यूशिह को अध्यक्षता की गद्दी से उतार कर मार भगाया और नयी सरकार की स्थापना का आयोजन शुरू किया। यह व्यक्ति बड़ा चतुर था। हुनान और हूपे आदि प्रान्तों पर इसका प्रभुत्व था। इसने उत्तर और दक्खिन की एकता का स्वप्न देखा और ली-युआङहुङ्ग नामक अपने साथी को अध्यक्ष बनाया। फिर डाक्टर सेन को तार भेज कर उनसे अनुरोध किया कि वे अब काङतुङ की सरकार को भंग कर अपनी अध्यक्षता का परित्याग कर दें और पेकिङ्ग की नयी सरकार को समस्त चीन की सरकार स्वीकार कर देश में शान्ति स्थापित होने दें।

यूपेई फू तथा ली-युआङहुँङ्ग आदि डाक्टर सेन के पुराने शत्रु थे जो सदा से क्रान्ति का विरोध करने में दत्तचित रहे। डाक्टर सेन ने देखा कि अब वह मौका आ गया है जब क्रान्ति के सच्चे विरोधियों का सामना करना चाहिए। पर जहाँ वे यह सोच रहे थे वहाँ उनके घर में ही उनके शत्रु दूसरी योजना बनाने में लगे थे। उत्तर के अवसरवादियों के नियन्त्रण का बहाना बना कर चेङ चिङ्ग ने खुल्लमखुल्ला डाक्टर सेन के विरुद्ध विद्रोह की पताका ऊँची कर दी थी। उसने बहाना यह लिया कि उत्तरी सरकार का आमन्त्रण पाकर भी डाक्टर सेन उसे स्वीकार इसलिए नहीं करते कि वे स्वयम् पदच्युत हैं और अपनी राज्य पिपासा की शान्ति के लिए देश में रक्त की नदी बहाना चाहते हैं। इस प्रकार सारा आवरण हटा कर उसने डाक्टर सेन के विरुद्ध हथियार उठा लिये। काङतुङ के आसपास उसने जो सेना तैयार कर रखी थी उसे आज्ञा दी गयी कि काङतुङ के अध्यक्ष के निवास स्थान पर धावा कर दिया जाय। बस फिर क्या था डाक्टर सेन के आवास पर सैनिकों ने गोलियाँ बरसानी आरम्भ कर दीं। सौभाग्य से ही डाक्टर सेन बच गये।

उन्होंने डाक्टर सुडयात की प्राण-रक्षा करने की दृढ़ प्रतिज्ञा कर ली थी। इन कर्मचारियों ने तो एक बार अपने सेनापति वेङ को भी अपने जहाजों पर आने से रोक दिया क्योंकि उन्हें उस पर सन्देह हो गया था। फलतः कई सप्ताह तक डाक्टर सुडयातसेन, च्याङ तथा अन्य साथियों के साथ समुद्र में इधर उधर मारे-मारे फिरते रहे। चेङचिउङ उनके खून का प्यासा था। उसके इस कुचक्र का पता च्याङ को चल गया था। उन्होंने निश्चय किया था कि जैसे भी हो, देश के भविष्य के लिए डाक्टर सुडयात का जीवन बचाना ही चाहिए।

अब छोटे से गनबोट पर अधिक दिनों तक पड़े रहना खतरनाक हो गया था। फलतः उन्होंने किसी निरापद स्थान में पहुँचने की चेष्टा आरम्भ की। बड़ी कठिनाई के बाद एक ब्रिटिश लड़ाकू जहाज ने डाक्टर सुन्यात च्याङ तथा अन्य साथियों को हाङकाङ पहुँचा देने का बीड़ा उठाया। आखिर ये लोग हाङकाङ पहुँचे। हाङकाङ ब्रिटिश उपनिवेश था इसलिए वहाँ उनके लिए खतरा नहीं था। कुछ दिन उस प्रदेश में रहने के बाद ये लोग शङ्घाई के लिए रवाना हुए और १४ अगस्त को वहाँ पहुँच गये। इन दो महीनों में डाक्टर सुन्यात ने च्याङ को भली भाँति पहचाना। यों तो इस युवक की ईमानदारी और सचाई से वे पहले ही प्रभावित हो चुके थे पर सकट के दिनों में अपने प्रति उसकी एकनिष्ठा और स्नेह देखकर उनका हृदय उत्फुल्ल हो उठा। एक छोटे से जहाज पर जब खाने का ठिकाना नहीं था, पीने का पानी भी अकसर मिलना मुश्किल हो जाता था, च्याङ अपने नेता की सेवा और सहायता के लिए अविश्रान्त भाव से उनके पास खड़े रहते। एक नहीं अनेक बार इस बीच में च्याङ ने खतरा उठाकर और भेष बदलकर डाक्टर सुडयात की प्राण-रक्षा के लिए आवश्यक सामग्रियों को ला एकत्र किया। सकट के दिनों में ही किसी के स्नेह और सचाई का प्रमाण मिलता है। बन्धु के बन्धुत्व का पता तभी चलता है। कष्ट में जो साथ हों उनसे हुए प्रेम का मूल्य भौतिक जगत में किसी प्रकार आँका नहीं जा सकता। आज च्याङ्ग तथा डाक्टर सुडयात में जो प्रेम-ग्रन्थि बँध गयी थी वह फिर किसी झटके से टूटने वाली नहीं थी।

भी डाक्टर सेन अपने स्थान पर डटे रहे। उन्होंने भागने से इनकार कर दिया। जब उनके साथियों ने देखा कि यह किसी प्रकार उनकी बात ही नहीं सुनते तो उन्होंने जबर्दस्ती करने की ठानी और बलपूर्वक डाक्टर सेन को हटाकर अध्यक्ष भवन से बाहर ले गये। उन्होंने भारी खतरा उठाकर और अँधेरे में बागियों को धोखा देकर डाक्टर सेन को जलसेना के कार्यालय में पहुँचाया। सेना का यह विभाग अबतक डाक्टर सेन का भक्त था। चेन चिङ यद्यपि उसे भी मिला लेने की चेष्टा कर रहा था पर उसे अबतक सफलता नहीं मिली थी।

इस प्रकार सुन्यातसेन युयू नामक गनबोट पर निरापद पहुँचा दिये गये।"

डाक्टर सेन की यह स्थिति हुई कि जिस चक्रमित्र पर उन्होंने भरोसा किया था वह आस्तीन का साँप निकला। अत्यधिक आदर्शवादिता भी कभी-कभी हानिकर हो जाती है। जीवन में मनुष्य को आदर्शवादिता के साथ साथ व्यावहारिकता की ओर भी ध्यान देना चाहिए। अनेक बार मित्रों ने उनका ध्यान उस खतरे की ओर आकर्षित किया था जिसका सामना वे आज कर रहे थे पर उन्होंने इसकी उपेक्षा की। च्यांहूह ने तो न केवल डाक्टर सेन का ध्यान ही आकर्षित किया बल्कि अत्यधिक क्षोभ भी प्रकट किया और उन्हें इस ओर ध्यान देने के लिए बाध्य करने की इच्छा से उनका साथ तक छोड़ कर अपने घर चले गये। पर डाक्टर सेन पर किसी का कुछ प्रभाव न हुआ। अब आज उनकी आँखें खुलीं। पर जब आँखें खुलीं तब वे समय चूक चुके थे। अब पश्चात्ताप करने से कोई लाभ नहा था। जो होना था सो हो गया। प्रसन्नता केवल इस बात की थी कि उनके सब मित्र अब भी उनके साथ थे। वे उनके आदेश पर चलने के लिए, उनके साथ सकटों का सामना करने के लिए, दर-दर की ठोकरें खाने के लिए और आवश्यकता हो तो अपना प्राण तक देने के लिए अब भी तैयार थे।

जलसेना यद्यपि उनके पक्ष में थी पर केवल उसके बूते पर विद्रोह का दमन नहीं किया जा सकता था। फिर उस सेना के सेनापति चेङ्शु-तेह को भी अपनी ओर मिलाने के लिए चेनचिउङमिङ पूरी चेष्टा कर रहा था। चेङ्तेह मिल तो नहीं गये पर उनका हृदय डाँवाडोल हो चुका था। अच्छी बात यह थी कि लड़ाकू जहाजों तथा क्रूजरों आदि के चालक और छोटे कर्मचारी कुओमिङताङ के सदस्य थे

थे उस ओर सहज ही उनका ध्यान आकर्षित होने लगा। लोगों ने जब देखा कि डाक्टर सेन और उनके साथी इतना कष्ट उठा रहे हैं, तो सहज ही वे उस आदर्श के प्रति आकृष्ट हुए जिसे लेकर विद्रोही आगे बढे थे। लोगों की जिज्ञासा, उत्सुकता और सहानुभूति उन्हें डाक्टर सेन और उनके सिद्धान्तों की ओर बहा ले चली और उनके हृदय में उनकी सहायता करने की सहज प्रेरणा उत्पन्न हुई। अस्तु उनके कुछ साथियों ने जब काइतुङ पर पुन अधिकार स्थापित करने की योजना बनायी और उसे लेकर आगे बढे तो उन्हें लोगों से आशातीत साहाय्य प्राप्त हुआ।

सन् १९०७ के अक्तूबर महीने में डाक्टर सेन के साथी सूचुङ चिङ्ग ने एक सेना लेकर फूचउ पर धावा किया और सहज ही उस पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। इसके थोडे ही दिनों बाद युन्नान और क्वाङ्गची की दो सैनिक टुकडियाँ कुओमिङताङ्ग के दो सदस्यों के नेतृत्व मे काइतुङ पर चढ दौडीं। आश्चर्य है कि चार महीने पूर्व जिस चेङचिउङमिङ्ग ने सेना को मिला कर डाक्टर सेन को निर्वासित किया था उसी चेङचिउङ के साथियों ने थोडे से समय मे उस का साथ छोड दिया। स्वार्थ की भित्ति पर स्थापित मित्रताएँ अधिक दिनों तक नहीं टिका करतीं। अपने अपने स्वार्थ को लेकर जो एक होते हैं वे उनके परस्पर टक्कर खाते ही पुन अलग हो जाते हैं। इस प्रकार के अपवित्र समझौते फिर उन्हीं के लिए कर बन जाते हैं। चेङचिउङ की भी यही गति हुई। उपयुक्त सैनिक टुकडियों के हलके से आघात से चेङ चिउङ चारो खाने चित्त आ गिरा। वह काइतुङ छोड कर भागा। थोडे ही दिनों में क्वाँङतुङ का अधिकतर भाग पुन कुओमिङताङ्ग के अधिकार में आ गया।

सन् १९२३ के फरवरी महीने में डाक्टर सेन शङ्घाई से काङ्तुङ वापस आये और तत्काल ही पुन सैनिक सरकार की स्थापना कर दी। इस बार वापस आने पर दक्खिन के प्रमुख प्रान्तों ने उनका हृदय से स्वागत किया। पर इससे यह न समझना चाहिए कि डाक्टर सेन की कठिनाइयाँ दूर हो गयी थीं। दक्खिन में उन्होने राष्ट्रीय सरकार की स्थापना अवश्य की पर उनका यह प्रदेश अब भी चारो ओर से विरोधी तत्वों से घिरा हुआ था।

इसी समय कुछ मार्के की घटनाएँ घटीं। चीन के रंगमंच पर सोवियेत रूस का प्रादुर्भाव हुआ जिसने वर्षो तक इस देश में प्रमुख

चौथा अध्याय

कान्टन सरकार की स्थापना और विरोधियों का दमन

इस बार भी सुनयातसेन और उनके साथी असफल हुए। पर डाक्टर सेन का बड़प्पन इसी बात में है कि पुनः पुनः ठोकर खाकर और गहरी ठोकर खाकर भी अपनी लक्ष्य सिद्धि में फिर एक बार दत्तचित्त हुए। साधना के लिए तत्पर हुए साधक को बार-बार असफलता क्यों मिलती है? मालूम नहीं इष्टदेवी अपने पुजारी पर शीघ्र प्रसन्न क्यों नहीं होती? इस रहस्यमय जगत के अनेक अटल और आच्छादित पटलों में कदाचित इस प्रश्न का उत्तर भी छिपा हुआ है। इतिहास का विद्यार्थी अपने अध्ययन में प्रायः सर्वत्र ही यह बात देखेगा कि जो स्वतन्त्रता की पूजा में संलग्न रहते हैं और क्रान्ति की धारा का प्रतिनिधित्व करते हैं वे बार बार अपने प्रयत्नों में असफल होते हैं। यह असफलता शायद उनकी परीक्षा के लिए ही उनके गले पड़ती है। सिद्धि अपने साधक की परीक्षा लेना चाहती है। उसके गले में जयमाल डालने से पूर्व वह अपने भक्त की भक्ति, उसकी दृढ़ता और उसकी आस्था तथा नैष्ठिकता परख लेना चाहती है। किसी महान यज्ञ की पूर्ति आवश्यक बलिदान के बिना नहीं होती। यदि साधक परीक्षा में सफल हुआ तो इष्टदेवी उसके सामने मूर्तिमान हो उठती है। डाक्टर सुनयात सेन इसी कसौटी पर कसे जा रहे थे पर वह थे सच्चे साधक जिसने बार-बार असफलता अंगीकार करके भी अपने पथ से विचलित होना स्वीकार नहीं किया।

पर अब उनका यज्ञ पूरा हो रहा था। सफलता उनके करतलगत होने वाली थी। चेन-चिउङ-मिङ्ग का विद्रोह, उसका विश्वासघात और उसके फलस्वरूप डाक्टर सुनयात का कष्ट सहन सम्भवतः उस यज्ञ की पूर्णाहुति के समान था जिसका प्रारम्भ डाक्टर सेन ने आज से बीस वर्ष पूर्व किया था। शंघाई वापस आने के बाद उन्होंने देखा कि देश में उनके प्रति एक प्रकार की सहानुभूति की लहर दौड़ गयी है। लोगों में अनायास चेतना फैल रही है। गत बीस वर्षों से जिस बात को लेकर डाक्टर सेन अलख जगा रहे थे, जिसकी रट लगा रहे थे और जिन भावों को लोगों के हृदय में उत्पन्न करने के लिए निरन्तर चेष्टा कर रहे

चीज में मुझे दिलचस्पी नहीं है इसलिए हमें आपके देश में उत्पन्न तथा निर्मित पदार्थों की कोई आवश्यकता नहीं।

हमारे साम्राज्य में वे तमाम पदार्थ पर्याप्त परिमाण में मौजूद हैं जिनसी हमें आवश्यकता पड़ती है। इसलिए हमें इसकी कोई जरूरत नहीं कि विदेशी घबरा के सामान को हम अपने देश में आने और उनके स्थान पर अपने देश के बने माल को बाहर जाने दें।"

चीनी सम्राट ने यद्यपि कृपापूर्वक चीनी सिल्क और चाय आदि का थोड़ा बहुत निर्यात स्वीकार कर अपनी उदारता का परिचय दिया पर उनके पत्र से स्पष्ट हो जाता है कि उस समय के चीन के लोग विदेशी व्यापारियों को क्या समझते और उनके प्रति कैसा व्यवहार करते थे। पर जिन लोगों के साथ पचास वर्ष पूर्व यह उपेक्षा का भाव ग्रहण किया गया था वे ही एक दिन सिर पर आ धमके। सन् १८४० में ब्रिटिश जलसेना चीन के दरवाजे पर आ पहुँची और तोपों के जोर से चीन में अफीम बेचने का अधिकार माँगा। चीनी अफीम खा कर अपने देश को नष्ट होने देना नहीं चाहते थे पर सभ्यता और संस्कृति का प्रसार करने वालों ने उन्हें अफीम खाने के लिए बाध्य करके ही सभ्य बनाने की ठानी। फलतः अफीम युद्ध हुआ जिस में चीन पराजित हो गया। ब्रिटेन ने विजय के फलस्वरूप हाङ काङ्ग नामक चीनी बन्दरगाह को हथिया लिया। इसके साथ साथ पाँच और बन्दरगाहों में ब्रिटेन को व्यापार करने का अधिकार प्राप्त हुआ। सौ बरस तक हाङ्गकाङ्ग पर ब्रिटिश पताका फहराती रही जिसे सन् १९४२ में जापान ने उखाड़ फेंका।

सन् १८५६ में फ्रान्स और ब्रिटेन ने चीन पर पुनः धावा किया। यह लड़ाई द्वितीय अफीम युद्ध के नाम से प्रसिद्ध है। इस लड़ाई में भी इनकी जीत हुई और याङ्चे नदी की तराई तक उनकी पहुँच हुई तथा और सात आठ बन्दरगाह हथिया लिये गये। सन् १८७० में एक अँगरेज की हत्या किसी चीनी ने कर दी जिसके हरजाने में ब्रिटेन ने और पाँच बन्दरगाहों का द्वार अपने लिए अनावृत किया। फ्रान्स ने अनाम ले लिया। सन् १८९४ में जापान ने कोरिया और फारमोसा को हड़प लिया। बाद में रूस ने मञ्चूरिया में अपना अधिकार स्थापित किया। इसी प्रकार समय समय पर जर्मनी, रूस और अमेरिका ने भी चीन में अपने पैर घुसेड़े। शाङ्टुङ्ग प्रान्त में जर्मनों के विरुद्ध सन् १९०० ई०

अभिनय किया। इस स्थान पर थोड़े पूर्व के घटनाओं का उल्लेख कर देना अनुचित न होगा। रूस की जारशाही का चीन से अच्छा सम्बन्ध नहीं था। पश्चिम की साम्राज्यवादिनी शक्तियाँ इस देश को नोच-नोच कर खा जाने के लिए शताब्दियों से प्रयत्नशील थीं। जार के अधीन रूस भी साम्राज्यवादी लोलुपता में किसी से कम नहीं था। पश्चिम की विदेशी शक्तियों ने अपने स्वार्थ में अन्धी हो कर जिस प्रकार का व्यवहार चीन के साथ किया था वह इतिहास की काली घटना के रूप में श्वेत जातियों के मस्तक को सदा कलंकित करता रहेगा।

एक समय था जब १७६३ ई० में पेकिङ्ग के राज दरबार में स्थित ब्रिटिश दूत ने चीनी सम्राट् चेइङतुङ्ग से अपने राजा जार्ज तृतीय की ओर से यह विनम्र प्रार्थना की थी कि उनके देश को चीन में कुछ व्यापार करने की सुविधा प्रदान की जाय और चीनी दरबार में स्थायी रूप से ब्रिटिश दूत के रहने की आज्ञा दी जाय। वह जमाना था जब ब्रिटेन के व्यापारी अपना माल बेचने के लिए पूरबी राजाओं के सम्मुख घुटने टेक कर उनके देश में रोजगार करने की आज्ञा माँगा करते थे। चीनी सम्राट् चेइङतुङ्ग ने जार्ज तृतीय को जो उत्तर भेजा था वह बड़ा मनोरञ्जक है। उसी से यह पता चलता है कि उस समय विदेशी व्यापारियों और उनके देश की क्या वक्अत थी। पाठकों की जानकारी के लिए उस पत्र का कुछ भाग यहाँ उद्धृत कर देना अनुचित न होगा। चीनी सम्राट् ने लिखा था —

'समुद्रों के उस पार रहने वाले नरेश, आपने हमारे देश से व्यापार करने तथा हमारी सभ्यता से कुछ शिक्षा ग्रहण करने के लिए विनम्र इच्छा प्रकट की है और उसके लिए अपना प्रतिनिधि मंडल भेजा है। उसने आदरपूर्वक आपके मन्तव्य को मेरे सामने उपस्थित किया है। अपनी भक्ति प्रदर्शित करने के लिए आपने नजर भी भेजी है। मैंने आपका मन्तव्य पढ़ा है और उसमें आपने इस देश के प्रति अपना सम्मान प्रकट करते हुए जिस विनम्रता के साथ अपना भाव प्रकट किया है उसको मैं प्रशंसा की दृष्टि से देखता हूँ।

इस विशाल जगत में मेरी बस एक ही इच्छा है और वह यह कि मैं इस देश की सुदृढ़ और समुन्नत सरकार की रक्षा करूँ और शासन की जिम्मेदारियों का निर्वाह कर सकूँ। दुनिया की किसी और

चीनी सरकार घटा बढ़ा भी नहीं सकती थी क्योंकि उनका निर्धारण विदेशी सरकारें करती थीं। चीनी सरकार की आय का बहुत बड़ा भाग विदेशी कर्ज के मूल तथा सूद की अदायगी में प्रति वर्ष चला जाता था और इसका निर्धारण भी विदेशियों ने किया था। सन १९२८ में सरकारी तट कर तथा अन्य आयका कुल ७८ प्रतिशत कर्ज की अदायगी में खर्च हुआ। चीन की यह दशा उन विदेशी शक्तियों ने कर डाली थी जिनमें से बहुत सी आज उसकी मित्र बनी हुई हैं।

चीन की राजनीति पर भी यह विदेशी शक्तियाँ तरह-तरह से प्रभाव डाला करती थीं। उन सब बातों को लिख कर इस ग्रन्थ का कलेवर नहीं बढ़ाया जा सकता, पर स्पष्ट है कि उत्तर के सैन्यसत्तावादियों को इनकी शह मिला करती और वे परस्पर लड़ते रहने के लिए उभाड़े जाया करते। सन् १९११ में डाक्टर सुइयात सेन ने जो विद्रोह किया था वह जहाँ एक ओर मञ्चू राज कुल का खातमा करने के लिए था वहीं चीन को विदेशियों के चंगुल से छुड़ाने के लिए भी। विदेशियों के कारण चीनी राष्ट्र का जो अपमान और निर्दलन हो रहा था उसी ने तो मञ्चू राजाओं के प्रति भी विद्रोह की भावना उत्पन्न की थी। चीनी देशभक्तों ने देखा कि इन साम्राज्यवादी गीधों से चीन को बचाया न गया तो वे उसकी हड्डी पसली तक नोच लेजायेंगे। और उसे बचाने का एक मात्र उपाय यह है कि देश की शासन-सत्ता को निकम्मे और निर्जीव शासकों के हाथ से छीन कर जनता के सेवकों तथा राष्ट्र के अभिमानियों के हाथों में सौंपा जाय।

चीनी विद्रोह का यही मुख्य कारण था। यह आरम्भ हुआ तो पर अब तक उसका कार्य समाप्त नहीं हुआ था। जिस समय की बात लिखी जा रही है उस समय यह प्रश्न बड़े उग्र रूप से सामने आ गये थे, क्योंकि मञ्चू राजवंश को नष्ट हुए कई बरस बीत चुके थे और क्रान्ति के विरोधी, प्रतिगामी तथा स्वार्थ के लिए विदेशियों की उँगलियों के इशारे पर नाचने वालों का क्रमश लोप हो रहा था। दक्षिण में डाक्टर सेन तथा उनका कुओमिंडताङ्ग दल अनेक विघ्न बाधाओं का सामना करने के बाद अन्त में पुन अपना पैर जमाने में सफल हुआ था। इसी समय बोलशेविकी क्रान्ति में सफल हो तथा जगत की समस्त साम्राज्यवादी शक्तियों के दर्प को विचूर्ण कर रूस सारे संसार में नयी चेतना, जीवन के नये आदर्श तथा नयी

में विद्रोह हुआ जो बॉक्सर विद्रोह के नाम से प्रसिद्ध है। यह विद्रोह वास्तव में समस्त श्वेत जातियों के विरुद्ध हुआ था। उस विद्रोह के नेता यूतुङ-च्वेङ ने जो घोषणा की थी उसी से यह बात स्पष्ट है।

यू-तुङ चङ्ग ने अपनी घोषणा में कहा था "ये विदेशी व्यापार और ईसाई धर्म का प्रचार करने के बहाने हमारे देश की जनता की भूमि उसका भोजन और उनका वस्त्र छीने ले रहे हैं। ये हमारे ऋषियों की शिक्षा के विरुद्ध प्रचार करके हमें व्यभिचार और अफीम की नशाखोरी के गड्ढे में ढकेल दे रहे हैं। ये हमारे देश के भू भागों पर विश्वासघात करके अपना अधिकार स्थापित करने और हमारे देश का धन हरण किये ले रहे हैं। ये हमारे बच्चों का भक्षण किये जा रहे हैं और हमारे देश पर कर्ज का बोझ लादे दे रहे हैं। इन्होंने हमारे महलों को जला डाला, हमारी रियासतों को तबाह कर डाला और अब चीन के लोगों में परस्पर द्वेष उत्पन्न करके हमारे देश को बाँटे ले रहे हैं।"

बॉक्सर विद्रोह के नेता के ये आक्षेप नितान्त सत्य हैं। युरोप की विदेशी शक्तियां ने चीन को लूट के माल के सदृश मनमाना नोचना और खसोटना आरम्भ कर दिया था। चीन की प्रभुसत्ता का विनाश हो रहा था। उसकी सीमा के अन्दर विदेशी बस्तियाँ बस गयीं जो चीन को सैनिक बल से दबा और उसके साथ तरह-तरह की सन्धियाँ कर उसने ही बन्दरगाहों में अपना स्वतन्त्र सत्ता कायम किये थीं और चीन में रहती हुई वहाँ की राज्य और शासन-सत्ता से मुक्त रहने का 'ऐक्स्ट्रा-टैरिटोरियल' या बहिर्देशी अधिकार प्राप्त किये थीं। जिन प्रदेशों में इन्होंने यह विशेष अधिकार और विशेष सुविधाएँ प्राप्त की थीं वहाँ उनकी अलग अदालत थीं, अलग पुलीस थी, अलग कायदे कानून थे और अलग मुद्रा चलती थी। यदि कोई विदेशी चीन में कोई जुर्म करे तो चीनी अदालत में उस पर मुकदमा नहीं चल सकता था। पर किसी चीनी पर ये अपनी अदालतों में मुकदमा चला सकती थीं। बॉक्सर विद्रोह के नाम पर चीन से बहुत बड़ी रकम हरजाने में वसूल की गयी थी।

बहुत दिना तक चीन की सरकार को अपनी आर्थिक नीति को स्वतन्त्रतापूर्वक परिचलित करने का अधिकार नहीं था। तट कर और चुँगियों पर सन्धियों के द्वारा विदेशियों का नियन्त्रण था। इन करों को

चीनी सरकार घटा बढ़ा भी नहीं सकती थी क्योंकि उनका निर्धारण विदेशी सरकारें करती थीं। चीनी सरकार की आय का बहुत बड़ा भाग विदेशी कर्ज के मूल तथा सूद की अदायगी में प्रति वर्ष चला जाता था और इसका निर्धारण भी विदेशियों ने किया था। सन् १९२८ में सरकारी तट कर तथा अन्य आयका कुल ७८ प्रतिशत कर्ज की अदायगी में खर्च हुआ। चीन की यह दशा उन विदेशी शक्तियों ने कर डाली थी जिनमें से बहुत सी आज उसकी मित्र बनी हुई हैं।

चीन की राजनीति पर भी यह विदेशी शक्तियाँ तरह-तरह से प्रभाव डाला करती थीं। उन सब बातों को लिख कर इस ग्रन्थ का कलेवर नहीं बढ़ाया जा सकता, पर स्पष्ट है कि उत्तर के सैन्यसत्तावादियों को इनकी शह मिला करती और वे परस्पर लड़ते रहने के लिए उभाड़े जाया करते। सन् १९११ में डाक्टर सुनयात सेन ने जो विद्रोह किया था वह जहाँ एक ओर मञ्चू राज-कुल का खातमा करने के लिए था वहीं चीन को विदेशियों के चंगुल से छुड़ाने के लिए भी। विदेशियों के कारण चीनी राष्ट्र का जो अपमान और निर्दलन हो रहा था उसी ने तो मञ्चू राजाओं के प्रति भी विद्रोह की भावना उत्पन्न की थी। चीनी देशभक्तों ने देखा कि इन साम्राज्यवादी गीधों से चीन को बचाया न गया तो वे उसकी हड्डी पसली तक नोच लेजायेंगे। और उसे बचाने का एक मात्र उपाय यह है कि देश की शासन-सत्ता को निकम्मे और निर्जीव शासकों के हाथ से छीन कर जनता के सेवकों तथा राष्ट्र के अभिमानियों के हाथों में सौंपा जाय।

चीनी विद्रोह का यही मुख्य कारण था। यह आरम्भ हुआ तो पर अब तक उसका कार्य समाप्त नहीं हुआ था। जिस समय की बात लिखी जा रही है उस समय यह प्रश्न बड़े उग्र रूप से सामने आ गये थे, क्योंकि मञ्चू राजवंश को नष्ट हुए कई बरस बीत चुके थे और क्रान्ति के विरोधी, प्रतिगामी तथा स्वार्थ के लिए विदेशियों की उँगलियों के इशारे पर नाचने वालों का क्रमशः लोप हो रहा था। दक्षिण में डाक्टर सेन तथा उनका कुओमिंडताङ्ग दल अनेक विघ्न बाधाओं का सामना करने के बाद अन्त में पुनः अपना पैर जमाने में सफल हुआ था। इसी समय बोलशेविकी क्रान्ति में सफल हो तथा जगत की समस्त साम्राज्यवादी शक्तियों के दर्प को विचूर्ण-कर रूस सारे संसार में नयी चेतना, जीवन के नये आदर्श तथा नयी

में विद्रोह हुआ जो बॉक्सर विद्रोह के नाम से प्रसिद्ध है। यह विद्रोह वास्तव में समस्त श्वेत जातियों के विरुद्ध हुआ था। इस विद्रोह के नेता यूतुइ-च्वेह ने जो घोषणा की थी उसी से यह बात स्पष्ट है।

यू-तुइ च्वे ने अपनी घोषणा में कहा था "ये विदेशी व्यापार और ईसाई धर्म का प्रचार करने के बहाने हमारे देश की जनता की भूमि उसका भोजन और उसका वस्त्र छीने ले रहे हैं। ये हमारे ऋषियों की शिक्षा के विरुद्ध प्रचार करके हमें व्यभिचार और अफीम की नशाखोरी के गढ़े में ढकेल दे रहे हैं। ये हमारे देश के भू भाग पर विश्वासघात करके अपना अधिकार स्थापित करते और हमारे देश का धन हरण किये ले रहे हैं। ये हमारे बच्चों का भक्षण किये जा रहे हैं और हमारे देश पर कर्जे का बोझ लादे दे रहे हैं। इन्होंने हमारे महलों को जला डाला, हमारी रियासतों को तबाह कर डाला और अब चीन के लोगों में परस्पर द्वेष उत्पन्न करके हमारे देश को बाँटे ले रहे हैं।"

बॉक्सर विद्रोह के नेता के ये आक्षेप नितान्त सत्य हैं। युरोप की विदेशी शक्तियों ने चीन को लूट के माल के सदृश मनमाना नोचना और खसोटना आरम्भ कर दिया था। चीन की प्रभुसत्ता का विनाश हो रहा था। उसकी सीमा के अन्दर विदेशी बस्तियाँ बस गयीं जो चीन को सैनिक बल से दबा और उसके साथ तरह-तरह की सन्धियाँ कर उसके ही बन्दरगाहों में अपनी स्वतन्त्र सत्ता कायम किये थीं और चीन में रहती हुई वहाँ की राज्य और शासन-सत्ता से मुक्त रहने का 'एक्सट्रा-टेरिटोरियल' या बहिर्देशी अधिकार प्राप्त किये थीं। जिन प्रदेशों में उन्होंने यह विशेष अधिकार और विशेष सुविधाएँ प्राप्त की थीं वहाँ उनकी अलग अदालत थीं, अलग पुलीस था, अलग कायदे कानून थे और अलग मुद्रा चलती थी। यदि कोई विदेशी चीन में कोई जुर्म करे तो चीनी अदालत में उस पर मुकदमा नहीं चल सकता था। पर किसी चीनी पर ये अपनी अदालतों में मुकदमा चला सकती थीं। बॉक्सर विद्रोह के नाम पर चीन से बहुत बड़ी रकम हरजाने में वसूल की गयी थी।

बहुत दिनों तक चीन की सरकार को अपनी आर्थिक नीति को स्वतन्त्रतापूर्वक परिचलित करने का अधिकार नहीं था। तट कर और चुँगियों पर सन्धियों के द्वारा विदेशियों का नियन्त्रण था। इन करों को

चीनी सरकार घटा बढ़ा भी नहीं सकती थी क्योंकि उनका निर्धारण विदेशी सरकारें करती थीं। चीनी सरकार की आय का बहुत बड़ा भाग विदेशी कर्ज के मूल तथा सूद की अदायगी में प्रति वर्ष चला जाता था और इसका निर्धारण भी विदेशियों ने किया था। सन १९०८ में सरकारी तट कर तथा अन्य आयका कुल ७८ प्रतिशत कर्ज की अदायगी में खर्च हुआ। चीन की यह दशा उन विदेशी शक्तियों ने कर डाली थी जिनमें से बहुत सी आज उसकी मित्र बनी हुई हैं।

चीन की राजनीति पर भी यह विदेशी शक्तियाँ तरह तरह से प्रभाव डाला करती थीं। उन सब बातों को लिख कर इस ग्रन्थ का कलेवर नहीं बढ़ाया जा सकता, पर स्पष्ट है कि उत्तर के सैन्यसत्तावादियों को इनकी शह मिला करती और वे परस्पर लड़ते रहने के लिए उभाड़े जाया करते। सन् १९११ में डाक्टर सुइयात सेन ने जो विद्रोह किया था वह जहाँ एक ओर मञ्चू राज कुल का खातमा करने के लिए था वहाँ चीन को विदेशियों के चंगुल से छुड़ाने के लिए भी। विदेशियों के कारण चीनी राष्ट्र का जो अपमान और निर्दलन हो रहा था उसी ने तो मञ्चू राजाओं के प्रति भी विद्रोह की भावना उत्पन्न की थी। चीनी देशभक्तों ने देखा कि इन साम्राज्यवादी गीधों से चीन को बचाया न गया तो वे उसकी हड्डी पसली तक नोच लेजायेंगे। और उसे बचाने का एक मात्र उपाय यह है कि देश की शासन-सत्ता को निकम्मे और निर्जीव शासकों के हाथ से छीन कर जनता के सेवकों तथा राष्ट्र के अभिमानियों के हाथों में सौंपा जाय।

चीनी विद्रोह का यही मुख्य कारण था। यह आरम्भ हुआ तो पर अब तक उसका कार्य समाप्त नहीं हुआ था। जिस समय की बात लिखी जा रही है उस समय यह प्रश्न बड़े उग्र रूप से सामने आ गये थे, क्योंकि मञ्चू राजवंश को नष्ट हुए कई बरस बीत चुके थे और क्रान्ति के विरोधी, प्रतिगामी तथा स्वार्थ के लिए विदेशियों की उँगलियों के इशारे पर नाचने वालों का क्रमश लोप हो रहा था। दक्षिण में डाक्टर सेन तथा उनका कुओमिंडाङ्ग दल अनेक विघ्न बाधाओं का सामना करने के बाद अन्त में पुन अपना पैर जमाने में सफल हुआ था। इसी समय बोलशेविकी क्रान्ति में सफल हो तथा जगत की समस्त साम्राज्यवादी शक्तियों के दर्प को विचूर्ण-कर रूस सारे ससार में नयी चेतना, जीवन के नये आदर्श तथा नयी

योजना लेकर उपस्थित हुआ । सन १९१८ में रूसी क्रान्ति की सफलता के बाद बोलशेवी सरकार ने जार के साम्राज्य का विघटन आरम्भ कर दिया। उसने युरोप में जहाँ फिनलैंड, पोलैंड, लटविया, लिथुआनिया और एस्थोनिया को स्वतन्त्रता प्रदान कर दी वहीं चीन के सम्बन्ध में भी एक घोषणा की । उसने चीन की जनता के नाम वक्तव्य निकाल कर वचन दिया कि "वह चीन के उन समस्त भू भागों को लौटा देना चाहता है जो अन्यायपूर्वक जार द्वारा चीन से अपहृत कर लिये गये थे । चीनी पूर्वी रेल पथ जो उनसे छीन लिया गया तथा उसका सारा नियन्त्रण उनके हाथों सुपुर्द कर देना चाहता है और विशेषाधिकारों विशेष सुविधाओं और प्रभाव क्षेत्रों के नाम से जो अधिकार प्राप्त किये गये थे उन्हें समर्पण कर देना चाहता है। बॉक्सर विद्रोह के नाम पर हरजाने की जो रकम पाने का दावा रूस करता रहा है उसे भी वह छोड़ देने को तैयार है।"

डाक्टर सुङयातसेन ने रूस की इस घोषणा का स्वागत किया। यह एक ऐसी घटना थी जो अन्य विदेशियों को अभिशाप स्वरूप मालूम हुई क्योंकि उनके स्वार्थ में इससे बड़ी बाधा पहुँचती थी। पर राष्ट्रवादियों ने तो इसका स्वागत किया। बोलशेवी सरकार इस सबके बदले में चीन की पेकिङ्ग सरकार से केवल इतना ही चाहती थी कि वह रूस की नयी सरकार की सत्ता स्वीकार कर ले। साम्राज्यवादिनी विदेशी शक्तियाँ यह नहीं चाहती थीं कि पेकिङ्ग रूस से दोस्ती करे। उत्तर के महत्वाकांक्षी सेनापति तो इनके इशारों पर नाच ही रहे थे अतः वे इन कुटिल कूटनीतिज्ञों के दबाव में आ गये और उन्होंने रूस की बोलशेविक सरकार की सत्ता को अस्वीकार कर दिया। पर जब डाक्टर सुङयातसेन ने सन् १९२३ में दक्षिण में नयी सरकार की स्थापना की उस समय रूस ने एडॉल्फ जोफे नामक अपने प्रतिनिधि को क्वाङ्तुङ भेजा। डाक्टर सुङयात ने रूस की मित्रता का स्वागत किया और बोलशेवी सरकार से स्वतन्त्र चीन की सरकार के अध्यक्ष की हैसियत में सन्धि करने की इच्छा प्रकट की। डाक्टर सुङ को निश्चय हो गया कि चीन को साम्राज्यवाद विरोधी मोरचे में रूस के साथ सहयोग प्रदान करना चाहिए। रूस ने भी चीन के साथ की गयी पुरानी अन्यायमूलक सन्धियों को समाप्त कर समानता के पद पर नयी मित्रता की सन्धि करने की इच्छा प्रकट की।

फलतः इन दोनों देशों ने अपने को परस्पर मित्रता की सन्धि में बाँध लिया। एडॉल्फ जोफे ने यह बात स्वीकार कर ली कि वर्तमान समय में चीन में बोलशेवी सोवियेत सरकार की स्थापना का यत्न नहीं किया जा सकता और संयुक्त चीन को अपने भाग्य का निर्माण अपने ढंग से करने के लिए स्वतन्त्र रूप से सचेष्ट होने का अधिकार होना चाहिए। डाक्टर सुङयातसेन ने चीन के नवनिर्माण के लिए जिन तीन मौलिक सिद्धान्तों को स्थिर किया था वही भावी राष्ट्र के भव्यभवन के आधार स्वीकार किये गये। उनका कहना था कि जनता की जीविका का प्रश्न मुख्य है। जीविका में ही और बातें भी आ जाती हैं। जीवन के लिए लोगों की रक्षा आवश्यक है उनके कल्याण के लिए उनकी उन्नति आवश्यक है और उन्नति के लिए जीवन को विस्तार की जरूरत है। इसलिए वे जनता की सामाजिक और आर्थिक स्वतन्त्रता के हिमायती थे, उसकी राजनीतिक स्वतन्त्रता के दावेदार थे और राष्ट्र को विदेशी शक्तियों के प्रभाव तथा नियन्त्रण से मुक्त करके अन्य देशों के समान पद पर प्रतिष्ठित करने के इच्छुक। वे चीन में प्रजातन्त्र की स्थापना चाहते थे जिसके लिए क्रमशः तीन सीढ़ियाँ निर्धारित करते।

(१) जनता की सेना द्वारा बलपूर्वक प्रतिगामी सैन्यसत्तावादियों तथा अवसरवादी सामन्तों के हाथ से शक्ति छीन ली जाय और इस जनसेना की सरकार तब तक रहे जब तक उपर्युक्त शक्तियों का पूर्ण विनाश नहीं हो जाय।

(२) इसके बाद दूसरी स्थिति होगी वह जिसमें क्रान्तिकारी दल कुओमिङ्ताङ्ग के संरक्षण में शासनसत्ता चलेगी और इस बीच जनता को स्वयम् शासन का भार वहन करने तथा उसे उस उत्तरदायित्व को उठाने के योग्य बनाया जायगा।

(३) तीसरी सीढ़ी वह होगी जब सुशिक्षित और जागृत जनता स्वयम् सच्चे प्रजातन्त्र की स्थापना करेगी।

इस प्रकार जनता के लिए, जनता द्वारा, जनता की सच्ची सरकार उदीयमान होगी जो चीनी राष्ट्र को प्रगतिशील तथा अन्य उन्नत राष्ट्रों में आदरणीय स्थान प्रदान करेगी।

संक्षेप में यही डाक्टर सुङयात के तीन सिद्धान्त थे जो चीन के भावी कार्यक्रम के आधार बने। एडॉल्फ जोफे ने स्वीकार किया कि

राष्ट्रीय चीन उसी को लेकर आगे बढ़े और रूस उसकी यथासम्भव सहायता करे। इन दोनों दलों की मैत्री ने साम्राज्यवादियों के कान खड़े कर दिये। उन्होंने चीन में रूस की प्रभाववृद्धि को बड़ी शंका और भय से देखा। वस्तुतः यह उनके लिए स्वाभाविक था। बोलशेविक क्रान्ति की उठने वाली लहर ने उनके जीवन और आदर्शों की नींव हिला दी थी। वह एक ऐसा बवंडर था जो अपनी हुंकार से जगत के शोषकों, स्थिरस्वार्थी वर्गों तथा स्वार्थान्ध साम्राज्यवादियों को आपाद मस्तक कम्पित कर देने में समर्थ हुआ था। अब तो साम्राज्य-वादियों की दृष्टि डाक्टर सुन्यात तथा उनके राष्ट्रवादी साथियों की ओर न केवल सशंक बल्कि कुटिल भी हो गयी। पर डाक्टर सुन ने इसकी चिन्ता नहीं की। वे इस नयी परिस्थिति से लाभ उठाने का निश्चय कर चुके थे। फलतः रूस और चीन की मित्रता को दृढ़ करने के लिए उन्होंने च्यांगकाई शेक को जोफे के साथ मास्को भेजने का निश्चय किया। च्यांगकाई इसके लिए तैयार हो गये। उनके सुपुर्द काम यह किया गया कि वे रूस में जाकर वहाँ की सोवियत सरकार के काम को देखें। किस प्रकार सोवियेत सरकार वहाँ की जनता में नये भावों का प्रसार कर रही है, कैसे जार तथा उसके सामन्तों द्वारा दलित रूस के किसान जगाये जा रहे हैं, कैसे शोषित मजदूर संगठित हो रहे हैं, कैसे सोवियेत सरकार देश की जनता को शिक्षित कर रही है और कैसे वह प्रचंड बलशाली साम्राज्यवादी शक्तियों का सामना करने के योग्य अपने को बना रही है। वहाँ कैसे नव समाज, नव-शासन तथा नवादर्श और नवसंस्कृति के निर्माण का प्रयोग किया जा रहा है। इन सब बातों को जानने, देखने और समझने के लिए च्यांगकाइशेक मास्को भेजे गये। डाक्टर सुन्यातसेन ने च्यांगकाई की सिफारिश करते हुए लेनिन-ट्राटस्की तथा चिचेरिन आदि नेताओं को पत्र लिखे।

आखिर च्यांग मास्को पहुँचे। वहाँ उनका मित्रतापूर्ण स्वागत हुआ तथा सोवियेत सरकार और उसके अधीन चलने वाली समस्त योजनाओं तथा कार्यों को देखने और समझने के लिए उन्हें पूरी सुविधा प्रदान की गयी। च्यांग ने रूस का सैनिक आयोजन तथा जल सेना और स्थल सेना के सभी विभाग देखे, सैनिकों के शिक्षण शिविरों का निरीक्षण किया तथा वैज्ञानिक युद्ध प्रणाली

के लिए जो प्रबन्ध किया गया था उसका अध्ययन। रूस में बहुत से चीनी विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण कर रहे थे। स्वभावतः वे बोलशेवी विचारों से प्रभावित थे। चीनी छात्रों की एक सभा में एक न्नि च्याङ्ग ने भाषण किया और कुओमिङताङ के क्रान्तिकारी दल ने अब तक जो किया था उसका इतिहास बताया। सुनते हैं कि एक चीनी विद्यार्थी ने च्याङ के भाषण की आलोचना यह कह कर की कि चीन की क्रान्ति बुर्जुवा या पूँजीवादियों की क्रान्ति है। वहाँ के क्रान्तिकारियों में आदर्श-पूजा की भावना अधिक है और इस का प्रमाण च्याङ द्वारा डाक्टर सुन के प्रति प्रकट की गयी भक्ति में दिखायी देता है।

विदेशों में पढ़ने वाले तथा विदेशी भावों से प्रभावित लोगों में अक्सर इस प्रकार की मनोवृत्ति उत्पन्न हो जाती है। ऐसे लोग प्रगति शीलता का ग़लत अर्थ लगा लेते हैं। उन पर एक प्रकार का नशा छा जाता है और उनके हृदय मे एक प्रकार की कटुता आ जाती है। फिर वे किसी बात के तथ्य को नहीं समझते। यदि यह मान भी लिया जाय कि चीन की क्रान्ति पूँजीपति वर्गों की क्रान्ति थी तो भी इतना तो स्वीकार ही करना पड़ेगा कि प्रगति की ऐतिहासिक धारा में उसका अपना स्थान रहा है। बोलशेविकों के सिद्धान्तानुसार जन वर्ग की क्रान्ति तथा वर्गहीन समाज की रचना में ही यदि मानव समाज की उन्नति की चरम सीमा पहुँचती हो तो भी स्पष्ट है कि इस स्थिति में पहुँचने के लिए पूँजीवादी लोकतन्त्रात्मक क्रान्ति एक आवश्यक स्तर है जिसे पार करके ही आगे बढ़ा जा सकता है। ऐसी स्थिति में इस क्रान्ति और उसके विधाताओं का महत्व कम नहीं होता बल्कि वे ही उस अवस्था के जनक होते हैं जिसकी कल्पना में 'कम्यूनिस्ट' उड़ा करते हैं। पर इतनी दूर सोचे कौन? प्रगतिशीलता क उत्साह में वे अनर्गल प्रलाप कर जाते हैं। च्याङ्गई ने चीनी विद्यार्थियों को फटकारते हुए कहा कि दूसरे देशों के क्रान्तिकारियों की प्रशंसा करना तथा उनकी महत्ता को स्वीकार करना तो उचित है, पर ऐसा करते हुए अपने देश के नेताओं द्वारा पूर्ण किये गये आश्चर्यजनक महान कार्य की उपेक्षा तथा उसे तिरस्कारपूर्ण दृष्टि से देखना तो विकारपूर्ण बुद्धि का द्योतक है।

च्याङ्गई ने सोवियेत रूस के कतिपय नेताओं से भेंट की। वे लेनिन से तो नहीं मिल सके क्योंकि वे रोग-शैया पर पड़े हुए थे। पर चिचेरिन तथा ट्राटस्की से उनकी मुलाकात हुई। चिचेरिन उस समय सोवियेत सरकार के परराष्ट्र विभाग के मन्त्री थे। मङ्गोलिया का मामला चल रहा था। बहुत पहले से अर्थात् चार व जमाने से ही मङ्गोलिया को लेकर रूस और चीन में खींचातानी होती रही। उधर मङ्गोलिया के लोग स्वयम् चीन की सत्ता से निकल कर स्वतन्त्र होना चाहते थे और रूस के प्रभाव में रह कर जीवन यापन करने के पक्षपाती थे। जब बोलशेवी सरकार की स्थापना हुई तब भी वहाँ के मङ्गोल सोवियेत पद्धति को अपना कर रूस के साथ भाग्य सूत्र जोड़ने के इच्छुक थे। मङ्गोलिया के इस प्रश्न पर च्याङ्ग ने चिचेरिन से बातें कीं। चिचेरिन का कहना था कि मङ्गोल चीनियों से डरते हैं और सोवियेत शासन की ओर स्वयमेव झुके हुए हैं। च्याङ्गई ने उन्हें यह समझाने की चेष्टा की कि पेकिङ्ग के महत्वाकांक्षी सैन्यसत्ता वादियों से तो मङ्गोल अवश्य भयभीत होंगे पर कुओमिङ्गताङ्ग से, जो राष्ट्रवाद का पक्षपाती है उन्हें कोई आशंका न हो सकती है और न है। ट्राट्स्की से भी उनकी मुलाकात हुई थी। ट्राट्स्की लेनिन के दाहने हाथ थे और उस विद्रोहिनी लाल सेना के अधिपति जिसे लेकर उन्होंने रूसी क्रान्ति के बाद आक्रमण करने वाली आधी दर्जन-साम्राज्यवादिनी सेनाओं का सामना किया और अपनी मातृभूमि की रक्षा की। रूसी क्रान्ति की सफलता में लेनिन के बाद ट्राट्स्की का जबर्दस्त हिस्सा था। च्याङ्गई ने इससे मुलाकात की और कहा जाता है कि ट्राट्की के एक वाक्य से वे इतने प्रभावित हुए कि उसे गुरुमन्त्र की भाँति अपने हृदय में सदा के लिए रख लिया। क्रान्ति विज्ञान के सम्बन्ध में बात करते हुए ट्राट्स्की ने कहा कि 'किसी क्रान्तिकारी दल की सफलता के लिए दो बातें अति आवश्यक हैं। पहले तो उसमें धैर्य हो और दूसरे सक्रियता। बारबार असफलता गले पड़े पर धैर्य के साथ डटे रहना और अपना काम करते जाना ही सफलता की कुँजी है। ये दोनों बातें वास्तव में एक दूसरे की परिपूरक हैं और दोनों का अविच्छेद्य सम्बन्ध है। च्याङ्गई ने ट्राट्स्की की इस शिक्षा को न केवल ग्रहण ही कर लिया बल्कि उन्होंने उसे अपने जीवन में व्यावहारिक रूप देने की चेष्टा की।

इस प्रकार चीन के राष्ट्रवादियों तथा सोवियेत रूस में परस्पर सहयोग और मित्रता का सूत्रपात हुआ। प्राय चार महीने तक रूस मे रहने के बाद च्याङ्‌ई काइतुङ वापस आये और अपनी यात्रा के सम्बन्ध मे अपनी रिपोर्ट पेश की। उन्होंने कुओमिङताङ्ग के संगठन के लिए सोवियेत पद्धति के आधार पर अपनी नयी योजना भी बना ली थी। राष्ट्रीय जीवन के विकास के लिए रूस द्वारा परिचलित नीति की कई बातों के आधार पर चीन में काम करने की सिफ़ारिश भी की। इधर दक्खिन के राष्ट्रवादियों का झुकाव रूस की ओर होते देख कर युरोप के साम्राज्यवादी राष्ट्रों के कान खड़े हुए। पर काइतुङ को तो ये प्रभावित कर नहीं सकते थे। हाँ, पेकिङ्ग को अपने इशारे पर नचाने की क्षमता उनमें अवश्य थी। सोवियेत सरकार ने काइतुङ की दोस्ती तो प्राप्त कर ली पर उसने पेकिङ्ग से भी अपना सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयत्न किया। ल्यो काराखोव को सोवियेत सरकार ने इस कार्य के सम्पादन के लिए पेकिङ्ग भेजा। अब तो चीन स्थित युरोपियन तथा अमेरिकन दूत इस बात की जी तोड़ चेष्टा करने लगे कि चीन रूस में किसी प्रकार का सम्बन्ध स्थापित न होने पाय। उन्होंने अपनी शक्ति भर कोई बात उठा नहीं रखी। पेकिङ्ग की सरकार पर तरह-तरह के जोर और दबाव डाले गये कि यह काराखोव की बातों में न आय।

पर पाखण्ड अधिक दिनों तक काम नहीं दे सकता। काराखोव चतुर कूटनीतिज्ञ, अच्छे वक्ता और बुद्धिमान राजनीतिज्ञ थे। उन्होंने कई एक व्याख्यान दिये जिनमे दुनिया की कौमों को ललकारा कि वे अपनी नीति से रूस की नीति का मुक़ाबिला करें। उन्होंने कहा कि "वास्तव में रूस ही एक मात्र राष्ट्र है जो चीन की स्वतन्त्रता, उसकी प्रभुशक्ति और उसकी राष्ट्रीयता को अक्षुण्ण देखना चाहता है। इसका सबूत यह है कि वह अपने समस्त पूर्व प्राप्त विशेषाधिकारों, सुविधाओं और प्रभाव क्षेत्रों का परित्याग कर रहा है। वह चीन के उन भू प्रदेशों को वापस कर रहा है जो उससे अन्यायपूर्वक छीन लिये गये थे। हरजानों और ऋण के नाम पर प्रति वर्ष इस देश का जो दोहन हो रहा है और उसके साथ असमान व्यवहार करके उस का जो अपमान किया जा रहा है, इस कुकर्म में रूस भाग लेना नहीं चाहता। [illegible] राष्ट्र जो चीन के मित्र बनते हैं क्या रूस के समान

अपनी नीति की घोषणा करने को तैयार हैं ? यदि नहीं तो चीनी स्वयम् विचार करके देख लें कि उनका मित्र कौन है ?" काराखोव ने ऐसे ही कई भाषण दिये। अब तो साम्राज्यवादियों के लिए इस दशा पर मुँह छिपा लेने के सिवाय कोई रास्ता नहीं रह गया। फलतः सन् १९२४ की जून में मास्को और पेकिङ्ग में भी मैत्री-सम्बन्ध स्थापित हो गया और काराखोव प्रथम सोवियत राजदूत के रूप में स्थित हो गये।

धीरे धीरे रूसी चीनी मित्रता दृढ़तर होती गयी। राष्ट्रवादी चीनियों के सामने अपने देश के नव निर्माण का भारी काम पड़ा हुआ था। उन्होंने देखा कि सोवियत रूस अपने देश में ऐसे ही महान कार्य में संलग्न है। वे रूस से सहायता और शिक्षा ग्रहण करने के लिए स्वभावतः उत्सुक हुए। तब यह हुआ कि रूस डाक्टर सुनयात सेन तथा क्वोमिन्ताङ्ग की सहायता करे और उन्हें सलाह देने के लिए एक सलाहकार भेजे जो काण्टन में रह कर इस कार्य का सम्पादन करे। इस प्रकार बुरोदिन नामक सज्जन रूस की ओर से क्वोमिन्ताङ्ग के सलाहकार होकर काण्टन आये। बुरोदिन रूसी थे पर उनके माता पिता अमरिका में जा कर बस गये थे। अमरिका में ही बुरोदिन 'कम्यूनिज्म' से प्रभावित हुए और बाद से 'तृतीय इन्टरनेशनल'* से सम्बद्ध हो गये। तुर्की में जब इन्हीं दिनों मुस्तफा कमाल का उदय हुआ और उसने अपने देश को स्वतन्त्र करके शासन-सत्ता हाथ में ली तो उन्हें भी रूस के सलाहकार के रूप में बुरोदिन का सहयोग प्राप्त हुआ था। वही बुरोदिन अब स्वयं काराखोव का सिफारिशी पत्र लेकर काण्टन पहुँचे। वहाँ उनका बड़ा स्वागत हुआ और आदरपूर्वक व राष्ट्रीय सरकार के परामर्शदाता के रूप में स्थापित कर दिये गये।

बुरोदिन का व्यक्तित्व आकर्षक था और बात-चीत का ढंग भी मोहक। साथ ही उन्होंने डाक्टर सुनयातसेन के तीनों सिद्धान्तों में अपनी आस्था प्रकट की और स्वीकार किया कि इस समय चीन का कल्याण उन्हीं के अनुसार चलने में हो सकता है। फलतः

---

*तृतीय इन्टरनेशनल कम्यूनिस्टों की सब से बड़ी संस्था है जो संसार भर की कम्यूनिस्ट पार्टियों का नेतृत्व करती है। इसका दफ्तर मास्को में है।

शीघ्र ही वे डाक्टर सेन के प्रियपात्र हो गये और उन्होंने उन्हें कूओमिंङताङ्ग का परामर्शदाता नियुक्त कर दिया।

यह प्रबन्ध हो जाने पर कूओमिङताङ्ग के सगठन तथा राष्ट्र निर्माण सम्बन्धी कार्यक्रम को निर्धारित करने का काम उठाया गया। सन् १९२४ की जनवरी मे कूओमिङताङ्ग पार्टी की प्रथम कॉग्रेस डाक्टर सेन की अध्यक्षता में हुई। कॉग्रेस के इस अधिवेशन में सैनिक संगठन को सुदृढ़ आधारों पर स्थापित करने की बात मुख्य रूप से तय की गयी। कूओमिङताङ्ग के सामने कई समस्याएँ थीं। पहली समस्या थी उत्तर के सैन्यसत्तावादियों का दमन करना तथा दक्खिन में भी नचे नचाये महात्वाकांक्षी अवसरवादी सामन्तों के हाथ-पैर तोड़ना। इसके बिना राष्ट्रीय एकता की प्राप्ति और राष्ट्रीय सरकार की स्थापना असम्भव थी। जब तक प्रचंड बलशाली राष्ट्रीय सरकार स्थापित न हो तब तक विदेशी शक्तियों से चीन को मुक्त करना सम्भव नहीं था। इस प्रकार स्पष्ट था कि चीन का भविष्य एक मात्र सुदृढ़ राष्ट्रीय सेना पर निर्भर करता। इसी कारण सैनिक सगठन पर पूरी शक्ति से जुट पड़ने का निश्चय किया गया। यह निर्णय हुआ कि सैनिक शिक्षा का विभाग खोला जाय और उसमें भर्ती करने के लिए रँगरूटों की दरख्वास्तें माँगी जॉय। डाक्टर सुन्-यात सेन ने यह काम च्याङ्कई शेक के सुपुर्द किया। उन्हीं पर यह भार छोड़ा गया कि वे इस विभाग की योजना बना कर पेश करें और इसके काम को आगे बढ़ावें।

यह कार्य च्याङ्कई के लिए उनकी प्रकृति के अनुकूल था। वे स्वयम् देश को सुदृढ़ सैनिक आधार पर स्थापित किये बिना चीन का भविष्य अन्धकारमय देख रहे थे। रूस में जाकर सबसे अधिक ध्यान उन्होंने इसी ओर दिया था और मास्को से व्लाडिवास्टक आते समय रूसी जनरल ब्लुचर से उनसे रेल में भेंट भी हुई थी। उनसे बातचीत करते हुए च्याङ्ग ने यह प्रस्ताव किया था कि यदि कभी चीनी सेना का संगठन और शिक्षा-कार्य आरम्भ किया गया तो वे कृपा कर उसमें उनकी सहायता करने का वचन दें। ब्लुचर ने च्याङ्ग की प्रार्थना स्वीकार की थी और वचन दिया था कि अवसर आने पर जो हो सकेगा वे करने को तैयार रहेंगे। चूँकि अब उस बात को पूरा करने का समय आ गया ने तुरन्त योजना बनायी और

ह्वामपोआ में 'मिलिट्री एकाडेमी' की स्थापना हो गयी। उसका पूरा भार च्यूओमिङताङ्ग ने उन पर ही छोड़ा। च्यांङ ने तुरन्त ब्लुचर को भी बुला भेजा और सैन्य शिक्षण का काम आरम्भ हुआ।

पहले पाँच सौ विद्यार्थियों को लेकर शिक्षा का कार्यारम्भ किया गया। शिक्षा का पाठक्रम वही रखा गया जो ट्राट्स्की ने रूस की लाल सेना के लिए निर्धारित किया था। विद्यार्थियों को सैनिक शिक्षा के साथ साथ राजनीति और इतिहास की शिक्षा भी दी जाती। बड़ी सावधानी से सैनिक तैयार किये जाने लगे। ये ही भावी चीनी राष्ट्र के आधार होने वाले थे। इन्हीं के द्वारा क्रान्ति के लक्ष्य को पूर्ण करने का इरादा था और इन्हीं की सहायता से राष्ट्रीय चीन की सत्ता स्थापित की जाने वाली थी। सत्ता के यही अग्रसर देश को एकसूत्र में बाँधने वाले होंगे ऐसी उनकी धारणा थी। अपनी पूरी शक्ति के साथ च्याङ्काईशेक इस काम में लग गये। डाक्टर सेन ने उन्हें इसे चलाने की न केवल पूरी स्वतन्त्रता देदी बल्कि उसके लिए धनादिक आवश्यक साधनों को जुटाने का भार भी उन्हीं पर छोड़ दिया।

च्याङ्काई के अनवरत परिश्रम और अध्यवसाय के फलस्वरूप एकाडेमी का कार्य जोरों से चल पड़ा। उनके मार्ग में कई कठिनाइयाँ थीं जिनमें धन का अभाव मुख्य था, पर वास्तविक काम के लिए धन मिल ही जाता है फिर अड़चनें चाहे कितनी भी क्यों न पड़ें। च्याङ विद्यार्थियों के साथ ही रहते, उनके चरित्र की छोटी से छोटी बातों पर ध्यान रखते, उनके साथ हँसते खेलते और उन्हें देश के महान उत्तरदायित्व से आगाह करते रहते। थोड़े ही दिनों में इस संस्था ने यश प्राप्त किया और उसके काम को देखकर लोग उधर आकर्षित होने लगे। च्याङ्काई शेक को पहले चीनी सेना में प्रचलित कमजोरियों और दुर्गुणों का अनुभव हो चुका था। वे जानते थे कि सैनिक कैसे उच्छृखल, अनुशासनहीन और अनियन्त्रित होते हैं। उन्हें पता था कि किस प्रकार उनमें चरित्र का अभाव था। सैनिक अपने अफसरों के आचरण से प्रभावित होकर स्वयम् कुचक्री और महत्वाकांक्षी तथा स्वार्थपर हो जाते। आज जब उन्हें नये सैनिकों के निर्माण करने का अवसर मिला तो वे सावधानी के साथ इन दुर्गुणों की छूत से उन्हें अछूत देखने के लिए यत्नशील हो गये। अपने विद्यार्थियों में चरित्र का विकास करना और उनके मन में यह बात बैठा

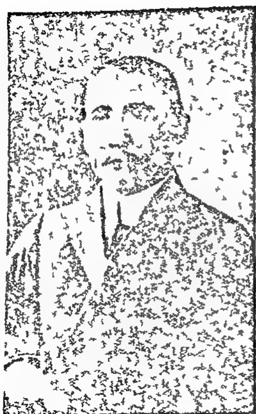
देना उनका लक्ष्य हो गया कि वे इस जीवन की तैयारी में इसलिए लगे हुए हैं कि उनके सामने उज्ज्वल लक्ष्य और पुनीत आदर्श है जिसकी प्राप्ति उन्हें करनी है। वे किसी स्वार्थ के लिए अथवा धन और प्रतिष्ठा का उपार्जन करने के लिए ही सैनिक नहीं बन रहे हैं बल्कि उन्हें मातृभूमि का उद्धार करना है, राष्ट्र की एकता की स्थापना करनी है और स्वदेश को उन स्वार्थियों के अनर्थमूलक कुचक्रों से मुक्त करना है जो उसे तबाह किये जा रहे हैं। चीनी महाराष्ट्र को विश्व की राष्ट्रशक्ति में आदरणीय स्थान पर प्रतिष्ठित करना भी उनका लक्ष्य है।

धीरे धीरे च्याङ्काई अपने कार्य में सफल होने लगे। आदर्श के पुजारी, चरित्रवान तथा धीर और साहसी नवयुवकों की टोली के निर्माता हो चले और अब चीन में एक ऐसा वर्ग उत्पन्न हो चला जिस पर राष्ट्र भरोसा कर सकता था। च्याङ्काई की यह सफलता देखकर ऐसे लोग जो प्रतिस्पर्द्धा से उनसे डाह करने लगे। उनकी ओर से अडंगेबाजी भी शुरू हुई। पर जिसे काम करना होता है वह इन बातों की चिन्ता किये बिना बराबर आगे बढता चलता है। इसी समय एक खेदजनक घटना घटी। एक वर्ष भी पूरा नही हो पाया था कि डाक्टर सुङ पेकिङ्ग सरकार का निमन्त्रण पाकर वहाँ चले गये। पेकिङ्ग की सरकार ने उन्हें बुलाया था चीन की एकता की स्थापना के सम्बन्ध म बातचीत करने के लिए। इस आशा से कि बिना रक्तपात के देश कदाचित एक सूत्र म आबद्ध किया जा सके वे पेकिङ्ग जाने को तैयार हुए।

इन घटनाओं से विदित होता है कि अब धीरे धीरे राष्ट्रवादियों का बल इतना बढ़ गया कि कोई उनकी उपेक्षा नहीं कर सकता था। डाक्टर सुङयात ने अपने जाने के पूर्व हुङ्ङ मिङ्ग नामक व्यक्ति को प्रधान सेनापति बना दिया। हुङ्ङ सैनिक नहीं थे इसलिए च्याङ्काई उनके सहायक नियुक्त किये गये। सैनिक मामलों में वास्तविक नियन्त्रण च्याङ्काई शेक के ही हाथों में रहा। डाक्टर सुङयातसेन के जाते ही एक बार पुन दक्षिण की स्थिति अत्यन्त डावाँडोल हो गयी। परस्पर की प्रतिस्पर्द्धा और डाह से तो मानो मानव स्वभाव ओत प्रोत है। च्याङ्काई की यह प्रतिष्ठा बहुतों को असह्य थी। बहुत से अपनी महत्वाकांक्षा की पूर्ति नहीं कर पाये थे। ऐसे सब लोगों ने डाक्टर सुङ के हटते ही पुन एक बार अपना दुष्प्रयत्न करने की इच्छा की।

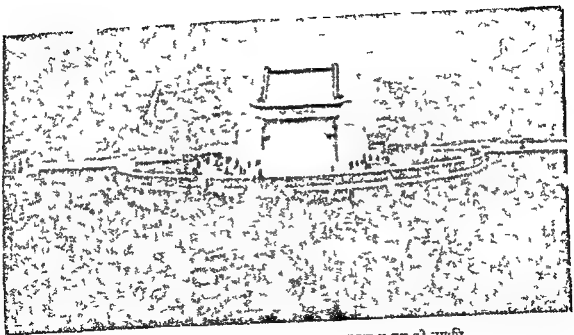
चेङ चिउङ मिङ्ग ने देखा कि मौका अच्छा है। उसे कुओमिङताङ्ग के भी कुछ बेईमान सदस्यों की शह मिली और एक दिन उसने काङतुङ पर धावा बोल दिया। सौभाग्य से च्याङ्काई के समान दूरदर्शी तथा पराक्रमी योद्धा राष्ट्रीय सेना के अधिकार में था। उन्होंने ह्वामपोआ के शिक्षण विद्यालय के कुछ योग्य विद्यार्थियों की अधीनता में सैनिकों की दो टुकड़ियां पहले ही बना ली थीं। फिर पहले की थोड़ी-बहुत सेना थी ही, उसे लेकर उन्होंने चेङचिउङमिङ का सामना किया और उसे बुरी तरह पराजित भी। चेङ-चिउङमिङ्ग ने जिस स्थान को अपना मुख्य केन्द्र बना रखा था उस पर च्याङ्ग टूट पड़े और उसे ध्वस्त कर डाला। इस सिलसिले में उनके हाथ कुछ ऐसे कागजात भी लगे जिनसे इस विद्रोह का रहस्य खुल गया। उन्हें पता लगा कि काङतुङ सरकार के कुछ वैतनिक सैनिक अफसर भी इसमें सम्मिलित थे जो समय आने पर अपनी सेना लेकर चेङचिउङ से मिल जाते। तत्काल च्याङ्ग ने इन सैनिक अफसरों पर धावा किया, उन्हें पराजित कर उनकी समस्त सेना के शस्त्रास्त्र रखवा लिये और नेताओं को कैद करके सैनिकों को मार भगाया।

काङतुङ बच गया और पुनः कुचक्रियों का षडयन्त्र असफल हुआ। पर इधर काङतुङ में ये घटनाएं घट रही थीं और उधर पेकिङ्ग में डाक्टर सुनयातसेन घातक रोग शैया पर पड़े हुए थे। काङतुङ से विदा करते समय च्याङ्काई ने यह कभी नहीं विचार किया था कि वे अपने आदरणीय नेता का अन्तिम दर्शन कर रहे हैं। उस बीमारी ने डाक्टर सुन का प्राण लेकर ही छोड़ा। जिस व्यक्ति ने जीवन पर्यन्त देश की सेवा की, जिसकी तपस्या और सत्प्रेरणा ने च्याङ्काई तथा उनके सदृश अनेक युवकों का निर्माण किया और जिसने आजन्म कष्ट सहन करके भी अपना पथ नहीं छोड़ा, वह व्यक्ति संसार से विदा हो गया। डाक्टर सुन मरते हुए अपना वसीयतनामा छोड़ गये जो अब तक कुओमिङताङ्ग के आदर्शों का आधार बना हुआ है। पर नेतृत्व के सम्बन्ध में वे कुछ नहीं कह गये। मरते समय उनके चार मुख्य सहायक थे। च्याङ्काई शेक, हुङ मिङ ख्वाङ चुङ्काई तथा वाङ्गचिङवेई। ये चारों थे कुओमिङताङ के पुराने सदस्य तथा डाक्टर सुन के विश्वासपात्र।





चीनी क्रान्ति और नवचीन के जन्मदाता स्वर्गीय डाक्टर सुनयात सेन और उनकी धर्मपत्नी मदाम सुनयात सेन



गाडिज में निर्मित नवचीर म न मदाता ठाकर गुरुदत्त मल की समाधि

इन्हीं चार में से किसी एक के ऊपर नेतृत्व का भार पड़ने वाला था। मालूम होता है कि इन चारों में भी परस्पर प्रतिस्पर्द्धा थी। इसका सबूत इस घटना में मिलता है जो ल्यावचुङई की हत्या में दिखायी देती है। कहा जाता है कि हूइङ के छोटे भाई ने यह विचार करके कि हूइङ को ही डाक्टर सुङ का उत्तराधिकारी होना चाहिए यह निश्चय किया कि बाकी तीनों नेताओं का सफाया कर दिया जाय। इसके लिए उसने एक षडयन्त्र रचा और ल्याव इस षडयन्त्र की प्रथम आहुति बने।

एक दिन कुओमिङ्ताङ की केन्द्रीय समिति के कार्यालय के पास किसी ने ल्यावचिङ्ग को गोली मारी जिससे उनकी मृत्यु हो गयी। इस घटना से बड़ी सनसनी फैली। षडयन्त्रकारियों की जाँच-पड़ताल आरम्भ हुई और मालूम हुआ कि हूइङ के छोटे भाई इसके मुख्य कर्ता धर्ता थे। देश में हूइङ के विरुद्ध बड़ा शोर-गुल मचा। च्याङ्कई ने यह विश्वास नहीं किया कि उनके पुराने साथी हूइङ का भी इसमें हाथ होगा इसलिए उसके विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं की फिर भी हूइङ के लिए काङ्तुङ में रहना असम्भव हो गया। एक दिन वह चुपचाप देश छोड़ कर रूस चले गये। अब च्याङ्कई और वाङ्चिङ्ग वेई बाकी बच रहे जिन पर डाक्टर सुङ्यात के अधूरे काम को पूरा करने का भार आ पड़ा। प्रसन्नता की बात है कि इन दोनों ने मिल कर दृढ़तापूर्वक इस उत्तरदायित्व को उठा लिया। सेना का काम विशेष रूप से च्याङ्कई शेक के ऊपर आ पड़ा। उनके सामने इस समय मुख्य रूप से दो लक्ष्य थे। एक तो दक्षिण में काङ्तुङ सरकार के विरोधियों, कुचक्रियों और षडयन्त्रकारियों का पूर्णत दमन करके सुदृढ़ सरकार की स्थापना और दूसरा उत्तर के सैन्यसत्तावादियों को कुचलना जिसमें राष्ट्रीय एकता के साथ साथ स्वतन्त्र चीन की एक केन्द्रीय सरकार स्थापित हो सके। च्याङ्कई-शेक ने सोचा कि जब तक अपने घर के कुचक्रों का दमन नहीं कर दिया जाता तब तक उत्तर की ओर कदम उठाना भयावह होगा। उनका यह विचार उपयुक्त भी ज्ञात होता है। उत्तर के सैन्यसत्तावादी काफी शक्तिशाली थे। एक नहीं ऐसे अनेकों से मोरचा लेना था। ऐसी परिस्थिति में काङ्तुङ की सरकार को अत्यधिक समय और शक्ति का व्यय करना होता यदि अपने घर में ही वे अपनी स्थिति सुदृढ़ न कर लेते।

उत्तर में जाकर न केवल उसे खो बैठने का भय था बल्कि दक्षिण से भी हाथ धो बैठने का अन्देशा।

पहले की गयी भूलों का उन्हें अच्छा अनुभव था। वे जानते थे कि किस प्रकार व्हाम्पोआ के कर्मों की अपेक्षा करके डाक्टर सुन ने बराबर गहरा धोखा खाया था। अतः उन्होंने निश्चय किया कि पहले दक्षिण की ही व्यवस्था पूरी करनी चाहिए। अस्तु पहला काम उन्होंने यह किया कि क्वाङ्तुङ की सेना का पुनर्संगठन आरम्भ कर दिया। अब तक दक्षिण के कई प्रान्तों में जो क्वाङ्तुङ की सरकार की सत्ता स्वीकार करते थे सैनिक टुकड़ियाँ थीं पर वे अपने अपने क्षेत्र में स्वतन्त्र रूप से संगठित। विभिन्न सेनाध्यक्ष भी थे जो अपनी अपनी सेना लेकर स्वतन्त्ररूप से रहते थे। आशा की जाती थी कि अवसर आने पर वे क्वाङ्तुङ की सरकार की सहायता करती रहेंगी। च्याङ्ग ने इस दोषपूर्ण नीति को बदलना चाहा। वे जानते थे कि प्रत्येक प्रान्त को स्वतन्त्र रूप से सेना का संगठन करने देना भयावह होता है। ऐसे ही लोग बहुधा लोभ में आकर विद्रोह करते और धोखा देते हैं। इसलिए उन्होंने निश्चय किया कि इन सब छोटी-छोटी सामन्त सेनाओं को समानरूप से एक सत्ता के अधीन करना आवश्यक है। पर इस सुधार को कार्यान्वित करना कठिन था। खतरा इस बात का था कि सैनिक अधिकारी अपने अधिकार को छोड़ना क्यों पसन्द करेंगे। वे बगावत कर दे सकते हैं। पर च्याङ्ग ने साहस से काम लिया और इस झकोरे को झेलने का निश्चय किया। उस समय व्हामपोआ से निकले सैनिकों की एक टुकड़ी के सिवा च्याङ्ग के पास अपनी कोई सेना नहीं थी। फलतः उन्होंने इन सैनिकों को लेकर सूचिङ्गचिङ्ग नामक सेनापति के सैनिकों को घेर लिया और उनसे शस्त्र रख देने की माँग की। इस सेना में तीन डिविज़न* थे। च्याङ्ग ने इस प्रकार शीघ्रतापूर्वक और यकायक काम किया कि सब सैनिक स्तब्ध रह गये और उन्होंने बिना लड़े शस्त्रास्त्र डाल दिये। च्याङ्ग ने उन्हें एक एक सेना बाँट दी और इस प्रकार उन्हीं सैनिकों में नये ढंग से पुनः संगठन आरम्भ किया।

एक स्थान पर सफलता मिलते ही तो फिर वे वेग से आगे बढ़े। हुनान, जेक्वाङ्ग, क्वाङ्गतुङ्ग आदि प्रान्तों की सेना को भी इसी प्रकार

---

*एक डिविज़न प्रायः १५ हजार सैनिकों का होता है।

उन्होंने काबू में किया। इस प्रकार सेना का नया संगठन भी हो गया और च्याङ के हाथ में उनका शासन-सूत्र आ गया। अब उन्होंने लगे हाथों काङतुङ सरकार के खुले विद्रोहियों का दमन कर डालने का निश्चय किया। पहला वार उन्होंने प्रसिद्ध चेङ चिउङमिङ्ग पर करने की ठानी जो वाउचाउ को अपना मुख्य केन्द्र बना कर शक्ति सञ्चय कर रहा था। उन्होंने वाउचाउ पर आक्रमण कर दिया। चेङचिउङमिङ्ग ने उत्साह पूर्वक उनका सामना किया और घमासान का रन पड़ा। पर अन्त में उसके पैर उखड़ गये और च्याङ की सेना ने वाउचाउ पर विजय-पताका फहरा दी। यह घटना सन् १९२५ के अक्तूबर की है। वाउचाउ ले लेने के बाद तो फिर च्याङ की सेना तूफान की भाँति बड़े वेग से आगे बढ़ी। लुङ्कुङ्ग, मङतिङ, वाङ्गलिङ्गनू, लावलुङ्ग आदि प्रदेशों को हड़प करती हुई स्वातऊ की ओर जा पहुँची। ये सभी प्रदेश विद्रोहियों के प्रभाव में थे। आधा नवम्बर बीतते बीतते स्वातउ पर च्याङ्क्ङ्-शेक का अधिकार स्थापित हो गया। प्रायः डेढ़ महीने में चारों ओर उनकी तूती बजने लगी। काङतुङ सरकार के प्रतिगामी विद्रोहियों की जड़ खोद कर फेंक दी गयी। इनके गढ़ छिन्न भिन्न हो गये। नेता मारे गये या गिरफ्तार हुए। जो बचे वे न जाने किधर भाग निकले।

च्याङ्क्ङ् की सफलता देख कर एक बार तो ऐसा आभास मिला मानो दक्षिण में कुओमिङ्गताङ्ग तथा काङतुङ की सरकार को अक्षुण्ण सत्ता स्थापित हो गयी। च्याङ ने विचार किया कि अब समय आ गया है जब वे उत्तर की ओर दृष्टि फेरें। डाक्टर सुङयातसेन तथा उनके साथियों का यह प्रिय स्वप्न था कि वे एक दिन सारे देश में एक राष्ट्रीय सरकार की स्थापना देखें। डाक्टर सेन उसके लिए प्रयत्न करते हुए परलोक सिधारे पर अपने जीवन में उस स्वप्न को वास्तविक होते न देख सके। च्याङ्क्ई ने इस कार्य को पूरा करने का बीड़ा उठाया था। दक्षिण में विजय की वैजयन्ती फहरा कर उन्होंने उस बचे कार्य की पूर्ति में अपना सारी शक्ति लगा देने का निश्चय किया। पर मनुष्य सोचता कुछ है और होता है कुछ और। विरोधियों का दमन करने में उन्होंने सफलता प्राप्त की तो यह मालूम हुआ कि अब आपस में ही विरोध उत्पन्न हुआ चाहता है। उनका यह समझना गलत हुआ कि उनका पथ निष्कंटक हो गया। क्योंकि कुओमिङ्गताङ्ग में इस समय परस्पर मतभेद और विरोध के लक्षण प्रकट हुए और कुछ ही समय में धीरे धीरे तीन दल बन

अब तक भी नहीं हुआ है। जो कुछ थोड़े बहुत कल कारखाने बड़े नगरों में इधर बन गये हैं वे भी प्राय उन्हीं के हैं जो बड़े बड़े जमींदार हैं अथवा जो जमींदारों के कुटुम्ब के हैं। इसी प्रकार इन कारखानों के मजदूर भी प्राय वे हैं जो देहातों के पुराने रहने वाले हैं तथा जिनका दूर का सम्बन्ध गाँवों से है। इस प्रकार चीन के उच्चवर्ग में बड़े-बड़े जमींदार हैं और जनवर्ग में इन जमींदारों के किसान हैं जो खेती-बारी करके जीविकोपार्जन करते हैं।

अपने दृष्टिकोण और संस्कारों के विचार से ये जमींदार प्राय वैसे ही हैं जैसे भारत के जमींदार। यद्यपि ये इतने धनी नहीं कहे जा सकते जितने युरोप या अमेरिका के पूँजीपति, मिल-मालिक और महाजन होते हैं फिर भी इनकी जिन्दगी आरामतलबी की होती है और ये अकसर बिना किसी प्रकार का उत्पादन स्वयम् किये अपनी सफेदपोशी का निर्वाह कर लेने में ही प्रसन्न होते हैं। चीन का उच्च तथा मध्य वर्ग प्राय ऐसे ही लोगों का है। वहाँ के किसान भी उसी प्रकार चीनी राष्ट्र की रीढ़ कहे जा सकते हैं जैसे भारतवर्ष के सामाजिक जीवन के आधारभूत यहाँ के किसान। फिर चीन का किसान भी बुरी तरह दरिद्र है। उस की दशा के सम्बन्ध में अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि हम इस देश के किसानों को भली भाँति जानते हैं। प्राय उन्हीं के समान चीनी किसानों की दशा भी समझिये। कर्ज के बोझ से लदा हुआ, कमाई का अधिकतर भाग लगान के रूप में अदा करके वह भूखों मरा करता है, बेगार में पकड़ा जाता है, दूसरों के लिए कमाई करता है भूमि पर मालिक न होने के कारण जमींदारों की दया पर जीवन निर्वाह करता है और सब के द्वारा—चाहे वह जमींदार हो या महाजन या सरकार अथवा उसके अमले—शोषित होता रहता है। उत्तरी चीन में तो किसान भूमि पर स्वामित्व भी रखता है—यहाँ तक कि वहाँ के ७५ प्रतिशत किसान उस जमीन के मालिक होते हैं जिसे वे जोतते बोते हैं, पर दक्षिण में यह अनुपात भी २५ या ३० प्रतिशत से अधिक नहीं है।

जहाँ के समाज की यह दशा होगी वहाँ जनवर्ग में असन्तोष का फैलना स्वाभाविक है। चीन की क्रान्ति भी जनता की इसी दशा का परिणाम थी। यह सच है कि उसके कारणों में अन्य बातें भी थीं जिनकी ओर पूर्व के पृष्ठों में संकेत किया जा चुका है, पर जहाँ दूसरी

एक दल कम्यूनिस्टों का उत्पन्न हो गया था जो काफी बलशाली था। सोवियेत रूस की ओर से बुरोदिन कोमिन्टाङ्ग सरकार का सलाहकार होकर आया था। डाक्टर सुइयात सेन ने उसका स्वागत किया और उसे कूओमिन्टाङ्ग का परामर्शदाता बनाया। रूस और चीन की इस मित्रता से कम्यूनिज्म' को अच्छी उत्प्रेरणा मिली—यद्यपि बोलशवी क्रान्ति की सफलता से सारे संसार में 'कम्यूनिज्म' के सिद्धान्तों की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट हुआ था। जगत में जिस पूँजीवादी व्यवस्था ने शोषण और दासता का साम्राज्य स्थापित कर रखा था उसे ललकारते हुए 'मार्क्सवाद' ने एक विशेष प्रकार के आकर्षण की सृष्टि की थी। वे देश जो साम्राज्यवादियों द्वारा विदलित, अपमानित और शोषित थे विशेष रूप से इन सिद्धान्तों की ओर आकृष्ट हुए। चीन में भी वहाँ के युवकों का एक ऐसा समूह उत्पन्न हो गया जो इस नयी विचार धारा के प्रभाव से प्रभावित था। जब बुरोदिन कोमिन्टाङ्ग आये तो उन्होंने चीन के 'कम्यूनिस्टों' को संगठित किया और अपने प्रभाव से डाक्टर सेन को इस बात के लिए राजी कर लिया कि कूओमिन्टाङ्ग में चीनी कम्यूनिस्ट सदस्यों को सम्मिलित किया जाय। कूओमिन्टाङ्ग की प्रथम कांग्रेस में जब उक्त संस्था के संगठन की नयी योजना बनी तो उसमें यह निश्चय किया गया कि उसकी कुल संख्या के तृतियांश से अधिक कम्यूनिस्ट न लिये जायँगे। इस प्रकार कूओमिन्टाङ्ग में कम्यूनिस्टों का प्रवेश हुआ।

इस स्थान पर चीन की परिस्थिति की थोड़ी सी समीक्षा कर देना अनुचित न होगा। चीन अन्य देशों की भाँति विविध प्रकार के वर्गों में विभाजित है। इन श्रेणियों के आर्थिक और सामाजिक स्वार्थ बिलकुल अलग हैं। सभी देशों में प्राय तीन प्रकार के वर्ग होते हैं। एक तो उच्चवर्ग जिसमें बड़े बड़े सामन्त, पूँजीपति, मिल मालिक तथा महाजन होते हैं। दूसरी मध्य श्रेणी जिसमें छोटे मोटे जमींदार, नौकरी पेशा लोग, दुकानदार तथा छोटे व्यापारी हुआ करते हैं। तीसरे वह जन समुद्र है जो किसान या मजदूर के नाम से प्रसिद्ध है और जिसकी कमाई पर ही उपर्युक्त दोनों वर्ग जीते हैं। यह वर्ग शोषित रहने के कारण भूखा और नंगा रहता है। चीन में भी ऐसे ही तीन वर्ग हैं। पर चीन का उच्चवर्ग और जन-वर्ग, मिल मालिकों और पूँजीपतियों तथा कारखानों के धनिकों के रूप में विद्यमान नहीं है। उस देश का औद्योगीकरण विशेष रूप से

अब तक भी नहीं हुआ है। जो कुछ थोड़े बहुत कल कारखाने बड़े नगरों में इधर बन गये हैं वे भी प्राय: उन्हीं के हैं जो बड़े बड़े जमींदार हैं अथवा जो जमींदारों के कुटुम्ब के हैं। इसी प्रकार इन कारखानों के मजदूर भी प्राय वे हैं जो देहातों के पुराने रहने वाले हैं तथा जिनका दूर का सम्बन्ध गाँवों से है। इस प्रकार चीन के उच्चवर्ग में बड़े-बड़े जमींदार हैं और जनवर्ग में इन जमींदारों के किसान हैं जो खेती बारी करके जीविकोपार्जन करते हैं।

अपने दृष्टिकोण और संस्कारों के विचार से ये जमींदार प्राय वैसे ही हैं जैसे भारत के जमींदार। यद्यपि ये इतने धनी नहीं कहे जा सकते जितने युरोप या अमेरिका के पूँजीपति, मिल मालिक और महाजन होते हैं फिर भी इनकी जिन्दगी आरामतलबी की होती है और ये अकसर बिना किसी प्रकार का उत्पादन स्वयम् किये अपनी सफेदपोशी का निर्वाह कर लेने में ही प्रसन्न होते हैं। चीन का उच्च तथा मध्य वर्ग प्राय ऐसे ही लोगों का है। वहाँ के किसान भी उसी प्रकार चीनी राष्ट्र की रीढ़ कहे जा सकते हैं जैसे भारतवर्ष के सामाजिक जीवन के आधारभूत यहाँ के किसान। फिर चीन का किसान भी बुरी तरह दरिद्र है। उस की दशा के सम्बन्ध में अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि हम इस देश के किसानों को भली भाँति जानते हैं। प्राय उन्हीं के समान चीनी किसानों की दशा भी समझिये। कर्ज के बोझ से लदा हुआ, कमाई का अधिकतर भाग लगान के रूप में अदा करके वह भूखों मरा करता है, बेगार में पकड़ा जाता है, दूसरों के लिए कमाई करता है भूमि पर मालिक न होने के कारण जमींदारों की दया पर जीवन निर्वाह करता है और सब के द्वारा—चाहे वह जमींदार हो या महाजन या सरकार अथवा उसके अमले—शोषित होता रहता है। उत्तरी चीन में तो किसान भूमि पर स्वामित्व भी रखता है—यहाँ तक कि वहाँ के ७५ प्रतिशत किसान उस जमीन के मालिक होते हैं जिसे वे जोतते बोते हैं, पर दक्षिण में यह अनुपात भी २५ या ३० प्रतिशत से अधिक नहीं है।

जहाँ के समाज की यह दशा होगी वहाँ जनवर्ग में असन्तोष का फैलना स्वाभाविक है। चीन की क्रान्ति भी जनता की इसी दशा का परिणाम थी। यह सच है कि उसके कारणों में अन्य बातें भी थीं जिनकी ओर पूर्व के पृष्ठों में संकेत किया जा चुका है, पर जहाँ दूसरो

बात थी जहाँ यह भी एक मुख्य कारण था। चीन की जन संख्या कितनी है इसके सम्बन्ध में कोई ठीक ठीक नहीं बता सकता क्योंकि कभी वैज्ञानिक ढंग से इसकी छानबीन की ही नहीं गयी। सन १९३१ में नानकिंग की सरकार ने कुछ आँकड़े एकत्र करने की चेष्टा की जिसके फलस्वरूप यह कहा जाता है कि वहाँ की आबादी ४५ करोड़ से कुछ अधिक है। इस जन संख्या में मञ्चूरिया और जेहोल भी सम्मिलित हैं। इतनी बड़ी जनसंख्या का बोझ जिस पृथिवी पर होगा वह वहाँ के लोगों की उदरपूर्ति कहाँ तक सफल हो सकेगी? कहा जाता है कि यह संख्या बराबर बढ़ती ही जा रही है। अर्थात् इसका अर्थ यह है कि भूमि के उपार्जन पर चीन की जनता का भार बढ़ता ही जा रहा है। कारण यह कि इस जन संख्या का ८० प्रतिशत खेती से जीविका उपार्जन करता है। भारत से इस स्थिति की तुलना कर देखिये। इस देश में ८० प्रतिशत किसानों की आबादी है जिसके कारण भूमि की जो दशा हो गयी है और दरिद्रता का जो विकराल रूप हमारे सामने है उससे प्रत्येक ऐसा आदमी परिचित है जिसे देखने को आँखें और समझने को बुद्धि है। हमारे देश में भूमि इसी कारण छोटे-छोटे टुकड़ों में विभक्त हो गयी है और इसीलिए लोगों को खेती के लिए भूमि की कमी पड़ती है। इसी से दरिद्रता बढ़ती जा रही है।

ठीक यही दशा चीन की भी है। कहते हैं कि वहाँ हर कुटुम्ब के पास औसत तीन एकड़ जमीन मानी जा सकती है—यद्यपि अधिकतर उत्तर प्रदेशों में यह अनुपात एक एकड़ और कहीं कहीं आधे एकड़ से अधिक नहीं है। इस दशा में वहाँ की जनता की दरिद्रता की कल्पना सहज ही की जा सकती है और उसके कारण असन्तोष की सृष्टि हो तो आश्चर्य ही क्या? इस असन्तोष का ही परिणाम क्रान्ति के रूप में मूर्तिमान हुआ पर जैसा कि हुआ करता है विद्रोह का नेतृत्व करने वाले ये आदर्शवादी तथा सुशिक्षित युवक थे जो उच्चवर्ग और मध्यवर्ग में जन्म लेकर भी स्थापित व्यवस्था को असभ्य समझने और उसमें सुधार चाहते थे। डाक्टर सुनयात के साथ पहले ऐसे ही लोग थे। ये देश में नयी व्यवस्था चाहते पर उस व्यवस्था की कल्पना करते हुए मौलिक परिवर्तन की बात नहीं सोच सकते थे। योग्य सरकार स्थापित हो जनता की गरीबी दूर हो, तरह तरह के होने वाले अन्याय मिटे और पश्चिम के प्रगतिशीलों की भाँति चीन भी आधुनिक बने

यही उनकी कल्पना की सीमा थी। कुओमिंटाङ्ग में प्रायः ऐसे ही विचार वालों का बहुमत था।

पर अब समय पाकर दूसरा वर्ग भी उत्पन्न हो गया था। यह दूसरा वर्ग भी उन्हीं नवयुवकों का था जो उच्चवर्ग के कुटुम्बों में उत्पन्न हुए पर जिनकी कल्पना नये विचारों से प्रभावित हुई थी। ये मार्क्स और लैनिन के सिद्धान्तों से परिचित हुए और रूसी राज्य-क्रान्ति से मिली उत्प्रेरणा के प्रवाह में वह चले। 'वर्गहीन समाज की स्थापना के बिना मानवता के कल्याण का दूसरा मार्ग नहीं है और इसके लिए वर्ग-संघर्ष को उत्तेजित करके जनवर्ग की विजय को निश्चित करना तथा बलपूर्वक सत्ताधारियों के हाथ से सत्ता का अपहरण करना' उनका सिद्धान्त बना। क्रान्तिकारी विचारों में बह कर वे अपने पुरातन राष्ट्र के उन संस्कारों तथा परम्पराओं से भी अलग होने की राय देने लगे जो शताब्दियों से राष्ट्रीय जीवन को ओतप्रोत किये हुए थीं। अपने उत्साह में वे यह भी देखने को तैयार नहीं थे कि अतीत की कौन सी बातें ग्राह्य हैं। उनका विश्वास था कि अतीत से पूर्ण सम्बन्ध विच्छेद किये बिना जन क्रान्ति सफल हो ही नहीं सकती।

कुओमिंटाङ्ग में इस प्रकार दो विरोधी विचार के लोग उत्पन्न हो गये थे। इन दोनों के बीच का मार्ग ग्रहण करने वाला एक तीसरा वर्ग भी था जिसने यह निश्चय किया कि उसके सामने आज केवल एक प्रश्न है और वह यह कि देश को एकराष्ट्रीयता के सूत्र में आबद्ध करके केन्द्र में राष्ट्रीय सरकार की अक्षुण्ण सत्ता स्थापित की जाय। देश का जो अपमान विदेशियों द्वारा हो रहा है, उसका जो शोषण साम्राज्यवादी राष्ट्र कर रहे हैं और देश के स्वार्थी जिस प्रकार उसे अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए क्षतविक्षत कर रहे हैं उससे राष्ट्र को बचाना ही सम्प्रति एक मात्र कर्तव्य है। जब तक यह नहीं होता तब तक कोई दूसरा आयोजन चाहे वह प्रजातन्त्रात्मक हो अथवा सोवियेत पद्धति के अनुकूल—चल नहीं सकता और न राष्ट्रीय सरकार ही स्थापित की जा सकती है। उसकी स्थापना यदि करनी है तो पहली शर्त है कि यह काम पूरा किया जाय। इसके बाद यह प्रश्न उठेगा कि अब देश में कौन सा प्रकार चलाया जाय। इसलिए किसी का चाहे कोई भी मत क्यों न हो इतने से सभी को सहमत होना चाहिए। आज आवश्यकता भी इसी बात की है कि सब लोग अपना मतभेद भूल कर पहले इस काम को पूरा कर लें अर्थात् कुओमिंटाङ्ग

के दोनों दलों की एकता बनाये रख कर इस लक्ष्य की सिद्धि के लिए एक मन से सब को जुट जाना चाहिए।

संक्षेप में ये तीन दल तीन विभिन्न दृष्टिकोण लेकर क्वोमिङ्ताङ्ग में उत्पन्न हो गये। दक्षिण पक्ष, वामपक्ष और दोनों के बीच का मध्यमपक्ष अपनी अपनी बात को लेकर धीरे धीरे बढ़ने लगा। जिस समय च्याङ्काई शेक दक्षिणी चीन को विद्रोहियों रहित करने में लगे हुए थे और प्रायः अपने काम में सफल से हो चुके थे उसी समय इन तीनों दलो का विरोध उग्र रूप धारण करने लगा। उत्तर के सैन्यसत्तावादियों से भिड़ने की इच्छा रखने वाले च्याङ्काई ने देखा कि अभी उसका समय नहीं आया है। उधर बढ़ने के पूर्व वे यहाँ तो अपने प्रदेश को विरोधियों से मुक्त करना चाहते थे और यहाँ आपस में ही तू-तू मैं मैं की नौबत आ पहुँची।

पाँचवाँ अध्याय

कम्यूनिस्टों से मतभेद और उत्तर-यात्रा की तैयारी

क्वोमिङ्ताङ्ग में दलबन्दी होने के कारण विरोध बढ़ना स्वाभाविक था। च्याङ्काई शेक स्वयम् मध्यम पक्ष के लोगों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे। वे दक्षिण पक्ष और वाम पक्ष दोनों को मिलाकर साथ साथ ले चलना चाहते थे। उनके हृदय में चीन की राष्ट्रीय एकता की मूर्ति स्थापित थी। वे सिद्धान्तों के वाद विवाद में समय बर्बाद करने के लिए तैयार न थे। उनकी चेष्टा यह थी कि जहाँ तक सम्भव हो क्वोमिङ्ताङ्ग की शक्ति बनायी रखी जाय और सबके सहयोग से उपर्युक्त लक्ष्य सिद्ध किया जाय। उन्हें भय था कि यदि कहीं मतभेद की आँधी उठ खड़ी हुई तो कुसमय में ही क्रान्ति के इस कोमल पौधेको उखाड़ फेंकेगी। इस धारणा को लेकर वे दक्षिण पक्ष तथा वाम पक्ष दोनों के साथ समान व्यवहार करते और जब कभी जिसकी सलाह अथवा राय ठीक जँचती उसी का समर्थन करते। डाक्टर सेन की मृत्यु के बाद दोनों पक्षों का मतभेद और उग्र होने लगा। अब तक तो उनके महान और प्रभावशाली व्यक्तित्व से सब दबे हुए थे पर जब यह हट गया

ता दोनों कुओमिङताङ्ग पर अपना अपना प्रभाव स्थापित करने के लिए चेष्टा करने लगे।

डाक्टर सुङयात सेन की मृत्यु के बाद वाङचिङ्वेइ कुओमिङ ताङ्ग के अध्यक्ष बने और च्याङ्कई-शेक के ऊपर सैन्य सचालन का भार आ पडा। माइकल बोरोदिन कुओमिङताङ्ग के सलाहकार थे ही। दक्षिण पक्ष के लोग इस स्थिति से असन्तुष्ट थे। उन्हें च्याङ्कई और वाङचिङ्ग से यह शिकायत थी कि ये दोनों नेता कम्यूनिस्टों को मिलाये रखने के लिए तैयार हैं। वस्तुत दोनों नेता कुओमिङताङ्ग की एकता को विनष्ट होने देना नहीं चाहते थे क्योंकि उससे उनके सारे कार्यक्रम के चौपट हो जाने की आशका थी। इसलिए वे उन्हें कुओमिङ्ताङ्ग में रखकर उनके प्रति सहानुभूति का भाव प्रदर्शित करते हुए चल रहे थे। दक्षिण पक्षीय मडली यह सोचती कि ये वाम पक्ष की ओर झुके हुए हैं। दूसरी ओर वाम पक्ष था जो स्वयम् इन दोनों नेताओं से असन्तुष्ट था। वह देखता कि ये सोलह आने कम्यूनिस्ट नहीं हैं पर दक्षिण पक्षियों के साथ मिले रह कर अकसर उनकी बातों के अनुसार ही चलते हैं। इस प्रकार धीरे धीरे दोनों पक्ष इन नेताओं से असन्तुष्ट होने लगे—यद्यपि ये दोनों दो विरोधी विचार वालों के बीच की खाई को यथासम्भव पाटे रखने की ही चेष्टा कर रहे थे।

परिणाम जो होता है वही हुआ। एक ओर वाम-पक्षियों ने च्याङ्कई शेक तथा कुओमिङ ताङ्ग के विरुद्ध प्रचार आरम्भ किया और दूसरी ओर दक्षिण-पक्ष असन्तुष्ट होकर धीरे धीरे सबल होने की चेष्टा करने लगा। कम्यूनिस्टों ने तो सदा की भाँति अपनी अधिकार-स्थापना की नीति ग्रहण की। वे जहाँ कहीं जिस पद पर थे वहीं से अपने दल को सुदृढ बनाने की चेष्टा करने लगे। कुओमिङ्ताङ्ग में घुस कर उसे निर्बल बनाना और अपना अधिकार स्थापित करना उनका लक्ष्य हो गया। सेना में, ह्वामपोआ के सैनिक शिक्षणालय में, अथवा जहाँ कहीं भी उनका प्रवेश था, वहीं वे गुट्ट बनाने लगे। च्याङ्कई शेक ने देखा कि उनके ह्वामपोआ के कालेज में भी छात्रों के दो दल बन गये—एक कुओमिङ्ताङ्ग का समर्थक और दूसरा कम्यूनिस्ट सिद्धान्तों तथा विचारधारा का प्रवर्तक। पहले ने अपना नाम 'सुङयात सेन सोसाइटी' रखा और दूसरे के सगठन का नाम 'सैनिक युवकों का

संघ' (लीग ऑर मिलिट्री यूथ) पड़ा। इन दोनों की गुटबन्दी ऐसी थी कि उसका व्यापक प्रभाव सारी सेना पर पड़ने लगा। इसी प्रकार जहाँ-जहाँ भी कम्यूनिस्टों का प्रवेश था वहीं वे अपना गुट अलग बनाने लगे और दूसरे दलों में तोड़ फोड़ करने। उन्होंने किसानों और साधारण जनवर्ग में अपना प्रचार खुल्लम-खुल्ला आरम्भ किया। कहा जाने लगा कि कुओमिङताङ्ग पर पूँजीपतियों और शोषकों का प्रभाव है इसलिए देश की जनता का कोई कल्याण उसके द्वारा नहीं हो सकता। उसकी भलाई इसी में है कि वह कुओमिन्ताङ्ग पर स्वयम् अधिकार प्राप्त कर इन नेताओं को निकाल बाहर करे और सोवियेत सरकार की स्थापना करे।

च्याङ्ग-काई-शेक ने बड़ी आशंका और भय के साथ कम्यूनिस्टों की इस नीति की ओर देखा। दूसरी ओर दक्षिण पक्षी नेता स्थिति से असन्तुष्ट होकर अलग से अपना दल बनाने के लिए पेकिङ्ग के वेस्टर्न हिल्स' नामक स्थान में एकत्र हुए। इस स्थान में एक मन्दिर था जहाँ डाक्टर सुन्यात सेन का मृत शरीर रक्खा हुआ था। उनके शव के सम्मुख ये नेता एकत्र हुए और कुछ महत्वपूर्ण निश्चय करके उठे। सन् १९२५ के नवम्बर में दक्षिण पक्षियों का यह सम्मेलन 'वेस्टर्न हिल्स कान्फ्रेन्स' के नाम से प्रसिद्ध है। इन नेताओं ने मुख्य रूप से तीन बातें निश्चित कीं। एक तो यह कि कुओमिन्ताङ्ग से कम्यूनिस्ट पार्टी के सदस्य निकाल दिये जाँय। दूसरे कान्टन की सरकार के सलाहकार और सैनिक पदों पर नियुक्त बोरोडिन तथा अन्य रूसी बर्खास्त कर दिये जाँय और कुओमिङताङ्ग की कार्यसमिति का कार्यालय कान्टन से हटा कर शङ्घाई ले जाया जाय। इन नेताओं ने यह भी निश्चय किया कि अगले वर्ष जनवरी में उनके दल की काँग्रेस के द्वितीय अधिवेशन में वे इन प्रस्तावों को उपस्थित करें और उन्हें स्वीकार कराने की चेष्टा। च्याङ्ग-काई-शेक इस समय क्वांतुङ में थे पर वे स्पष्ट रूप से देख रहे थे कि दो परस्पर विरोधी दल जिस प्रकार उत्पन्न हो रहे हैं उससे कुओमिङताङ्ग की एकता नष्ट हुए बिना न रहेगी। उन्होंने अनुभव किया कि दोनों को मिलाकर ले चलने की जितनी ही चेष्टा उन्होंने की उतना ही उनका असन्तोष उन्हीं के प्रति बढ़ता गया। एक ओर वे कम्यूनिस्टों के प्रचार से तंग हो रहे थे, सेना तक में उसके विघातक प्रभाव का असर देख रहे थे तो दूसरी ओर पुराने साथी झगड़े को बढ़ा रहे थे।

फिर भी उन्होंने एक बार इन दोनों को मिला कर ले चलने का अन्तिम प्रयत्न करने का निश्चय किया। काँग्रेस के द्वितीय अधिवेशन में जब दक्षिण पक्षियों ने अपने प्रस्ताव उपस्थित किये तो च्याङ्कई ने उनका विरोध किया और एकता बनाये रखने के लिए दोनों से मार्मिक अपील की। इसके फलस्वरूप प्रस्ताव तो गिर गये पर उनकी एकता की अपील का कोई असर नहीं हुआ। दोनों समुदाय अपनी अपनी नीति को कार्यान्वित करने की चेष्टा करते रहे।

यह खींचातानी आपस में चल ही रही थी कि कम्यूनिस्टों ने अपने बढ़ते हुए प्रभाव का उपयोग करके ऐसी नीति ग्रहण की जिसकी उपेक्षा करना च्याङ्कईशेक के लिए भी असम्भव हो गया। च्याङ्ग देश की एकता को ही चीन राष्ट्र के भावी उत्कर्ष और स्वाभिमान की एक मात्र शर्त समझते थे। उनका विचार था कि पहला काम उत्तर का दमन करना है। वे जानते थे कि उत्तर के सैन्यसत्तावादी साम्राज्य वादियों के इशारे पर नाचते हैं पर उनके कारण वे साम्राज्यवादिनी शक्तियों से छेड़ छाड़ करना नहीं चाहते थे। उन्होंने अनुभव किया कि चीन में आज इतनी शक्ति नहीं है कि वह पश्चिम के शक्तिशाली देशों से झगड़ा मोल लें। साम्राज्यवादी तो चाहते ही थे कि उन्हें किसी प्रकार कोई अवसर मिल जाय और वे च्याङ्कई तथा राष्ट्रवादियों की उभड़ती हुई शक्ति को कुचल दें। उनके इस कुचक्र से च्याङ्कई अपरिचित न थे। वे उनके जाल में फँसना नहीं चाहते थे। इतना तो वे जरूर मानते थे कि इन देशों से भी एक दिन लोहा लेना पड़ेगा और तभी चीन का उद्धार हो सकेगा। पर उस संघर्ष का अवसर अभी नहीं आया था। बिना शक्ति संचय और देश में एकता स्थापित किये प्रबल शत्रुओं से भिड़ने का अर्थ यह होता कि सदा के लिए चीन की स्वतन्त्रता और अभ्युत्थान की आशा को तिलाँजलि अर्पित कर दी जाती। इसलिए वे चाहते थे कि इस समय साम्राज्यवादियों से छेड़-छाड़ न की जाय और कुछ समय के लिए उन अपमानजनक सन्धियों और शर्तों को रहने दिया जाय जिनसे चीन को आबद्ध किया गया था। समय आयेगा जब इन शृङ्खलाओं को तोड़ फोड़ कर टुकड़े टुकड़े कर दिया जायगा।

च्याङ्ग का यह विचार उपयुक्त और बुद्धि सम्मत ज्ञात होता है। आज यह बात तय हो गयी है कि जो लोग उनके इस मत के विरोधी थे वे गलती [illegible] उन्हीं का कहना ठीक था। यदि

जब चीन परस्पर के झगड़े से क्षतविक्षत था, जब उसमें रंचमात्र भी शक्ति नहीं थी, जब कोई भी सैनिक तैयारी नहीं हुई थी, यह साम्राज्य-वादियों की कुचाल का शिकार हो कर उनसे क्रोध और आवेश में भिड़ जाता तो अब तक कभी का उसका खातमा हो गया होता। पर कुछ और दिनों तक अपमान सहन कर उस अपमान का बदला लेने के लिए आवश्यक बल-संचय करने और उपयुक्त अवसर की राह देखने का ही परिणाम यह हुआ है कि आज चीन महाराष्ट्र बना हुआ है और पश्चिम की महती शक्तियाँ च्याङ्गई की मित्रता के लिए उनके सामने नाक रगड़ रही हैं। आज चीन के ये बन्धन, ये सन्धियाँ और ये शर्तें आप से आप छिन्न भिन्न हो गयी हैं। आशा की जा रही है कि उस समराग्नि के शान्त होने के बाद जिसमें विश्व भस्म हो रहा है, जिस नये जगत का निर्माण होगा उसमें चीन मुख्य निर्माता के रूप में भाग लेगा। आज कौन ऐसा है जो च्याङ्गई की सूक्ष्मदर्शिता और विलक्षण राजनीतिक बुद्धि की महत्ता न स्वीकार करेगा ?

पर कम्यूनिस्ट पार्टी तथा उनके कुछ और साथी जिन्हें हम चरम पन्थी कह सकते हैं अपनी सिद्धान्त प्रियता और कट्टरता के प्रवाह में इस प्रकार बह गये थे कि वे उचित अनुचित का विचार छोड़ कर उग्रवाद का समर्थन करने लगे। वे चीनी युवकों मजदूरों, किसानों तथा छात्रों में साम्राज्यवादियों के प्रति विद्रोह के भाव उत्पन्न करने के लिए प्रचार करते रहे। मालूम नहीं कि उनका यह प्रचार सचमुच साम्राज्य वादियों के विरुद्ध था अथवा उन्होंने च्याङ्गई आदि नेताओं को जनता की आँखों में गिराने, उनकी स्थिति को कमजोर करने तथा अपनी लम्बी चौड़ी बातों से अपना बल बढ़ाने के लिए यह नीति ग्रहण की थी। वे कहते फिरते कि क्यूओमिङ्ताङ्ग के नेता उच्च-वर्ग के हैं जो शासन शक्ति हाथ में लेकर जनता का दोहन अपने हित के लिए करना चाहते हैं और इसी कारण साम्राज्यवादियों से मिले हुए हैं। अपने तर्क को सिद्ध करने के लिए प्रमाण उपस्थित करते कि च्याङ्गई साम्राज्यवादियों से क्यों लड़ने को तैयार नहीं होते, क्यों जापान के विरुद्ध आवाज नहीं उठाते ?

यह प्रचार बड़े व्यापक रूप में आरम्भ किया गया। और इसका परिणाम यह हुआ कि विदेशियों के विरुद्ध चीनियों का भाव उभरता होता गया। वैसे तो साम्राज्यवादियों की चक्की में पिसते

रहने के कारण प्रत्येक चीनी स्वभावत उनका विरोधी था पर जब इस असन्तोष की आग में घी डाला जाने लगा तो फिर उसके भभक उठने म सन्देह ही क्या था? इसलिए सन् १९२५ के मई महीने में शङ्घाई में छात्रों, मजदूरों तथा उग्र पन्थियों ने साम्राज्यवादियों के विरुद्ध प्रदर्शन किया। शङ्घाई मे अन्तर्राष्ट्रीय बस्ती थी। वहाँ की पुलिस ने प्रदर्शनकारियों पर गोलियाँ बरसायीं जिससे बहुत से लोग मारे गये। इस घटना से सारे चीन में आग लग गयी। चारों ओर से रोष प्रकट किया जाने लगा। १८ जून को हाङ्काङ के मजदूरों ने इस घटना के विरोध में हड़ताल कर दी। हाङ्काङ अँगरेजों के अधीन था। यह हड़ताल वस्तुत पन्द्रह महीनों तक चलती रही। २३ जून को काङतुङ में इसी घटना के प्रति विरोध प्रकट करने के लिए प्रचड प्रदर्शन किया गया। काङतुङ में इस समय अँगरेजों और फ्रान्सीसियों की बस्तियाँ भी थीं। प्रबन्ध किया गया कि प्रदर्शनकारियों का जुलूस शान्तिपूर्वक निकल जाय और कोई दुर्घटना न होने पाय।

परन्तु जिस समय जुलूस उपर्युक्त विदेशी बस्ती के पास से जा रहा था उसकी सीमा पर उनकी ओर से सशस्त्र सैनिक नियुक्त थे तथा मशीनगनें लगायी गयी थीं। जब जुलूस का तीन हिस्सा निकल गया और केवल चौथा हिस्सा जाने को बाकी रहा उसी समय सहसा बस्ती की ओर से गोलियों की बौछार शुरू हुई। फिर क्या था? चीनी जनता उत्तेजित हो कर उधर को घूमी और सैनिकों पर टूट पड़ी। सैनिकों ने गोलियों की गहरी वर्षा आरम्भ कर दी। फलस्वरूप प्रदर्शनकारियों में से पचासों मारे गये और सैकड़ों घायल हुए। पहले किसने गोली चलायी इसका पता अब तक नहीं है। चीनी कहते हैं कि फ्रान्सीसी और ब्रिटिश सिपाहियों ने आकर गोली दागी। दूसरी ओर से कहा जाता है कि स्वयम् उपद्रवकारियों म से किसी ने गोली चला कर उत्तेजना की सृष्टि कर दी। इस घटना ने श्वेत जातियों के विरुद्ध जनता के हृदय में उस कटुता की सृष्टि कर दी जिसका निराकरण करना कठिन होगया। लाखों चीनी हाङकाङ छोड़ कर काङतुङ चले आये और काङतुङ की सरकार ने उन्हें सहायता प्रदान की। चीन में ब्रिटिश माल का करारा बहिष्कार आरम्भ हुआ। लोगों के इस असन्तोष का लाभ उठा कर कम्यूनिस्टों ने अपना प्रचार तीव्रतर कर दिया।

यह सब होते हुए भी च्याङ्ग ने कांग्रेस के द्वितीय अधिवेशन में दक्खिन पक्ष वालों के प्रस्तावों का विरोध कर कम्यूनिस्टों का साथ दिया। उन्होंने अपने इस कार्य से लोगों के हृदय पर साधारणत यह प्रभाव डाला कि वे कम्यूनिस्टों के समर्थक हैं। न केवल स्वदेश में बल्कि विदेशी हलकों मे भी च्याङ्कई के सम्बन्ध में यही धारणा फैली। वे अपने सार्वजनिक व्याख्यानों तथा वक्तव्यों में सदा इस बात का ध्यान रखते कि उनके मुख से कोई ऐसी बात न निकले जिसे कम्यूनिस्ट आपत्तिजनक समझें। पर इसका यह अर्थ नहीं था कि वे कम्यूनिस्टों की नीति के समर्थक अथवा उसे उचित मानते थे। वास्तव में उनके कारनामों से वे परेशान थे और समझते थे कि जो ढंग वे पकड़े हुए हैं वह कुओमिङ्ताङ के विरुद्ध तथा चीनी जनता के हित के लिए विघातक है। फिर भी ऐसी नीति का आश्रय उन्होंने इसलिए लिया था कि कुओमिङताङ की एकता, ऐसे समय जब उसकी बड़ी आवश्यकता था, कायम रखी जाय। इसके सिवाय वे डाक्टर सुन के आदर्शों के पोषक थे। उन्होंने विचार किया कि कम्यूनिस्टों से सहयोग से काम करने की नीति डाक्टर सुन ने ग्रहण की थी। अतएव जहाँ तक सम्भव हो उस नीति को चलाते जाना ही उनके लिए उचित है। इसलिए वे कुओमिङताङ के दोनों पक्षों से अपील करते रहे कि आज क्रान्ति की पताका के नीचे प्रत्येक चीनी को एकत्र होना चाहिए और अपने ध्येय की प्राप्ति करनी चाहिए—फिर उसके विचार कुछ ही क्यों न हों।

पर जहाँ वे दक्खिन पक्ष के लोगों से एकता बनाये रखने की प्रार्थना किया करते वहीं कम्यूनिस्टों से भी विनय करते कि वर्तमान क्रान्ति के आधार डाक्टर सुनयातसेन के तीन सिद्धान्त ही हो सकते हैं और इन्हें वे भी स्वीकार करें—सदा के लिए नहीं तो कम से कम तब तक के लिए जब तक वर्तमान उद्देश्य की सिद्धि न प्राप्त हो जाय। पर उनकी प्रार्थनाओं का कम से कम कम्यूनिस्टों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा और वे अपने दल के प्रचार में बराबर लगे रहे। पर अगर यह बात प्रचार ही तक सीमित होती तो बात दूसरी थी। वे तो सेना में और सैनिकों के अफसरों में भी अपनी बातों का प्रचार करते और धीरे धीरे उसमें दलबन्दी उत्पन्न करते। सैनिकों को च्याङ्कई-शेक के विरुद्ध उभाड़ा जाता और उनसे कहा जाता कि

समय आने पर वे अपने दल के प्रति ही अपनी भक्ति प्रदर्शित करें और उसी की आज्ञा के अनुसार चलें।

च्याङ्कई-शेक को उनकी इस चाल का आभास मिल गया। उन्होंने देखा कि कम्यूनिस्टों की इस नीति का समय रहते निराकरण न किया जायगा तो किया कराया सब काम चौपट हो जायगा। कोई भी समझदार व्यक्ति स्वीकार करेगा कि सेना का काम इस प्रकार नहीं चल सकता। यह सम्भव नहीं है कि विद्रोही और विरोधी सैनिकों को लेकर कोई सेनापति एक कदम भी आगे बढ़ सके। सैनिक तो वही काम दे सकते हैं जिनके हृदय में नेता के प्रति अडिग विश्वास हो, जो उसकी पुकार पर अपने को उत्सर्ग करने के लिए तैयार हों और आँखें मूँद कर उसकी आज्ञा का परिपालन करने के लिए सदा तत्पर रहते हों। च्याङ्ग ने निश्चय कर लिया कि उन्हें इस अनर्थ की जड़ काट देनी होगी। उन्होंने अपने अधीन सैनिक अधिकारियों में से जिन पर तनिक भी सन्देह था उन्हें हटाना आरम्भ कर दिया। तमाम प्रमुख स्थानों पर, उत्तरदायी पदों पर अपने विश्वासपात्र आदमी नियुक्त किये और इसी प्रकार सैनिकों की छँटाई भी की।

यद्यपि सेना से ऐसे लोगों को उन्होंने बाहर कर दिया पर राजनीतिक अधिकार अब भी उन्हीं के हाथों में था। कांग्रेस के द्वितीय अधिवेशन के बाद जिस राष्ट्रीय सरकार का पुनस्संगठन हुआ उसमें कम्यूनिस्टों का खासा अच्छा दल था और व दृढ़तापूर्वक अधिकार के पदों पर जम गये थे। वाङ्चिङ्ग वेई नयी सरकार के अध्यक्ष पुन चुने गये पर मन्त्रि-मंडल में कम्यूनिस्टों के कई नेता पहुँच गये। माओसेतुङ्ग, वाङ्पिङ्ग साङ, यूयू चाङ्ग, तिङ्चू हाङ आदि कम्यूनिस्ट मन्त्रि पदों पर आसीन हो गये थे। कुओमिङ्ताङ्ग दल का कार्यभार चेङ्गतुसिङ पर जो कम्यूनिस्टों के ही नेता थे आ पड़ा। इन नेताओं की नीति यह थी कि कुओमिङताङ्ग में घुसकर उस पर अधिकार किया जाय और फिर उसका विघटन करके अपनी सत्ता स्थापित कर ली जाय। कम्यूनिस्टों की इस नीति पर कोई अविश्वास न करे। जिन्हें उनकी कार्य पद्धति का अनुभव है वे जानते हैं कि वे ऐसी ही उलटी नीति का आश्रय लिया करते हैं। विदेशों में उनका इतिहास इस बात का साक्षी है कि वे अपने चरम वामपन्थी भावों के कारण देश की राष्ट्रीय प्रगतिशील शक्तियों के विघटन में ही सहायक होते रहे हैं।

भारत में ही यहाँ की कम्यूनिस्ट पार्टी के कार्य का जिन्हें अनुभव है और जिन्हें उनके साथ काम करने का अवसर मिला है वे इन बातों को अच्छी तरह जानते हैं। कम्यूनिस्टों के आदर्श से बहुतों को सहानुभूति होती है। जिस प्रकार के राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक संगठन के ये समर्थक होते हैं उसे बहुत से लोग पसन्द करते हैं। जिस सोवियेत रूस को ये अपना उत्प्रेरक, आदर्श और विधाता मानते हैं उसके प्रति भी बहुतों को सहानुभूति हो सकती है। बहुत से रूस की ओर आशाभरे नेत्रों से देखते और उसकी प्रगतिशीलता को प्रशंसा की दृष्टि से भी निहारते हैं। रूस ने जिस नयी संस्कृति और जन-समाज को जन्म दिया है वह प्रशंसनीय है पर यह सब होते हुए भी विभिन्न देशों की कम्यूनिस्ट पार्टियाँ अपने अपने क्षेत्र में कार्य करने का जो ढंग पकड़ती हैं वह न केवल उनके उद्देश्य को नष्ट करता है बल्कि ऐसे लोगों को भी उनका विरोध करने के लिए बाध्य करता है जो उन्हें सहानुभूति की दृष्टि से देखना चाहते हैं।

राष्ट्र की शक्ति को विघटित करने में तो ये अद्वितीय होते हैं। राष्ट्रीय आन्दोलनों की चाहे जड़ ही क्यों न कटती हो इन्हें अपने दल की प्रभुता स्थापित करने में ही क्रान्ति की सफलता दृष्टिगोचर होती है। तमाशा यह है कि इस प्रभुता की स्थापना के लिए ये किसी भी प्रकार की तिकड़म करने को तैयार हो जाते हैं। भारत के कम्यूनिस्ट यहाँ की राष्ट्रीय कांग्रेस में घुसकर उस पर अपना अधिकार स्थापित करने के प्रयत्न में क्या नहीं करते? जिस कांग्रेस में घुसते हैं उसी का विरोध करते हैं। अपने प्रचार में सदा उसे पूँजीपतियों की संस्था कहेंगे, उसके नेताओं को दब्बू और स्थिर स्वार्थी वर्गों के हिमायती बतायेंगे, महात्मा गान्धी तक को ब्रिटिश साम्राज्यवाद का पिछलग्गू कह कर प्रचार करने को तैयार होंगे। इनकी नीति यही होती है कि दूसरे पक्ष को बदनाम करके उसकी जड़ काट दें और स्वयम् नेतृत्व ग्रहण कर लें। दूसरे दल के लोगों को तोड़ना फोड़ना, साधारण जनता में बुद्धिभेद फैलाना और जिस संस्था के सदस्य बने उसी के कार्यक्रम के विरुद्ध प्रचार करके उसकी जड़ काटने की चेष्टा करना यही उनकी (टेकनीक) या कार्य प्रणाली होती है।

उनके दल की सार्थकता इसी में है। उनके नेताओं ने—बुखारिन और स्टालिन ऐसे लोगों ने—अपनी पुस्तकों में यही उपदेश किया है कि

(बुर्जुआ लीडरशिप) पूँजीवादी नेतृत्व की जड़ काटना ही उनका एक मात्र कर्त्तव्य है क्योंकि क्रान्तिकारी का बाना पहने हुए वे उन शासक वर्गों से कहीं अधिक भयकर होते हैं जिनके विरुद्ध विद्रोह किया जाता है। जहाँ यह शिक्षा हो, यह 'टेकनीक' और नीति हो वहाँ सिवा ऐसी बातों के दूसरी कौन सी आशा की जा सकती है। ये तो कहते हैं कि बुर्जुआ लोग नेता बन कर जब जनता पर प्रभाव स्थापित करते हैं तो फिर उन्हें उखाड़ना कठिन हो जाता है। इसलिए वे तरह-तरह के प्रचार करके उन्हें जनता की दृष्टि में गिराना ही अपनी सफलता के लिए आवश्यक मानते हैं। उस समय उन्हें इसकी भी चिन्ता नहीं होती कि राष्ट्र का हित किस बात में है। परिस्थिति को ही मुख्य बात मानने वाले कम्यूनिस्ट परिस्थिति की जैसी उपेक्षा करते हैं वैसी कदाचित कोई नहीं करता। वे दूसरों को कट्टरपन्थी और अन्धविश्वासी कहते हैं और अपने को वैज्ञानिक। पर उनसे अधिक कट्टर देखने को नहीं मिलता!

रूस में स्थापित 'थर्ड इन्टरनेशनल' की आज्ञाओं को आँख मूँद कर मान लेना, मार्क्स और लैनिन के वाक्यों को किसी धार्मिक कट्टरता से भी अधिक उग्रता के साथ पकड़ कर चलना तथा अपनी बुद्धि और विवेचना की शक्ति को न जाने कहाँ छोड़ देना उनकी विशेषता हो गयी है। यही कारण है कि भारत के कम्यूनिस्ट भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के लिए रोड़े सिद्ध हुए हैं। सन् १९३० और ३२ के आन्दोलनों के समय इन्होंने राष्ट्रीय पताका तक फाड़ फेंकी और अपने दल को कांग्रेस आन्दोलन से अलग रखा। फिर इस समय भारतीय स्वतन्त्रता के युद्ध में उनका जो इतिहास है उस पर भावी इतिहासकार ही फैसला देगा। आज तो इतना ही कहा जा सकता है कि अपने को साम्राज्यवादियों का विरोधी कहने वाले कम्यूनिस्ट साम्राज्यवादियों के प्रतिनिधियों से बढ़कर उनका साथ दे रहे हैं। गत बीस वर्षों के उज्ज्वल राष्ट्रीय इतिहास को ये 'पूँजीवादियों का अपने स्वार्थ के लिए संघर्ष' कह कर अपमान करते हैं और आज भी आदरणीय पूज्य नेताओं को 'फासिस्टवादी, 'धुरीराष्ट्रों के समर्थक' कहकर अपनी जिह्वा कलंकित।

कुछ इसी प्रकार की नीति चीन में भी परिचलित की गयी। च्याङ्कई शेक की पारदर्शिनी दृष्टि से उनकी यह तिकड़म छिपी नहीं रही। पर अब तक वे सहन करते जा रहे थे और चेष्टा कर रहे थे

कि चीनी कम्यूनिस्ट मॅमल जाँय और अपनी नीति बदलें। पर उनकी यह आशा फलवती नहीं हुई। उधर उत्तर की ओर कदम उठाने का समय निकट आ रहा था। इस समय काउतुङ में च्याङ्ग के अधीन करीब एक लाख सैनिक एकत्र थे। कुओमिंगताङ्ग की कार्य-समिति ने यह निश्चय किया कि उत्तर पर आक्रमण करने की योजना कार्यान्वित की जाय। फिर च्याङ्ग शेक पर इसका भार भी छोड़ दिया गया। राष्ट्रीय सरकार ने सन् १९२८ की फरवरी में एक घोषणा प्रकाशित करके उत्तरी नेता च्याङ्गसालिङ तथा वूपेई-फू को देश का शत्रु घोषित कर दिया। पर च्याङ्ग काउतुङ की हालत जानते और कम्यूनिस्टों की नीति से परिचित थे। अप्रसन्न तथा असन्तुष्ट राजनीतिक नेता और अवसरवादी अलग अलग जो कुचक्र रच रहे थे उनका उन्हें पता था। च्याङ्ग ने बुद्धिमानी करके अपना गुप्तचर विभाग खोल रखा था। उसमें मिलने वाली रिपोर्ट काउतुङ की भयावह स्थिति पर प्रकाश डाल रही थी। स्वयम् च्याङ्ग की हत्या करने के लिए मार्च में प्रयत्न किया गया और उन पर बम फेंका गया पर वे पहले से सावधान थे इसलिए उनका बाल भी बाँका न हुआ।

इसी बीच लीचुङ्ग तुङ्ग नामक एक कम्यूनिस्ट ने खुले विद्रोह की ओर कदम उठाया। यह व्यक्ति जलसेना का अधिकारी, 'चुङ्शाङ' नामक क्रूज़र का कप्तान तथा ह्वामपाओ के सैनिक कालेज का स्नातक और कम्यूनिस्ट पार्टी का लीडर था। कम्यूनिस्टों की योजना थी कि एक दिन यकायक काउतुङ पर अधिकार स्थापित कर लिया जाय। लीचुङ्गतुङ्ग ने एक दिन अपने क्रूज़र को काउतुङ के निकट लाकर खड़ा किया और पूछने पर यह उत्तर दिया कि च्याङ्ग की आज्ञा से ही वह रणपोत लाया गया है। च्याङ्ग ने भी तत्काल कार्रवाई की। एक ओर तो उन्होंने ली को बर्खास्त कर उसकी कप्तानी छीन ली और दूसरी ओर सेना काउतुङ भेजी जिसमें यदि उपद्रव खड़ा ही हो जाय तो उसका दमन तुरन्त कर दिया जा सके। साथ ही साथ च्याङ्ग ने कम्यूनिस्टों के अड्डों पर भी धावा किया। बोरोदिन इस समय काउतुङ में नहीं थे पर उनका मकान घेर लिया गया। काउतुङ की हड़ताल कमिटी के दफ्तर को जो कम्यूनिस्टों का मुख्य गढ़ था घेर कर तथा वहाँ के सैनिकों को जो कम्यूनिस्टों के प्रभाव में थे पकड़कर उनके गोले बारूद के कारखाना पर अधिकार कर लिया गया। कतिपय रूसी

शिक्षक और सलाहकार भी गिरफ्तार कर लिये गये और ८० चीनी कम्यूनिस्ट पार्टी के सदस्य भी।

च्याङ्कई ने अपनी दूरदर्शिता और कौशल से विद्रोह होने के पहले ही उसकी कलिका को मसल कर धूल में मिला दिया। प्रसन्नता की बात है कि यह सब काम एक बूँद भी रक्त गिराये बिना पूरा हुआ। काम पूरा करके च्याङ ने सारा मामला कुओमिंतांग के सामने रखा और कहा कि यदि मैंने इस कदम को उठाने में गलती की हो तो जो दंड मिले उसे सहर्ष सहने को तैयार हूँ। कमिटी ने उनके कार्य का समर्थन किया, पर कम्यूनिस्ट पार्टी च्याङ पर आग बबूला हो गयी। उन्होंने अपने दल की बैठक करके च्याङ्कई के सम्बन्ध में विचार किया। कुछ की राय तो यह थी कि बोरोदिन द्वारा वाङ पर इस बात के लिए जोर डलवाया जाय कि वे च्याङ्कई को बर्खास्त कर दें, च्याङ्कई की कार्रवाई के विरुद्ध आम हड़ताल करायी जाय तथा सैनिकों का आवाहन किया जाय कि वे विद्रोह करें। पर अधिकतर लोगों का यह मत था कि च्याङ से इस समय किसी प्रकार का समझौता करने में ही भलाई है। कम्यूनिस्टों ने अन्त में समझौता किया और भविष्य में पुन किसी प्रकार की गलती न करने का वचन दिया। च्याङ की सेना बुरोदिन आदि के वास स्थान से हटा ली गयी और गिरफ्तार लोग रिहा कर दिये गये।

च्याङ्कई ने दृढ़तापूर्वक कार्य करके अपनी शक्ति का परिचय दिया और अपनी स्थिति सुदृढ़ कर ली। इस घटना के बाद बहुत से रूसी काङ्तुङ से अपने देश को रवाना हो गये, कुछ काङ्तुङ छोड़ कर उत्तरी चीन चले गये, पर बुरोदिन वहीं रहे। इसी समय प्रमेह से बुरी तरह पीड़ित होकर वाङ ने पदत्याग कर दिया, इसलिए च्याङ के ऊपर उनके काम का भी भार आ पड़ा। कुछ लोगों का कहना है कि वाङ च्याङ्कई की नीति से तंग आ कर तथा उनसे मतभेद हो जाने के कारण अलग हुए। यद्यपि इस बात का कोई प्रमाण नहीं मिलता पर हो सकता है कि यही बात रही हो। जो भी हो, अकेले च्याङ्कई पर कुओमिंतांग और राष्ट्रीय सरकार का सारा काम आ पड़ा। च्याङ्कई ने कुओमिङ्ताङ्ग की केन्द्रीय कार्य तथा निरीक्षक समितियों की सम्मिलित बैठक बुलायी और उसमें दो प्रस्ताव रखे। उनका पहला प्रस्ताव तो यह था कि उत्तर की विजय के लिए सेना भेजी जाय पर यह उसी हालत

में जब इसके लिए सब लोगों का सहयोग मिले। उनका कहना था कि जापान तथा अन्य समस्त साम्राज्यवादी राष्ट्र उत्तर के सैन्यसत्तावादियों की सहायता करेंगे। च्याङसोलिङ तथा वूपेई फू के पास काफी शक्ति भी है। ऐसी परिस्थिति में सब का सहयोग आवश्यक है। उन्होंने एक योजना भी रखी जिसमें उत्तर के कुछ सैन्यसत्तावादियों को जो च्याङसोलिङ तथा फू के विरोधी थे मिला लेने की राय दी गयी थी। उनका कहना यह था कि जब ये सहायता देने को तैयार हैं तो इनकी सहायता अवश्य ली जाय क्योंकि च्याङसोलिङ तथा फू का दमन यदि हो गया तो फिर ये छोटे लोग अपने आप ही राष्ट्रीय सरकार के सामने झुक जायँगे। दूसरा प्रस्ताव उनका कम्यूनिस्टों के विरुद्ध था। उनका कहना था कि तमाम अधिकारी पदों से ये लोग हटा दिये जाँय। उन्होंने कूओमिङताङ्ग के पुन सगठन की भी एक योजना रखी जिसके अनुसार कम्यूनिस्ट मुख्य राजनीतिक पदों से वंचित हो जाते।

सम्मेलन ने च्याङ्कई के सब प्रस्ताव स्वीकार कर लिये। इन के अनुसार कम्यूनिस्ट पार्टी के जिन सदस्यों के हाथों में महत्वपूर्ण काम थे वे उनसे ले लिये गये। इस समय कम्यूनिस्टों ने जो मुआहिदा किया वह काफी मनोरंजक है। यह तय हुआ कि कम्यूनिस्ट खुल्लम खुल्ला डाक्टर सुन के तीनों सिद्धान्तों के विपरीत कोई प्रचार नहीं करेंगे। कम्यूनिस्ट पार्टी के जो व्यक्ति कूओमिङताङ्ग के सदस्य हों उनकी नामावली बनाकर देदी जाय और उनके सिवाय यदि कभी नये कम्यूनिस्ट उसमें शरीक हों तो इसकी भी सूचना देदी जाया करे। कम्यूनिस्ट पार्टी का कोई सदस्य कूओमिङताङ्ग की कार्य-समिति का अध्यक्ष न बनेगा। कूओमिङताङ्ग की कुल सदस्य संख्या के तृतियांश से अधिक कम्यूनिस्ट उसके सदस्य न हो सकेंगे। कम्यूनिस्ट पार्टी अपने दल वालों को जो हिदायतें देगी अथवा आज्ञाएँ प्रदान करेगी उस पर पहले एक ऐसी कमिटी विचार कर लिया करेगी जिसके पाँच सदस्य कूओमिङताङ्ग के हों और तीन कम्यूनिस्ट पार्टी के। इस समझौते के आधार पर च्याङ ने पुन एक बार कम्यूनिस्टों से सहयोग करने का यत्न किया।

अब यह काम करके च्याङ्कई अपने स्वर्गीय नेता डाक्टर सेन के स्वप्न को वास्तविक रूप प्रदान करने के काम में जुटे। देश की एकता के बिना क्रांति सफल नहीं हो सकती और उस एकता के लिए

आवश्यक था उत्तर के सैनिक सामन्तों का दमन। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए वे आरम्भ से ही यत्नशील रहे पर उनके मार्ग में सब से बड़ी बाधा दक्षिण से ही उपस्थित होती रही। काङतुङ सरकार के विरोधी तो थे ही, परन्तु कुओमिङताङ्ग के विविध दलों का मतभेद और उनकी गुटबन्दी भी कुछ कम न थी।

यथा सम्भव इन सब का निराकरण करके वे अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर हुए। सैनिक कमीशन के सामने उन्होंने सैन्य सुधार के लिए व्यापक प्रस्ताव रखे। उनके प्रस्ताव उनकी सूक्ष्म बुद्धि तथा सैन्य विज्ञान के गहरे ज्ञान का परिचय देते हैं। कितनी सेना होनी चाहिए, कितने खर्च का अनुमान किया जाना चाहिए, सैनिकों की शिक्षा कैसी होनी चाहिए, उनका पुरस्कार और वेतन किस प्रकार बंटे, उनमें नियन्त्रण और अनुशासन का भाव किस प्रकार लाया जाय, किस प्रकार कुओमिङताङ की एक मात्र पताका के नीचे सब सैनिकों तथा कर्मचारियों को एकत्र किया जाय, आदि आदि बातों पर विस्तार के साथ उन्होंने अपनी निश्चित योजना रखी।

यह सब करने के बाद च्याङ ने सन् १९२६ की ४ जून को कुओमिङताङ्ग का अधिवेशन किया और उत्तर की विजय के लिए सैन्य संचालन की आज्ञा माँगी। कुओमिङताङ ने सर्व सम्मति से उनके प्रस्ताव को स्वीकार किया और च्याङ को अपना प्रधान सेनापति नियुक्त करके सारा अधिकार उनके सिपुर्द कर दिया। ९ जून को च्याङ ने यह नया पद ग्रहण किया और जनता के नाम एक वक्तव्य निकाला। इस वक्तव्य में च्याङ ने जनता को सम्बोधित करते हुए कहा "चीनी क्रान्ति की धारा गत १५ वर्षों से प्रवाहित है और इस बीच में निरन्तर संघर्ष होता रहा है। इस संघर्ष का कारण साम्राज्यवादियों की वह भ्रष्ट नीति रही है जिसके द्वारा वे स्वार्थी सैन्यसत्तावादियों को उभाड़ कर मनमाना नाच नचाते और देश हित का नाश करके अपना स्वार्थ साधन करते रहे हैं। उनका लक्ष्य यह रहा है कि वे चीन की जनता को उसकी स्वतन्त्रता से वंचित कर चीन पर अपना एकाधिकार स्थापित करें और इस प्रकार इस देश का राजनीतिक तथा आर्थिक शोषण करने में सफल हों। आज इस भयावह स्थिति से देश को बचाने का एक-मात्र मार्ग यह है कि क्रान्ति का लक्ष्य सिद्ध किया जाय। उसका लक्ष्य है इस देश में पूर्ण

स्वतन्त्रता की स्थापना और स्वतन्त्र राष्ट्र के उसके अधिकार तथा गौरव की रक्षा करना। इस कार्य में हम जनता की सहायता चाहते हैं। यह सहायता यदि हमें मिली तो हम न केवल उत्तर के सैन्यसत्तावादियों का दमन कर सकेंगे वरन् उन साम्राज्यवादियों को भी उखाड़ फेंकेंगे जिनके समर्थन से वे हमारी मातृभूमि की दुर्दशा करते हैं।"

यह घोषणा प्रकाशित करके उन्होंने सेना को इस रण-यात्रा के लिए तैयार हो जाने की आज्ञा प्रदान की। कुओमिङताङ ने भी देश भर से और अपने सदस्यों से अपील की कि वह इस काम में च्याङ की यथासम्भव सहायता करें। च्याङ्काई ने अपनी सेना तैयार कर ली। उन्होंने सैनिकों को आगाह कर दिया कि युद्ध में जो सैनिक अथवा अधिकारी अथवा सेनापति अपना कदम पीछे हटायेगा वह गोलियों का शिकार होगा। सेना के साथ उन्होंने एक राजनीतिक विभाग भी जोड़ दिया। इस विभाग का काम यह था कि वह सैनिकों को व्यापक राजनीतिक शिक्षा देता चले—अर्थात् उनके सामने इस बात का निरन्तर प्रचार होता रहे कि वे देश के लिए, उस की स्वतन्त्रता के लिए तथा एक महान आदर्श और लक्ष्य के लिए लड़ रहे हैं। साथ ही डाक्टर सुङयात के तीन सिद्धान्तों का सतत प्रचार होना भी जरूरी था और उन का आशय लोगों को बराबर समझाया जाना भी आवश्यक। कुओमिङताङ्ग की पार्टी का भी एक विभाग था जो सदा सैनिकों के आचरण तथा चाल चलन पर निगाह रखता और प्रतिनिधि सैनिक अधिकारियों को सलाह देता तथा उनके कार्य में सहायता प्रदान करता।

च्याङ के पास कुल ५० हजार सेना थी। उधर उसके विरोधियों के पास अपार सैन्य समूह था। च्याङसोलिङ शाङतुङ्ग प्रान्त में राज कर रहा था। नाङ्किङ्ग में सुङ्च्वाङ फाङ्ग तथा मध्य चीन में वूपेईफू डटे हुए थे। अकेले वू के पास ही एक लाख से अधिक सेना थी।

इस प्रकार शक्ति-सञ्चय कर च्याङ [illegible] जुलाई को हूनान पर आक्रमण करने के लिए आगे बढ़े। जाने के पूर्व वे अपने दो साथियों पर काङ्तुङ्ग का सरकार तथा अपनी पार्टी का काम छोड़ते गये। ताङ्येङ्काई पर सरकारी काम की देख रेख तथा चाङ्चिङ-क्याङ्ग पर कुओमिङताङ्ग की केन्द्रीय समिति का कार्य-भार छोड़ा गया। च्याङ्काई के हृदय में डाक्टर सुङयातसेन की उत्तर विजय की योजना जितनी बैठ गयी थी उतनी और कोई बात नहीं पैठी थी। उन्हें इस

ध्यान की लगन लगी हुई थी कि उनके प्रिय नेता इस कार्य की सफलता देखे बिना संसार से उठ गये। और इस चोट ने ही उन्हें उस काम को पूरा कर डालने के लिए उत्प्रेरित किया था। च्याङ के जीवन की सब से बड़ी विशेषता यह रही है कि वे परम कर्मठ व्यक्ति हैं। च्याङ्काई के सारे जीवन पर दृष्टिपात कीजिये और आप देखेंगे कि उन्होंने जिस काम को करने का सकल्प कर लिया उसे पूरा करने में कभी कोई बात उठा न रखी। मार्ग में जो बाधा आयी उसे विचूर्ण कर देने में कभी नहीं हिचके। उनकी यह दृढ़ कार्य-तत्परता ही कभी कभी उन्हें अनावश्यक रूप से कठोर प्रदर्शित करने का कारण हुई है। इसी प्रवृत्ति ने उन्हें उन कम्यूनिस्टों का दमन तक करने के लिए उत्प्रेरित किया जिनके साथ वे सहयोगपूर्वक काम करते रहे। पर उन्हों ने यह सब किया इसीलिए कि देश में अक्षुण्ण रूप से एकता स्थापित हो और चीनी महाराष्ट्र अपना लुप्त वैभव तथा गौरव पुन प्राप्त करले। आज वे इस पुनीत यज्ञ की पूर्त्ति के लिए उत्तर की ओर बढ़े।

छठा अध्याय

नाङ्किङ की यात्रा

च्याङ्काई ने अपना प्रधान शिविर हाङचउ में स्थापित किया। यह स्थान,ताङशेङ्ग नामक व्यक्ति के अधिकार मे था जो उत्तर के सैन्य-सत्तावादियों के शत्रु का आदमी था। हाल मे वूपेई से उसका झगड़ा हो गया था और दोनों में गहरी लड़ाई हुई थी। च्याङ की योजना थी कि उत्तर के छोटे-मोटे सामन्त यदि आसानी से मिलाये जा सकते हों तो मिला लिये जाँय। इसी योजना के अनुसार ताङशेङ्ग राष्ट्रीय सेना के साथ मिला लिये गये। उधर च्याङ्काई शेक ने निश्चय किया था कि वे पहले वूपेई फू से ही मोरचा लेंगे इसीलिए उन्होंने हाङचउ में अपनी छावनी स्थापित की। हाङचाउ के निकट ही लिस्यु नदी बहती है जिसके उस पार वूपेई का प्रदेश था। नदी के इस पार च्याङ्क की सेना एकत्र हुई और उस पार वूपेई की। वूपेई के सैनिक-अधिकारी यह समझते थे कि लिस्यु को पार करना असम्भव है इसलिए वे इतमीनान के साथ पड़े हुए थे। पर उनकी

यह धारणा उस रोज गलत सिद्ध हुई जब उन्होंने देखा कि च्याङ्ग की सेना चार स्थानों से नदी को पार करके चाङशा पर आक्रमण कर रही है। च्याङ्ग्काई शेक ने पहली ही झपट में चाङशा पर अधिकार स्थापित कर लिया। उत्तर की उनकी यात्रा में यह पहली सफलता थी जब यूपेई फू के समान प्रसिद्ध सैन्यसत्तावादी की पराजय हुई। इसके पहले कि क्रान्तिकारी सेना आगे बढ़े च्याङ्ग ने चाङशा में एक सैनिक सम्मेलन किया। इससे उनका तात्पर्य यह था कि और आगे बढ़ने के पूर्व वे उत्तर की जनता को बता दें कि क्रान्तिकारी क्या चाहते हैं और किसलिए शस्त्र लेकर लड़ने आये हैं। उन्हें विश्वास था कि इस व्याख्या से उत्तर की जनता सन्तुष्ट हो जायगी और क्रान्तिकारी लक्ष्य के प्रति सहज सहानुभूति के कारण हमारा साथ देगी।

इस सम्मेलन के साथ ही उन्होंने वह प्रसिद्ध वक्तव्य प्रकाशित किया जिसका आज भी काफी ऐतिहासिक महत्व है। इस वक्तव्य में कहा गया था कि "क्रान्तिकारिणी सेना निकट भविष्य में हाङ्काउ तथा वूच्याङ्ग में यूपेई फू से निर्णयकारी युद्ध करने जा रही है। इस युद्ध से चीन के भाग्य का निपटारा होने वाला है। इसी युद्ध में निर्णय होगा कि चीन इसी प्रकार क्षत विक्षत होता रहे अथवा यहाँ की जनता स्वतन्त्रता और सम्मान का अधिकारिणी हो। यह युद्ध एक आदर्श के लिए है, जनता और सैन्यसत्तावादी शासकों तथा क्रान्तिकारी और प्रतिगामी स्वार्थार्थियों के बीच है। डाक्टर सेन के तीन प्रसिद्ध सिद्धान्तों तथा साम्राज्यवादी तत्वों में यह लड़ाई है। अब यह काम देश की जनता का है कि वह खड़ी हो जाय और युद्ध में सम्मिलित होकर अपनी विजय प्राप्त करे।"

"आज हम युद्ध करने के लिए क्यों उठ खड़े हुए हैं? इसका कारण स्पष्ट है। आज से ८० वर्ष पूर्व साम्राज्यवादियों ने अफीम का व्यापार करने के लिए चीन पर आक्रमण कर उसे पराजित किया। तब से इन साम्राज्यवादियों द्वारा हमारा राष्ट्र निरन्तर उत्पीड़ित होता रहा है। इन शक्तियों ने हमें पशुबल से कुचलने की चेष्टा की। जब चीनी जनता ने इसका प्रतिवाद किया और वह प्रतिवाद तेईपिङ्ग विद्रोह*

* सन् १८४६ में मञ्चू राजवंश के विरुद्ध पहला विद्रोह हुआ था जो कई वर्षों तक चलता रहा।

के रूप में प्रकट हुआ। मञ्चू राजाओं ने अनुभव किया कि चीनी जनता के प्रति घृणा और उपेक्षा प्रकट करके उसका तिरस्कार नहीं किया जा सकता। जब वे इस विद्रोह को दबाने में असमर्थ हुए तो विदेशियों तथा विशेष कर अँगरेजों की मदद लेकर उसे कुचल दिया गया। यद्यपि विद्रोह दबा दिया गया पर मञ्चू राज्य की शक्ति का पता विदेशियों को लग गया और वे उस पर हावी हो गये। तब से बराबर वह विदेशियों को अपनी सत्ता अर्पण करते रहे हैं।"

"इसके बाद दूसरा प्रयत्न सन् १९११ में हुआ और विद्रोही सफल हुए। एक प्रजातन्त्रात्मक सरकार की स्थापना की गयी। पर उस समय युआङशिहकाई ने हमें धोखा देकर विद्रोहियों द्वारा उपार्जित शक्ति चुरा ली और खुद अध्यक्ष बन बैठा। अध्यक्ष होने के बाद विदेशी साम्राज्यवादियों की सहायता लेकर उसने अपनी स्थिति बनाये रखने की नीति उसी भाँति ग्रहण की जैसे मञ्चू राजा किया करते थे। साम्राज्यवादियों की वह खुशामद किया करता और अपने देश की जनता को चरणों के तले पीसता रहता। उसने अपने स्वार्थ के लिए देश के साथ विश्वासघात किया, देश की जनता के साथ विश्वासघात किया और उस प्रजातन्त्र के साथ विश्वासघात किया जिसने उसे अपना अध्यक्ष निर्वाचित किया था। जब से प्रजातन्त्र की स्थापना हुई तब से अब तक उत्तरी सैन्यसत्तावादियों का गुट्ट वही नीति बरत रहा है जिसका आश्रय युआङ ने ग्रहण किया था। वूपेई फू भी उन्हीं लोगों में हैं जिन्हें इसकी तनिक भी परवाह नहीं है कि देश नष्ट हो रहा है, उसकी स्वतन्त्रता छिन गयी है और उस की जनता गुलाम बन रही है। उसे तो अपना स्वार्थ सिद्ध करना है और इसके लिए शोषक विदेशी साम्राज्यवादियों से मिल कर स्वदेश को बेच देना पड़े तो वह भी करना है।"

"आज देश की जनता को इस स्थिति का अन्त करने के लिए विद्रोह करना है। विद्रोह की लहर देश के कोने-कोने में किसान और मजदूरों की झोपड़ियों तक पहुँच गयी है। जनता इन शृङ्खलाओं को छिन्न भिन्न करने के लिए सामूहिक रूप से सचेष्ट हो गयी है। वूपेई फू का इसमें सहायता करना तो दूर रहा उसने पेकिङ्ग हाङ्काई रेलवे के मजदूरों पर गोली चला कर उन्हें कुचलने को कोशिश की है। ऐसा उसने विदेशी साम्राज्यवादियों के इशारे पर किया है। ये साम्राज्यवादी

अब तक चीन के राष्ट्रीय आन्दोलनों से अलग रहने का पाखंड किया करते थे पर आज तो उन्होंने सारा आवरण हटा कर अपना नग्न रूप प्रकट कर दिया है। वे खुल्लमखुल्ला हमें कुचलने के लिए बल प्रयोग कर रहे हैं। शङ्घाई में गत ३० मई को उन्होंने इसी का प्रदर्शन किया था। हमारी क्रान्ति के इतिहास म उस रोज की घटना हमारे लिए सबसे अधिक अपमानजनक हुई है। हम इस स्थिति को एक क्षण भी चलने देना नहीं चाहते, पर उसका उन्मूलन करने के लिए यह आवश्यक है कि यूपेई फू सदृश लोगों का सफाया पहले किया जाय। ऐसों का ही सहयोग पाकर साम्राज्यवादी चीनियों द्वारा ही चीनियों का दमन करने की अपनी कुनीति सफलतापूर्वक कार्यरूप में परिवर्तित करते रहे हैं।"

"आज उत्तर म होने वाले अनर्थ का उन्मूलन करने का पवित्र कार्य मेरे ऊपर छोड़ा गया है। मैं चाङ्गशा और योचउ में अपना सैन्य सग्रह कर रहा हूँ। मैं क्रान्तिकारी हूँ और उसी हैसियत से जनता का युद्ध लड़ने आया हूँ। शीघ्र ही हमारी सेना वूचुङ्ग और हाङ्काऊ पहुँचने वाली है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि उत्तर की जनता हमें अपना सहयोग और सहायता प्रदान करेगी तथा हमारे युद्ध के साथ साथ अपने स्वार्थी निरंकुश शासकों के प्रति विद्रोह करके देश को बचाने का महत्पुण्य अर्जन करेगी। याद रखिये हमारे सघर्ष और युद्ध का एक मात्र लक्ष्य यह है कि हम जनता का सम्मेलन करके उसके द्वारा चुनी हुई ऐसी सरकार की स्थापना करें जो सारे चीनी राष्ट्र की एकता तथा स्वतन्त्रता की प्रतीक हो। वह सरकार डाक्टर सेन के तीन सिद्धान्तों क आधार पर स्थापित हो और देश के साथ विदेशियों द्वारा की गयी अपमान सन्धियों और अपमान जनक शर्तों को नष्ट करके राष्ट्र की स्वतन्त्रता और गौरव की स्थापना करे।"

"उत्तर या दक्खिन के सैन्यसत्तावादी यदि विद्रोहिणी पताका के नीचे आना चाह तो हम उनका स्वागत करेंगे और उन्हें अपना सह योगी मानेंगे। हमारी क्रान्ति सेना तो जनता की है जो उसकी भाव नाओं का आदर करती है और उसके मत को सर्वोपरि मानती है। मुझे विश्वास है कि सारे देश के सैनिक अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए क्रान्ति सेना में सम्मिलित होंगे। मैं अपनी ओर से यही चेष्टा

करूँगा कि युद्ध शीघ्र से शीघ्र समाप्त हो और जनता पर पड़ने वाला बोझ कम से कम हो—फिर भी क्रान्ति तो पूर्ण करनी ही होगी।"

इस तेजस्वी वक्तव्य में च्याङ्कई ने न केवल चीनी क्रान्ति का इतिहास बता दिया बल्कि उन्होंने उसके लक्ष्य का स्पष्टीकरण भी कर दिया। इस घोषणा के बाद वे आगे बढ़े और वोचउ पर आक्रमण कर दिया। वूपेईफू की महती सेना ने बढ़ती हुई क्रान्ति सेना का प्रबलता के साथ विरोध किया। दोनों में गहरी मुठभेड़ आरम्भ हो गयी। वूपेई की सेना संख्या में च्याङ की सेना से दुगनी से भी अधिक थी, फिर भी क्रान्ति-सेना ने इसकी चिन्ता किये बिना ही आक्रमण कर दिया था। च्याङ्कई ने जो घोषणा प्रकाशित की थी उसका प्रभाव उत्तर की जनता पर बिजली की तेजी से फैल गया। सारे उत्तर में धूम मच गयी कि दक्खिनी सेना उनका उद्धार करने आयी है। किसानों के झुंड के झुंड क्रान्ति-सेना की सहायता के लिए उमड़ पड़े। वे सेना में भरती हुए और जो भरती नहीं हुए वे रसद पानी पहुँचाने में, शत्रुओं का समाचार देने में, क्रान्ति-सेना को मार्ग बताने में तथा और दूसरी सब सम्यक् सहायताएँ पहुँचाने में लग गये। किसानों की इस सहायता ने तो च्याङ्कई का कार्य बहुत ही हलका कर दिया। वूपेई की सेना किधर गयी, कहाँ गयी, कहाँ से हटी, कहाँ एकत्र हुई, कौन सा स्थान ऐसा है जो अरक्षित है, किस मार्ग से वहाँ पहुँचा जा सकता है आदि बातों का पता क्षण क्षण च्याङ को मिलने लगा। यह युद्ध था या स्वयम् उत्तरी जनता का विद्रोह। किसानों की इस सहायता के फलस्वरूप वू की सेना को एक कदम भी आगे बढ़ना असम्भव होने लगा। उसकी सैनिक टुकड़ियाँ एक दूसरे की सहायता करने में असमर्थ हो गयीं। क्योंकि इसके लिए जो कुछ भी प्रबन्ध किया गया था उसे च्याङ ने किसानों से सुन कर छिन्न भिन्न कर दिया। वू की सेना परस्पर का सम्बन्ध विच्छिन्न कर बैठी, उसमें चारों ओर गड़बड़ी घबराहट और आतंक फैल गया, अव्यवस्था व्यापक रूप से फैलने लगी।

स्थिति से लाभ उठा कर क्रान्ति सेना ने मिलू नदी पार की और वू ने दूसरे किनारे पर रक्षा का जो प्रबन्ध किया था उसे नष्ट भ्रष्ट कर दिया। फिर तो क्रान्ति सेना के लिए वोचउ का मार्ग खुल गया। वू के सैनिक पीछे हटे और क्रान्तिसेना ने उन्हें खदेड़ना आरम्भ किया। वे

भागते हुए ह्यूपे प्रान्त की सीमा पर पहुँच गये और क्रान्ति-सेना ने २२ अगस्त को योचव पर अधिकार स्थापित कर लिया। टिङ्स्याओ की इस लड़ाई की विजय ने च्यांगकाई की बड़ी सहायता की। वूपेई की पराजय ने उसकी धाक जमा दी। लोगों में यह विश्वास उत्पन्न हो गया कि दक्खिनी सेना विजय प्राप्त करने में समर्थ होगी। पर इससे भी महत्त्वपूर्ण लड़ाई वह थी जो तिङ्स्येचयव में हुई। इस स्थान पर वूपेई फू और च्यांगमालिङ की सम्मिलित सेना ने क्रान्ति-सेना का सामना किया। इन दोनों ने मिल कर नान्चाङ पर अधिकार स्थापित कर लिया था। इसके बाद उन्होंने ह्यूपे में बढ़ती हुई क्रान्ति-सेना का सामना करने का दृढ़ निश्चय किया था। स्वयम् वूपेई रण स्थल पर मौजूद था और सेना का संचालन कर रहा था। च्यांग तेजी से आगे बढ़ते जा रहे थे। उनका इरादा था कि जहाँ तक सम्भव हो जल्द ही अधिक से अधिक स्थानों पर कब्जा कर लिया जाय और इसके पहले कि उत्तरी सैन्यसञ्चालक अपनी स्थिति सुदृढ़ कर सकें उन्हें चूर चूर कर दिया जाय।

२३ अगस्त को च्यांग ने तिङ्चेक्यव पर अधिकार स्थापित करना निश्चय किया। वूपेई चतुर और सफल सेनापति था। युद्धस्थलों में उसने अनेक बार यश और प्रतिष्ठा पायी थी। ऐसे शत्रु का सामना करने के लिए च्यांग ने भी सावधानी से काम लिया। उन्होंने अपने सर्वोत्तम सैनिकों को आगे बढ़ाया और चारों ओर से तिङ्चेक्यव पर आक्रमण करने की आज्ञा दे दी। वू की महती सेना ने दृढ़तापूर्वक च्यांग का मुकाबला किया और उनके बढ़ाव को रोक दिया। पहले आक्रमण में क्रान्ति-सेना को सफलता नहीं मिली।

च्यांग ने दूसरे दिन पुनः नयी सज धज तथा तैयारी के साथ आक्रमण किया। वे स्वयम् रण स्थल पर गये और सैनिकों को उत्साहित करते हुए बोले, "आज हमारा लक्ष्य यह नगर है जिस पर अपनी पताका या तो उड़ानी है या उस प्रयत्न में जान दे देना है।" इन वाक्यों का जादू का सा असर हुआ। रणचंडी पूरे वेग से नृत्य करने लगी। दोनों ओर से गहरी घमासान मची और महासंहार होने लगा। सैनिक पर सैनिक गिरते और मरते तथा दूसरे उनका स्थान लेते चलते। २९ अगस्त को पूरे दिन यह युद्ध होता रहा और दोनों में से कोई भी पीछे नहीं हटा। दूसरे दिन पुनः युद्ध उसी वेग से आरम्भ हुआ, पर

आज क्रान्ति-सेना की प्रचड मार तथा उसकी बलिदान-भावना के सम्मुख यूपेई के सैनिक नहीं ठहर सके। उनके पैर उखड़ गये और वे पीछे हट गये। तिङचेक्यव पर क्रान्ति-सेना का कब्जा हो गया। यू की पलायमान सेना का पीछा किया गया। हजारों सैनिकों को गिरफ्तार करके उनके शस्त्र रखवा लिये गये। क्रान्ति सेना को भी गहरी हानि उठानी पड़ी पर उसकी इस विजय ने उसकी शक्ति का डंका चारों ओर पीट दिया। उसकी यशस्विनी पताका सारे उत्तर में अपना रौब स्थापित करने में समर्थ हुई। यू की सेना भागती हुई याङचे नदी के दक्षिणी तट के किङसाइ प्रान्त में जाकर रुकी। यह स्थान सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण था क्योंकि वूचाङ्ग से १ मील हूपे प्रान्त की राजधानी के मुखद्वार की भाँति स्थित था। वूचाङ्ग ही इस समय च्याङ का लक्ष्य हो रहा था। अत एक बार और लोहा लेने के इरादे से यू अपने दलबल सहित यहाँ आकर रुक गया। पर इसके पूर्व कि यू अपनी शक्ति-सञ्चय करते और युद्ध के लिए अपने को तैयार कर पाते च्याङ की सेना जो उसका पीछा करती आ रही थी उस पर टूट पड़ी और उसे तितर बितर कर दिया।

इस बार यू की सेना बुरी तरह पिटी और निङचाउ से भाग चिहफाङ्ग में जाकर रुकी जो वूचाङ्ग से बीस मील उत्तर में स्थित है। यहाँ से उसने वूचाङ्ग की रक्षा की योजना आरम्भ की, पर यहाँ भी च्याङ अपनी विजयिनी वाहिनी के साथ पहुँच गये और गहरा आक्रमण कर दिया। यू बुरी तरह हारा और उसके पैर उखड़ गये। फिर तो वह ऐसा भागा कि उसे कहीं खड़े होने की भी जगह नहीं मिली। उसके सैनिकों के हृदय में क्रान्ति सेना का ऐसा त्रास समा गया कि वे उसे जहाँ देखते वहीं से भाग चलते। यूपेई-फू चिहफाङ्ग से भागकर वूचाङ्ग आया और उस नगर की रक्षा का प्रबन्ध करने लगा। वूचाङ्ग में अच्छी किलेबन्दी थी और नगर की रक्षा का सुदृढ़ प्रबन्ध भी था। च्याङ्कई शेक ने इस पर आक्रमण करने का निश्चय करके सेना को तीन ओर से बढ़ने की आज्ञा प्रदान की। पर वूचाङ्ग का युद्ध पहले की और सभी लड़ाइयों से कहीं अधिक कठोर था। नगर की रक्षा के लिए किये गये प्रबन्ध, किलेबन्दी तथा तोपों से बरसने वाली आग में क्रान्ति सेना के लिए आगे बढ़ना कठिन हो गया। च्याङ्कई स्वयम् युद्ध का सचालन कर रहे थे। वे सिपाहियों के साथ अग्रिम

पश्चिम खतरा उठाकर बरसती आग में खड़े रहते। प्रधान सेनापति का अपने जीवन को इस प्रकार खतरे में डालना उचित न था। अत बहुतों ने उन्हें रक्षित स्थान में रहने के लिए समझाया पर न्याङ ने इन सलाहों की उपेक्षा की क्योंकि अपनी उपस्थिति से सैनिकों के हृदय को ढाढ़स बँधाये रखना बहुत आवश्यक था। वूचाङ्ग पर उन्होंने तीन बार आक्रमण किया पर सफल न हो सके। फलत उस पर घेरा डाल कर उन्होंने हङ्याङ्ग पर कब्जा स्थापित कर लेने का निश्चय किया।

हङ्याङ्ग में अस्त्र शस्त्र के निर्माण का कारखाना था और इसी दृष्टि से उसका महत्व था। न्याङ ने अब इस शहर पर धावा किया तो नगर की रक्षा करने वाली सेना क्रान्ति-सेना के प्रबल प्रवाह के सामने टिक न सकी। नगर के द्वार खुल गये और न्याङ ने उस पर अधिकार कर लिया। हङ्याङ्ग को कब्जे में करके क्रान्ति-सेना आगे बढ़ी और उसने हाङ्कउ पर अधिकार कर लिया। इसके बाद हूपे प्रान्त में एक के बाद दूसरे स्थानों पर वह अपना झंडा गाड़ती हुई आगे बढ़ने लगी। हूपे में क्रान्ति-सेना का झंडा गड़ते देख कर धूचाङ्ग की रक्षा करने वाली सेना का बहुत बड़ा भाग लेकर वू उसका सामना करने के लिए आगे बढ़े। परिणामत वूचाङ्ग में रक्षकों का बल कम हो गया। न्याङ ने तो यही विचार कर के दूसरी ओर आक्रमण आरम्भ किया था कि वे वूचाङ्ग से वूपेई-फू की शक्ति विभक्त कर सकेंगे। उनकी यह नीति सफल हुई। वूचाङ्ग से वूपेई की सेना के हटते ही न्याङ ने धावा करके उस पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। अब क्या था! सितम्बर का महीना पूरा होते होते और अक्तूबर के प्रथम सप्ताह तक सारा हूपे प्रान्त क्रान्ति सेना के अधीन हो गया। वू की सेना पूर्णत पराजित, दलित और विघटित हो गयी।

अब न्याङ ने दूसरी ओर ध्यान देने का निश्चय किया। वू को दबा कर वे सुन्च्वाङफाङ से भिड़ने का निश्चय करके अपनी तैयारी करने लगे। सुन्च्वाङ अपनी शक्ति और सैनिक बल के लिए प्रसिद्ध था। क्याङसू, चक्याङ्ग फूके, अङहुई और क्याङ्गची के पाँच प्रान्त उसके अधीन थे। ये पाँचों उर्वर तथा सम्पन्न प्रदेश उसकी शक्ति के स्रोत थे। डेढ़ लाख से ऊपर उसकी सेना थी और यह सरदार उत्तर में अपनी शक्ति का बड़ा दबदबा रखता था।

जब हूपे और हुनान में च्याङ्‌ क्रान्तिसेना की पताका स्थापित कर रहे थे उस समय सङ्च्वाङ ने क्याङची में अपनी सेना को जमाना आरम्भ कर दिया। सङ यूपेई फू से जलता था। परस्पर की प्रति स्पर्द्धा, डाह और प्रतिद्वन्द्विता इन युद्ध प्रभुओं के विशेष गुण थे। एक दूसरे के विरुद्ध लड़ कर ही तो ये देश को तबाह कर रहे थे। जब यू युद्ध में सलग्न था तो उसने बड़ी चेष्टा की कि सङ च्याङ के विरुद्ध उसकी सहायता करे। पर वही डाह इसमें बाधक हुआ। पर जब च्याङ का डंका हुनान और हूपे में बजने लगा तो सङ ने अपनी रक्षा का आयोजन आरम्भ कर दिया। च्याङ चाहते थे कि वे सङ को क्रान्ति सेना से मिल जाने के लिए राजी कर लें। उनका इरादा था कि जितना कम से कम रक्तपात हो उतना ही अच्छा है। उन्होंने इसकी चेष्टा भी की पर सङ लड़ने पर उतारू हो गया था। फलत युद्ध को अनिवार्य देख कर च्याङ ने क्याङची प्रान्त की राजधानी नाङचङ्ग पर अधिकार स्थापित करने का लक्ष्य निर्धारित करके सैनिकों को आक्रमण करने की आज्ञा दे दी। सङ की सेना का मुख्य शिविर और अड्डा क्युक्याङ्ग नामक स्थान में था। यहाँ से नाङचङ्ग को रेल भी जाती थी जिससे रसद-सामग्री तथा सैना और लड़ाई का सामान भेजना सहल था। च्याङ की सेना ने अन्त में नाङचङ्ग विजय के लिए आक्रमण आरम्भ कर दिया। यद्यपि उनकी सेना संख्या में शत्रु की सेना से कहीं कम थी पर उन्होंने खतरा उठा कर साहस के साथ रणदुन्दुभी बजा दी। फिर तो महा भयानक युद्ध आरम्भ हुआ। क्रान्ति-सेना को गहरी क्षति उठानी पड़ी फिर भी वह अपने प्रयत्न में डटी रही। प्राय दो महीने तक यह युद्ध होता रहा। इस बीच कई बार क्रान्ति सेना को क्षणिक सफलता मिली और वह नाङचङ्ग में प्रविष्ट हुई पर बार-बार उसे सङ की सेना ने निकाल बाहर किया और नाङचङ्ग पुन छीन लिया।

एक बार तो च्याङ हताश हो गये और नाङचङ्ग विजय की आशा छोड़ बैठे। कुछ दिनों के लिए उन्होंने युद्ध भी बन्द कर [illegible] पर उनके समान दृढ़ प्रकृति का व्यक्ति इतनी जल्दी [illegible] से अपने निर्धारित पथ से विचलित नहीं हुआ करता। [illegible] दिनों [illegible] उन्होंने पुन प्रयास आरम्भ किया। इस बार ना[illegible] [illegible] न करके पहले कुइक्याङ्ग को

लेने की ठानी। यही वह गढ़ था जिससे मिलने वाली सहायता पर सङ की सेना नाङ्चाङ में डटी हुई थी। क्याङ्ई सामरिक व्यूह रचना के आचार्य हैं। आज भी जब वे जापान की महती प्रचंड सैनिक शक्ति के छक्के छुड़ा रहे हैं तो इसका कारण सैनिक व्यूह रचने में उनकी पारदर्शिता ही है। विदेशी सेनापति उनकी रण-चातुरी का लोहा मानते हैं। फलतः इसी बुद्धि से काम लेकर उन्होंने पहले कुइक्याङ् पर आक्रमण किया और उस पर अधिकार जमा लिया। इसके तुरन्त बाद ही बड़े वेग से उन्होंने नाङ्चाङ पर धावा बोला। अब सङ की सेना के लिए नगर को छोड़ कर हट जाने के सिवा दूसरा मार्ग ही न था। उनका न केवल आधार हाथ से निकल गया बल्कि उन्हें चारों ओर से घिर जाने का भी भय हो गया। इस दशा में तो सर्वनाश के सिवा और कुछ बाकी न बचता। फलतः सङ की सेना नाङ्चाङ छोड़ कर पुयङ झील के पूरबी किनारे की ओर चली गयी और क्याङ की सेना नाङ्चाङ में बड़ी धूम धाम से प्रविष्ट हुई। इस युद्ध में भी किसानों, मजदूरों तथा छात्रों ने क्रान्ति सेना की बड़ी सहायता की थी। क्याङ्सी की सारी जनता बागी हो उठी थी। यदि ऐसा न हुआ होता तो क्याङ को इतनी जल्दी सफलता न मिलती और न सङ की भाँति प्रबल शत्रु की कमर टूटती। नाङ्चाङ के पतन का परिणाम यह हुआ कि सारा क्याङ्सी प्रान्त एक बार ही क्रान्ति-सेना के चरणों के नीचे आ गया।

नाङ्चाङ से भागती हुई सेना का बहुत बड़ा भाग कैद कर लिया गया। ६ डिवीजन सेना कब्जे में आगयी। उसके अस्त्र शस्त्र रखवा लिये गये। सैनिक या तो नष्ट कर दिये गये या छिन्न भिन्न होगये। क्याङ्सी पर राष्ट्रीय सरकार की पताका लहरा उठी। अब क्या पूछना था? विजयी वीर की प्रतिभा और उसकी प्रतिष्ठा के सामने सिर उठाने की हिम्मत किसी को भी नहीं होती। क्याङ सेना लेकर सङ के अन्य अधीन प्रान्तों पर अधिकार स्थापित करने के लिए आगे बढ़े। फूकेङ पर तो उन्होंने सहज ही अपना झंडा लहरा दिया। कोई उनका सामना करने भी नहीं आया। सङ का जो सेनापति फूकेङ में था वह क्याङ के आगमन की बात सुनकर बिना सामना किये ही उसे छोड़ कर भाग गया। सङ ने देखा कि आज अब कोई उसके साथ नहीं है तो पहले वह नाङ्किङ गया, पर वहाँ भी उसे खतरा दिखायी

दिया। फलत वह अपनी बची-खुची शक्ति लिये हुए चाङसोलिङ से जा मिला। चाङसोलिङ उत्तरी सैनिक सामन्तों में सबसे मुख्य और प्रबल था। अब वूपेई फू और सङ की पराजय देखकर उसने च्याङ्काई का सामना करने का निश्चय किया और उसके लिए तैयारी आरम्भ कर दी। पराजित वू पेई और सङच्वाङफाङ भी च्याङ का सामना करने के लिए चाङसोलिङ के यहाँ आ गये थे। अब ये सब मिलकर इस प्रबल शत्रु से भिड़ने की योजना बनाने लगे। तय यह हुआ कि वूपेई-फू सेना लेकर पुन हूपे और हुनान पर धावा करे और इस प्रकार च्याङ की शक्ति को विघटित करदें। दूसरी ओर सङ चेक्याङ के रास्ते फूकेङ पर आघात करे। यह योजना तो बनी पर कार्यान्वित न की जा सकी। यदि कार्यान्वित हो पाता तो च्याङ्काई के लिए भारी सङ्कट उपस्थित हो जाता। पर इन सेनापतियों के सैनिकों ने ही उसे चलने नहीं दिया। वू की सेना ने तो हूपे और हुनान पर आक्रमण करना अथवा अब और युद्ध में उतरना ही अस्वीकार कर दिया। सङ ने अपने कतिपय साथियों को मिलाकर उन्हें बड़े पद और भूप्रदेश देने का वादा करके चेक्याङ की ओर से च्याङ पर धावा किया। चेक्याङ प्रान्त च्याङ्काई का जन्म स्थान है। इस प्रान्त पर अधिकार स्थापित करना च्याङ के लिए एक प्रकार की भावुकता की बात हो गयी थी। बड़ी सावधानी के साथ वे यहाँ के युद्ध के संचालन में लगे थे। सङ ने धावा तो कर दिया पर सैनिकों की सहायता न प्राप्त कर सका। पराजित की सेना का नैतिक ह्रास हो जाता है। उसके हृदय में न बल रह जाता है और न उत्साह। सङ की सेना के सैनिक ही आपस में झगड़ने लगे और युद्ध में जाने से इनकार करने। फलस्वरूप च्याङ ने यकायक आक्रमण करके फूचाङ और इसके बाद हाङ चउ पर अपना अधिकार जमा लिया। सङ की सेना अस्त्रशस्त्र छोड़ कर पलायमान हुई और क्रान्तिवाहिनी उन्हें खदेड़ कर चेक्याङ की सीमा से बाहर कर आने में समर्थ। समस्त चेक्याङ अब च्याङ्काईशेक के अधीन हो गया।

अब तक दक्षिण की राष्ट्रीय सरकार की सेना ने अपने नेता च्याङ के संचालन में सात सौ मील की लम्बी यात्रा समाप्त कर ली थी। संख्या में अपने से कहीं अधिक बड़ी सेनाओं को बुरी तरह पीटती, नष्ट करती और विजय प्राप्त करती हुई यह सेना आँधी की

भाँति बढ़ी और कुछ ही महीना मे वह सफलता प्राप्त की जिसकी मिसाल दुनिया के सैनिक इतिहास में मुश्किल से मिलेगी। चीन में च्याङ की तूती बोलने लगी और उनकी सफलता ने उन्हें उन्नति के उच्च शिखर पर पहुँचा दिया। चेक्याङ मे एक बार पुन पराजित होकर सङ्चवाङफाङ अपनी सेना सहित चाङ्काउ की ओर हट गया। इसके बाद च्याङ्कई और आगे बढ़े। अन्न सङ के बचे हुए प्रान्तों के सेनापति ज्योंही च्याङ का आगमन सुनते उनके सामने आकर समर्पण कर देते और राष्ट्रीय सरकार की सत्ता स्वीकार कर लेते। इस प्रकार अङहवेई बिना युद्ध के ही क़ब्ज़े मे आ गया। क्रान्ति सेना की यह सफलता देखकर उत्तरी सरकार की जल सेना के सेना पति याङ शू-च्युङ भी अपनी समस्त सेना के साथ च्याङ से आ मिले और राष्ट्रीय जल सेना के जलधिपति हो गये। उनकी आज्ञा से जल-सेना ने क्रान्ति पताका फहरा दी।

इसके बाद च्याङ ने नाङ्किङ और पेकिङ की ओर क़दम उठाया। उन्होंने अपने सैनिकों को आज्ञा दी कि नाङ्किङ पर दस दिन के भीतर विजयी झंडा फहराना हमारा लक्ष्य है। वू हू नामक स्थान में राष्ट्रीय सेना एकत्र हुई और याङ्त्से नदी के दोनों तट की ओर से शहर की ओर बढ़ी। ऐसी ही दूसरी सेना चाङ्काउ की ओर से भी बढ़ी। राष्ट्रीय सेना के बढ़ाव को देखकर इन स्थानों के वर्तमान उत्तरी सैनिक बिना लड़े हुए भागने लगे और उसके लिए रास्ता छोड़ते गये। नाङ्किङ की ओर बढ़नेवाली सेना से शङ्घाई के लिए प्रत्यक्ष ख़तरा उत्पन्न हो गया था। शङ्घाई में विदेशियों की बस्तियाँ थीं। राष्ट्रीय सेना के आगमन का क्या परिणाम हो, क्या न हो, यह सोचकर विदेशियों की रक्षा के लिए विदेशी सेना तैयार होने लगी। कई हज़ार ब्रिटिश और अमेरिकन सिपाही तैयार हुए और बहुत से जापानी और फ्रांसीसी भी। इन सब देशों के सैनिकों की सेना विदेशी बस्ती की रक्षा के लिए उसकी सीमान्त पर तैनात की गयी। पर इस समय राष्ट्रीय सेना विदेशी सेना से किसी प्रकार की छेड़-छाड़ करना नहीं चाहती थी। च्याङ्कई अपने देश के देशद्रोहियों से निबटने में लगे हुए थे। विदेशियों से छेड़ छाड़ करके शक्तिमान राष्ट्रों से दुश्मनी मोल लेने और सदा के लिए चीन के भविष्य को अन्धकारमय बना देने की अदूरदर्शितापूर्ण नीति का आश्रय ग्रहण

करने को वे तैयार नहीं थे। फलत विदेशी सेना अपने स्थान पर चुपचाप खड़ी रह गयी। हाँ, भागने वाले उत्तरी सैनिकों की कुछ टुकड़ियाँ अवश्य भाग कर विदेशियों की बस्ती में घुस पड़ीं, जहाँ उन पर गोलियों की बौछार हुई। च्याङ चुपचाप बढ़ते गये और कब्जा करते हुए नानकिङ जा पहुँचे। २३ मार्च को सूचाउ पर उनका अधिकार हो गया और दूसरे ही दिन नानकिङ में उनकी सेना ने प्रवेश किया।

अगस्त सन् १९२८ में च्याङ्काई शेक ने काङ्चुङ से उत्तर की ओर प्रस्थान किया था। मार्च आते आते उन्होंने नानकिङ तक के प्रदेश पर राष्ट्रीय सरकार की सत्ता स्थापित कर दी। इस समय तक क्रांति सेना की न केवल सैनिक शक्ति की धाक जम गयी बल्कि जिन नैतिक आदर्शों को लेकर उसने शस्त्र उठाया था और युद्ध-काल में अपने जिस चरित्र का परिचय दिया था उसकी ओर चीन ही नहीं अपितु संसार की जनता का ध्यान भी आकृष्ट हुआ। चीन की जनता का उसकी ओर आकृष्ट होना तो स्वाभाविक था। जहाँ कहीं भी राष्ट्रीय सेना पहुँची वहाँ की जनता ने उसका स्वागत अपने उद्धारक के रूप में किया और यथासमय उसकी सहायता भी। पर इसके सिवाय चीन स्थित विदेशियों का, इच्छा न रहते हुए भी, राष्ट्रीय सैनिकों की नैतिकता, उनके उज्ज्वल चरित्र और आदर्श की पवित्रता को बाध्य होकर स्वीकार करना पड़ा। शङ्घाई के विदेशी समाचार पत्रों ने भी, जिनकी ध्वनि उत्तरी सैन्यवसत्तावादियों के पक्ष में ही रहा करती अनेक बार राष्ट्रीय सेना के भद्र व्यवहार की, जो वह पराजितों के प्रति किया करती थी, बार बार प्रशंसा की। उन पत्रों ने लिखा कि "राष्ट्रीय सेना जिस प्रकार का व्यवहार करती है उसकी प्रशंसा करने के सिवा हमारे लिए दूसरा चारा नहीं है। वह नगर की जनता को हानि नहीं पहुँचाती, यथासम्भव उनके जीवन में किसी प्रकार की बाधा उपस्थित नहीं करती और शहर में शान्ति स्थापित करती हुई आगे बढ़ती है। मजाल नहीं है कि कोई सैनिक किसी विजित प्रदेश के किसी नागरिक का अपमान करे अथवा किसी से कोई पदार्थ बिना मूल्य चुकाये लेले। वह पूर्णत नियन्त्रित और अनुशासित है। न कहीं लूट-पाट हो पाती है न अनावश्यक रक्तपात। वस्तुत जनता को उस से कोई भय नहीं होता। उसका चरित्र उत्कृष्ट है। वह जहाँ जाता है वहीं जनता उसपर मुग्ध हो जाती है।"

ये वाक्य हैं उन लोगों के जो राष्ट्रीय सरकार तथा उसकी सेना की ओर सहानुभूति नहीं रखते थे। वास्तव में वे विरोधी रहे और उसके विरोधियों की विजय चाहते थे। जो लोग च्याङ्कईशेक पर यह दोष लगाते हैं कि वे सैन्यसत्तावादी हैं और अपनी व्यक्तिगत सत्ता की स्थापना का यत्न करते रहे हैं, आँखें खोलकर उपर्युक्त टीका को पढ़ें। ऐसा व्यवहार किसी स्वार्थी महत्वाकाँक्षी के सैनिक, जो पशु बल का आश्रय लेकर अपनी प्रभुता स्थापित करने के निमित्त आगे बढ़ा रहे हों, नहीं कर सकते। इसके विपरीत उन उत्तरी विपक्षियों के विरुद्ध जिनके प्रति स्वदेशी पत्र सहानुभूति रखते थे वे शिकायत करने को बाध्य हुए। 'नार्थ चाइना डेली न्यूज' नामक समाचारपत्र ने लिखा—दक्षिणी सैनिक वूपेइ फू के सैनिकों के सर्वथा प्रतिकूल हैं। उत्तरी सामन्तों के सैनिक जाते हुए जनता को लूटते हैं, उन्हें तबाह करते और दंगा मचाते हैं। दूसरी ओर दक्षिणी हैं जिनका चरित्र ऊँचा है और जो एक तिनका भी दाम दिये बिना नहीं छूते।"

एक अँगरेज पत्रकार ने जो दक्षिणी सेना के साथ रहकर युद्ध स्थिति का अवलोकन किया करता था, लिखा है—"राष्ट्रीय सैनिक कभी लूट पाट नहीं करते। उत्तर के ग्रामीण और नागरिक इनके चरित्र को देखकर चकित हो जाते हैं क्योंकि उन्हें अपने शासकों के अब तक के व्यवहार के बिलकुल विपरीत अनुभव हो रहे हैं। ये नये सैनिक वस्तुतः जनता के ही सेवक हैं। वे उन्हीं में से हैं और उन्हीं में मिल जाते हैं। किसी स्थान पर अधिकार स्थापित करने के बाद ये वहाँ की जनता में कुछ घंटों में ही इस प्रकार हिलमिल जाते हैं मानों वहीं के हों। यही कारण है कि जहाँ भी इनका आगमन होता है वहीं इन्हें अभिनन्दन प्राप्त होता है। जनता इनका स्वागत करती है, हर तरह की सहायता पहुँचाती है, पथ-प्रदर्शन करती है और यथासम्भव उनका साथ देती है। वह अपने को राष्ट्रीय सरकार के अधीन मानने लगती है।"

ये कुछ वाक्य राष्ट्रीयसेना, उसके सेनापति और उसकी सरकार के स्वरूप पर प्रकाश डालते हैं। कतिपय विदेशी पत्रों के संवाददाता राष्ट्रीय सेना के साथ इस यात्रा में थे। उन्होंने अपने अपने देशों के समाचारपत्रों में जो विवरण छपाये उनसे सारे संसार का ध्यान चीन की ओर आकर्षित हुआ। सारे संसार ने देखा कि सुषुप्त चीन अब जागृत हो

रहा है और नवजीवन के हिलोरे ले रहा है। च्याङ्कईशेक की प्रतिष्ठा तो आकाश में पहुँच गयी। उनकी सेना संख्या में कम होते हुए भी विजय पर विजय प्राप्त करती गयी थी। उत्तर के सामन्तों के गढ़ एक के बाद दूसरे मटियामेट हो गये थे। जिन सैनिकों में चरित्र का बल नहीं था, जिनके सामने कोई लक्ष्य नहीं था, उत्प्रेरित करनेवाला कोई आदर्श नहीं था और एक सूत्र में बाँधने वाली कोई भावना नहीं थी, वे उनके सामने टिकते ही कैसे जो यह समझ कर आगे बढ़े थे कि वे किसी महायज्ञ में अपने हिस्से की आहुति डाल रहे हैं।

इस समय च्याङ्कई ने धीरे-धीरे जगत का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करना आरम्भ किया। संसार यह जानने के लिए उत्सुक हो उठा कि आखिर चीन में हो क्या रहा है और वहाँ जो घटनाएँ घट रही हैं उनका प्रच्छन्न रूप तथा निर्धारित लक्ष्य क्या है? विदेशी संवाददाताओं की भीड़ उनके पास एकत्र होने लगी और उनके वक्तव्य ले लेकर छापने लगी। चीन में यह युद्ध किसलिए हो रहा है? राष्ट्रीय-सेना का आदर्श क्या है? उसकी भावी नीति क्या होगी आदि प्रश्नों का स्पष्टीकरण करने के लिए उनसे प्रश्न पूछे जाने लगे।

ऐसे ही प्रश्नों के उत्तर में उन्होंने कई एक वक्तव्य दिये। इन वक्तव्यों से उस व्यक्ति के मत पर अच्छा प्रकाश पड़ता है जो आज चीन का विधाता है और उस राष्ट्र के नव निर्माण में सतत प्रयत्नशील। ऐसे ही एक वक्तव्य में वे कहते हैं "साम्राज्यवादी हमारे देश का आर्थिक शोषण करके अपने को श्रीसम्पन्न बनाने की चेष्टा कर रहे हैं। इसीलिए वे हमें जहाँ तक हो सके बन्धनों में जकड़े रहने का यत्न करते हैं। अपने विशेष अधिकारों और विशेष सुविधाओं के नाम पर वे हमारे ऊपर तरह-तरह के अत्याचार कर रहे हैं। इसी के परिणाम स्वरूप चीन के बन्दरगाहों पर उनका अधिकार स्थापित हुआ, विदेशी बस्तियाँ बनीं, अपने स्वार्थ के अनुकूल उन्होंने जकात के नियम बनाये, उसकी दर कायम की और असमान तथा अपमानजनक सन्धियाँ हमारे सिर मढ़ दीं। चीन का कच्चा माल चीन से बाहर भेजा गया और निर्मित पदार्थों को जबर्दस्ती इस देश में बेच कर यहाँ के उद्योग धन्धे नष्ट किये गये। जनता की क्रय-शक्ति नष्ट हुई और देश दरिद्र हुआ।"

[illegible] के लिए साम्राज्यवादियों ने देशद्रोही
सामन्तों [illegible] की और उन्हीं की इस कुनीति [illegible]

देश वर्षों से प्रचंड गृह युद्ध की आग में जल रहा है। उन्हीं के इशारे पर स्वार्थी सैन्यसत्तावादियों ने देश के हित की उपेक्षा करके जनता के भाग्य और भविष्य को नष्ट होने दिया। आज चीन विघातक चीनी सामन्तशाही और विनाशक विदेशी साम्राज्यवाद के चंगुल में फँसकर असहाय हो गया है।"

"राष्ट्रीय क्रान्ति का एक मात्र लक्ष्य यह है कि उन समस्त तत्वों का नाश किया जाय जो साम्राज्यवादी तथा सैन्यसत्तावादी कुव्यवस्था को बनाये रखने का कारण हो रहे हैं। साथ ही देश में ऐसी स्वतन्त्र और जनता की सच्ची सरकार स्थापित की जाय जो राष्ट्र के सम्मान और हित की रक्षा करे। यही डाक्टर सुन्यात सेन का आदर्श था जिन्होंने अपने अमूल्य जीवन की बलि इसी की पूजा में चढ़ा दी। आज उसी को पूरा करना मेरा भी लक्ष्य है। मैं साम्राज्यवादियों और सैन्यसत्तावादियों को सहोदर मानता हूँ। क्रान्ति की सफलता यदि होनी है तो चीन की भूमि को साम्राज्यवादी संसर्ग से मुक्त करने के लिए युद्ध करना ही होगा। इस लक्ष्य की पूर्ति की पहली सीढ़ी यह है कि उपर्युक्त ऐसे लोगों का ऐसा उन्मूलन किया जाय कि वे फिर अंकुरित भी न हो सकें। राष्ट्रीय सेना इसी काम में लगी हुई है। जिस दिन पूर्णांश में उसकी विजय हो जायगी उस दिन राष्ट्रीय सरकार का पहला काम यह होगा कि वह अपने सारे प्रभाव और सारी शक्ति को एकत्रित करके राष्ट्रीय सीमा के भीतर के तमाम विरोधियों को हटाये जिसमें जनता शान्तिपूर्वक अपनी स्वतन्त्रता का उपभोग कर सके और जनता के लिए जनता द्वारा जनता की सच्ची सरकार निर्मित हो सके।"

"विदेशों के सम्बन्ध में हमारी नीति यह होगी कि वे तमाम सन्धियाँ जो जबर्दस्ती हमारे गले उतारी गयी हैं फाड़ फेंकी जाँय और उनके स्थान पर समान पद पर स्थित होकर परस्पर की मित्रता और सहायता की नयी सन्धियाँ की जाँय।"

"इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय जगत में समान पद प्राप्त करके चीन अपने उत्पादन के साधनों को उन्नत कर सकेगा और आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ होगा। राष्ट्रीय उद्योग की उन्नति के द्वारा किसानों और मजदूरों की दशा उन्नत होगी और वे आनन्दपूर्ण जीवन यापन कर सकेंगे। उत्पादन के साधनों में उन्नति होने से मजदूरों के लिए अपने रहन सहन के ढंग को ऊँचा उठाना सम्भव होगा। कृषि की उन्नति से किसान

की क्रय शक्ति बढ़ायी जा सकेगी। देश को शिक्षित और सुसंस्कृत बनाने की हमारी पुकार कोरी बकवाद न रह जायगी क्योंकि राष्ट्र की आर्थिक दशा के सुधार के साथ साथ हम इस दशा में आवश्यक धन व्यय करने में समर्थ होंगे। शिक्षितों की बेकारी का सवाल उस समय स्वयमेव हल हो जायगा जब हम राष्ट्र निर्माण के काम में लगेंगे। असमान सन्धियों के लोप होने पर सारे देश में एक तरह का विधान और व्यवस्था परिचलित की जा सकेगी।"

"इसलिए आज हमारा पहला कर्त्तव्य यह है कि हम साम्राज्यवाद और सैन्यसत्तावाद का खातमा करें। राष्ट्रीय कल्याण की यही पहली शर्त है। राष्ट्र की दयनीय दशा तथा अन्तर्राष्ट्रीय जगत में उसकी अपमान-जनक स्थिति की जानकारी सदा हमारे हृदय में कील की तरह चुभती रहती है। इसे निकाल फेंकने के लिए ही हम उत्तर की ओर बढ़ रहे हैं। मुझे विश्वास है कि कोई यह न समझेगा कि हमारा प्रयत्न पहले की तरह अधिकार अथवा भूमि की भूख के शान्त करने के लिए है। जहाँ कहीं हम पहुँचेंगे वहाँ ईमानदारी के साथ उन सुधारों को कार्यान्वित करने की चेष्टा करेंगे जि हें डाक्टर सेन के वसीयतनामे के आधार पर हमारी पार्टी ने अपने कार्यक्रम में शामिल कर लिया है।"

यह कार्यक्रम यह है —

१—ज्यों ही यह युद्ध समाप्त होगा हम राष्ट्रीय सम्मेलन का संयोजन करेंगे और उसके एकत्र होते ही राष्ट्रीय प्रश्नों को हल किया जायगा। और फिर स्वतन्त्र चीन की एक राष्ट्रीय सरकार स्थापित की जायगी।

२—विदेशी राष्ट्रों के साथ असमान सन्धियाँ नष्ट कर दी जायँगी और उनके स्थान पर दूसरी सन्धियाँ, जो परस्पर के सम्मान के अनुकूल होंगी, की जायँगी। चीनी समुद्र में जो विदेशी जल सेना है तथा चीनी भूमि पर जो विदेशी स्थल-सेना है उसे तत्काल हट जाने के लिए कहा जायगा।

३—विदेशी नागरिकों के लिए चीन में जो विदेशी अदालतें हैं वे तोड़ दी जायँगी और विदेशियों के वे अधिकार जो चीनी राष्ट्राभिमान के प्रतिकूल हैं लुप्त कर दिये जायँगे। हम अपने हित के अनुकूल जकात के नियम बनायेंगे। अपने उन बन्दरगाहों को वापस लेलेंगे जो विदेशियों के कब्जे में हैं।

४—राष्ट्रीय सरकार की आज्ञा लिये बिना किसी विदेशी को कोई जायदाद रखने का न अधिकार होगा और न वह बैंक के नोट अथवा हुंडिया या वितरण कर सकेगा।

५—अपने देश में हम जनता की सच्ची सरकार स्थापित करेंगे जिसका संचालन जनता के हित में जनता के प्रतिनिधि करेंगे। देश की जनता को मिलने जुलने, भाषण करने तथा लिखने की पूरी स्वतन्त्रता होगी। धर्म के मामले में भी उसे पूरी स्वतन्त्रता रहेगी।

६—सरकारी आयका राष्ट्रीकरण होगा तथा कानूनों कर के सिवाय जनता से वसूल की जाने वाली दूसरी रकमों की वसूल करना रोक दिया जायगा। मालगुजारी की वसूली में जनता से पेशगी वसूली न की जा सकेगी और न सैनिक कार्यों के लिए गरीबों पर कोई टैक्स लगाया जायगा।

७—अकाल पीड़ित क्षेत्रों की लगान बिलकुल माफ कर दी जायगी। कर्ज के सूद की दर निश्चित कर दी जायगी।

८—अफीम की खेती, क्रय और बिक्री एकदम बन्द कर दी जायगी।

९—जनता और राष्ट्रीय सेना में सहयोग की स्थापना की जायगी। सेना के काम के लिए बेगार न ली जायगी और न पाठशालाओं तथा लोगों के घरों में कभी सैनिकों को टिकने की इजाजत रहेगी।

१०—सरकार उद्योग धन्धों की उन्नति के लिए आवश्यक धन व्यय करेगी तथा अकाल पीड़ितों की सहायता का प्रबन्ध करेगी।

११—मजदूरों, किसानों छात्रों तथा व्यापारियों के संगठनों को सरकार प्रोत्साहन प्रदान करेगी और उन्हीं संस्थाओं पर लगायी गयी सब रुकावटें दूर कर दी जाँयगी।

१२—प्रान्तों में स्वशासन पद्धति प्रचलित की जायगी। जनता में से ही जनता द्वारा प्रान्तों के गवर्नर तथा मजिस्ट्रेटों का निर्वाचन होगा। प्रत्येक नगर की अपनी निरीक्षक सभा होगी जो अपने यहाँ की शासन समिति के कामों की देख रेख किया करेगी।

१३—खेती की उन्नति के लिए आवश्यक प्रबन्ध किया जायगा। किसानों के रहन सहन में उन्नति की जायगी तथा लगान की दर निश्चित कर दी जायगी।

१४—कल-कारखानों के क़ानून हम बनायेंगे जिनमें मजदूरों की कम से कम मजदूरी की दर नियत कर दी जायगी। मजदूरों के शोषण बन्द करने के लिए हम पूरा प्रबन्ध करेंगे। बच्चे और महिलाएँ जो कारखानों में काम करती होंगी उनकी रक्षा और विद्याध्ययन का समुचित प्रबन्ध किया जायगा।

१५—देश में सर्वव्यापी शिक्षा के प्रसार के लिए सरकार विशेष रूप से प्रयत्न करेगी। इसकेलिए आवश्यक रकम खर्च की जायगी। छात्रों की फीस घटेगी और प्राइमरी स्कूलों के अध्यापकों के वेतन में वृद्धि होगी।

१६—सैनिकों में अनुशासन का भाव उत्पन्न किया जायगा और उनकी रहन-सहन उन्नत की जायगी। वृद्ध, निर्बल तथा घायल सैनिकों को अवकाश ग्रहण करते समय अच्छी रकम दी जायगी जिसमें वे आनन्दपूर्वक अपना जीवन यापन कर सकें।

१७—सरकारी नौकरों की तनख्वाह स्थिर कर दी जायगी।

१८—स्त्रियों को पुरुषों के समान ही अधिकार होंगे। वोट देने तथा पद ग्रहण करने का अधिकार उन्हें पुरुषों की भाँति ही होगा।

१९—हम देश की जन संख्या के आँकड़े एकत्र करेंगे। भूमि की हदबन्दी की जायगी। नगरों की रक्षा के लिए स्थानीय रक्षक दल संगठित किये जायँगे। आवागमन के लिए राजमार्गों का निर्माण किया जायगा। नदियों की बाढ़ से होने वाली तबाही को रोकने का इन्तज़ाम होगा तथा देश भर में एक ही प्रकार की मुद्रा चलायी जायगी।

२०—सरकार कल-कारखानों की स्थापना के लिए आर्थिक सहायता देगी तथा उत्पादन और उपयोग के सारे साधनों को उन्नत करेगी।

"हमारी सेना ने वूचाङ्ग आदि स्थानों पर अधिकार करके कई सैन्यसत्तावादियों को पराजित किया है। पर अभी जितना काम हुआ है उससे कहीं अधिक काम करने को बाकी है। देश की जनता का कर्तव्य है कि इस कार्य में सहायता दे और राष्ट्रीय क्रान्ति की पताका के नीचे आकर देश के प्रति अपने कर्तव्य का पालन करे। यदि जनता की सहायता हमें मिली तो हम अपने देश के शत्रु साम्राज्यवादियों और सैन्यसत्तावादियों को कुचलने में अवश्य समर्थ होंगे।"

च्याङ्कईशेक के इस वक्तव्य को विस्तार से इसलिए उद्धृत किया है कि चीन की राष्ट्रीय क्रान्ति का लक्ष्य समझने में सहायता मिले।

ऊपर के अनेक वाक्यों मे देश का सच्चा भक्त, राष्ट्र का नैष्ठिक पुजारी तथा जनता का वास्तविक प्रतिनिधि बोल रहा है। चीन की समस्याएँ क्या हैं तथा उन्हें हल करने के लिए राष्ट्रवादियों ने जो नीति ग्रहण की है उसका स्वरूप क्या है तथा भविष्य में राष्ट्र का निर्माण वे किस प्रकार करना चाहते हैं, आदि-आदि बातो पर उपर्युक्त वक्तव्य से अच्छा प्रकाश पडता है। हमारे देशवासियों के लिए तो उसका और अधिक महत्त्व है। विचार करके देखिये तो ज्ञात होगा कि चीन की और भारत की समस्याओं में विचित्र साम्य है। दोनों ही बहुत कुछ सीमा तक समान व्याधियो से पीडित हैं। चीन के विधाता अपने देश के प्रश्नों को किस प्रकार हल कर रहे हैं और भावी राष्ट्र के लिए क्या करना चाहते हैं यह सब भारतीयों को जानना चाहिए जो अपने देश में उसी प्रकार के काम में लगे हुए हैं। च्याङ्काईशेक के उपर्युक्त वक्तव्य को देख कर भी जो उन्हें आत्मरक्षी महत्वाकांक्षी अधिनायक सिद्ध करने की चेष्टा करे उसकी बुद्धि में विकार होने का सन्देह किया जाना ही चाहिए। स्पष्ट है कि वे साम्राज्यवादियों और सैन्यसत्तावादियों के कुचक्र से अपने देश को मुक्त करके राष्ट्रीय सत्ता की स्थापना चाहते और देश के शासन के लिए प्रजातन्त्रात्मक व्यवस्था की प्रतिष्ठा करने के लिए प्रयत्नशील थे।

जगत ने पूर्वी भूखण्ड में होने वाले इस नाटक को पहले महत्त्व नहीं दिया पर धीरे धीरे उसका ध्यान आकर्षित हुआ। पश्चिम के विभिन्न शोषक राष्ट्रों को ललकारते हुए तथा उनकी जानकारी के लिए ही च्याङ्काई ने यह बातें स्पष्ट रूप से कह दीं। पर अपना मन्तव्य स्पष्ट करते हुए भी इस समय उनकी नीति विदेशियों से छेड़ छाड करने की नहीं थी। राष्ट्रीय सरकार में न इतनी शक्ति थी और न इतना सामर्थ्य कि वह एक साथ ही देश के सैन्यसत्तावादियों तथा विदेशी साम्राज्यवादियों के साथ भिड जाती। इसके लिए तो बडी तैयारी की जरूरत थी और वह तैयारी कहाँ हुई थी? फलत बुद्धिमानी और दूरदर्शिता की बात यही थी कि विदेशियों को अलग छोड दिया जाता और इसका तनिक भी अवसर प्रदान न किया जाता कि वे उत्तरी सैन्यसत्तावादियों से होने वाले युद्ध में अपना हाथ डाल सकें। इन सैन्यसत्तावादियों को लेकर ही तो वे अपनी साम्राज्यवादी तिकडमें रचते रहते थे। उनकी स्वार्थ सिद्धि वे करते और साम्राज्यवादी उनकी सहायता करके उन अधिकार-लोलुपों के द्वारा

उनके ही देशवासियों का दमन कराते। इस नीति के द्वारा ही तो उन्होंने बार बार राष्ट्रवादियों के प्रयत्न को असफल बनाया। ये सैन्यसत्ता वादी साम्राज्यवादी कुनीति के आधार स्तम्भ थे। च्याङ्कई जानते थे कि एक बार यदि सैन्यसत्तावादियों का दमन कर दिया गया तो फिर चीन में साम्राज्यवादियों की दाल न गलेगी। वे किसके द्वारा अपनी कुचाल चल सकेंगे? साथ ही राष्ट्रीय सरकार यदि निष्कटक रूप से स्थापित हो गयी तो उसके बाद साम्राज्यवादियों से निबट लेना कठिन न होगा। इसलिए वे सम्प्रति साम्राज्यवादियों से बच-बचाकर केवल अपने देश-द्रोहियों के दमन में लगे हुए थे।

पर इसी समय एक भयावह दुर्घटना हो गयी। जिस समय राष्ट्रीय सेना ने नाङ्किङ्ग पर अपना अधिकार स्थापित किया उसी समय सहसा उस नगर के रहनेवाले विदेशियों पर कुछ लोगों ने धावा कर दिया। कतिपय विदेशी गोली से मार डाले गये, कई बुरी तरह घायल हुए और नगर में बाकायदा लूट पाट मच गयी। बहुत से विदेशी भाग कर एक छोटी सी पहाडी पर जा छिपे। इस पहाडी पर 'स्टैंडर्ड आयल कम्पनी' का कार्यालय था। उपद्रवियो ने पहाडी पर भी हमला किया। अमेरिकन और ब्रिटिश जल सेना के कुछ सैनिक वहाँ पहुँचे और उन्होंने किसी प्रकार उन त्रस्त विदेशियों को बचा कर अपने जहाजों पर पहुँचाया।

जब यह उपद्रव हो रहा था च्याङ्कई नाङ्किङ्ग में नहीं थे। वे किउङ्क्याङ्ग चले गये थे। पर वहाँ ज्योंही उन्होंने इस उपद्रव के फूट पड़ने की बात सुनी वे तुरत नाङ्किङ्ग के लिए रवाना हो गये। पर उनके पहुँचने के पूर्व ही यह सारा कांड होगया। नाङ्किङ्ग आते हुए च्याङ्कई रास्ते में शङ्घाई में उतर पडे। उनकी दूरदर्शक दृष्टि ने यह अनुमान कर लिया कि नाङ्किङ्ग में जो कुछ हुआ है वह शङ्घाई में अधिक बडे पैमाने पर हो सकता है, क्योंकि उस नगर मे विदेशियों की बस्ती कहीं अधिक है। शङ्घाई में उतर कर उन्होंने पहले इसके कि कोई दुर्घटना हो शान्ति का पूरा प्रबन्ध कर दिया। कहा जाता है कि वहाँ भी उपद्रव की तैयारी हो चुकी थी और च्याङ्कई यदि बुद्धिमानी और सावधानी से काम न लेते तो भयङ्कर उपद्रव होजाता। उन्होंने अपनी फुर्ती और दृढता से भारी अनर्थ होते होते बचालिया।

इस दुर्घटना से च्याङ्कई स्तब्ध रह गये। वे समझ

कोई छेड़ छाड़ न की जाय। वे जानते थे कि कहीं यदि ऐसा हो गया तो सारा किया कराया चौपट हो जायगा। क्योंकि प्रबल विदेशी राष्ट्रों की सारी शक्ति एक बहाना मिल जाने पर चीन पर टूट पड़ेगी और उसे कुचल कर धूल में मिला देगी। फिर राष्ट्रीय क्रान्ति की सारी योजना वृथा हो जायगी। पर उन्हीं के सैनिकों ने यह गलती कर कैसे दी? अब तक राष्ट्रीय सेना ने अपने चरित्र तथा अपनी अनुशासनप्रियता के कारण जो यश कमाया था वह सब व्यर्थ होता दिखायी पड़ा।

च्यांग ने लड़ाई में लगे हुए बीस स्वदेशी पत्रकारों के सामने नानकिंग की घटना पर दुःख प्रकट करते हुए कहा 'यहाँ जो कुछ हुआ उसकी पूरी जिम्मेदारी मैं अपने सिर लेता हूँ। मैं इस मामले की पूरी छानबीन करूँगा और यह वचन देता हूँ कि जो भी इस दुष्कर्म के लिए जिम्मेदार होगा उसे मैं दण्ड दूँगा। यदि राष्ट्रीय सेना के लोग इसमें सम्मिलित रहे होंगे तो उनमें से प्रत्येक दंड का भागी होगा। राष्ट्रीय सरकार की यह सुघोषित नीति है कि वह अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को सुलझाने के लिए राजनीतिक बातचीत और सलाह मशविरे से ही काम लेगी। वह शस्त्र उठा कर इन मामलों का निपटारा करना नहीं चाहती। राष्ट्रीय आन्दोलन का लक्ष्य और उसकी आकांक्षा यह है कि हम अन्तर्राष्ट्रीय जगत में समान पद के अधिकारी हों और स्वतन्त्र राष्ट्रों की पंक्ति में सब के समान स्थान पायें। कोई भी देश जो हमें समान पद प्रदान करने के लिए तैयार है हमारा मित्र है और हम उसके साथ मिल कर सलाह करने को तैयार हैं। जिन राष्ट्रों ने भूत में हमारे प्रति अन्याय किया है वे भी यदि इस समय हमारे साथ मित्रता का व्यवहार करें तो हम उनकी पुरानी करतूतों को भूल जाने के लिए तैयार हैं।'

इन वक्तव्यों की घोषणा करके च्यांगकाई ने स्थिति को सँभालना चाहा। इसका व्यापक प्रभाव भी पड़ा। च्यांग की सचाई पर विदेशियों ने विश्वास कर लिया और उन्हें मामले की जाँच पड़ताल करने का अवसर प्रदान करना उचित समझा। यद्यपि यह सब हुआ फिर भी विदेशी इस घटना से सशंक हो गये। हजारों विदेशी नानकिंग आदि से हट कर शंघाई की अन्तर्राष्ट्रीय बस्ती में सुरक्षित स्थान की खोज में चले गये। विदेशियों की सेना तैयार हुई। विदेशी जल सेना नगर के पास लंगर डाले आ खड़ी हुई। ब्रिटेन की जनता तो आवेश में आकर चीन

के विरुद्ध कार्रवाई करने की माँग भी पेश करने लगी, पर अमेरिका ने इस पर शान्ति से काम लेने का निश्चय किया और च्याङ्गईशेक की जाँच पड़ताल का परिणाम देखना उचित समझा। अन्त में ब्रिटेन को भी अमेरिका की बात माननी पड़ी। फलतः इस मामले को इस प्रकार शान्त किया गया और चीन विदेशियों की क्रोधाग्नि से बच गया।

कई सौ मील की यात्रा पर, युद्ध में सफलता प्राप्त कर और कतिपय देशद्रोहियों का दमन करने के बाद राष्ट्रीय सरकार की सत्ता की स्थापना करते तथा देश और विदेश में नव चीन की जागृति की दुन्दुभी बजाते हुए च्याङ्ग नाङ्किङ्ग पहुँचे थे। अब से पहले कोई दुर्घटना नहीं हुई थी। राष्ट्रीय सेना के सैनिक अपने नेता के इशारे पर उठते, बैठते और चलते थे। पर नाङ्किङ्ग में अनर्थ हो ही गया। यद्यपि चीन बाल बाल बचा पर च्याङ्गईशेक के कान खड़े हो गये। उन्होंने इस मामले की पूरा छानबीन करने का निश्चय कर लिया। उन्हें इसमें षडयन्त्र की गन्ध मिली। उन्होंने देखा कि परदे के पीछे से कोई ऐसा प्रभाव डाल रहा है जो न केवल उनके सैनिकों को बहका रहा है बल्कि चीन को झमेले में फँसाना चाहता है और अब तक के सारे किये कराये पर हरताल फेर देने की चेष्टा कर रहा है। इसलिए उन्होंने आगे बढ़ने के पूर्व नाङ्किङ्ग में बैठकर सारी परिस्थिति को साफ कर लेने का निश्चय किया।

सातवाँ अध्याय

दक्षिण में दो सरकारें

नाङ्किङ्ग की दुर्घटना च्याङ्गईशेक की आँखें खोल देने का कारण हो गयी। उन्होंने वहाँ पहुँच कर गहरी छानबीन की। कहा जाता है कि उन्हें इसके प्रमाण मिल गये कि यह घटना परिणाम थी कम्युनिस्टों के षडयन्त्र की जिसकी तैयारी वे पहले से कर रहे थे। शङ्घाई में भी जाँच पड़ताल की गयी और वहाँ भी पता चला कि षडयन्त्र की तैयारी कम्यूनिस्टों की ओर से की गयी थी। कम्यूनिस्टों का तो कहना है कि उन पर जो इलजाम लगाये जाते हैं वे झूठे और बनावटी हैं।

यह घोषणा करते हैं कि च्याङ्कईशेक स्वयम् अपनी सत्ता स्थापित करने के लिए कम्यूनिस्टों को अपने मार्ग से हटाना चाहते थे। वे अनुभव कर रहे थे कि जब तक कम्युनिस्ट रहेंगे तब तक वे अपनी तिकड़म में सफल न होंगे। अत नान्किङ्ग की दुघटना को बहाना बनाकर उन्होंने उनके विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया और निर्दोष तथा देश की जनता के सच्चे हितैषी और वास्तविक क्रान्तिकारियों के खून से अपने हाथ रँगे।

कम्यूनिस्टों के इस कथन में कहाँ तक सत्य है यह तो वे ही जानें पर इतना स्पष्ट है कि च्याङ्कइशेक का जीवन उन पर किये गये इन आक्षेपों की निरर्थकता तथा निराधारता सिद्ध करता है कि वे महत्वाकांक्षी अधिनायक बन जाने की चेष्टा कर रहे थे। आज चीन के प्रति उनकी सेवाओं का जो जानता है वह उसके मूल्य का आँकने की कोई कल्पना नहीं कर सकता। जो हो इस क्षण से च्याङ्कई शेक और चीन के कम्यूनिस्टो के बीच वह खाई खड़ी हो गयी जो बरसों तक देश में सघर्ष, अशान्ति और रक्तपात का कारण बनी रही। उनका तथा उनके समर्थकों का कहना है कि नान्किङ्ग में जो सभा की गयी थी उसके राजनीतिक विभाग के मुखिया कम्यूनिस्ट पार्टी के सदस्य लिङ शू इक थे। वे रातदिन तथा कम्यूनिस्ट पार्टी के इशारे से काम किया करते थे। इन कम्यूनिस्टों का जब यह मालूम हुआ कि च्याङ्कइ अभी नान्किङ्ग में मौजूद नहीं है तो उन्होने यह निश्चय किया कि किसी प्रकार च्याङ्कइ को विदेशी राष्ट्रों के सम्मुख बदनाम किया जाय और ऐसी खुराफात मचायी जाय कि च्याङ्कई की सारी प्रतिष्ठा धूल में मिल जाय। इस निश्चय के अनुसार लिङ शू इक का कम्यूनिस्ट पार्टी की ओर से आज्ञा दी गयी कि वह अपने विभाग के द्वारा नान्किङ्ग में रहने वाले विदेशियों के विरुद्ध उपद्रव मचवा दे। लिङ शू [illegible] एक ब्रिगेड के कमांडर को इस काम के लिए राजी भी कर लिया और सहसा उपद्रव मचा दिया गया।

नहीं कहा जा सकता कि कम्यूनिस्टों पर लगाये गये इस आक्षेप में सत्य का अंश कितना है। च्याङ्कइ शेक ने जाँच करने के बाद जो प्रमाण प्राप्त किये व कहाँ तक ठोस थे और कहाँ तक सन्देहजनक, फिर भी कम्यूनिस्टों के प्रति उनका विरोधी भाव इस बात का स्वीकार कर लेने के लिए कितना उत्तरदायी है यह भी नहीं कहा जा सकता। पर इतना अवश्य स्पष्ट है कि कम्यूनिस्ट विदेशियों के प्रति विपाक्त प्रचार किया

करते और उनके विरुद्ध आग उगलते हुए जनता को उभाड़ा करते थे। वे बहुधा अपनी उग्रवादिता में उचित अनुचित का विचार किये बिना ही ऐसी बातें कहा करते जो नीति की दृष्टि से घोर अदूरदर्शितापूर्ण हुआ करतीं। चीन को तैयार किये बिना विदेशियों के विरुद्ध युद्ध छेड़ देने की उनकी माँग भी ऐसी ही थी।

सम्भव है उनके इस प्रचार का ही यह प्रभाव हुआ हो कि नाङ्किङ में यकायक यह दुघटना हो गया। यदि बात इतनी ही हो तो कम्यूनिस्टों पर ग़लत नीति बरतने का दोष भले ही लगाया जाय पर जान बूझ कर राष्ट्रीय सरकार तथा च्याङ के विरुद्ध षडयन्त्र रचने का आक्षेप तो नहीं किया जा सकता। पर नाङ्किङ की घटना के कारण च्याङ्कइ क्षुब्ध हो गये और यह जान कर कि जो उपद्रव हुए उनमें कम्यूनिस्टों का हाथ था और वे ही उसके लिए ज़िम्मेदार थे उन्होंने उनके विरुद्ध कड़ी कार्रवाई करने का निश्चय किया। कम्यूनिस्ट नेताओं के अधीन उनकी जो सैनिक टुकड़ियाँ थीं उन्हें निशस्त्र करने की आज्ञा दे दी गयी। कम्यूनिस्टों ने इसका प्रतिवाद किया जिसके फलस्वरूप संघर्ष हो गया और झगड़े में कुछ आदमी भी मारे गये। अब एक सैनिक विद्रोह का स्वरूप उत्पन्न हो गया। च्याङ ने विद्रोहियों का दमन करके उन्हें गिरफ्तार कर लेने की आज्ञा दी। लिङशू हङ भाग खड़े हुए। बाक़ी गिरफ्तार किये गये और उन्हें कड़ा दंड दिया गया। च्याङ ने शङ्घाई के कम्यूनिस्टों की संस्थाओं पर भी धावा किया और बहुत से लोग गिरफ्तार किये गये। धर पकड़ के प्रतिवाद में गोलियाँ चलीं और दोनों ओर के लोग मरे। तब च्याङ ने सैनिक शासन की घोषणा कर दी। कम्यूनिस्ट कार्यकर्ता शङ्घाई छोड़ कर भागे। धीरे धीरे यह बात फैल गयी कि कम्यूनिस्टों ने राष्ट्रीय सरकार के विरुद्ध षडयन्त्र रचा और च्याङ की राष्ट्रीय सेना में विद्रोह उत्पन्न कराने की चेष्टा की।

च्याङ के प्रति लोगों के हृदय में आदर का भाव उत्पन्न हो चुका था। इस समाचार से लोगों की सहज सहानुभूति उनकी ओर अधिक हो गयी। मध्यम तथा उच्चश्रेणी के लोग जो कम्यूनिस्ट नीति के विरोधी थे यह देखकर कि च्याङ ने खुल्लम खुल्ला उनके विरुद्ध क़दम उठाया है उनकी ओर आकर्षित हुए और उनकी सहायता करने के लिए आगे बढ़े। कुओमिङ्ताङ का दक्षिणपक्ष प्रसन्नतापूर्वक च्याङ के साथ हो गया। उन्हें यह देखकर शान्ति प्राप्त

यह घोषणा करते हैं कि च्याङ्कईशेक स्वयम् अपनी सत्ता स्थापित करने के लिए कम्यूनिस्टों को अपने मार्ग से हटाना चाहते थे। वे अनुभव कर रहे थे कि जब तक कम्यूनिस्ट रहेंगे तब तक वे अपनी तिस्क्रम में सफल न होंगे। अतः नाङ्किङ्ग की दुर्घटना को बहाना बना कर उन्होंने उनके विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया और निर्दोष तथा देश की जनता के सच्चे हितैषी और वास्तविक क्रान्तिकारियों के खून से अपने हाँथ रँगे।

कम्यूनिस्टों के इस कथन में कहाँ तक सत्य है यह तो वे ही जानें पर इतना स्पष्ट है कि च्याङ्कइशेक का जीवन उन पर किये गये इन आक्षेपों की निरर्थकता तथा निराधारता सिद्ध करता है कि वे महत्वाकांक्षी अधिनायक बन जाने की चेष्टा कर रहे थे। आज चीन के प्रति उनकी सेवाओं का जो जानता है वह उनके मूल्य को आँकने की कोई कल्पना नहीं कर सकता। जो हो इस क्षण से च्याङ्कईशेक और चीन के कम्यूनिस्टों के बीच वह खाई खड़ी हो गया जो बरसों तक देश में संघर्ष, अशान्ति और रक्तपात का कारण बनी रही। उनका तथा उनके समर्थकों का कहना है कि नाङ्किङ्ग में जो सभा की गयी थी उसके राजनीतिक विभाग के मुखिया कम्यूनिस्ट पार्टी के सदस्य लिन शू ह्न थे। वे बारादिन तथा कम्यूनिस्ट पार्टी के इशारे से काम किया करते थे। इन कम्यूनिस्टों को जब यह मालूम हुआ कि च्याङ्कई अभी नाङ्किङ्ग में मौजूद नहीं हैं तो उन्होंने यह निश्चय किया कि किसी प्रकार च्याङ्कई को विदेशी राष्ट्रों के सम्मुख बदनाम किया जाय और ऐसी खुराफात मचायी जाय कि च्याङ्कई की सारी प्रतिष्ठा धूल में मिल जाय। इस निश्चय के अनुसार लिन शू-ह्न को कम्यूनिस्ट पार्टी की ओर से आज्ञा दी गयी कि वह अपने विभाग के द्वारा नाङ्किङ्ग में रहने वाले विदेशियों के विरुद्ध उपद्रव मचवा दे। लिन शू ने एक ब्रिगेड के कमांडर को इस काम के लिए राजी भी कर लिया और सहसा उपद्रव मचा दिया गया।

नहीं कहा जा सकता कि कम्यूनिस्टों पर लगाये गये इस आक्षेप में सत्य का अंश कितना है। च्याङ्कईशेक ने जाँच करने के बाद जो प्रमाण प्राप्त किये वे कहाँ तक ठोस थे और कहाँ तक सन्देहजनक, फिर भी कम्यूनिस्टों के प्रति उनका विरोधी भाव इस बात को स्वीकार कर लेने के लिए कितना उत्तरदायी है यह भी नहीं कहा जा सकता। पर इतना अवश्य स्पष्ट है कि कम्यूनिस्ट विदेशियों के प्रति विषाक्त प्रचार किया

करते और उसके विरुद्ध आग उगलते हुए जनता को उभाड़ा करते थे। वे बहुधा अपनी उग्रवादिता में उचित अनुचित का विचार किये बिना ही ऐसी बातें कहा करते जो नीति की दृष्टि से घोर अदूरदर्शितापूर्ण हुआ करतीं। फौज को तैयार किये बिना विदेशियों के विरुद्ध युद्ध छेड़ देने की उनकी माँग भी ऐसी ही थी।

सम्भव है इनके इस प्रचार का ही यह प्रभाव हुआ हो कि नान्किंग में यकायक यह दुर्घटना हो गयी। यदि बात इतनी ही हो तो कम्यूनिस्टों पर ग़लत नीति बरतने का दोष भले ही लगाया जाय पर जान बूझ कर राष्ट्रीय सरकार तथा च्याङ्ग के विरुद्ध षड्यन्त्र रचने का आक्षेप तो नहीं किया जा सकता। पर नान्किङ्ग की घटना के कारण च्याङ्गकाई क्षुब्ध हो गये और यह जान कर कि जो उपद्रव हुए उनमें कम्यूनिस्टों का हाथ था और वे ही उसके लिए जिम्मेदार थे उन्होंने उनके विरुद्ध कड़ी कार्रवाई करने का निश्चय किया। कम्यूनिस्ट नेताओं के अधीन इनकी जो सैनिक टुकड़ियाँ थीं उन्हें निरस्त्र करने की आज्ञा दे दी गयी। कम्यूनिस्टों ने इसका प्रतिवाद किया जिसके फलस्वरूप संघर्ष हो गया और झगड़े में कुछ आदमी भी मारे गये। अब एक सैनिक विद्रोह का स्वरूप उत्पन्न हो गया। च्याङ्ग ने विद्रोहियों का दमन करके उन्हें गिरफ्तार कर लेने की आज्ञा दी। लिडरशू हुड भाग खड़े हुए। बाकी गिरफ्तार किये गये और उन्हें कड़ा दंड दिया गया। च्याङ्ग ने शङ्घाई के कम्यूनिस्टों की संस्थाओं पर भी धावा किया और बहुत से लोग गिरफ्तार किये गये। धर पकड़ के प्रतिवाद में गोलियाँ चलीं और दोनों ओर के लोग मरे। तब च्याङ्ग ने सैनिक शासन की घोषणा कर दी। कम्यूनिस्ट कार्यकर्ता शङ्घाई छोड़ कर भागे। धीरे धीरे यह बात फैल गयी कि कम्यूनिस्टों ने राष्ट्रीय सरकार के विरुद्ध षड्यन्त्र रचा और च्याङ्ग की राष्ट्रीय सेना में विद्रोह उत्पन्न कराने की चेष्टा की।

च्याङ्ग के प्रति लोगों के हृदय में आदर का भाव उत्पन्न हो चुका था। इस समाचार से लोगों की सहज सहानुभूति उनकी ओर अधिक हो गयी। मध्यम तथा उच्चश्रेणी के लोग जो कम्यूनिस्ट नीति के विरोधी थे यह देखकर कि च्याङ्ग ने खुल्लम खुल्ला उनके विरुद्ध क़दम बढ़ाया है उनकी ओर आकर्षित हुए और उनकी सहायता करने के लिए आगे बढ़े। कुओमिङताङ्ग का दक्षिणपक्ष प्रसन्नतापूर्वक च्याङ्ग के साथ हो गया। उन्हें यह देखकर -

हुई कि यह च्याङ्कई जो सदा कम्यूनिस्टों को मिला कर काम करने के लिए जोर दिया करते थे अन्त में अपने उन्हीं साथियों से धोखा खा गए और आज वही करने को बाध्य हुए जिसके लिए वे लोग बहुत पहले से जोर दे रहे थे।

कम्यूनिस्टों ने भी अब खुल्लम-खुल्ला च्याङ्कई के विरुद्ध आवाज उठाया। कुओमिन्ताङ्ग का वाम पक्ष उनका साथी था। कम्यूनिस्टों के लिए उचित यह था कि वे अपनी गलती स्वीकार करते वहाँ उन्होंने च्याङ्कई को स्वार्थी, सैन्यसत्तावादी, और साम्राज्यवादियों तथा विदेशी पूँजीपतियों का गुलाम कह कर प्रचार करना शुरू किया और फौजी तथा पुलिस अफसरों को उनके विरुद्ध विद्रोह करने के लिए उभाड़ने लगे। इन लोगों ने हाङ्कङ में अपना अड्डा बनाया और अपने प्रचार तथा षड्यन्त्र में लग गए। खेद है कि चीनी कम्यूनिस्टों में च्याङ्कई शेक को मिला कर काम करने की बुद्धि और सामर्थ्य नहीं रहा, अन्यथा चीन का सारा इतिहास ही आज दूसरा हो गया होता। उन्होंने च्याङ को समझा नहीं और अपने दल की प्रभुता की स्थापना के फेर में पड़ कर अपनी तथा देश की अपरिमित हानि की। यह स्पष्ट है कि च्याङ्कई शेक कुओमिन्ताङ्ग के दोनों पक्षों को मिला कर काम करने की चेष्टा उस समय तक बराबर करते रहे जब तक अन्तिम रूप से कम्यूनिस्टों से उनका झगड़ा नहीं हो गया। कुओमिन्ताङ्ग में वे सदा इस बात पर जोर देते रहे कि दक्षिणपक्ष वामपक्ष को मिलाये रखने के लिए राजी हो जाय। उन्होंने पार्टी की बैठक में वक्तव्य देते हुए एक बार साफ साफ कहा था "हम अपनी स्वतन्त्रता के लिए लड़ रहे हैं। हम न किसी देश के विरोधी हैं और न किसी के पक्षपाती। हम पर अभियोग लगाया जाता है कि हम रूस के पक्षपाती और ब्रिटेन के विरोधी हैं। यह बात भी सही नहीं है। हमारी स्वतन्त्रता की लड़ाई में जो सहायक है हम उसके मित्र हैं। हम किसी भी ऐसे देश के पक्षपाती हैं जो हमारी आकांक्षा की पूर्ति में हमारी सहायता करता है। अपने आदर्श को प्राप्त करने के लिए हमें अपने मतभेदों और दलबन्दियों को एक ओर छोड़ कर काम करना होगा। हमारा कर्तव्य है कि हम सब एक होकर, स्नेह और सहयोग के आधार पर अपने देश के उद्धार में लग जाँय। हमारी सफलता का यही एक मात्र उपाय है।"

इस वक्तव्य से स्पष्ट है कि उन्होंने दक्षिणपक्ष वालों के आक्षेप का

उत्तर दिया था और मिलजुल कर काम करने की अपील की थी। उनके समान प्रबल तथा प्रभावशाली व्यक्ति को मिला कर तथा उनकी प्रतिभा से लाभ उठा कर यदि चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी ने काम करने की क्षमता दिखायी होती तो कदाचित वे अपने लक्ष्य में अधिक सफल हुए होते। पर वे तो दास थे अपने उस पुराने सिद्धान्त के कि 'बुर्जुआ लीडरों' का प्रभाव बढ़ने के पहले उनके विरुद्ध प्रचार करके उन्हें गिरा देने ही से कम्यूनिस्टों की प्रभुता स्थापित हो सकती है। इसी दुर्नीति ने उन्हें च्याङ को अपना शत्रु बना लेने के लिए प्रेरित किया। ऐसे समय जब च्याङ नव चीनी राष्ट्र के प्रतीक बन रहे थे कम्यूनिस्टों ने उनके बढ़ते हुए प्रभाव का नष्ट करने के लिए प्रयत्न आरम्भ कर दिया। परिणामतः दोनों में मनमुटाव बढ़ता गया।

च्याङ्ग ने देखा कि उनकी अनुपस्थिति में काङतुङ में भी उनके विरुद्ध कम्यूनिस्टों का षड्यन्त्र चल रहा था। इस स्थिति से बचने के लिए उन्होंने अपनी सरकार को यह राय दी कि वह काङतुङ छोड़ कर यूवाङ्ग चली जाय और वहाँ नयी राजधानी कायम की जाय। च्याङ का विचार था कि यूचाङ्ग में सरकार के चले आने पर वे भी उसके सान्निध्य में रह सकेंगे। बहुत वादविवाद के बाद काङतुङ सरकार ने प्रस्ताव स्वीकार कर लिया और नयी राजधानी स्थापित की गयी। फलतः काङतुङ सरकार के अधिकतर प्रसिद्ध और प्रमुख सदस्य नयी राजधानी में चले गये। पर इसके बाद भी च्याङ-विरोधी प्रचार जारी रहा। इस प्रचार के मुख्य नेता बोरोदिन साहब थे जिनसे सभी कम्यूनिस्ट मुखिया उत्प्रेरणा प्राप्त करते रहे। हाङ्काङ में धीरे-धीरे इनका बल बढ़ता गया। कुओमिङताङ्ग में भी वामपक्ष का बल बढ़ने लगा और उस पर क्रमशः अपना प्रभाव स्थापित करने की चेष्टा होती रही। च्याङ ने जब यह देखा कि उन्हें सैनिक कार्यों से इतना अवकाश नहीं मिलता कि वे इस ओर अधिक ध्यान दें और यूचाङ्ग में भी कम्यूनिस्ट, जिनका एक मात्र काम अपने दल की प्रभुता स्थापित करना और च्याङ विरोधी प्रचार करना है, अपना प्रभाव बढ़ाते जा रहे हैं, तो उन्होंने यह प्रश्न उठाया कि यूचाङ्ग से भी हटा कर सरकार का कार्यालय नाङ्किङ्ग लाया जाय। वामपक्षियों की ओर से च्याङ के इस प्रस्ताव का प्रबल विरोध आरम्भ हुआ।

च्याङ ने १ ली मार्च सन् १९२७ को कुओमिङताङ्ग की केन्द्रीय

हुई कि यह ल्याङ्कई जो सदा कम्यूनिस्टों को मिला कर काम करने के लिए जोर दिया करते थे अन्त में अपने उन्हीं साथियों से धोखा खा गये और आज वही करने को बाध्य हुए जिसके लिए वे आज बहुत पश्चात्ताप कर रहे थे।

कम्यूनिस्टों ने भी अब खुल्लम-खुल्ला ल्याङ्कई के विरुद्ध आवाज उठाया। कूआमिन्ताङ्ग का वाम पक्ष उनका साथी था। कम्यूनिस्टों के लिए जहाँ उचित यह था कि वे अपनी गलती स्वीकार करते वहाँ उन्होंने ल्याङ्कई को स्वार्थी, सैन्यवादी, और साम्राज्यवादियों तथा विदेशी पूँजीपतियों का गुलाम कह कर प्रचार करना शुरू किया और फौजी तथा मुल्की अफसरों को उनके विरुद्ध विद्रोह करने के लिए उभाड़ने लगे। इन लोगों ने हांकऊ में अपना अड्डा बनाया और अपने प्रचार तथा षड्यन्त्र में लग गये। खेद है कि चीना कम्यूनिस्टों में ल्याङ्कई शेक को मिला कर काम करने की बुद्धि और साहस नहीं रहा, अन्यथा चीन का सारा इतिहास ही आज दूसरा हो गया होता। उन्होंने ल्याङ्क को समझा नहीं और अपने दल की प्रभुता की स्थापना के फेर में पड़ कर अपनी तथा देश की अपरिमित हानि की। यह स्पष्ट है कि ल्याङ्कई शेक कूआमिन्ताङ्ग के दोनों पक्षों को मिला कर काम करने की चेष्टा उस समय तक बराबर करते रहे जब तक अन्तिम रूप से कम्यूनिस्टों से उनका झगड़ा नहीं हो गया। कूओमिङ्ताङ्ग में वे सदा इस बात पर जोर देते रहे कि दक्षिणपक्ष वामपक्ष को मिलाये रखने के लिए राजी हो जाय। उन्होंने पार्टी की बैठक में वक्तव्य देते हुए एक बार साफ-साफ कहा था "हम अपनी स्वतन्त्रता के लिए लड़ रहे हैं। हम न किसी देश के विरोधी हैं और न किसी के पक्षपाती। हम पर अभियोग लगाया जाता है कि हम रूस के पक्षपाती और ब्रिटेन के विरोधी हैं। यह बात भी सही नहीं है। हमारी स्वतन्त्रता की लड़ाई में जो सहायक है हम उसके मित्र हैं। हम किसी भी ऐसे देश के पक्षपाती हैं जो हमारी आकांक्षा की पूर्ति में हमारी सहायता करता है। अपने आदर्श को प्राप्त करने के लिए हमें अपने मतभेदों और दलबन्दियों को एक ओर छोड़ कर काम करना होगा। हमारा कर्तव्य है कि हम सब एक होकर, स्नेह और सहयोग के आधार पर अपने देश के उद्धार में लग जाँय। हमारी सफलता का यही एक मात्र उपाय है।"

इस वक्तव्य से स्पष्ट है कि उन्होंने दक्षिणपक्ष वालों के आक्षेप का

उत्तर दिया था और मिलजुल कर काम करने की अपील की थी। उनके समान प्रबल तथा प्रभावशाली व्यक्ति को मिला कर तथा उनकी प्रतिभा से लाभ उठा कर यदि चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी ने काम करने की क्षमता दिखायी होती तो कदाचित वे अपने लक्ष्य में अधिक सफल हुए होते। पर वे तो दास थे अपने उस पुराने सिद्धान्त के कि 'बुर्जुआ लीडरों' का प्रभाव बढने के पहले उनके विरुद्ध प्रचार करके उन्हें गिरा देने ही से कम्यूनिस्टों की प्रभुता स्थापित हो सकती है। इसी दुर्नीति ने उन्हें च्याङ को अपना शत्रु बना लेने के लिए प्रेरित किया। ऐसे समय जब च्याङ नव चीनी राष्ट्र के प्रतीक बन रहे थे कम्यूनिस्टों ने उनके बढ़ते हुए प्रभाव का नष्ट करने के लिए प्रयत्न आरम्भ कर दिया। परिणामत दोनों में मनमुटाव बढता गया।

च्याङ्ने ने देखा कि उनकी अनुपस्थिति में काङतुङ में भी उनके विरुद्ध कम्यूनिस्टों का षडयन्त्र चल रहा था। इस स्थिति से बचने के लिए उन्होंने अपनी सरकार को यह राय दी कि वह काङतुङ छोड कर यूचाङ्ग चली जाय और वहाँ नयी राजधानी कायम की जाय। च्याङ का विचार था कि यूचाङ्ग में सरकार के चले जाने पर वे भी उसके सान्निध्य में रह सकेंगे। बहुत वादविवाद के बाद काङतुङ सरकार ने प्रस्ताव स्वीकार कर लिया और नयी राजधानी स्थापित की गयी। फलत काङतुङ सरकार के अधिकतर प्रसिद्ध और प्रमुख सदस्य नयी राजधानी में चले गये। पर इसके बाद भी च्याङ विरोधी प्रचार जारी रहा। इस प्रचार के मुख्य नेता बोरोदिन साहब थे जिनसे सभी कम्यूनिस्ट मुखिया उत्प्रेरणा प्राप्त करते रहे। हाङ्काई में धीरे धीरे इनका बल बढता गया। क्वाङ्सिङ्ताङ्ग में भी वामपक्ष का बल बढने लगा और उस पर क्रमश अपना प्रभाव स्थापित करने की चेष्टा होती रही। च्याङ ने जब यह देखा कि उन्हें सैनिक कार्यों से इतना अवकाश नहीं मिलता कि वे इस ओर अधिक ध्यान दें और यूचाङ्ग में भी कम्यूनिस्ट, जिनका एक मात्र काम अपने दल की प्रभुता स्थापित करना और च्याङ-विरोधी प्रचार करना है, अपना प्रभाव बढाते जा रहे हैं, तो उन्होंने यह प्रश्न उठाया कि यूचाङ्ग से भी हटा कर सरकार का कार्यालय नाङ्किङ्ग लाया जाय। वामपक्षियों की ओर से च्याङ के इस प्रस्ताव का प्रबल निरोध आरम्भ हुआ।

च्याङ ने १ ली मार्च सन् १९२७ को क्वाङ्सिङ्ताङ्ग की केन्द्रीय

समिति की बैठक नानचाङ में बुलायी थी। कम्यूनिस्टों की ओर से इस प्रस्ताव का विरोध करते हुए च्याङ्ग्काई को कड़ी बातें सुनायी गयीं और खुल्लमखुल्ला उन्हें च्याङ्ग्सोलिङ्ग तथा यू पेई फू से भी निम्न श्रेणी का मध्यस्थतावादी और अवसर ताकने वाला घोषित किया गया। कम्यूनिस्टों ने जोर लगा कर यह प्रस्ताव स्वीकार करवाया कि केन्द्रीय समिति की बैठक १० मार्च को हाङ्काउ में हो। कूओमिंगताङ्ग के सदस्यों में से कुछ ने झगड़ा न बढ़ाने की दृष्टि से कम्यूनिस्टों के प्रस्ताव को मंजूर कर लिया। च्याङ्ग ने इस बैठक में भाग लेना अस्वीकार कर दिया। फिर भी अधिवेशन हुआ। इसमें कम्यूनिस्ट पार्टी के सदस्यों का बहुमत था जो सब बातें निश्चित करके आया था। उनके अधिकांश प्रस्तावों का आशय यह था कि च्याङ्ग कूओमिंगताङ्ग की सभी समितियों से निकाल दिये जायें और मामूली सैनिक अधिकारी के रूप में रहें। इसके सिवा उन नियमों को खातमा कर दिया जाय जिनके अनुसार कूओमिंगताङ्ग में कम्यूनिस्ट पार्टी के सदस्यों की संख्या निर्धारित की गयी है। इस प्रकार अपने मत के प्रस्ताव स्वीकार कराके उन्होंने समिति पर अपना पूरा अधिकार स्थापित कर लिया। शुचेहङ नामक कम्यूनिस्टों के नेता सैनिक कमीशन के सदस्य बने जिनके नीचे सब सैनिक अफसर कर दिये गये। च्याङ्गकाई भी उन्हीं के अधीन सेनाधिकारी नियुक्त किये गये। इस प्रकार कम्यूनिस्टों ने इस बार कूओमिंगताङ्ग पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया।

च्याङ्गकाई आशंकापूर्ण हृदय से हाङ्काउ में घटनेवाली घटना को देख रहे थे। अब उन्हें यह निश्चय हो गया कि कम्यूनिस्टों से किसी प्रकार की आशा करना व्यर्थ है। वे उनकी चाल समझ गये और यह भी जान गये कि मौका मिलने पर वे उन्हें रौंद देने में कुछ उठा न रखेंगे। च्याङ्गकाई पर कम्यूनिस्टों ने जो आक्षेप लगाये थे उनका उत्तर देना आवश्यक था। यह कहा गया था कि च्याङ्गकाई जापान से मिले हुए हैं, रूस के विरोधी हैं तथा उन्होंने उत्तर विजय के नाम पर अपार धन व्यय किया है जिसका कोई हिसाब किताब नहीं दे रहे हैं। च्याङ्गकाई के चरित्र पर इस प्रकार का कलंक लगाना असीम तुच्छता का द्योतक है, पर राजनीतिक चालबाजियों में लोग मनुष्यता से भी बहुत नीचे गिर जाते हैं। च्याङ्ग ने लगाये गये आक्षेपों का उत्तर देते हुए नानचाङ्ग में भाषण किया। उन्होंने कहा कि 'रूस ने चीन के

प्रति मित्रता का वर्ताव किया है और जब तक उसकी यह नीति जारी है तब तक चीन रूस की मित्रता का त्याग नहीं कर सकता। जापान साम्राज्यवादी है इसलिए चीन कभी उससे सहयोग करने की बात सोच भी नहीं सकता। मैं कभी रूस विरोधी न था और न हूँ, पर अपने को रूस का प्रतिनिधि कहने वालों में से कुछ ने चीन में कुओमिङताङ्ग के प्रत्येक कार्य में अड़ंगा लगाने की चेष्टा की है जो मेरे हृदय में क्षोभ उत्पन्न करने का कारण हुई है। सैनिक व्यय के सम्बन्ध में मुझपर दोष लगाया जाता है। १ करोड़ ८० लाख चीनी डालर उत्तरी यात्रा में कुल खर्च हुआ है। यह रकम खर्च करके पाँच या छ प्रान्तों की विजय प्राप्त की गयी है। जितनी रकम खर्च हुई है वह उस विजय की तुलना में क्या है जिसका उपार्जन वीर चीनी सैनिकों ने गत ६ महीनों के अन्दर किया है। इस प्रकार की बेसिर पैर की बातें करके मुझे जनता की दृष्टि में गिराने की चेष्टा की जा रही है। पाजीपन की बात बकने वाले राष्ट्रीय आन्दोलन के नेताओं को बदनाम करने की अपनी धुन में पागलों की भाँति प्रलाप करने लगे हैं। ये यह भी नहीं समझते कि यदि यह आन्दोलन असफल हुआ तो चीन की स्वतन्त्रता और उद्धार की आशा सदा के लिए नष्ट हो जायगी। मेरी हार्दिक इच्छा है कि मैं सफलता प्राप्त करूँ। मुझ पर चाहे जो आक्षेप लगाया जाय और चाहे कोई सहायता करे अथवा न करे, पर मैं एकाकी होता हुआ भी मातृभूमि की सेवा के मार्ग मे लगा रहूँगा।"

च्याङ्कई ने यह भाषण भी अपने विरोधियों को शान्त करने के लिए ही दिया था पर इसका भी कोई प्रभाव नहीं हुआ। महीनों तक वे चुप बैठे विरोधियों के प्रचार को सहन करते रहे। अन्त में उन्होंने देखा कि इस तरह काम नहीं चलने का। इस राजनीतिक दलबन्दी और दाँव पेच को समाप्त किये बिना जो काम उठाया गया था वह भी रुका रहेगा। न उत्तर के सैनिकों का दमन होगा, न राष्ट्रीय सरकार कुछ कर सकेगी और न साम्राज्यवादियों का मामला हल होगा। उनकी कर्मठ प्रवृत्ति ने उन्हें उत्प्रेरित किया। इस समय राष्ट्रीय सरकार भी हाङ्काउ के कम्यूनिस्टों के प्रभाव मे थी। हाङ्काउ के शासन के प्रति क्षण-क्षण च्याङ्कई का हृदय क्षोभ से भरने लगा। उन्होंने बार-बार अपने व्याख्यानों मे अपना क्षोभ प्रकट किया और कहा कि "कम्यूनिस्ट पार्टी कुओमिङताङ्ग के विरुद्ध जैसी नीति

व्यवहृत कर रही है उसे मैं सहन नहीं कर सकता। मैं चाहता हूँ कि वे वामपक्षियों का छोड़ कर पूरे दिल से राष्ट्रीय आन्दोलन का साथ दें। उन्हें समझना चाहिए कि राष्ट्रीय आन्दोलन की सफलता पर ही कम्यूनिस्ट आन्दोलन की सफलता भी निर्भर करती है। पर यदि वे इसे नहीं समझते और अपनी सीमा से पार आकर हमारे काम में रुकावट डालते हैं तो मुझे भी उनके आन्दोलन का दमन करना पड़ेगा। यदि वे अपना ढंग नहीं सुधारते तो फिर मेरा दोष नहीं। मुझे विश्वास है कि क्युओमिन्टाङ्ग के सभी सच्चे सदस्य वही बात कहेंगे जो मैं कह रहा हूँ और यदि कभी आवश्यकता हुई तो मेरा साथ देंगे।"

अब सब तरह से वे हार गये और समझ लिया कि वामपक्ष से किसी प्रकार का समझौता अब असम्भव है तो उन्होंने भी अपना दूसरा कदम उठाने का निश्चय किया। घटनाएँ बड़े तीव्र वेग से चल रही थीं। च्याङ्गकाई ने विचार किया कि पहला काम तो यह होना चाहिए कि राष्ट्रीय सरकार को जो अभी हाङ्काउ में कम्यूनिस्टों के हाथ की कठपुतली है मुक्त कर उसका कार्यालय हाङ्काउ से हटाकर नाङ्किङ्ग में स्थापित किया जाय। अपने इस विचार के सम्बन्ध में वे कुछ मित्रों से परामर्श कर ही रहे थे कि उत्तर में मार्च की घटना घटी। पेकिङ्ग में उत्तरी सामन्तों की सरकार थी। वहाँ के सोवियत-दूतावास पर पेकिङ्ग सरकार की पुलिस ने धावा किया। यह धावा चाङ्गसोलिङ्ग की आज्ञा से हुआ था। उसका कहना यह था कि सोवियत दूतावास उनकी सरकार के विरुद्ध षड्यन्त्र कर रहा है। इस धावे में पेकिङ्ग की पुलिस के हाथ बहुत से कागज पत्र लगे। इन कागजों से जहाँ बहुत सी बातें खुलीं वहाँ यह भी प्रकट हुआ कि बोरोडिन क्युओमिन्टाङ्ग के वामपक्षी सदस्यों पर पूरा नियन्त्रण रखते हैं और उनके इशारे पर वे दक्षिण में अपनी सरकार स्थापित करने का यत्न कर रहे हैं। इस कुचक्र के खुलते ही च्याङ्गकाई की स्थिति सुदृढ़ हो गयी। क्युओमिन्टाङ्ग का वह वर्ग भी जो वामपक्षी न होते हुए भी प्रगतिशील था और यदाकदा उनका साथ दिया करता था, क्षुब्ध हो उठा। उन लोगों ने भी देखा कि कम्यूनिस्टों की दृष्टि किस ओर लगी हुई है। अब तो वे भी च्याङ्गकाई की ओर हो गये और यह राय देने लगे कि कम्यूनिस्टों को एकबारगी निकाले बिना स्थिति भयावह हो जा सकती

है। च्याङ्कई ने भी अब निश्चय कर लिया कि एक क्षण भी रुकना अनुचित है और राष्ट्रीय सरकार के विरोधियों को अपनी तैयारी करने का अवसर प्रदान करना होगा।

दूसरी ओर कम्यूनिस्ट भी समझ गये कि उनकी पोल खुल गयी और अब राष्ट्रवादियों की ओर से उन पर वार होगा। उन्होंने निश्चय किया कि जब यह होने ही वाला है तो क्यों न पहले ही आगे बढ़ कर वार किया जाय। फलतः शङ्घाई में राष्ट्रीय सरकार की सेना के मुख्य कार्यालय पर १३ अप्रैल सन् १९२७ को कम्यूनिस्टों की एक सैनिक टुकड़ी ने धावा कर दिया। दोनों ओर से गहरी लड़ाई छिड़ गयी। कम्यूनिस्टों के साथ बहुत से मजदूर, छात्र तथा महिलाएँ भी थीं। पहले तो राष्ट्रीय सैनिक घबड़ाये कि वे जनता पर कैसे गोली चलायें पर बाद में उन्होंने देखा कि सिवा इसके कोई दूसरा चारा ही नहीं है। दोनों ओर से गोलियाँ चलीं। सैकड़ों आदमी हताहत हुए। राष्ट्रीय सैनिकों ने सैकड़ों को गिरफ़ार किया। गिरफ़ार लोगों में से बहुत से ऐसे सैनिक थे जो उत्तर की सेना में रह कर क्रान्ति-सेना से लड़ चुके थे। जब ये पराजित किये गये और उनकी सैनिक टुकड़ियाँ विघटित की गयीं तो कम्यूनिस्टों ने उन्हें मिलाकर अपनी सेना में भरती कर लिया। शङ्घाई के कम्यूनिस्टों से राष्ट्रीय सैनिकों ने बहुत से अस्त्र-शस्त्र भी बरामद किये। ६ सौ पिस्टल, ८ लाख कारतूस, ७ गाड़ी कटारें, बरछे और भाले मिले। इसी से पता चलता है कि उनकी तैयारी कितनी गहरी थी। दूसरे दिन नाङ्किङ्ग में कम्यूनिस्टों पर धावा किया गया और उनकी गिरफ़ारी हुई।

च्याङ्कई की इस कार्रवाई को कम्यूनिस्टों ने अपने विरुद्ध बाकायदा छेड़ा गया युद्ध समझा। उन्होंने भी च्याङ के विरुद्ध शस्त्र उठाने का निश्चय किया और घोषणा की कि च्याङ्कई देश का शत्रु है। उन्होंने च्याङ्कई को बागी क़रार देकर उनकी गिरफ़ारी अथवा उनकी हत्या करने वाले के लिए लम्बे पारितोषिक की घोषणा कर दी। इस घटना के बाद च्याङ ने निश्चय किया कि क्वोमिङ्ताङ्ग पार्टी का एक सम्मेलन नाङ्किङ्ग में किया जाय। उन्होंने सम्मेलन का आवाहन किया और उसकी तैयारी में लग गये। नाङ्किङ्ग और शङ्घाई के सिवा उन्होंने चाङतुङ के कम्यूनिस्टों पर भी धावा करने की आज्ञा दी। सारी रात चाङतुङ में धर पकड़ होती रही और हज़ारों कम्यूनिस्ट गिरफ़ार

किये गये। काउतुङ के कतिपय मजदूर संघों के कार्यालयों पर सरकारी ताला चढ़ा दिया गया। सभी रूसी गिरफ़्तार करके हिरासत में ले लिये गये और व्याङ ने यह आज्ञा दी कि जो भी कम्यूनिस्ट काङतुङ में हो वह १० दिन के अन्दर अपनी सूचना पुलिस को दे दे अन्यथा बाद में गिरफ़्तार किये जाने पर उसे गोली मार दी जायगी।

एक प्रकार से च्याङ ने आतंक का राज्य स्थापित कर दिया। इस संघर्ष में न जाने कितने निरपराध भी पिस गये होंगे। यह सब करके उन्होंने कुओमिङताङ्ग सम्मेलन का आयोजन १८ अप्रैल को नाङ्किङ्ग में ही किया। इस सम्मेलन ने पहला काम यह किया कि उसने नाङ्किङ्ग में राष्ट्रीय सरकार की घोषणा कर दी। तब च्याङ ने कुओमिङताङ्ग के सदस्यों के लिए एक विस्तृत वक्तव्य दिया। इस वक्तव्य में उन्होंने अब तक के कम्यूनिस्टों के इतिहास को बताते हुए कहा, "कम्यूनिस्टों से झगड़ा इसलिए आवश्यक हो गया कि वे कुओमिङताङ्ग के साथ विश्वासघात कर रहे थे और उसके प्रभाव से लाभ उठाकर उसी को नष्ट करने की चेष्टा में थे। वे डाक्टर सुन्यात के सिद्धान्तों के आधार पर चीन की सेवा करने वालों को दल से निकाल कर अपना अधिनायकत्व स्थापित करना चाहते थे। देश की सैनिक स्थिति की उपेक्षा करके जनवर्ग को कुओमिङताङ्ग की ओर से विमुख करने का यत्न कर रहे थे और ऐसी नीति बरत रहे थे जिसके फलस्वरूप चीन अन्तर्राष्ट्रीय संघर्ष में फँसकर बरबाद हो जाता। इसी कारण यह जरूरी हो गया कि हम एकबारगी उनसे अपना सम्बन्ध विच्छेद कर दें।"

"यह न समझिये कि कुओमिङताङ्ग का प्रभाव इतना अधिक है कि कोई देश की जनता को उस से विमुख नहीं कर सकता। कम्यूनिस्ट किसानों और मजदूरों को कुओमिङताङ्ग से अलग रखने में कुछ उठा नहीं रख रहे हैं। देश की अपढ़ जनता सब बातों को जानती नहीं। यदि उसमें व्यापक प्रचार करके कुओमिङताङ्ग के विरुद्ध बातें फैलायी जायँगी और अनजान लोगों में बुद्धिभेद उत्पन्न किया जायगा तो वह समय आ सकता है जब वह कुओमिङताङ्ग से विमुख हो जाय। कम्यूनिज्म अच्छी चीज हो सकती है और भविष्य में हम उसकी ओर बढ़ सकते हैं, पर आज तो चीन का कल्याण डाक्टर सुन के सिद्धान्तों को व्यावहारिक रूप देने में ही है। कम्यूनिस्ट सर्वथा इस

के विरुद्ध अपनी सारी शक्ति लगा रहे हैं। फलत उनसे सम्बन्ध-विच्छेद करने के सिवा दूसरा मार्ग ही नहीं है। वे उत्तरी सैन्यसत्ता वादियों से नहीं डरते और उनके उन्मूलन के कार्य में ईमानदारी से सहायता भी प्रदान नहीं करते, पर कुओमिङताङ्ग की जड खोदने में कुछ उठा नहीं रखते, क्योंकि वे जानते हैं कि उसका प्रभाव यदि बढा तो फिर कम्यूनिस्टों को नेतृत्व करने का अवसर ही नहीं मिलेगा। हमारी क्रान्ति जैसे-जैसे सफल होकर कुओमिङताङ्ग के प्रभाव की वृद्धि हो रही है वैसे वैसे कम्यूनिस्टों की शत्रुता हमारे प्रति बढ़ती जा रही है। आज हमारा कर्तव्य है कि हम दृढता के साथ अपनी क्रान्ति की सफलता मे अपनी सारी शक्ति लगा दें। जब तक उत्तरी सैनिक शासन समाप्त नहीं कर दिया जाता और अपमानजनक सन्धियों का लोप नहीं हो जाता तथा देश की जनता के आर्थिक प्रश्न को हल कर हम सच्ची प्रजातन्त्रात्मक सरकार की स्थापना नहीं कर लेते, तब तक हमारी क्रान्ति पूरी नहीं होती। इस मार्ग में जो भी बाधक हो उसकी जड काट देना हमारा कर्तव्य हो जाता है।"

"मेरा व्यक्तिगत विश्वास है कि चीन की वर्तमान स्थिति मे डाक्टर सुनयात सेन के सिद्धान्तों के अनुसार चल कर ही हम अपने देश की रक्षा कर सकते हैं। चीन को अपने भाग्य का निर्णय आप करने का अधिकार होना चाहिए। विदेशियों की सहायता अथवा हस्तक्षेप न केवल अनावश्यक है बल्कि विघातक भी। चीन की क्रान्ति विश्व की व्यापक महाक्रान्ति का ही एक अग है। हम अपनी सफलता पर दूसरों की सहायता करने की आशा करते हैं। हमें अपने हित को सामने रखते हुए विश्वव्यापी आन्दोलन मे स्वतन्त्र रूप से भाग लेना है, न कि हम किसी दूसरे के इशारे पर नाचते हुए उसकी दुम मे बँधे फिरें। इसलिए आज मेरा यह विश्वास हो गया है कि चीन में कम्यूनिस्टों ने जिस घृणित राजनीति का सूत्रपात किया है उसके मार्ग का हम अवरोधन कर दें।"

इस घोषणा के बाद नाङ्किङ्ग में नयी सरकार स्थापित हो गयी। इधर नाङ्किङ्ग में च्याङ्ग ने सरकार की स्थापना की और उधर हाङ्कङ में कम्यूनिस्टों ने इसका उत्तर दिया। उन्होंने यह नारा उपस्थित किया कि वास्तविक राष्ट्रीय सरकार हाङ्कङ मे है और च्याङ्काई विद्रोही हैं जिन्होंने नाङ्किङ्ग में दूसरी सरकार स्थापित करके अपनी सत्ता

लादने की चेष्टा की है। उन्होंने हाङ्काउ सरकार की स्थापना की घोषणा करते हुए च्याङ्कई तथा उसके उन साथियों को जो नांङ्किङ्ग में थे पार्टी से निकाल बाहर किया। च्याङ को निकालते हुए उन पर यह अभियोग लगाया गया कि उन्होंने 'डाक्टर सेन के सिद्धान्तों की अवहेलना की है। कृषोमिंटांग को विघटित करके क्रान्ति के प्रवाह को पथभ्रष्ट किया है और केन्द्रीय सरकार को हथियाने के लिए सैनिक शक्ति का सहारा लेकर विद्रोह किया है। उन्होंने बताया कि च्याङ किस प्रकार आरम्भ से स्वयम् अधिनायक बन जाने की चेष्टा करते और पार्टी में दलबन्दी उत्पन्न करके अपना काम निकालते रहे हैं। उन्होंने पार्टी की केन्द्रीय समिति के विरुद्ध कुचक्र रचा और उसकी आज्ञाओं के विपरीत अपने समर्थकों को सेना के उच्च पदों पर नियुक्त करके अपनी शक्ति बढ़ाने की अनधिकार कुचेष्टा की। च्याङ साम्राज्यवादियों तथा उत्तरी सैन्यसत्तावादियों से मिले हुए हैं और उनके सहयोग से स्वयम् शक्ति ग्रहण करना चाहते हैं। उन्होंने देश के किसानों और मजदूरों की उमड़ती हुई शक्ति को कुचल कर जनता के रक्त से अपना हाथ भ्रष्ट किया और राष्ट्रीय सरकार के विरुद्ध गैर-कानूनी सम्मेलन बुला कर दूसरी सरकार स्थापित करली। पशु बल का सहारा लेकर जनता के नैसर्गिक अधिकारों को कुचलने का पाप किया जा रहा है और जनमत के विरुद्ध अपनी व्यक्तिगत शक्ति के बल पर निरंकुश शासन करने की चेष्टा हो रही है।'

हाङ्काउ के कम्यूनिस्टों ने नांङ्किङ्ग सम्मेलन का उत्तर इस प्रकार दिया। इस आक्षेप और प्रत्याक्षेप के विवाद में पड़ने की आवश्यकता नहीं है। स्पष्ट है कि दोनों ओर से जो बातें कही गयी हैं उनमें कुछ सत्य है और कुछ केवल अपने मन का दुर्भाव या कल्पित असत्य। पर इसमें सन्देह नहीं कि च्याङ्कई और कम्यूनिस्टों में पूर्णतः विरोध हो गया जिसने बरसों तक चीन की भूमि को गृह-युद्ध और संघर्ष का क्रीड़ा क्षेत्र बना रखा। दोनों के दृष्टिकोण में महान अन्तर था। एक विदेशी रूस से आने वाली विचारधारा के प्रवाह में प्रवाहित था और दूसरा राष्ट्रीय हित को सर्वोपरि स्थान देकर अपने देश की स्थिति और आवश्यकता के अनुकूल कार्यक्रम परिचालित करने का पक्षपाती। यह मतभेद भी अधिक हानिकारक न हुआ होता यदि कम्यूनिस्ट अपनी आदत के अनुसार उग्रवादिता में बह कर

कल्पित 'बुर्ज़ुआ लीडरशिप' के खातमे की चेष्टा में ही अपनी शक्ति न लगा दिये होते। भविष्य चीन के कम्यूनिस्टों के साथ था, यदि उन्होंने थोड़ी बुद्धिमानी और व्यावहारिक राजनीतिज्ञता का आश्रय लिया होता। राष्ट्रीय एकता को बनाये रखकर यदि वे पहले प्रजातन्त्र की स्थापना हो जाने देते और उत्तरी सैन्यसत्तावादियों की समाप्ति के साथ क्रान्ति को—चाहे वह बुर्ज़ुआ क्रान्ति ही क्यों न रही हो—सफल हो जाने दिये होते तो बाद में देश की जनता को वर्गहीन समाज की रचना की ओर ले जाने में उन्हें कोई रोक न पाता। असामयिक और अवसर तथा स्थिति के प्रतिकूल आँखें मूँद कर कट्टरता का आश्रय लेना तो उस अन्धविश्वास का परिचायक होता है जिसकी आशा वैज्ञानिक साम्यवादियों से नहीं की जाती। पर खेद है कि उन में यह दोष होता है जिसका परिचय हम न केवल चीन में बल्कि भारत में तथा अन्य देशों की कम्यूनिस्ट पार्टियों के इतिहास में भी पाते हैं।

इस समय चीन में तीन सरकारें हो गयीं। कहाँ तो क्रान्ति का आविर्भाव हुआ था राष्ट्रीय एकता को स्थापित करने का लक्ष्य लेकर और कहाँ उसने और विघटन किया। मञ्चू राजाओं के समय कम से कम ऊपर-ऊपर चीन की राजनीतिक एकता सी थी। उस शासन व्यवस्था के लोप ने उत्तर और दक्षिण में दो सरकारों की सृष्टि की। अब दक्षिण के क्रान्तिवादी जो उत्तर को दबाने की चेष्टा कर रहे थे, स्वयम् विभक्त हो गये और दक्षिण में ही दो सरकारें हो गयीं। हाङ्काङ में कुओमिङताङ के कम्यूनिस्ट सदस्यों तथा उन वाम-पक्षियों का जो कम्यूनिस्ट न होते हुए भी उग्रवादी थे, एक दल बना और नाङ्किङ में च्याङ्कई के नेतृत्व में दक्षिण पन्थी तथा मध्य विचार के राष्ट्रवादियों का दूसरा। चीन की एकता में एक और बाधा उठ खड़ी हुई। एकता के लिए आवश्यक था कि एक ही सरकार हो अत दो का लोप वांछनीय हो गया। पर सम्प्रति तो तीनों सरकारें चलने लगीं। क्याङ्गची के प्रान्त में जहाँ हाङ्काङ का नगर है कम्यूनिस्ट अपनी व्यवस्था परिचालित करने लगे। कम्यूनिस्टों के विरुद्ध जो पुस्तकें लिखी गयी हैं उनमें क्याङ्गची में उनके शासन को घोर काला चित्रित किया गया है। कहा गया है कि उन्होंने जमींदारियों का लोप बलपूर्वक किया और इस नीति को कार्यान्वित करने में न जाने कितने निर्दोषों का खून बहाया। जबर्दस्ती लोगों की सम्पत्ति ज़ब्त

की गयी। उनके परिवार को दर-दर का भिखारी बनाया गया और जिसने ज़रा सा भी विरोध करने की चेष्टा की उसका सिर तक काट लिया गया। पुरानी आर्थिक व्यवस्था की इमारत पूरी तरह ढहा दी गयी पर कोई नयी व्यवस्था सुन्दृढ़ आधार पर स्थापित न की जा सकी। फलस्वरूप गड़बड़ी तथा सकट और बढ़ गया। किसानों से भी उनकी भूमि छीनने की कोशिश की गयी जिसमें व्यक्तिगत सम्पत्ति ख़तम की जा सके। जबरदस्ती लोगों को सेना में भरती किया गया और पुराने सामाजिक सगठन को छिन्न भिन्न करने की कोशिश की गयी।

दूसरे पक्ष के समर्थकों ने क्याड्ची में चीनी कम्यूनिस्टों के शासन का सुन्दर वर्णन किया है। उनका कहना है कि चीन के किसान जो शताब्दियों से दलित और शोषित थे इन नये शासकों को पाकर एक बारगी खिल उठे। कम्यूनिस्टों ने किसानों पर लदे कर्ज के बोझ को समाप्त किया, लगान की ऊँची दर को ख़तम किया और ज़मींदारों से भूमि को छीन कर पुन किसानों में वितरित कर दिया और उन्हें उसका मालिक भी बना दिया। प्रत्येक किसान परिवार को उसकी संख्या के अनुपात में भूमि दी गयी। जमीन्दारों से ज़मीन लेकर उन्हें या तो खदेड़ दिया गया अथवा उन्हें भी किसान बनने के लिए बाध्य किया गया। लगान पहले एकदम ख़तम कर दी गयी पर बाद में उपज के [illegible] से [illegible] प्रतिशत तक की दर क़ायम की गयी। लाल सेना के लिए थोड़ी भूमि अलग संरक्षित कर दी गयी। इस पर सब किसानों को कुछ न कुछ काम करना पड़ता था। सामूहिक कृषि के लिए प्रयत्न अवश्य किया गया पर उसमें सफलता मिलती न देख कर उसे छोड़ दिया गया। कम्यूनिस्टों का दावा है कि वे किसानों में लोकप्रिय थे और उनके सुधारों ने उनकी दशा में बहुत कुछ सुधार किया था। इसके सिवा उनका दावा है कि उन्होंने जन वर्ग में शिक्षा का प्रचार करने की भी बहुत चेष्टा की।

इस प्रकार हाङ्काङ में एक और सरकार चलने लगी। इधर च्याङ्कई शेक उत्तर विजय की फ़िक्र में लगे ही थे कि उन्होंने दूसरी सत्ता को उदीयमान होते देखा। उनके सामने देश को न केवल उत्तरी सैनिकों से बचाने का काम आ पड़ा बल्कि एक और नव विकसित सरकार को ख़तम करके राष्ट्रीय सरकार की स्थापना की बात सोचनी पड़ी। इस स्थिति से जनता में बड़ा बुद्धि भेद फैला। साधारण और अपढ़ जनता राजनीतिज्ञों के दाँव पेच और भेद की बात क्या

समझे ? उसने देखा कि एक ओर हाङ्काउ से यह दावा किया जाता है कि वास्तविक राष्ट्रीय सरकार वहाँ है तथा जनता को उसका साथ देना चाहिए और दूसरी ओर नाङ्किङ्ग से आवाज आती है कि वहाँ देश की सच्ची सरकार है और दूसरे राष्ट्र के शत्रु हैं जिनके दमन में सहायता प्रदान करनी चाहिए। कुओमिङताङ्ग के बहुत से समर्थक और सदस्य जो साधारण श्रेणी के थे इस झगडे के कारण घपले में पड गये और समझ ही नहीं सके कि वे क्या करें किधर जाँय और किस की सहायता करें ?

च्याङ्कईशेक ने इसी समय उत्तर-विजय की अपनी योजना की पुन पूर्ति करनी चाही। नाङ्किङ्ग में आकर वे रुके हुए थे और तब से चीन के रंगमच पर बहुत से अभिनय हो गये। च्याङ्कई ने देखा कि उनकी इस आपस की खींचातानी के कारण उत्तरी सैन्यसत्तावादी अपनी स्थिति को सुदृढ कर रहे हैं और मामला यदि सँभाला न गया तो सम्भवत वे एक दिन आक्रमण करके राष्ट्रीय सरकार की स्थिति भयावह कर देंगे। सचमुच उत्तरी सैन्य-सत्तावादी हाङ्काउ और नाङ्किङ्ग के झगडे से लाभ उठाने की चेष्टा कर रहे थे। फलत च्याङ्क ने पुन अपनी समर यात्रा आरम्भ की। बडी शीघ्रता के साथ उन्होंने सन् १९२७ की अप्रैल में याङ्गचे नदी को पार किया और चिहलीशाङ्कतुङ्ग की सेना को पराजित करते हुए यूचाउ पर अधिकार स्थापित कर लिया। फिर तिङ्स्तीङ युचाव रेलवे पर कब्जा करने के इरादे से उन्होंने मई के महीने में पेङ्कु पर भी अपना झडा गाड दिया। इस समय च्याङ्क की प्रतिष्ठा अपनी चरम सीमा पर पहुँच चुकी थी। जो विदेशी पत्रकार इस यात्रा में उनके साथ थे उनके वर्णनों से पता चलता है कि च्याङ्क जब सूचाउ पहुँचे तो उनका स्वागत करने के लिए जन समुद्र उमड पडा। लोग पागलों की भाँति इस विजयी नेता का दर्शन करने के लिए जैसे अपना प्राण तक देने को तैयार थे। सारा नगर उनके स्वागत के लिए सजाया गया था। मकानों की दीवालों पर स्वागत वाक्य लिखे हुए थे। प्रत्येक भवन क्रान्तिपताका से सुशोभित था। जिधर देखिये उधर अपार जनता खड़ी इस नेता के दर्शन के लिए उत्कठित हो रही थी। भीड़ इतनी प्रचड थी कि तिल रखने की जगह भी दिखायी नहीं देती थी।

की गयी। उनके परिवार को दर-दर का भिखारी बनाया गया और जिसने जरा सा भी विरोध करने की चेष्टा की उसका सिर तक काट लिया गया। पुरानी आर्थिक व्यवस्था की इमारत पूरी तरह ढहा दी गयी पर कोई नयी व्यवस्था सुदृढ़ आधार पर स्थापित न की जा सकी। फलस्वरूप गड़बड़ी तथा सङ्कट और बढ़ गया। किसानों से भी उनकी भूमि छीनने की कोशिश की गयी जिसमें व्यक्तिगत सम्पत्ति खतम की जा सके। जबरदस्ती लोगों को सेना में भरती किया गया और पुराने सामाजिक सगठन को छिन्न भिन्न करने की कोशिश की गयी।

दूसरे पक्ष के समर्थकों ने क्याङ्सी में चीनी कम्यूनिस्टों के शासन का सुन्दर वर्णन दिया है। उनका कहना है कि चीन के किसान जो शताब्दियों से दलित और शोषित थे इन नये शासकों को पाकर एक बारगी खिल उठे। कम्यूनिस्टों ने किसानों पर लदे क़र्ज़ के बोझ को समाप्त किया, लगान की ऊँची दर को खतम किया और जमींदारों की भूमि को छीन कर पुन किसानों में वितरित कर दिया और उन्हें उसका मालिक भी बना दिया। प्रत्येक किसान परिवार को उसकी संख्या के अनुपात में भूमि दी गयी। जमीन्दारों से जमीन लेकर उन्हें या तो खदेड़ दिया गया अथवा उन्हें भी किसान बनने के लिए बाध्य किया गया। लगान पहले एकदम खतम कर दी गयी पर बाद में उपज के ५ से १५ प्रतिशत तक की दर क़ायम की गयी। लाल सेना के लिए थोड़ी भूमि अलग संरक्षित कर दी गयी। इस पर सब किसानों को कुछ न कुछ काम करना पड़ता था। सामूहिक कृषि के लिए प्रयत्न अवश्य किया गया पर उसमें सफलता मिलती न देख कर उसे छोड़ दिया गया। कम्यूनिस्टों का दावा है कि वे किसानों में लोकप्रिय थे और उनके सुधारों ने उनकी दशा में बहुत कुछ सुधार किया था। इसके सिवा उनका दावा है कि उन्होंने जन वर्ग में शिक्षा का प्रचार करने की भी बहुत चेष्टा की।

इस प्रकार क्याङ्सी में एक और सरकार चलने लगी। इधर च्याङ्कई शेक उत्तर विजय की फ़िक्र में लगे ही थे कि उन्होंने दूसरी सत्ता को उदीयमान होते देखा। उनके सामने देश को न केवल उत्तरी सैनिकों से बचाने का काम आ पड़ा बल्कि एक और नव विकसित सरकार को खतम करके राष्ट्रीय सरकार की स्थापना की बात सोचनी पड़ी। इस स्थिति से जनता में बड़ा बुद्धि भेद फैला। साधारण और अपढ़ जनता राजनीतिज्ञों के दाँव पेंच और भेद की बात क्या

एक ओर तो यह दशा थी और दूसरी ओर घटनाएँ दूसरी दिशा की ओर प्रवाहित होने जा रही थीं। च्याङ सुचाउ में थे पर हाङ्काउ के अधिकारियों ने उनकी बढ़ती हुई लोकप्रियता को शंका की दृष्टि से देखा। उन्होंने अनुभव किया कि च्याङ्काई ने यदि उत्तर की विजय यात्रा पूर्णत सफलता के साथ पूरी कर ली तो फिर उनका प्रभाव और शक्ति अपरिमेय हो जायगी और जनता उनके पीछे हो लेगी। यह सोच कर उन्होंने निश्चय किया कि वे भी स्वतन्त्र रूप से उत्तर विजय का आयोजन करें और पहले इसके कि च्याङ पेकिङ्ग पहुँचें वे स्वयम् उत्तरी राजधानी पर अधिकार स्थापित कर लें। उन्होंने अपने विचार को व्यावहारिक रूप दिया और ताङ्गशेंचीतुह के सेनापतित्व में तैयारी आरम्भ कर दी। मई महीने के मध्य में हाङ्काउ की सेना उत्तर की ओर बढ़ी और उत्तर पूरब में दबाव डालने लगी।

इसी बीच एक और घटना घटी। शेङ्सी प्रान्त के प्रसिद्ध सेनापति और शासक फेङ्युस्याङ ने अपने को राष्ट्रीय आदर्शों का समर्थक घोषित कर दिया। यह प्रान्त मध्य चीन में है। फेङ के पास अच्छी सैनिक शक्ति थी और वे सफल सैन्य सचालक माने जाते थे। कहा जाता था कि डेढ लाख सुशिक्षित और शक्ति-सज्जित सैनिक फेङ के पास थे। फेङ ने शेङ्सी से सेना लेकर पयान किया और लोयाङ्ग पर विजय प्राप्त करते हुए चेङ्चाउ पहुँचे और उस पर भी अधिकार कर लिया।

तीन ओर के इस दबाव से उत्तरी सैन्यसत्तावादी त्रस्त हो गये और एक बार अपने बचाव की सारी आशा खो दी। पर अभी चीन के भाग्य में अपनी एकता देखना नहीं बदा था। कोई न कोई बात बीच में बाधक हो जाया करती जो उपर्युक्त आदर्शों की पूर्ति की आशा को दूर ढकेल देती थी। यदि हाङ्काउ नाङ्किङ्ग मिलकर अपनी शक्ति लगाते तो न जाने कब उन्होंने अपना लक्ष्य प्राप्त कर लिया होता। पर जहाँ आवश्यकता थी कि ये अपनी सारी शक्ति से मिलकर उत्तरियों से लड़ते वहाँ इन दोनों में स्वयम् ही प्रतिद्वन्द्विता उत्पन्न हो गयी थी। हाङ्काउ के अधिकारियों ने जब यह देखा कि प्रचंड शक्ति लिये हुए फेङ आ रहे हैं तो उन्होंने यह सोचा कि इन्हें यदि अपने साथ मिलाया जा सके तो काम बन जाय। वे नहीं चाहते थे कि फेङ च्याङ्काई से जा मिलें। उन्हें ज्ञान था कि उस दशा में च्याङ की

शक्ति बढ़ जायगी जो किसी प्रकार हाङ्काङ गुट्ट को सह्य न होगी। फलत चेङ्चाउ में फेङ के आने पर उन लोगों ने उससे बातचीत आरम्भ कर दी। इधर फेङ ने सब मामला ताड़ लिया। वह चतुर राजनीतिज्ञ और महत्वाकाँक्षी व्यक्ति था। हाङ्काङ की बात सुन कर उन्होंने च्याङ्कइ से भेंट करने के बाद अपना मार्ग निर्धारित करने का निश्चय किया और इसलिए उनसे मिलने के लिए सूचाउ पहुँचे। च्याङ्कइ भी फेङ की मित्रता के इच्छुक थे क्योंकि उसके महत्व से परिचित थे। उन्होंने फेङ का स्वागत किया, उसके प्रति आदर और सम्मान प्रकट किया और आगे बढ़ कर उन्हें लेने गये तथा सुचाउ ले आये।

सुचाउ में तीन दिन तक इन दोनों की बातें होती रहीं। सम्मेलन समाप्त होने पर फेङ के सम्मान का उत्सव हुआ जिस में उन्होंने घोषणा की कि वे डाक्टर सुङ के सिद्धान्तों के लिए लड़ने को तैयार हैं और यहाँ इसलिए आये हैं कि हाङ्काङ और नाङ्किङ्ग के झगड़े को यदि तय करा सकें तो करादें। च्याङ ने अपने भाषण में कहा कि फेङ से हमारी मित्रता की सन्धि हुई है और वे उत्तरी सैन्यसत्तावादियों से नाङ्किङ्ग के साथ मिलकर लड़ने को तैयार हैं। च्याङ्गसालिङ यदि अब भी राष्ट्रीय एकता के लिए डाक्टर सुङ के सिद्धान्तों को स्वीकार कर लें तो हम शान्ति के साथ उनके साथ मित्रता का सम्बन्ध स्थापित करने को तैयार हैं और व्यर्थ का यह रक्तपात रुक जाय।' फेङ और च्याङ के भाषणों से स्पष्ट ज्ञात हो जाता है कि यदि इन दोनों में सन्धि हो जाती तो फेङ यह निश्चय कर लेते कि वह च्याङ्कइ के साथ मिलकर काम करेंगे। फेङ पुराने आदमी थे और चतुर व्यक्ति। उन्होंने दक्षिण के दो राष्ट्रवादी गुट्टों में अनबन देखी। च्याङ की शक्ति और उनकी प्रतिष्ठा तथा दृढ़ता की थाह भी पा ली। वे समझ गये कि इस व्यक्ति का साथ देने मे ही कल्याण है। पर इसके साथ साथ वे और भी कुछ करना चाहते थे। उन्होंने दोनों गुटों के बीच मध्यस्थता करने का निश्चय किया। यदि वे इस में सफल होते हैं तो अनायास ही नेता बन बैठते हैं और दोनों पर रौब जम जाता है। फिर ऐसे अवसर को चूकने वाले आदमी वे नहीं थे।

फलत फेङ ने हाङ्कइ सरकार के पास एक लम्बा तार भेजा। यह तार चुनौती की शकल में था पर बहुत से तर्कों के जजाल में उसे

एक ओर तो यह दशा थी और दूसरी ओर घटनाएँ दूसरी दिशा की ओर प्रवाहित होती जा रही थीं। च्याङ्ग सुचाउ में थे पर हाङ्काउ के अधिकारियों ने उनकी बढ़ती हुई लोकप्रियता को ईर्ष्या की दृष्टि से देखा। उन्होंने अनुभव किया कि च्याङ्ग ने यदि उत्तर की विजय यात्रा पूर्णतः सफलता के साथ पूरी कर ली तो फिर उनका प्रभाव और शक्ति अपरिमित हो जायगी और जनता उनके पीछे हो लेगी। यह सोच कर उन्होंने निश्चय किया कि वे भी स्वतन्त्र रूप से उत्तर विजय का आयोजन करें और पहले इसके कि च्याङ्ग पेकिङ्ग पहुँचें वे स्वयम् उत्तरी राजधानी पर अधिकार स्थापित कर लें। उन्होंने अपने विचार को व्यावहारिक रूप दिया और ताङ्गशेङ्गचीह के सेनापतित्व में तैयारी आरम्भ कर दी। मई महीने के मध्य में हाङ्काउ की सेना उत्तर की ओर बढ़ी और उत्तर पूर्व में दबाव डालने लगी।

इसी बीच एक और घटना घटी। शेन्सी प्रान्त के प्रसिद्ध सेनापति और शासक फेङ्गयुस्याङ्ग ने अपने को राष्ट्रीय आदर्शों का समर्थक घोषित कर दिया। यह प्रान्त मध्य चीन में है। फेङ्ग के पास अच्छी सैनिक शक्ति थी और वे सफल सैन्य संचालक माने जाते थे। कहा जाता था कि डेढ़ लाख सुशिक्षित और शक्ति-सज्जित सैनिक फेङ्ग के पास थे। फेङ्ग ने शेन्सी से सेना लेकर प्रयाण किया और लोयाङ्ग पर विजय प्राप्त करते हुए चेङ्गचाउ पहुँचे और उस पर भी अधिकार कर लिया।

तीन ओर के इस दबाव से उत्तरी सैन्यसत्तावादी त्रस्त हो गये और एक बार अपने बचाव की सारी आशा खो दी। पर अभी चीन के भाग्य में अपनी एकता देखना नहीं बदा था। कोई न कोई बात बीच में बाधक हो जाया करती जो उपर्युक्त आदर्शों की पूर्ति की आशा को दूर ढकेल देती थी। यदि हाङ्काउ नानकिङ्ग मिलकर अपनी शक्ति लगाते तो न जाने कब उन्होंने अपना लक्ष्य प्राप्त कर लिया होता। पर जहाँ आवश्यकता थी कि ये अपनी सारी शक्ति से मिलकर उत्तरियों से लड़ते वहाँ इन दोनों में स्वयम् ही प्रतिद्वन्द्विता उत्पन्न हो गयी थी। हाङ्काउ के अधिकारियों ने जब यह देखा कि प्रचंड शक्ति लिये हुए फेङ्ग आ रहे हैं तो उन्होंने यह सोचा कि इन्हें यदि अपने साथ मिलाया जा सके तो काम बन जाय। वे नहीं चाहते थे कि फेङ्ग च्याङ्ग से जा मिलें। उन्हें ज्ञात था कि उस दशा में च्याङ्ग की

शक्ति बढ़ जायगी जो किसी प्रकार हाङ्काङ गुट्ट को सह्य न होगी। फलत चेङचाउ में फेङ के आने पर उन लोगों ने उससे बातचीत आरम्भ कर दी। इधर फेङ ने सब मामला ताड़ लिया। वह चतुर राजनीतिज्ञ और महत्वाकांक्षी व्यक्ति था। हाङ्काङ की बात सुन कर उन्होंने च्याङ्कइ से भेंट करने के बाद अपना भाग निर्धारित करने का निश्चय किया और इसलिए उनसे मिलने के लिए सूचाउ पहुँचे। च्याङ्कइ भी फेङ की मित्रता के इच्छुक थे क्योंकि उसके महत्व से परिचित थे। उन्होंने फेङ का स्वागत किया, उसके प्रति आदर और सम्मान प्रकट किया और आगे बढ़ कर उन्हें लेने गये तथा सुचाउ ले आये।

सुचाउ मे तीन दिन तक इन दोनो की बातें होती रहीं। सम्मेलन समाप्त होने पर फेङ के सम्मान का उत्सव हुआ जिस में उन्होंने घोषणा की कि वे डाक्टर सुङ के सिद्धान्तों के लिए लड़ने को तैयार हैं और यहाँ इसलिए आये हैं कि हाङ्काङ और नाङ्किङ्ग के झगड़े को यदि तय करा सकें तो करादें। च्याङ ने अपने भाषण में कहा कि फेङ से हमारी मित्रता की सन्धि हुई है और वे उत्तरी सैन्यसत्तावादियों से नाङ्किङ्ग के साथ मिलकर लड़ने को तैयार हैं। च्याङ्गसोलिङ यदि अब भी राष्ट्रीय एकता के लिए डाक्टर सुङ के सिद्धान्तों को स्वीकार कर लें तो हम शान्ति के साथ उनके साथ मित्रता का सम्बन्ध स्थापित करने को तैयार हैं और व्यर्थ का यह रक्तपात रुक जाय।" फेङ और च्याङ के भाषणों से स्पष्ट ज्ञात हो जाता है कि यदि इन दोनों में सन्धि हो जाती तो फेङ यह निश्चय कर लेते कि वह च्याङ्कइ के साथ मिलकर काम करेंगे। फेङ पुराने आदमी थे और चतुर व्यक्ति। उन्होंने दक्षिण के दो राष्ट्रवादी गुटों में अनबन देखी। च्याङ की शक्ति और उनकी प्रतिष्ठा तथा दृढ़ता की थाह भी पा ली। वे समझ गये कि इस व्यक्ति का साथ देने में ही कल्याण है। पर इसके साथ साथ वे और भी कुछ करना चाहते थे। उन्होंने दोनों गुटों के बीच मध्यस्थता करने का निश्चय किया। यदि वे इस म सफल होते हैं तो अनायास ही नेता बन बैठते हैं और दोनों पर रौब जम जाता है। फिर ऐसे अवसर को चूकने वाले आदमी वे नहीं थे।

फलत फेङ ने हाङ्कइ सरकार के पास एक लम्बा तार भेजा। यह तार चुनौती की शकल में था पर बहुत से तर्कों के जंजाल में उसे

छिपा कर अनुरोध पत्र की शक्ल दे दी गयी थी। इस तार में फेङ्ग ने अपने तथा अपने मित्र च्याङ की ओर से हाङ्काउ सरकार से कुछ माँगें की थीं। कहा गया था कि बोरोदिन तथा अन्य रूसी सलाहकारों को तुरन्त रूस भेज दिया जाय और समस्त चीनी कम्यूनिस्टों को सरकार तथा कुओमिङताङ्ग से निकाल बाहर किया जाय। जितने वाम पक्षी गैर कम्यूनिस्ट थे उन्हें नाङ्किङ्ग सरकार से आकर मिल जाने का आमन्त्रण भी दिया गया था।' यह चुनौती हाङ्काउ भेजी गयी। इतना करने के बाद च्याङ्ग नाङ्किङ्ग वापस आये और सुचाउ से आगे बढ़ने के लिए आवश्यक सैनिक तैयारी करने लगे। नाङ्किङ्ग पहुँच कर उन्होंने अपने सैनिकों, साथियों तथा सहयोगियों के नाम एक अपील प्रकाशित की। अपील में साफ साफ कहा गया था, 'कम्यूनिज्म और सैन्यसत्तावाद हमारे क्रान्ति पथ के दो प्रचण्ड बाधक कंटक हैं जो साध्य की प्राप्ति में रुकावट हो रहे हैं। मैं अपने कर्मचारियों, सैनिकों तथा राष्ट्रीय क्रान्ति के सहयोगियों से अनुरोध करता हूँ कि वे मेरे साथ सहयोग करें तथा मातृ भूमि की मुक्ति और क्रान्ति की सफलता के लिए प्राणों की बाजी लगा दें। इस मौके को हाथ से न जाने दीजिये। दुनिया की निगाह आप की ओर लगी हुई है। आपकी देश भक्ति और पौरुष की परीक्षा हो रही है। मित्रो! युद्ध करो! विजय सामने खड़ी दिखायी दे रही है।" नाङ्किङ्ग में प्रबन्ध पूरा करने के बाद च्याङ्ग शङ्घाई गये और वहाँ भी नगर की रक्षा तथा भावी युद्ध की तैयारी की। शङ्घाई में एक महती सभा में भाषण करते हुए उन्होंने कहा "हमारे सामने बारह सिद्धान्त हैं जिन्हें अपनाकर हमें काम करना है।

(१) मृत्यु से न डरना।

(२) वासनाओं तथा धन का लोभ परित्याग।

(३) अपने देश से प्रेम।

(४) अपने देशवासियों से प्रेम।

(५) अनुशासन का परिहास-निषेध।

(६) अपने अफसरों की आज्ञा मानना।

(७) कुओमिङताङ्ग के सिद्धान्तों को व्यावहारिक रूप देना।

(८) डाक्टर सुनयात सन के सिद्धान्तों के आधार पर देश की राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक व्यवस्था सम्पादित करना।

(९) प्रचण्ड युद्ध कर विजय प्राप्त करना।

(१०) चाहे प्राण निकल जाँय पर कभी अपना पैर पीछे न हटाना।
(११) जनता की रक्षा करना और
(१२) सदा आगे बढ़ते रहने का यत्न करते रहना।

इस प्रकार च्याङ्ग ने देश की जनता मे प्राण का संचार करना आरम्भ किया और सैनिकों और सहयोगियों में नवोत्साह का मन्त्र फूँका। कौन कह सकता है कि यह व्यक्ति महत्वाकांक्षी था। कहीं उसके वाक्यों में यह माँग नहीं है कि लोग उसे ही अपना गुरु समझें और उसके भक्त बनें। उसका अनुरोध तो देश के प्रति, आदर्श के प्रति, राष्ट्रीयता और स्वतन्त्रता के प्रति, सिद्धान्त के प्रति तथा कुओमिङ्गताङ्ग के प्रति अपनी सारी भक्ति, श्रद्धा और सहयोग अर्पण करने का आवाहन मात्र है, नया जीवन, नवचरित्र, तथा नवोत्प्रेरणा उत्पन्न करने का पुनीत प्रयत्न है। वह देश की जनता के नेता की, उसके मार्ग प्रदर्शक की, उसके शिक्षक की, उसकी भावनाओं के प्रेमी की तथा उच्चकोटि के देशभक्त और राजनीतिज्ञ की वाणी है। नैतिकता के लिए, महान आदर्शों के लिए तथा राष्ट्रीयता और राष्ट्रीय सम्मान के लिए वह व्यथित हृदय की प्रकट पुकार दिखायी देती है।

इस प्रकार हाङ्काउ सरकार को अपने को विघटित करने की चुनौती देकर च्याङ्ग उत्तर विजय करने के लिए अपनी तैयारी करने लगे। इस चुनौती के कुछ ही दिनों बाद जो घटनाएँ घटीं वे बड़े मार्के की हैं। इनका उल्लेख बाद के अध्यायों में किया जायगा। इस स्थान पर तो उत्तर यात्रा के सम्बन्ध मे ही कहकर इस अध्याय को समाप्त करना है। च्याङ्ग की यह तैयारी देखकर और उनकी सेना के अपरिमेय बल का स्वाद पाकर उत्तर के सामन्त बेतरह घबड़ाये। उन्होंने देखा कि सुचाउ में च्याङ्ग की सेना खड़ी है और सिङ्गपूका का रेल पथ उसे सहज ही उपलब्ध है। इस स्थिति से तीङ्स्तीङ्ग तथा पेकिङ्ग दोनों खतरे में हैं। जब समान स्वार्थ उत्पन्न हो जाता है तो मनुष्य बहुधा छोटे-मोटे मतभेदों और झगड़ों को भूल जाता है। राजनीति मे तो मैत्री और शत्रुता स्वार्थों की भित्ति पर बना और बिगड़ा करती है। जो आज मित्र हैं वे कल शत्रु और जो शत्रु हैं वे मित्र बने दिखायी देते हैं। च्याङ्ग के भय से उत्तरी सामन्त सब के सब समान रूप से त्रस्त हो गये थे। अब वह मुहूर्त्त आ गया था जब सब के लिए संकट था। अत सबने मिल कर अपनी रक्षा करने की बात सोची। उन्होंने देखा कि

चीन के इतिहास की धारा ही दूसरी ओर फेर दी। आपस के झगड़े और मनमुटाव के कारण इस समय उत्तरी सामन्त थक गये। च्याङ्काई को निश्चय हो गया कि जब तक आपस की यह स्थिति है तब तक उत्तर विजय की आशा करना भी व्यर्थ है। सम्प्रति यह युद्ध जिसका सूत्रपात एक वर्ष पूर्व हुआ था रुक सा गया। उत्तरी सरदार कुछ दिनों के लिए दक्षिण के खतरे से मुक्त हुए पर दक्षिण में घटनाओं ने विचित्र मनोरंजक रूप धारण किया।

आठवाँ अध्याय

च्याङ्काई का अवकाश ग्रहण

उत्तरी युद्ध को अब थोड़े दिनों के लिए स्थगित हुआ समझ लीजिए। चीन के इतिहास के इस काल में कौतूहलपूर्ण घटनाएँ घटती हैं और दक्षिण के राष्ट्रवादियों में विचित्र परिवर्तन होते हैं। पूर्व के पृष्ठों में हाङ्काउ सरकार के पास फङ द्वारा भेजे गये तार की चर्चा की गयी है। यह तार एक प्रकार से नानकिङ सरकार को चुनौती दी थी। इसमें विशेष रूप से बोरोदिन को रूस भेज देने तथा कम्यूनिस्टों को निकाल बाहर करने की माँग की गयी थी। हाङ्काउवालों के लिए यह दोनों बातें स्वीकार करना असम्भव था। क्वोमिन्ताङ्ग का वामपक्ष हाङ्काउ में केन्द्र था। यद्यपि वामपक्षी सबके सब कम्यूनिस्ट नहीं थे और अधिकतर अकम्यूनिस्ट ही थे फिर भी बोरोदिन और कम्यूनिस्ट पार्टी का पूरा प्रभाव उन पर छाया हुआ था। वे बोरोदिन की सत्प्रेरणा और नेतृत्व में ही काम कर रहे थे। इसलिए इस तार को पाकर वे परेशान हुए। फिर सबसे बड़ी चिन्ता तो यह देख कर हुई कि तार के भेजने वाले जिन फेङ को वह अपनी ओर मिलाना चाहते थे, जिनसे पहले बातें भी कर चुके थे और जिनके सम्बन्ध में उन्हें आशा ही नहीं हो रही थी बल्कि विश्वास भी था कि वे उनकी ओर रहेंगे, वही अब इस तार द्वारा अपने को च्याङ्काई का मित्र घोषित करते तथा नानकिङ की सरकार और उसके सिद्धान्तों के पक्के समर्थक बने दिखायी दे रहे थे। अस्तु यह परिस्थिति देखकर वे स्तब्ध रह गये।

पहले तो उन्होंने इस तार को जाली समझा पर बाद में फेङ का एक तार और आया जिसमें उन्होंने पहले तार को भेजने की जिम्मेदारी अपने ऊपर लेते हुए उसकी स्वीकृति का अनुरोध किया था। अब हाङ्कड सरकार बड़े फेर में पड़ी। वह उस तार की शर्तें स्वीकार करने को तैयार न थी, पर अस्वीकार करने का अर्थ होता फेङ के समान प्रबल व्यक्ति को च्याङ के हाथों में चले जाने देना। कई दिनों तक विचार होता रहा और विवाद का रूप यही ज्ञात होता रहा कि हाङ्कड इस माँग को अस्वीकार करने जा रहा है। वामपक्षियों पर बोरोदिन का अत्यधिक प्रभाव था। यह व्यक्ति चीन को क्रान्ति के इतिहास में महत्त्वपूर्ण भाग ले चुका था और च्याङ ऐसे प्रबल विरोधी का सामना करने में वामपक्षियों के लिए शक्ति का स्रोत बना हुआ था। फिर बोरोदिन विद्वान्, चतुर, दृढ़-संकल्प तथा आदर्शवादी व्यक्ति था। उसका गहरा अध्ययन तथा क्रान्ति विज्ञान का व्यावहारिक ज्ञान लोगों को प्रभावित करता था। उसका व्यक्तित्व मोहक और स्वभाव भी आकर्षक था। उसकी पैनी दृष्टि लोगों के हृदय में धँस जाती थी। वस्तुतः वह उन आदमियों में से था जिनमें नेतृत्व का गुण होता है और जो अपने चारों ओर ऐसे वातावरण का सृजन करते रहते हैं जिससे प्रभावित होना अनिवार्य हो जाता है।

ऐसे व्यक्ति को अपने पक्ष से हटा देने के लिए हाङ्कड के वामपक्षी कभी तैयार नहीं होते पर घटनाएँ कभी कभी अकल्पित ढग से पलटा खाती हैं जिनसे गतिमान् प्रवाह विचित्र रूप से बदल जाता है। ऐसी ही एक घटना इस समय भी हुई। हम भारतीय (मानवेन्द्र नाथ राय) एम० एन० राय के नाम से परिचित हैं। राय महोदय उस समय तृतीय इन्टरनेशनल के प्रमुख सदस्य थे और मास्को में रहा करते थे। तृतीय इन्टरनेशनल के नेताओं का उन पर बड़ा विश्वास था। सोवियेत रूस के वर्तमान विधाता स्टालिन उन्हें बहुत मानते थे। आज तो राय महोदय की राजनीति कुछ विचित्र सी हो गयी है। वे कम्यूनिस्ट पार्टी से निकाल दिये गये हैं और थर्ड इन्टरनेशनल उन्हें अविश्वसनीय समझता है। भारत में उनकी नीति तो आज काँग्रेस नेताओं को अपशब्द कहने तथा ब्रिटिश साम्राज्यवाद की सहायता करने की है। वे वर्तमान भारतीय स्वातन्त्र्य संग्राम के विरोधी होकर विदेशी साम्राज्यवादियों की सहायता करने म ही देश का तथा जगत् का कल्याण देख रहे हैं। पर उस समय राय महोदय

उग्र क्रान्तिकारी समझे जाते थे। चीन में जिस समय ये घटनायें घट रही थीं तृतीय इन्टरनेशनल के विशेष प्रतिनिधि बना कर राय महोदय मास्को से भेजे गये और इस सिलसिले में चीन पहुँचे। इस समय वे हांकाउ में डेरा डाले हुए थे। एक दिन उन्होंने वांगचिंगवेई को बुला भेजा।

पाठक वांगचिंगवेई को भूले न होंगे। डाक्टर सुनयात सेन की मृत्यु के बाद जिन तीन नेताओं पर कुओमिनतांग का भार आ पड़ा था उनमें वांग भी एक थे। हांकाउ सरकार के (जिसकी चर्चा पहले की जा चुकी है) वे अध्यक्ष थे। बाद में आत्मसम्मान के कारण पद त्याग करके हट गये थे। थोड़े दिन पहले उन्होंने पुनः राजनीति में प्रवेश किया और कुओमिनतांग के वामपक्षियों के साथ हांकाउ सरकार के समर्थक हो गये। वांग यों तो कुओमिनतांग के सिद्धान्तों के समर्थक और कट्टर राष्ट्रवादी थे पर च्यांगकाई से मतभेद हो जाने के कारण हांकाउ सरकार के साथ हो गये थे। राय महोदय ने वांग से मुलाकात होने पर कहा "मास्को से स्टालिन ने एक तार हमारे बोरोदिन के नाम भेजा है। आपको शायद बोरोदिन ने वह तार दिखाया होगा।" वांग ने उत्तर में निवेदन किया कि "बोरोदिन ने मुझे कोई तार नहीं दिखाया है।" इस पर राय ने उत्तर दिया, "बोरोदिन ने शायद यह समझ कर आपको तार न दिखाया होगा कि उसमें मास्को के गुप्त निर्णय उल्लिखित हैं। पर मैं समझता हूँ कि आपको उनका आशय बता देने में कोई हर्ज नहीं है बल्कि मुझे तो पूरा विश्वास है कि आप उस निर्णय से सहमत होंगे। लीजिये इसे पढ़ लीजिये।" यह कहकर उन्होंने मास्को का लिपिबद्ध सन्देश वांग के हाथ में रख दिया।

वांग ने पूरा सन्देश पढ़ डाला और पढ़कर स्तब्ध रह गये। कहा जाता है कि इस सन्देश में ये पाँच बातें कही गयी थीं।

(१) हूनान और हूपे के प्रान्त में सारी भूमि तत्काल जब्त कर ली जाय। इसके लिए सरकार से कुछ भी पूछने-ताछने की आवश्यकता नहीं है। यह काम कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में किसानों से कराया जाय।

(२) कुओमिनतांग में कम्युनिस्ट पार्टी का पूर्ण नेतृत्व स्थापित किया जाय और सभी विरोधी दबा दिये जायँ। अकम्युनिस्ट वामपक्ष कुचल दिया जाय।

(३) कुओमिंडताङ्ग का सगठन नये ढंग से इस प्रकार किया जाय कि समय आने पर वह लुप्त हो जाय और कम्यूनिस्ट पार्टी उसका स्थान ग्रहण कर ले।

(४) एक नयी अदालत स्थापित की जाय जो क्रान्ति के विरोधियों पर मुकदमे चलाये और यदि वे दोषी हों तो उन्हे दड दे।

(५) हुनान और हूपे में पचास हजार किसान मजदूरों की तथा बीस हजार कम्यूनिस्टों की एक शस्त्र-सज्जित सेना तुरन्त तैयार कर ली जाय।

वाङ इस सन्देश को पढकर घबरा उठे। अब तक वे इस भ्रम में थे कि कम्यूनिस्टों के सहयोग से डाक्टर सुनयात के सिद्धान्तों को कार्यान्वित किया जा सकेगा। आज उनकी आँखें खुल गयीं। उन्होंने राय से कहा, "डाक्टर सुनयात के जीवित रहते कम्यूनिस्टों से जो समझौता हुआ था उसके अनुसार तो दोनों के सहयोग से कुओमिङ्ताङ्ग के सिद्धान्तों को कार्यान्वित करने की बात तय हुई थी।" राय ने उत्तर दिया, 'वे बातें अब पुरानी हो गयीं और उन्हें बदलना है। मास्को के सन्देश को चुनौती के स्वरूप में उसकी आज्ञा समझिये।'

वाङ राय से यह कहकर चले आये कि वे इन शर्तों को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हैं। ऐसा मालूम होता है कि बोरोदिन ने जान-बूझकर इस तार का उल्लेख न पहले किया और न किसी को इसे दिखलाया था। वे जानते थे कि हाङ्कइ में इसका विरोध होगा और सम्भव है कि मामला अधिक तूल पकड़ जाय। पर जिस बात को उन्होंने बचाया उसे ही राय कर गुजरा। बोरोदिन को हाङ्कउ तथा साधारणत सारे चीन की स्थिति का पता था। पर मास्को में बैठे हुए जो ससार भर के विभिन्न देशों की नीति के संचालन की चेष्टा करते हैं वे बिना वास्तविक परिस्थिति समझे बूझे ही हुक्मनामे अपने दल के लोगों के नाम निकाला करते हैं। विविध देशों की कम्यूनिस्ट पार्टियों का सबसे बड़ा दोष यही है कि उन्हें मास्को के इशारे पर चलना पड़ता है और कभी कभी उन आज्ञाओं का परिपालन करने में अपने देश की वास्तविक स्थिति की न केवल उपेक्षा कर देनी पड़ती है बल्कि उसके अनुकूल नीति के विपरीत अपना [illegible]

कर

यही गति यहाँ भी हुई। राय ने मास्को का सन्देश क्या सुनाया हाङ्कङ् से कम्यूनिस्ट पार्टी की जड़ काट दी। जो वाम-पक्षी अब तक उनके साथ सहयोग कर रहे थे वे क्षुब्ध हो उठे। उन्होंने देखा कि कम्यूनिस्टों ने कुओमिङ्ताङ्ग में प्रवेश करके पहले अपनी प्रतिष्ठा स्थापित करने की चेष्टा की पर जब उनके पैर जमने लगे तो उन्होंने झगड़ा करके दक्षिण पक्षवालों को निकाला और कुओमिङ्ताङ्ग को विभक्त किया। इसमें उन्हें वाम पक्ष की सहायता मिली और उनकी स्थिति सुदृढ़ हुई। अब जिनके बल पर ये टिके और बढ़े हैं उन वाम पक्षियों को भी निकाल कर एकमेवाद्वितीय हो जाना चाहते हैं और इसके बाद कुओमिङ्ताङ्ग को भी विघटित करके उसके स्थान पर कम्यूनिस्ट पार्टी को स्थापित कर देने को तैयार हैं। इनकी नीति ही यह है कि जिसके समर्थन और सहयोग पर बढ़े उसी को बाद में बेदखल करके स्वयम् जम जायँ। यह देख कर उन्होंने निश्चय कर लिया कि अब कम्यूनिस्टों से सम्बन्ध विच्छेद करने के सिवा अपने बचाव का भी दूसरा मार्ग नहीं है। इधर चेङ्ग का तार भी आ गया था। कुछ ऐसा संयोग हुआ कि दोनों बातें प्राय साथ ही साथ घटित हुईं। हाङ्कङ् के लोग चेङ्ग की बातें तो स्वीकार न करते पर स्वयम् कम्यूनिस्टों की कुचाल और अदूरदर्शिता ने उन्हें वही करने को बाध्य किया जो चेङ्ग और च्याङ्ग चाहते थे।

वाङ्ग के घर पर इस स्थिति के सम्बन्ध में विचार करने के लिए हाङ्कङ् के वामपक्षी इकट्ठा हुए। बहुत वाद विवाद के बाद वे इस परिणाम पर पहुँचे कि अब कम्यूनिस्टों से नाता तोड़ना ही एक मात्र उपाय रह गया है। हाङ्कङ् के कुओमिङ्ताङ्ग में और सरकार में अब भी ऐसे वामपक्षियों का बहुमत था जो सोलहो आने कम्यूनिस्ट नहीं थे। इन्होंने तय किया कि कम्यूनिस्ट पार्टी गैर कानूनी करार दी जाय, बोरोदिन, ब्लुचर तथा राय आदि सोवियेत वाले तुरन्त मास्को वापस कर दिये जायँ और कम्यूनिस्टों का सारा आन्दोलन रोक दिया जाय। यह निर्णय करने के बाद ये राजनीतिज्ञ अभी उसे कार्यान्वित भी नहीं कर पाये थे कि हाङ्कङ् के सैनिक जो वामपक्षी सेनापतियों के अधीन थे शेर की भाँति कम्यूनिस्टों पर टूट पड़े। उन्होंने कम्यूनिस्ट पार्टी के दफ़्तर पर धावा कर दिया, मजदूर-संघों के कार्यालयों पर कब्ज़ा कर लिया और अनेक कार्यकर्ताओं को

गिरफ़ार करके हिरासत में ले लिया। कम्यूनिस्टों के अधिकतर नेता नगर से निकल भागे। बोरोदिन, राय आदि को बाध्य किया गया कि वे तत्काल रूस वापस चले जायँ। थोड़े ही दिनों बाद ये लोग रूस जाते नजर आये।

कुछ कम्यूनिस्ट जिनके साथ में थोडे सैनिक भी थे उनके साथ हाङ्कउ से निकल गये और नाङ्चाङ्ग में जाकर आसन जमाने की चेष्टा करने लगे। वहाँ उन्होंने विद्रोह की पताका लहरायी और हाङ्कउ राज्य से अपने को स्वतन्त्र घोषित कर दिया। अब क्या था? हाङ्कउ के सैनिक नाङ्चाङ्ग पर टूट पडे। चारों ओर मार-काट मच गयी और आतंक का राज्य स्थापित हो गया। कम्यूनिस्ट विद्रोही जहाँ मिले तलवार के घाट उतार दिये गये। तीन दिन के भीतर उनका यह विद्रोह भी कुचल दिया गया। च्याङ्काई-शेक को जो करना पड़ा था और जिसके विरुद्ध वामपक्षियों ने उनसे झगड़ा किया, वह एक दिन उन्हें भी करना पडा। अब कम्यूनिस्ट निकल गये अत हाङ्कउ और नाङ्किङ्ग के बीच का काँटा उखड़ गया। दोनों ओर के नेताओं में यह भाव उठने लगा कि उन्हें एक हो जाना चाहिए और अपने मतभेदों को मिटा कर राष्ट्रीय क्रान्ति का जो काम अधूरा रह गया है उसे पूरा कर डालना चाहिए। दोनों ओर से इसकी चेष्टा भी होने लगी, पर जहाँ च्याङ्काई के लिए कम्यूनिस्ट ऐसे कंटक बने जो उन्हें हाङ्कउ से अलग रखे हुए थे वहाँ अब वामपक्षियों को भी स्वयम् च्याङ्काई शेक से यही शिकायत हो गयी। वे नाङ्किङ्ग पक्ष से मिलने को तैयार थे। पर चाहते थे कि च्याङ्काई की प्रभुता न रहने पाये। दोनों दलों की एकता में अब केवल च्याङ्क बाधक दिखायी देते थे।

व्यक्तिगत प्रतिद्वन्द्विता सार्वजनिक कार्यों तथा महान् आदर्शों में भी किस प्रकार बाधक हो जाती है इसका एक प्रमाण यह भी है। ये लोग सभी देशभक्त थे। सभी राष्ट्रीय एकता और उसकी स्वतन्त्रता के लिए सर्वस्व का परित्याग करके संकट का सामना कर रहे थे। सभी ने साथ-साथ कष्ट उठाया था, ठोकरें खायी थीं और साधना की आग में जले थे। पर आज व्यक्तिगत पसन्दगी और नापसन्दगी तथा प्रतिद्वन्द्विता उसी कार्य में बाधक हो रही थी जिसकी पूर्ति के लिए वे अपने सर्वस्व की बाजी लगाने को तैयार थे। मानव-स्वभाव और उसकी गति ऐसी रहस्यमय और विचित्र है कि

यही गति यहाँ भी हुई। राय ने मास्को का सन्देश क्या सुनाया हाङ्कइ से कम्यूनिस्ट पार्टी की जड़ काट दी। जो वाम पक्षी अब तक उनके साथ सहयोग कर रहे थे वे क्षुब्ध हो उठे। उन्होंने देखा कि कम्यूनिस्टों ने कुओमिङताङ्ग में प्रवेश करके पहले अपनी प्रतिष्ठा स्थापित करने की चेष्टा की पर जब उनके पैर जमने लगे तो उन्होंने झगड़ा करके दक्षिण पक्षवालों को निकाला और कुओमिङताङ्ग को विभक्त किया। इसमें उन्हें वाम पक्ष की सहायता मिली और उनकी स्थिति सुदृढ़ हुई। अब जिनके बल पर ये टिके और बढ़े हैं उन वाम पक्षियों को भी निकाल कर एकमेवाद्वितीय हो जाना चाहते हैं और इसके बाद कुओमिन्ताङ्ग को भी विघटित करके उसके स्थान पर कम्यूनिस्ट पार्टी को स्थापित कर देने को तैयार हैं। इनकी नीति ही यह है कि जिसके समर्थन और सहयोग पर बढ़े उसी को बाद में बेदखल करके स्वयम् जम जायें। यह देख कर उन्होंने निश्चय कर लिया कि अब कम्यूनिस्टों से सम्बन्ध विच्छेद करने के सिवा अपने बचाव का भी दूसरा मार्ग नहीं है। इधर फेङ का तार भी आ गया था। कुछ ऐसा संयोग हुआ कि दोनों बातें प्राय साथ ही साथ घटित हुईं। हाङ्कइ के लोग फेङ की बातें तो स्वीकार न करते पर स्वयम् कम्यूनिस्टों की कुचाल और अदूरदर्शिता ने उन्हें वही करने को बाध्य किया जो फेङ और च्याङ्कई चाहते थे।

वाङ्ग के घर पर इस स्थिति के सम्बन्ध में विचार करने के लिए हाङ्कइ के वामपक्षी इकट्ठा हुए। बहुत वाद विवाद के बाद वे इस परिणाम पर पहुँचे कि अब कम्यूनिस्टों से नाता तोड़ना ही एक मात्र उपाय रह गया है। हाङ्कइ के कुओमिङताङ्ग में और सरकार में अब भी ऐसे वामपक्षियों का बहुमत था जो सोलहो आने कम्यूनिस्ट नहीं थे। इन्होंने तय किया कि कम्यूनिस्ट पार्टी गैर कानूनी करार दी जाय, बोरोदिन, ब्लुचर तथा राय आदि सोवियेत वाले तुरन्त मास्को वापस कर दिये जायँ और कम्यूनिस्टों का सारा आन्दोलन रोक दिया जाय। यह निर्णय करने के बाद ये राजनीतिज्ञ अभी उसे कार्यान्वित भी नहीं कर पाये थे कि हाङ्कइ के सैनिक जो वामपक्षी सेनापतियों के अधीन थे शेर की भाँति कम्यूनिस्टों पर टूट पड़ें। उन्होंने कम्यूनिस्ट पार्टी के दफ्तर पर धावा कर दिया, मजदूर-संघों के कार्यालयों पर कब्जा कर लिया और अनेक कार्यकर्ताओं को

गिरफ्तार करके हिरासत में ले लिया। कम्यूनिस्टों के अधिकतर नेता नगर से निकल भागे। वोरोदिन, राय आदि को बाध्य किया गया कि वे तत्काल रूस वापस चले जायँ। थोड़े ही दिनों बाद ये लोग रूस जाते नजर आये।

कुछ कम्यूनिस्ट जिनके साथ में थोड़े सैनिक भी थे उनके साथ हाङ्कङ से निकल गये और नाङचाङ्ग में जाकर आसन जमाने की चेष्टा करने लगे। वहाँ उन्होंने विद्रोह की पताका लहरायी और हाङ्कङ राज्य से अपने को स्वतन्त्र घोषित कर दिया। अब क्या था? हाङ्कङ के सैनिक नाङचाङ्ग पर टूट पड़े। चारों ओर मार-काट मच गयी और आतंक का राज्य स्थापित हो गया। कम्यूनिस्ट विद्रोही जहाँ मिले तलवार के घाट उतार दिये गये। तीन दिन के भीतर उनका यह विद्रोह भी कुचल दिया गया। च्याङ्काई शेक को जो करना पड़ा था और जिसके विरुद्ध वामपक्षियों ने उनसे झगड़ा किया, वह एक दिन उन्हें भी करना पड़ा। अब कम्यूनिस्ट निकल गये अत हाङ्कङ और नाङ्किङ्ग के बीच का काँटा उखड़ गया। दोनों ओर के नेताओं में यह भाव उठने लगा कि उन्हें एक हो जाना चाहिए और अपने मतभेदों को मिटा कर राष्ट्रीय क्रान्ति का जो काम अधूरा रह गया है उसे पूरा कर डालना चाहिए। दोनों ओर से इसकी चेष्टा भी होने लगी, पर जहाँ च्याङ्काई के लिए कम्यूनिस्ट ऐसे कटक बने जो उन्हें हाङ्कङ से अलग रखे हुए थे वहाँ अब वामपक्षियों को भी स्वयम् च्याङ्काई शेक से यही शिकायत हो गयी। वे नाङ्किङ्ग पक्ष से मिलने को तैयार थे।पर चाहते थे कि च्याङ्काई की प्रमुता न रहने पाये। दोनों दलों की एकता में अब केवल च्याङ बाधक दिखायी देते थे।

व्यक्ति-गत प्रतिद्वन्द्विता सार्वजनिक कार्यों तथा महान् आदर्शों में भी किस प्रकार बाधक हो जाती है इसका एक प्रमाण यह भी है। ये लोग सभी देशभक्त थे। सभी राष्ट्रीय एकता और उसकी स्वतन्त्रता के लिए सर्वस्व का परित्याग करके सकट का सामना कर रहे थे। सभी ने साथ-साथ कष्ट उठाया था, ठोकरें खायी थीं और साधना की आग में जले थे। पर आज व्यक्तिगत पसन्दगी और नापसन्दगी तथा प्रतिद्वन्द्विता उसी कार्य में बाधक हो रही थी जिसकी पूर्ति के लिए वे अपने सर्वस्व की बाजी लगाने को तैयार थे। मानव-स्वभाव और उसकी गति ऐसी रहस्यमय और विचित्र है कि

उसकी व्याख्या करना कठिन हो जाता है। मनुष्य एक पहेली है और शायद पहेली ही बना रहेगा।

फलत इच्छा रखते हुए और सब समझते हुए भी वाम पक्षी च्याङ्ग के रहते किसी प्रकार नाङ्किङ्ग से सहयोग करने के लिए अपने को तैयार न कर सके। दोनों ओर से प्रयत्न होते पर इसी चट्टान पर सहयोग की नाव टकरा कर चूर हो जाती। अब दो ही मार्ग बाकी रह गये थे। या तो हाङ्काउ और नाङ्किङ्ग में दो सरकारें अलग अलग चलती रहें या च्याङ्गई पद त्याग करें और सहयोग स्थापित हो। सहसा १२ अगस्त सन् १९२७ को नाङ्किङ्ग की सैनिक परिषद् में भाषण करते हुए च्याङ्गई ने पद त्याग करके राजनीति से अवकाश ग्रहण करने की घोषणा कर दी।

इसके पहले किसी को इतना सकेत भी नहीं मिल सका था कि च्याङ्गई यह कदम उठाने जा रहे हैं। उनके सुयश, प्रभाव और प्रतिष्ठा की उत्तुग पताका आकाश में फहरा रही थी। इस समय कोई ऐसा व्यक्ति चीन में नहीं था जो शक्ति मे, यश मे, प्रतिष्ठा में और प्रभाव में च्याङ्गई से बढ़ा हुआ रहा हो। नाङ्किङ्ग की सरकार के एक मात्र अधिपति, जनता के अन्यतम नेता, सैनिकों के प्रिय सेनापति तथा राष्ट्रवादी वर्ग के दृढ आधार के रूप में वे सुप्रतिष्ठित थे। पर च्याङ्ग इन सबसे बढ़ कर देशभक्त थे। उनका चरित्र महान् और उज्वल था। व्यक्तिगत हिताहित की चिन्ता करने वाले व्यक्ति वे नहीं थे। उन्होंने देखा कि उनके कारण राष्ट्रवादियों में विरोध हो रहा है, उनकी शक्ति विघटित हो रही है, देश की अपरिमित हानि हो रही है और राष्ट्रीय एकता और अक्षुण्ण स्वतन्त्रता का महान् लक्ष्य धूमिल हो रहा है। मातृभूमि तो यह अपेक्षा कर रही थी कि राष्ट्रभक्त एक होकर उसके उद्धार का मार्ग प्रशस्त करें। उसे आवश्यकता थी राष्ट्रवादियों की सम्मिलित शक्ति की। च्याङ्गई यदि इसमें बाधक हो रहे थे तो उस बाधा का निराकरण करना ही उन्होंने अपना कर्तव्य समझा—भले ही ऐसा करने में उन्हें अपनी प्रतिष्ठा, यश और अधिकार का विसर्जन करना पड़ता। पर जिसने अपने व्यक्तित्व को राष्ट्र के सामूहिक हित में लुप्त कर दिया हो, जो देश के लिए अपनी प्रिय से प्रिय वस्तु का त्याग करने को तैयार हो, उसके सामने व्यक्तिगत हिताहित का प्रश्न कैसे उठ सकता है। फलत उन्होंने

एकता के लिए, कुओमिन्ताङ्ग के लिए और देश के हित के लिए पद त्याग करने का निश्चय करके उसकी घोषणा कर दी।

यह घटना इस व्यक्ति के महान् और उज्ज्वल चरित्र की द्योतक है। सबके लिए ऐसा करना सरल नहीं है। यह वही कर सकता है जो नैतिकता के आधार पर खड़ा हो, जिसका जीवन आदर्शों की उत्प्रेरणा से पुनीत हो गया हो और जो किसी उत्कृष्ट लक्ष्य को लेकर धरती पर अवतीर्ण हुआ हो। लेखक को च्याङ्कई के चरित्र की इस घटना से अपने देश के महान् नेता और मानवता की परम विभूति महात्मा गाँधी का स्मरण हो आता है। गत बीस वर्षों से वे देश के राजनीतिक आकाश में प्रचण्ड सूर्य की भाँति प्रकाशमान हैं। अब तक कोई ऐसा व्यक्तित्व उत्पन्न नहीं हुआ जो गाँधी जी की प्रतिद्वन्द्विता में खड़ा हो सके। उनके इशारे पर आसेतु हिमाचल भारत-वसुन्धरा चलायमान हो जाती है, पर वही गाँधी जी इन बीस वर्षों में एकाधिक बार कांग्रेस की एकता को बनाये रखने के लिए राष्ट्रीय आन्दोलन से तथा कांग्रेस से अपने को अलग करके नेतृत्व दूसरों के हाथ सौंप चुके हैं। पर गाँधी जी तपस्वी हैं, विरक्त हैं और महान् ऋषि हैं। उनकी विशेषता इसी में है। सदा से अपरिग्रह और त्याग की साधना करते हुए वे सिद्धावस्था को पहुँच गये हैं। च्याङ्कईशेक पर तो आरोप यह था कि वे अधिनायक बनना और सारी शक्ति को स्वयम् हथियाना चाहते हैं। पर उसी व्यक्ति के जीवन की यह घटना उन आरोपों का प्रबल खंडन करती है।

च्याङ्कईशेक ने पद त्याग करते हुए नाङ्किङ्ग की सैनिक काउन्सिल के सामने जो भाषण किया, उसके कुछ अंश उद्धृत कर देना उचित प्रतीत होता है। च्याङ्कई शेक ने कहा —

"मैं साधारण हैसियत का व्यक्ति था और मैंने विद्या भी अधिक उपार्जित नहीं की थी पर सौभाग्य से मुझे डाक्टर सुङ्यात सेन के समान शिक्षक मिला जिससे मैंने सच्चरित्रता का पाठ पढ़ा। उनकी शिक्षा के फल स्वरूप मैंने दो निश्चय कर लिये हैं जिनका परित्याग मैं कभी नहीं कर सकता। पहली बात तो मैं यह मानता हूँ कि जिस पार्टी या दल का मैं सदस्य हूँ वह सर्वोपरि स्थान रखती है। जब कभी पार्टी के हित को सङ्कटापन्न हुआ पाये तो प्रत्येक ईमानदार व्यक्ति का एक ही कर्तव्य हो सकता है और वह यह कि वह

अपने व्यक्तिगत हित तथा स्वार्थ की बलि चढ़ाकर पार्टी के हित की रक्षा करे। दूसरी बात मैं यह जानता हूँ कि प्रत्येक व्यक्ति का यह धर्म है कि वह पार्टी के आधार को सुदृढ़ बनाने में अपनी सारी शक्ति लगा दे। इसी कारण मैंने दृढ निश्चय कर लिया है कि ऐसे सब लोगों का जो कुचक्र रच कर हमारे दल की नीति को निर्बल बनाने की कुचेष्टा और हमारे सिद्धान्तों को भ्रष्ट करने का यत्न कर रहे हैं समस्त सम्भव और उपलब्ध साधनों से दमन करूँ। मैं ऐसे लोगों का शक्ति भर सामना करूँगा जो कूश्रोमिङताङ्ग को निष्प्राण बनाने का यत्न कर रहे हैं।"

'मेरे लिए जीवन और मृत्यु दोनों समान हैं—यदि मैं उनमें से किसी का अवलम्बन करके अपने दल का कल्याण कर सकूँ। यदि सक्रिय होकर मैं अपने दल की भलाई कर सकता हूँ तो मैं सक्रिय बनूँगा और किसी भी कार्य को चाहे वह कितना भी कठिन क्यों न हो पूरा करने में न हिचकूँगा। इसी प्रकार यदि कभी दल के हित के लिए मेरी निष्क्रियता तथा अवसर ग्रहण करना आवश्यक होता हो तो मैं तत्काल अपने व्यक्तिगत भावों को दबा कर हट जाने के लिए तैयार हो जाऊँगा। आज से पूर्व पार्टी ने जब कभी मुझे कोई आज्ञा दी मैं उसे पूरा करने लिए दौड़ पड़ा। आज यदि पार्टी से मेरे हट जाने से आपस का मतभेद दूर हो रहा हो और हमारी राष्ट्रीय भित्ति दृढ़तर हो रही हो तो मैं हट कर और अज्ञात वास करके भी उसकी सेवा करने में गौरव का अनुभव करूँगा। इसी प्रकार मैं प्रत्येक सदस्य से आशा करता हूँ कि वह अपने मतभेदों को भूल कर पार्टी की रक्षा में दत्तचित होगा और ऐसे लोगों के विरुद्ध जो उसे नष्ट करना चाहते हैं एक होकर खड़ा हो जाना अपना कर्तव्य समझेगा। इसी कारण कम्यूनिस्टों के दमन के सम्बन्ध में मैंने किसी की एक नहीं सुनी और पार्टी की रक्षा के लिए इस बात पर चट्टान की भाँति अड़ा रहा। मेरा यह विश्वास है कि ये कुचक्री जब तक रहेंगे तब तक षड्यन्त्र करते रहेंगे और ये तब तक चैन न लेंगे जब तक हमारे दल का जीवन रस न चूस लें। मैं कूश्रोमिङताङ्ग का सदस्य और सेवक हूँ। इस कारण मेरे लिए यह असम्भव है कि मैं अपने दल की दुर्दशा होते हुए देखूँ। मेरे लिए आवश्यक हो जाता है कि मैं दृढ़तापूर्वक इनके विरुद्ध युद्ध करते रहने का निश्चय करूँ। मैं चीन और रूस की मित्रता का समर्थक

के लिए सदा तैयार हूँ। यदि मेरे मित्र मेरे किसी काम को अक्षम्य अपराध समझते हैं और उसके लिए मुझे दण्ड देना चाहते हैं तो मैं प्रसन्नतापूर्वक उसे शिरोधार्य करने को तैयार हूँ और उसे अपने लिए गौरव की बात समझूँगा। मुझे केवल प्रार्थना इतनी करनी है कि हमारे जो भाई हमसे अलग हो गये थे वे पुनः आ जायें। हमारे सामने केवल एक काम है। आरम्भ से ही उसकी भावना हमारे मन रही है। आज हमारी जितनी शक्ति है उसे एकत्र करके हमें उस काम को पूरा करना है। यदि हमने पहले इसे किया होता तो अब तक लक्ष्य की सिद्धि हो गयी होती। दुर्भाग्य से यह नहीं हुआ। पर जो नहीं हुआ उसे अब करना ही चाहिए। पीकिङ्ग पर क्रान्ति की पताका सगर्व ऊँचा किये लहराये और जल्दी से जल्दी लहराये यही सारे राष्ट्र की एक मात्र भावना है। क्या कारण हो सकता है हमारे लिए इसमें विलम्ब करने का? हमारी प्रत्येक गोली हमारे शत्रुओं के विरुद्ध काम में आनी चाहिए, हमारा एक-एक बूँद रक्त राष्ट्रीय एकता और स्वतन्त्रता की स्थापना में लगना चाहिए।"

यदि हम मन में कभी हमारी व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षा स्थान अथवा हित घर कर ले और कभी भी हम किसी के बहकावे में आकर पथ से भटक जायें तो यह अशुभ मुहूर्त हमारे राष्ट्र के इतिहास में अमिट कलंक की कालिमा के रूप में हमें लज्जित करता रहेगा। परस्पर के झगड़ों का एकमात्र परिणाम हमारी शक्ति का ह्रास ही हो सकता है। हम परस्पर लड़कर देश की दुर्दशा और उसके अपमान की अवधि को बढ़ाने का ही जघन्य पाप करते हैं। मेरे लिए यह बात कल्पना से भी परे है कि मैं जिसने संकट के समय और भयावने खतरों में अपने साथियों का नयन किया है आज झगड़े तथा अपने साथियों के कष्ट का कारण बनूँ और मुझे हटाने के लिए उन्हें संघर्ष करना पड़े। मैं अपने साथियों को यह कष्ट उठाने न दूँगा। हमारी क्रान्ति व्यक्तिगत झगड़ों में समाप्त नहीं हो सकती। हमने महान् त्याग करके और भारी बाजी लगाकर क्रान्ति का सूत्रपात किया था। आज हम अधिकार-लोलुपता, व्यक्तिगत प्रतिद्वन्द्विता और महत्त्वाकांक्षा के द्वारा अपने ही हाथों उसका गला नहीं घोंट सकते। हाङ्कौ के मेरे मित्रो! आप क्यों हिचक रहे हैं? आइये और हम सब मिलकर पतनोन्मुख सैनिक शासकों का सफाया कर दें। मैं स्वयम्

हटने के पूर्व एक बात और यह जाना चाहता हूँ। मैं सिर्फ इतना कहता हूँ कि सावधान रहिये और कम्यूनिज्म को सिर उठाने का मौका न दीजिये।"

च्याङ्ग के इस भाषण को विस्तार से उद्धृत इसलिए किया गया है कि वह उस महाप्राण के चरित्र पर प्रकाश डालता है। उनके एक-एक वाक्य में देश के लिए कितनी विकलता और वेदना भरी है। उनके विश्वास और सिद्धान्तपरता म कितना नैष्ठिक विश्वास प्रकट होता है और राष्ट्र के लिए अहमभाव का कितना त्याग और दमन प्रदर्शित है। चरित्र की यह उचाशयता, हृदय की यह उदारता और साहस उन्हें महान् बनाये हुए हैं। ऐसे कितने नर रत्न मिलेंगे जो स्वोपार्जित प्रतिष्ठा और अधिकार को तृणवत् समझ कर राष्ट्र के हित के लिए त्याग कर दें। च्याङ्कई वीर और साहसी सैनिक तो प्रसिद्ध थे पर किसी ने कल्पना नहीं की थी कि उनमें इतनी असीम त्याग भावना भी है। उनके इस भाषण और निर्णय को सुनकर उनके साथी पहले तो स्तब्ध रह गये, फिर रो पडे। पर उन्होंने जो तय कर लिया था वह अटल था।

यह घटना १२ अगस्त को हुई। १४ अगस्त को कूओमिङताङ्ग के दोनों पक्षों का एक सम्मेलन नाङ्किङ्ग में हुआ। अब वामपक्षियों के लिए शिकायत की कोई जगह नहीं रह गयी थी। उन्होंने आशा भी नहीं की थी कि च्याङ्कई पद और प्रतिष्ठा तथा अधिकार को इस प्रकार ठुकरा कर देश की दृष्टि मे उससे कहीं अधिक आदर और सम्मान प्राप्त करेंगे। वामपक्षी लज्जित हुए, पर अब उनके लिए उपाय क्या था। सम्मेलन में निश्चय हुआ कि नाङ्किङ्ग राष्ट्रीय सरकार की राजधानी मान ली जाय और कूओमिङ्ताङ्ग की केन्द्रीय समिति तथा निरीक्षण समिति का चतुर्थ साधारण अधिवेशन शीघ्र ही बुलाया जाय। सबमें सहयोग स्थापित हुआ और निश्चय हुआ कि उत्तर-विजय के लिए जितना शीघ्र हो सके सैन्य सञ्चालन किया जाय।

च्याङ्कई के पद-त्याग की खबर फैलते ही चारों ओर जैसे निराशा छा गयी। उनसे प्रार्थना की जाने लगी कि त्यागपत्र वापस ले लें और अपने निर्णय पर पुन विचार करें। विभिन्न संस्थाओं, अधिकारियों, तथा नेताओं ने तार और पत्र भेज कर उनसे प्रार्थना की। देश भर में अनेक सभाएँ हुईं, प्रस्ताव पास किये गये और अनुरोध किया गया

कि वे अपना त्याग-पत्र वापस ले लें। पर च्याङ ने समझ बूझकर पद त्याग किया था और निर्णय किया था उस पर दृढ़ रहने के लिए।

उन्होंने अपने गाँव की ओर जाने का निश्चय किया और रवाना भी हो गये। गत सोलह वर्षों से अपने जीवन का एक-एक मिनट उन्होंने देश-सेवा के लिए दिया था। च्याङ ने इस अवधि में यह भी नहीं जाना कि विश्राम और भोग विलास कहते किसे हैं। महान् उत्तरदायित्व के भार को अपने सुदृढ़ स्कन्धों पर लिये हुए यह कर्मठ व्यक्ति अनवरत परिश्रम करता रहा। आज मानों उसके सिर से बोझ उतर गया था। प्रसन्न वदन वे उस नाङ्किङ्ग से रवाना हुए जिस पर विजय-वैजयन्ती फहराने वाले वे स्वयम् थे और जिसे राष्ट्रीय सरकार की राजधानी के महान् पद पर प्रतिष्ठित भी उन्हीं ने किया था। आज वह सब छोड़कर वे रवाना हो गये। नाङ्किङ्ग के सरकारी पदों पर बहुत से लोग थे जिन्होंने च्याङ्कई के साथ-साथ पद-त्याग कर दिया।

नाङ्किङ्ग से च्याङ अपने प्रान्त चेक्याङ के लिए रवाना हो गये। चेक्याङ वन पर्वतों और प्राकृतिक दृश्यों के लिए प्रसिद्ध है। वहाँ एक पर्वत के शिखर पर सुन्दर रम्य और एकान्त स्थान में एक बौद्ध विहार बना हुआ था। सघन वन और पर्वतों की गोद में खेलने वाले जलप्रपातों के कारण उसकी मनोरमता दुगुनी हो गयी थी। च्याङ ने इसी एकान्त स्थान को पसन्द किया। उन्हें मनन और चिन्तन के लिए एकान्त तथा स्वास्थ्य-लाभ और मनोरंजन के लिए शुद्ध पार्वतीय अनिल तथा मनोहर दृश्य प्राप्त हो गया। फिर तो उन्होंने उसी विहार में अपना निवास स्थान बना लिया।

इसके पूर्व कि नाङ्किङ्ग की नयी सरकार और देश के सामने उत्पन्न नयी परिस्थितियों का उल्लेख किया जाय, यह उचित प्रतीत होता है कि सम्प्रति विरक्ति और एकान्त-सेवन का व्रत लेने वाले इस महान् व्यक्ति के तत्कालीन व्यक्तिगत जीवन का कुछ वर्णन कर दिया जाय। च्याङ्कइ राजनीतिक क्षेत्र से अवश्य हट गये पर अपने मन से वे देश की समस्याओं को निकाल नहीं सके। राष्ट्र जिसके जीवन का सजीव अंग बन गया हो वह भला उसे काट कर अलग कैसे फेंक सकता है। उनके तो रक्त की प्रत्येक बूँद में एक महान् लक्ष्य की प्रतिछाया पड़ी हुई थी। जिस राष्ट्र के लिए उन्होंने अपने सर्वस्व तक का

त्याग किया उसे भूलना कैसे सम्भव होता ? फलत वे अपने एकान्त स्थान से, उत्तुग गिरि शृंग से चीन की धरती की ओर बराबर देखते रहे। देश में घटने वाली घटनाओं तथा परिस्थितियों की गति विधि का उन्हें पूरा ज्ञान बना रहा। यद्यपि वे इस समय चीन के सुदूर प्रान्त के एक कोने में जाकर बैठे थे पर मिलने वाले वहाँ भी जाकर उनसे मिलने से बाज नहीं आते थे। पत्रकारों के लिए कोई स्थान अगम्य नहीं हुआ करता। ये जल में, थल में, नभ में, उदधि के गर्भ में और पर्वत की चोटी पर-सर्वत्र पहुँच जाया करते हैं। भला ये जीव च्याङ्ग को कब छोड़ने वाले थे। ऐसे कतिपय पत्रकारों ने उनके तत्कालीन जीवन का जो प्रतिबिम्ब पाया उसका वर्णन हमें प्राप्त है। इन वर्णनों से उनके उस समय के जीवन और विचारों पर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

एक पत्रकार लिखता है कि इस बीहड़ वन पर्वत वाले स्थान में एकान्त वास करते हुए भी जनरल च्याङ्ग अपने देश की समस्या की चिन्ता से छुटकारा नहीं पाते—यद्यपि वे उसे भूलने का प्रयत्न करते दिखायी देते हैं। ऊबड़-खाबड़ भूमि और नदी नालों तथा खोह-कन्दराओं को पार करते और उछलते-कूदते लाँघते फाँदते हम उस मन्दिर तक पहुँच पाये जहाँ च्याङ्ग का निवास है। जब हम पहुँचे तो ज्ञात हुआ कि च्याङ्ग चिट्ठियाँ लिख रहे हैं। हमें पता लगा कि उनकी लम्बी डाक आ जाया करती है और काफी बड़ी सख्या मे खत किताबत हुआ करती है। थोडी देर बाद जनरल बाहर निकले। उनके मुख पर तेज और सुस्वास्थ्य के चिह्न स्पष्ट थे। पीले रग का लम्बा चोगा उनके सुदृढ़ शरीर पर पडा हुआ था। इस पोशाक में वे बौद्ध भिक्षु की भाँति दिखायी देते थे। साधारण शिष्टाचार की रस्मों की अदायगी के बाद हम परस्पर बातचीत करने लगे। हमने जनरल से कई प्रश्न किये, उनके भावी कार्यक्रम के सम्बन्ध में, चीन की राष्ट्रीय स्थिति के सम्बन्ध में तथा और बहुत से दूसरे विषयों के सम्बन्ध में। जनरल ने अपने भावी कार्यक्रम के सम्बन्ध में बातें करते हुए कहा, "मेरा इरादा अमेरिका और युरोप की यात्रा करने का है। मैं भावी पाँच वर्ष उन पश्चिमी राष्ट्रों के जीवन की जानकारी प्राप्त करने में बिताना चाहता हूँ जो आज महान् हैं और जिनकी पंक्ति में चीन को स्थान पाना है। मैं जल्द ही शङ्घाई के लिए रवाना

होने वाला हूँ और वहाँ अपना प्रबन्ध पूरा करके पहले अमेरिका जाना चाहूँगा।" यह पूछने पर कि चीन की भावी राजनीतिक प्रगति प्रजातन्त्र की ओर होगी या साम्यवाद की ओर, जनरल ने दृढ़तापूर्वक उत्तर दिया—'निश्चित रूप से प्रजातन्त्र की ओर।' उन्होंने सतेज दृष्टि से लोगों की ओर देखते हुए तीव्रतापूर्वक कहा"—'चीन के वायुमंडल से कम्यूनिस्ट पार्टी का नाम और उसका प्रभाव भी निर्मूल कर दिया जायगा।'

उनकी बातचीत से मालूम हुआ कि कम्यूनिस्टों ने राष्ट्रीय आन्दोलन पर जो घातक प्रभाव डाला था उससे उनका हृदय वेदना से भर गया है। वे स्पष्टता और कटुता से उनके सम्बन्ध में बातें कर रहे थे। उनके शब्दों में साफ-साफ विचारों की सुलझाहट दिखायी देती थी और यह अनुभव हो रहा था कि इस व्यक्ति का मस्तिष्क स्पष्ट और तीव्र गति से चलायमान है। उन्हें देखने और उनसे बातें करने ही में यह भावना हुई कि वह सुदृढ़ चरित्र के व्यक्ति हैं और आज चीन इसी प्रकार के नेता की अपेक्षा करता है। किसी को उनकी ईमानदारी में सन्देह करने की गुंजायश भी नहीं हो सकती थी।' च्याङ के इस अवकाश के समय उनसे मिलने वालों की कमी नहीं था। हमें उनके सम्बन्ध में, उनके तत्कालीन जीवन के बयान में, अनेक पत्र संवाददाताओं की लेखनी से प्रादुर्भूत विवरण प्राप्त हैं, जिनसे पता चलता है कि च्याङ्कई के भावी राजनीतिक जीवन की नाव इसी शान्त और मननशील तथा अचिन्त्य वातावरण में पड़ने लगी थी।

च्याङ्कई ने गत सोलह वर्ष तक राष्ट्रीय उथल पुथल के आन्दोलन में भाग लेकर न जाने कितना अनुभव प्राप्त किया था। अपने देश को, साथियों को और मानवस्वभाव को समझने का उन्हें पर्याप्त अवसर प्राप्त हुआ था। अपने अनुभवों के प्रकाश में अपने को और अपने भावी कार्यक्रम को पहचानने और स्थिर करने का सुयोग उन्हें मिल गया था। ऐसा ज्ञात होता है कि इसी समय उन्होंने यह अनुभव किया कि चीन को अपनी राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय नीति में बहुत कुछ सुधार करना होगा। सम्प्रति उनके सामने बहुत से प्रश्न थे। सबसे बड़ा प्रश्न तो अपने राष्ट्र की वर्तमान दुरवस्था का ही था। एक समय था जब चीन महान था पर आज उसका घोर पतन हो गया था।

च्याङ्कई ने देखा कि इस पतन की कोई सीमा नहीं है। जब कोई गिरता है तो वह स्वयम् ही उठने की चेष्टा करता है। यदि अकेले अपनी चेष्टा से नहीं उठ पाता तो ऐसे लोगों का सहारा खोजता है जो उठने में उसकी सहायता कर सकें। यह साधारण नियम है। पर जब इसका विपर्यय होता दिखायी दे तो फिर क्या समझना चाहिए? यदि आप यह देखें कि कोई गिरता है और गिर कर जहाँ पहुँचता है उसी स्थिति को अपने लिए उपयुक्त और सौभाग्यपूर्ण समझता है तो अवश्य मानना पड़ेगा कि उस व्यक्ति के जीवन में कहीं न कहीं विकार अवश्य है। चीन की यही दशा थी। वह गिरा पर गिर कर उठने की चेष्टा तो दूर रही वह उसी स्थिति में पड़ा रहने में अपने को भाग्यवान समझने लगा। पराधीनता और दलन से उसे मानो प्रेम हो गया। पर उस देश के पतन की सीमा असीम हो उठती है तब जब हम यह देखते हैं कि वह स्वयम् तो उठना नहीं चाहता और जब दूसरे उसे आकर जागृत करने की चेष्टा करते हैं तो वह जगानेवाले को ही शत्रु समझता है। यह स्थिति जब किसी राष्ट्र की हो जाय तो समझ लीजिये कि उसके चरित्र का भीषण पतन हो चुका है।

च्याङ्कई ने देखा कि राष्ट्रीय चरित्र का यह ह्रास ही देश के विनाश का कारण है। इस पतन का ही परिणाम था कि राष्ट्र की उन्नति के लिए सचेष्ट क्रान्तिकारियों को बारबार अपने प्रयत्न में विफल होना पड़ा। जिनके हित के लिए क्रान्तिकारी अपना जीवन अर्पण किये हुए थे वही लोग उनके कार्य में बाधक हो रहे थे।

इस पतन का ही तो यह परिणाम था कि उत्तरी सैन्यसत्तावादी अब तक सबल और सजीव थे तथा अपने देश हित को भूल कर विदेशियों का आवाहन करने में भी नहीं चूकते थे। च्याङ ने देखा और अनुभव किया कि राष्ट्र की उन्नति केवल सैनिक विजय से नहीं हो सकती। बार बार विजय प्राप्त करके भी तो वे पराजित हुए क्योंकि उनके देश का चारित्रिक अध पतन हो चुका था। परस्पर के झगड़े, कूओमिन्ताङ्ग का विघटन, आपस की प्रतिद्वन्द्विता आदि के कारण ही तो क्रान्तिकारी अपने लक्ष्य में सफल होते हुए भी असफल हो जाते थे। वे लोग भी, जो देश के निर्माण के लिए अग्रसर हुए और जिनसे सारे राष्ट्र को आशा थी यदि अनुशासित न हों तथा व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षा की आग में जलकर स्वयम् एक दूसरे को गिराने की चेष्टा करते दिखायी

दें तो फिर दूसरों की बात क्या कही जाय ? च्याङ्कई स्वयम् इसी विचार के शिकार तो हुए थे। इन समस्त रोगों का एक ही मौलिक निदान था और वह यह कि राष्ट्रीय चरित्र का जो ह्रास हो चुका है वह जब तक उन्नत न होगा तब तक क्रान्ति की सफलता स्थायी न हो सकेगी। भले ही राष्ट्रवादी अपने बाहुबल से एकता की स्थापना कर स्वतन्त्रता और विदेशियों से मुक्ति भी प्राप्त कर लें—पर इन सबकी प्राप्ति के बाद भी तो उनकी रक्षा करनी होगी। इसी के लिए तो देश के सामूहिक चरित्र, जीवन तथा नैतिक आदर्शों को उन्नत करने की जरूरत होती है। तभी तो किसी राष्ट्र की स्वतन्त्रता और उसका पद स्थायी हो सकता है।

सम्भवत च्याङ्कई ने अपने एकान्त वास में इस सत्य का आभास पाया और तभी से उनके मन में इस धारणा का बीज पड़ गया कि सैनिकता के साथ-साथ राष्ट्र के जीवन में—राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में—नयी आभा, नये आलोक और नये प्रकाश की आवश्यकता है। साधारण जनगण के साधारण जीवन और चरित्र को शिक्षा के द्वारा, ज्ञान के द्वारा और नये नये संस्कारों के द्वारा प्रभावित करके इस प्रकार विकसित और उन्नत करना है कि वह उन समस्त कर्तव्यों की पूर्ति को अपना धर्म और अपनी जिम्मेदारी मान सके जो मानव होने के नाते उसके ऊपर जीवन से लेकर मृत्युपर्यन्त लदे रहते हैं। च्याङ्कई ने इस विश्राम के बाद जब पुनः चीन के राजनीतिक प्रांगण में पदार्पण किया और शासन का भार उठाया तो उन्होंने इस ओर अत्यधिक ध्यान दिया और सचमुच तरह-तरह के सांस्कृतिक और सुधारक आन्दोलनों को चलाकर राष्ट्र की काया पलट कर दी। नयी शक्ति और नव जीवन प्रदान करके उन्होंने चीन को महान राष्ट्र बना दिया। निश्चय ही उसी नवोत्पन्न और प्रस्फुरित चरित्र का यह परिणाम है कि आज चीन रक्त पिपासु जापानी साम्राज्यवादियों के दाँत खट्टे किये दे रहा है। आज तो यह स्पष्ट हो गया है कि चीन अजेय है और जापान की पाशविक शक्ति उसकी आत्मा का दमन नहीं कर सकती।

चीन की परराष्ट्रनीति के सम्बन्ध में भी अब च्याङ्कई के विचारों में परिवर्तन होने लगा था। कुछ बातें तो उनके सामने स्पष्ट थीं, जिनके प्रकाश में वे भविष्य में चीन की क्या परराष्ट्रनीति हो सकती है, इस पर

विचार किया करते थे। सम्भवत जन स्थान से दूर, कोलाहल से अस्पृश्य और एकान्त में रह कर उन्होंने दो बाते मुख्य रूप से देख लीं। उन्हें अपने दोनों पड़ोसियों, अर्थात् जापान और रूस से चीन के लिए खतरा दिखायी पड़ा। रूस ने चीन के प्रति उदारता का व्यवहार किया था। चीन स्थित अपने अधिकारों का त्याग करके उसने दुनिया के अन्तर्राष्ट्रीय इतिहास में ऐसा उदाहरण उपस्थित किया था जिसकी मिसाल ढूँढे नहीं मिल सकती। पर इसको स्वीकार करते हुए भी च्याङ कदाचित अपने देश के कम्यूनिस्टों की नीति के कारण रूस से क्षुब्ध हो गये थे। उनकी धारणा यह हो गयी थी कि रूस ने मित्रता का दावा करके वस्तुत चीन में षड्यन्त्र रचने का अवसर ढूंढा है और इस प्रकार इस देश को अपने प्रभाव में लाने की चाल चली है। जापान के सम्बन्ध में उन्हें निश्चय हो गया कि वह चीन की स्वतन्त्रता का विरोधी, स्वार्थी साम्राज्यवादी राष्ट्र है जिससे एक दिन भिड़ना अनिवार्य है। हाल ही में जापान ने अपनी सेना भेज कर उत्तर चीन में राष्ट्रीय सेना का आगे बढना रोक दिया था। उसी के फल स्वरूप च्याङ्क्ई का पराजित हो कर पीछे हटना पड़ा और वह काम रुक गया जिसकी पूर्ति पर चीन का भविष्य निर्भर था और जिसे पूरा करना च्याङ अपने जीवन का लक्ष्य समझते थे। राष्ट्रीय सेना की पराजय के लिए च्याङ्क्ई जापान को उत्तरदायी समझते थे और उनके प्रति अपने हृदय में क्षोभ की अग्नि सुलगाये हुए थे। सम्भवत वही आग आज जापान के विरुद्ध सारे चीन में सुलग रही है।

ऐसी स्थिति में च्याङ रूस से सतर्क रहने और जापान से भिडने की तैयारी चीन की परराष्ट्रनीति का सम्भावित आधार मानने लगे थे। इसी सिलसिले में उन्होंने अपना मित्र भी चुन लिया। वे ब्रिटेन पर तो विश्वास कर नहीं सकते थे। उसकी कुटिल राजनीतिज्ञता और साम्राज्य वादिता का अनुभव उन्हें अनेक बार अपने देश के इतिहास से प्राप्त हो चुका था, पर अमेरिका की ओर उनका झुकाव था। अमेरिका की लोकतन्त्रवादिता और उदार नीति चीन के लिए हितकर हो सकती है और इन दोनों राष्ट्रों को मित्रता के सूत्र में आबद्ध कर सकती है, यह वह सम्भावना थी जिसकी झलक च्याङ ने पा ली। यही कारण था कि उन्होंने अमेरिका जाने और वहाँ जाकर वहाँ के रग-ढग देखने की इच्छा

रहते थे फिर भी वे मेलिङ्गसूङ्ग से पत्र व्यवहार करते थे। एकाधिक बार उन्होंने अपना प्रणय-निवेदन भी किया था, पर मेलिङ्गसूङ्ग ने यद्यपि उसे स्वीकार नहीं किया पर अस्वीकृति भी नहीं दी। वे कहा करतीं कि अभी आपको जो करना है उसे कीजिये और वैवाहिक जीवन की चर्चा न छेड़िये।

इस प्रकार वर्षों गुजर गये और इन दोनों में पत्र-व्यवहार होता रहा। अब च्याङ को अवकाश मिला था और वे एकान्त जीवन-यापन कर रहे थे। इस समय उन्हें मेलिङ्गसूङ्ग के स्नेह और साथ की आवश्यकता प्रतीत हुई। नयी प्रेरणा और नव-जीवन के लिए उन्हें शक्ति की आवश्यकता थी जिसका स्रोत वह मूर्ति थी जिसकी पूजा वे वर्षों से अपने हृदय के अदृश्य पटल में कर रहे थे। इस बार मेलिङ्गसूङ्ग ने भी उनके प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया और च्याङ से आग्रह किया कि वे उनकी माता से विवाह की स्वीकृति माँगें। च्याङ ने मेलिङ्ग की विधवा माता से अपना प्रस्ताव किया और उन्होंने विवाह की स्वीकृति दे दी। च्याङ अपने विवाह के लिए पर्वतशृङ्ग से नीचे उतरे। पाठकों को यह जानकर आश्चर्य होगा कि च्याङ का यह दूसरा विवाह था। चीनी रीति रिवाज के अनुसार बचपन में ही उनकी माता ने उनका विवाह एक महिला से, जिसे अपनी पुत्र वधू बनाने के लिए उन्होंने स्वयम चुना था, कर दिया था, पर अधिक दिनों तक यह स्थिर न रह सका। फलतः उक्त विवाह के कुछ वर्ष बाद ही दोनों का सम्बन्ध विच्छेद हो गया और तिलाक की रस्म अदा कर दी गयी। इसके कई वर्ष बाद वे यह दूसरा विवाह करने के लिए तैयार हुए। अपने एकान्त स्थान से निकल कर बाहर आने के अनन्तर उन्होंने घोषणा की कि मैं विवाह करने जा रहा हूँ और इसके बाद अमेरिका की यात्रा करूँगा।

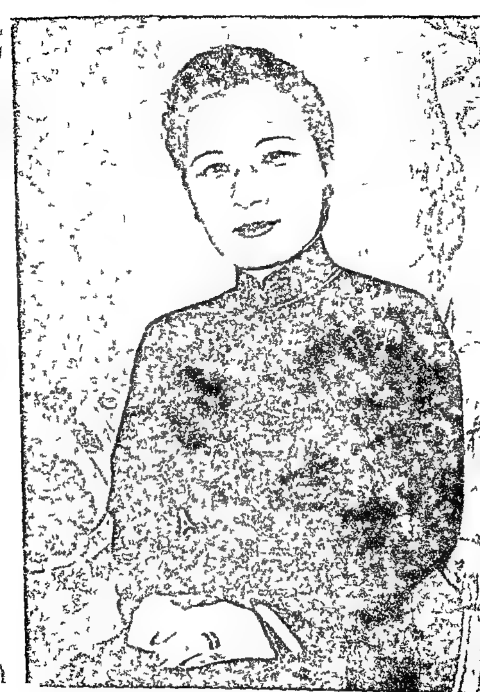
शङ्घाई में इन दोनों का विवाह हुआ। विवाह के बाद च्याङ ने जो वक्तव्य दिया वह मार्के का है। इसी से ज्ञात होता है कि मेलिङ्ग के मिलन ने उनके जीवन को कैसा प्रभावित किया है। अपने वक्तव्य में उन्होंने कहा, "इस विवाह के बाद चीनी क्रान्ति का कार्य अधिकाधिक तीव्रता और शीघ्रता के साथ सचालित होगा क्योंकि इस क्षण से मैं क्रान्ति के भीषण भार का वहन हृदय में शान्ति लेकर करने में समर्थ होऊँगा। आज से मैं अकेला नहीं रहा बल्कि हम दोनों साथ साथ इस बोझ को उठायेंगे। हमने विवाह के दिन मिल कर इस बात की प्रतिज्ञा

की है कि आज से अपनी सारी सम्मिलित शक्ति चीन की महाशान्ति की सफलता पूर्ति में लगा देंगे। इन दोनों ने सचमुच अपनी इस प्रतिज्ञा का निर्वाह जिस निष्ठा और लगन के साथ किया है वह आज चीन के इतिहास में सुनहरी घटना के समान प्रकाशित है। चीनी इतिहास का विद्यार्थी चीनी राष्ट्र के गत बारह वर्षों के जीवन पर इन दोनों की गहरी छाया पाता है। इन्होंने न केवल चीन का निर्माण किया बल्कि यदि विश्वात्मा ने इन्हें आयु और अवसर प्रदान किया तो ये विश्व की भावी व्यवस्था पर भी छाप डालेंगे।

नवाँ अध्याय

उत्तर विजय और केन्द्रीय सरकार की स्थापना

अब च्याङ्ई शेक को छोड़ कर पाठकों को पुनः नाङ्किङ की ओर ले जाना आवश्यक ज्ञात होता है। उनके हट जाने से कूओमिनताङ्ग के दोनों पक्ष एक हुए और सितम्बर के महीने में नाङ्किङ में दोनों की सम्मिलित सरकार स्थापित हुई। दोनों पक्षों में समझौते की कतिपय शर्तें तय की गयी थीं जिनके अनुसार दोनों पक्ष कूओमिनताङ्ग के सिद्धान्त और नीति का अनुगमन करने का संकल्प लेकर आगे बढ़े। उन्होंने निश्चय किया कि पार्टी की आज्ञा का परिपालन प्रत्येक सदस्य करेगा, उसके निर्णय का पालन करना सब पर बाध्य होगा। कम्यूनिस्ट लोग पार्टी तथा सरकार से निष्कासित कर दिये जायँगे, नाङ्किङ नयी सरकार की राजधानी होगी और सेना पुनः विजय के लिए शीघ्र से शीघ्र उत्तर की ओर प्रयाण करेगी। यह सुन्दर निर्णय करके कूओमिङ्ताङ्ग नये ढंग से काम करने के लिए अग्रसर हुई। पर दो महीने भी नहीं बीते थे कि मामला दूसरा दिखायी देने लगा। किसी से डाह करना अथवा किसी की उन्नति देख कर जल भुन जाना मानव स्वभाव की दुर्बलता होती है। मनुष्य इसके प्रभाव में आकर दूसरों की जड़ खोदने लगता है। उसके मन में प्रतिद्वन्द्वी के प्रति सम्भवत यह भाव उठने लगता है कि अमुक क्यों बढ़ता जा रहा है और क्यों मैं उससे पीछे रह गया हूँ। खेद की बात है कि इस दुर्बलता के प्रभाव



श्रीमती मौलिंगसुङ (मदाम च्याङ्ग-काइ शेक)

स अन्धा हुआ प्राणी यह नहीं देखता कि किसी का बढ़ना या न बढ़ना उसकी योग्यता, उसके गुण, उसकी क्षमता और विशेषताओं पर निर्भर करता है। वास्तव में संसार में योग्य मनुष्यों की कमी है। कार्य का क्षेत्र जितना विशाल है काम करने को जितना बाकी पड़ा हुआ है उसके योग्य मनुष्य नहीं मिलते जिन पर यह भरोसा किया जा सके कि यह अपने गुणों और विशेषताओं से उसे पूरा कर देंगे। जब हम किसी साथी को यश और प्रतिष्ठा प्राप्त करते देखते हैं अथवा किसी नेता को जनता की जयजयकार प्राप्त करते पाते हैं तो यह तो मान ही लेते हैं कि हमें भी ये बातें नसीब होनी चाहिए थीं पर यह नहीं देखते कि जिसने यश या प्रतिष्ठा प्राप्त की है अथवा जयजयकार कमाया है उसने उसका उपार्जन कितनी साधना, कितने कठोर परिश्रम और कितनी तपस्या के बाद किया है। फलतः स्वयम् बढ़ने के लिए डाह करने की नहीं अपितु योग्यता प्राप्त करने की आवश्यकता होती है। जिसमें यह विभूति होगी वह आप ही आप बढ़ता जायगा। उसे किसी के सहारे की भी आवश्यकता न होगी।

न्याङ्कई को अपने मित्रों के कारण हटना पड़ा। जिन्होंने उन्हें हटाया उन्होंने समझा था कि वही उनकी उन्नति के मार्ग में बाधक थे और उन्हें हटाकर वे अति उच्च स्तर पर पहुँच जायँगे। परन्तु उन्हें यह ज्ञान नहीं था कि उनमें उस योग्यता का अभाव है जो मनुष्य को महान् बनाती है। न्याङ्कई के हटते ही उन्हें अपने दिवालियेपन का पूरा पता मिल गया। नाङ्किङ्ग सरकार के प्रत्येक विभाग में अव्यवस्था फैलने लगी। मुलकी और सैनिक शासक मनमाना काम करते जिससे अनुशासनहीनता और अवज्ञा का व्यापक साम्राज्य फैल गया। जिधर देखिये उधर निरंकुशता दिखायी देने लगी। सरकार के उच्चपदों पर जो नेता थे उनमें अब आपस में प्रतिस्पर्द्धा फैली। परस्पर काम में अड़ंगेबाजी की जाने लगी। पार्टीबन्दी होने लगी, गुट्ट बनने लगे, और अपने समर्थक बनाने के लिए दूसरों की गुट्टबन्दी में तोड़ फोड़ की जाने लगी। जब ऊपर की यह दशा हो तो नीचे के अधिकारियों में उसका असर पड़ना अनिवार्य होगा। फिर क्या था? चारों ओर गड़बड़ी दिखायी देने लगी। नाङ्किङ्ग की सरकार अपने ही पैरों पर काँपने लगी। इसी समय उत्तर के सैन्यसत्तावादियों ने यह सुनकर कि न्याङ्कई हट गये हैं उत्साहित

से भ्रमा हुआ प्राणी यह नहीं देखता कि किसी का बढ़ना या न बढ़ना उसकी योग्यता, उसके गुण, उसकी क्षमता और विशेषताओं पर निर्भर करता है। वास्तव में संसार में योग्य मनुष्यों की कमी है। कार्य का क्षेत्र जितना विशाल है काम करने को जितना बाक़ी पड़ा हुआ है उसके योग्य मनुष्य नहीं मिलते, जिन पर यह भरोसा किया जा सके कि यह अपने गुणों और विशेषताओं से उसे पूरा कर देंगे। जब हम किसी साथी को यश और प्रतिष्ठा प्राप्त करते देखते हैं अथवा किसी नेता को जनता की जयजयकार प्राप्त करते पाते हैं तो यह तो मान ही लेते हैं कि हमें भी ये बातें नसीब होनी चाहिए थीं पर यह नहीं देखते कि जिसने यश या प्रतिष्ठा प्राप्त की है अथवा जयजयकार कमाया है उसने उसका उपार्जन कितनी साधना, कितने कठोर परिश्रम और कितनी तपस्या के बाद किया है। फलतः स्वयम् बढ़ने के लिए डाह करने की नहीं अपितु योग्यता प्राप्त करने की आवश्यकता होती है। जिसमें यह विभूति होगी वह आप ही आप बढ़ता जायगा। उसे किसी के सहारे की भी आवश्यकता न होगी।

च्याङ्कई को अपने मित्रों के कारण हटना पड़ा। जिन्होंने उन्हें हटाया उन्होंने समझा था कि वही उनकी उन्नति के मार्ग में बाधक थे और उन्हें हटाकर वे अति उच्च स्तर पर पहुँच जायँगे। परन्तु उन्हें यह ज्ञान नहीं था कि उनमें उस योग्यता का अभाव है जो मनुष्य को महान् बनाती है। च्याङ्कई के हटते ही उन्हें अपने दिवालियेपन का पूरा पता मिल गया। नाङ्किङ्ग सरकार के प्रत्येक विभाग में अव्यवस्था फैलने लगी। मुल्की और सैनिक शासक मनमाना काम करते जिससे अनुशासनहीनता और अवज्ञा का व्यापक साम्राज्य फैल गया। जिधर देखिये उधर निरंकुशता दिखायी देने लगी। सरकार के उच्चपदों पर जो नेता थे उनमें अब आपस में प्रतिस्पर्द्धा फैली। परस्पर काम में अड़ंगेबाज़ी की जाने लगी। पार्टीबन्दी होने लगी, गुट्ट बनने लगे, और अपने समर्थक बनाने के लिए दूसरों की गुट्टबन्दी में तोड़फोड़ की जाने लगी। जब ऊपर की यह दशा हो तो नीचे के अधिकारियों में उसका असर पड़ना अनिवार्य होगा। फिर क्या था? चारों ओर गड़बड़ी दिखायी देने लगी। नाङ्किङ्ग की सरकार अपने ही पैरों पर काँपने लगी। इसी समय उत्तर के सैन्यसत्तावादियों ने यह सुनकर कि च्याङ्कई हट गये हैं उत्साहित

होकर नानकिङ पर धावा करने के लिए तैयारी की। यह तैयारी करके वे चुप नहीं हुए बल्कि मङ च्वाङ्ग ने याङ्गची लाँघकर राष्ट्रीय सेना की छावनियों पर धावा करके उसे पीछे खदेड दिया और नाङ्किङ्ग के पास ही एक स्थान पर अधिकार कर लिया।

नाङ्किङ्ग के अधिकारियों की अब आँखें खुलीं। उन्होंने देखा कि उत्तर विजय की बात तो दूर रही शत्रु तो नाङ्किङ्ग के दरवाजे को भी खटखटाने लगे हैं। स्वयम् अपने ही अस्तित्व के लिए उनमें भय उत्पन्न हो गया। राष्ट्रीय सेना में अब भी च्याङ के सिखाये पढ़ाये और विश्वस्त साथी थे। उन्होंने जब यह खतरा देखा और देखा कि नाङ्किङ्ग में कोई ऐसा नेता नहीं है जो अपने व्यक्तित्व के प्रभाव से विभिन्न प्रतिस्पर्धी गुटों को एक सूत्र में बाँध कर ले चल सके तो उन्होंने अपने ही भरोसे काम करने की ठानी। सेना ऐसे नेताओं के अधीन सनच्वाङ से भिड गयी और भयावने युद्ध के बाद वह सङ को पीछे खदेडने में सफल हुई। इधर उत्तर में उत्तरी सैन्यसत्तावादियों से नाङ्किङ्ग को बचाने की यह चेष्टा हो रही थी और उधर दक्षिण में परस्पर की प्रतिस्पर्धा की आग धधक रही थी। चाङ फा कुई नामक सैनिक-अधिकारी तथा ली-ची शेङ जो काङ्टुङ्ग नगर के रक्षक बनाये गये थे आपस में लड रहे थे। चाङ-फा की सेना काङ्टुङ्ग को अपने अधिकार में करने के लिए सिनाङ पर टूट पडी और गहरी मार-काट मच गयी। उधर याङची की तराई में ताङ्ग और चेङ्ग नामक दो सैनिक अधिकारी जो नाङ्किङ्ग सरकार के अधीन थे परस्पर की प्रतिद्वन्द्विता में आकर भिड गये और गहरा युद्ध आरम्भ हो गया। यह युद्ध इतना बढ़ा कि नाङ्किङ्ग से सेना भेज कर दोनों अधिकारियों के विरुद्ध सरकार को कार्रवाई करनी पडी।

इन थोडी सी घटनाओं का उल्लेख उदाहरण स्वरूप कर दिया गया है।। इससे नाङ्किङ्ग सरकार की दयनीय दुरवस्था का अनुमान सहज में ही लगाया जा सकता है। च्याङ्कई से डाह करना सरल था पर उस कार्य भार को उठाना साधारण काम नहीं था जिसका वहन वे कर रहे थे। उसके लिए तो आवश्यकता थी योग्यता की, पर वह योग्यता नाङ्किङ्ग में कहाँ थी? अस्तु अब इन लोगों को राजकीय कठिनाइयों का कुछ स्वाद मिला और उन्होंने च्याङ के महत्त्व को समझा। उस व्यक्तित्त्व के सामने अपनी लघुता

और तुच्छता का भी अनुभव उन्हे हुआ। नाङ्किङ्ग में जो समझदार लोग थे वे इस स्थिति से त्रस्त हो गये। उन्होने समझ लिया कि समय रहते यदि मामला न सँभाला गया तो अब तक जो कुछ किया गया है वह भी सब नष्ट हो जायगा। साथही वे यह भी समझ गये कि स्थिति को बचाना उनके बूते के बाहर की बात है। वे न सरकार चला सकते हैं न पार्टी का सचालन कर सकते हैं और न उत्तरी युद्ध का बोझ उठा सकते हैं।

फलत कुओमिङ्गताङ्ग की केन्द्रीय समिति की एक बैठक तमाम पहलुओं पर विचार करने के लिए शङ्घाई में बुलायी गयी। एक सप्ताह तक समिति की बैठक होती रही। किसी की समझ में नहीं आया कि क्या उपाय किया जाय। अन्त में वाङ ने प्रस्ताव किया कि भलाई इस बात में है कि च्याङ्कई को पुन आमन्त्रित किया जाय और उन्हें प्रधान सेनापतित्व का पद प्रदान किया जाय। सबने हर तरह से सोच विचार कर देख लिया था कि वे स्वयम् कुछ करने में असमर्थ हैं, अत वाङ का प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकार कर लिया गया।

अभी विवाह किये च्याङ्कई को एक सप्ताह भी नहीं बीता था कि १० दिसम्बर को उन्हीं लोगों ने जिन्होंने उन्हें हटने के लिए बाध्य किया था अपनी नालायकी सिद्ध करने के बाद पुन उन्हें आमन्त्रित करने का निश्चय किया।

अभी च्याङ्कई का निर्वाचन हो ही पाया था कि दूसरे ही दिन काङतुङ्ग में भीषण विद्रोह हो गया। ११ दिसम्बर को काङतुङ्ग के कम्यूनिस्टों ने खुली बगावत कर दी और शहर पर अधिकार स्थापित करने की चेष्टा की। तीन दिनों तक लगातार मार काट, लूट पाट हत्या और आग लगाना जारी रहा। १४ दिसम्बर को सरकारी सेना किसी प्रकार शान्ति स्थापित कर पायी। फिर तो चारों ओर कम्यूनिस्टों की धर पकड आरम्भ हो गयी। काङतुङ्ग में सैकड़ों विद्रोहियों को फाँसी दे दी गयी। च्याङ्कई का कुछ ऐसा ही भाग्य था कि सदा उन्हें कम्यूनिस्टों के विरुद्ध बाध्य होकर कार्रवाई करनी पडती। नाङ्किङ्ग सरकार के आमन्त्रण को उन्होंने राष्ट्र के सैनिक और सेवक के नाते स्वीकार किया। देश के संकट के समय वे व्यक्तिगत झगड़ों के कारण कर्त्तव्य से विमुख होने वाले जीव तो थे नहीं। पद ग्रहण करने के बाद १४ [illegible] आज्ञा उन्होंने यह निकाली कि सोवियेत-

७ अप्रैल सन् १९२८ को च्याङ्ग ने आक्रमण किया और युद्ध छिड़ गया। एक साथ ही लम्बे मोर्चे पर लड़ाई आरम्भ हुई। युद्ध बड़ा घमासान आरम्भ हुआ पर उत्तरी सेना पद्दे पद्दे पराजित होने लगी। दस दिन भी नहीं बीते कि शाङ्तुङ्ग प्रान्त के कतिपय मुख्य नगरों पर च्याङ्गई की सेना ने अधिकार कर लिया। उत्तरी सैनिकों के लिए असम्भव हो गया कि किसी एक स्थान पर थोड़े दिनों के लिए दक्षिणी क्रान्तिवाहिनी सेना को रोक सकते। तीन सप्ताह भी नहीं बीते कि च्याङ्गई ने क्याउशाउ नगर पर कब्जा कर लिया। इस नगर का सामरिक महत्त्व था क्योंकि इसे अधिकार में ले लेने के बाद च्याङ्गई को शाङ्तुङ्ग प्रान्त की राजधानी चिनाङ के लिए खुला मार्ग मिल जाता था। उत्तरी सेना हतारा हो कर हट गयी और पीछे हटते हुए ह्वाङ्गहो नदी को पार कर पेकिङ्ग की ओर का रास्ता पकड़ा। राष्ट्रीय सेना तीव्र गति से आगे बढ़ी—बिना मुकाबिले के नगर नगर पर अधिकार करती हुई चली। ऐसा मालूम होने लगा कि पेकिङ्ग तक राष्ट्रीय सेना का मार्ग निष्कंटक ही रहेगा। मई और जून के महीने में राष्ट्रीय सेना मन्द गति से, बिना किसी बाधा के विभिन्न प्रान्तों के नगरों पर अपना झंडा गाड़ती हुई पेकिङ्ग की ओर मुँह किये बढ़ी चली जा रही थी। राष्ट्रीय सेना जहाँ जाती वहाँ की जनता उत्साह से उसका स्वागत करती और हर्ष प्रकट करती। उसके लिए प्रदर्शन किये जाते और अपने उद्धारक की सहायता में जो कुछ सम्भव होता किया जाता। उत्तरी सैनिकों का तो मानों दम निकल रहा था। पूरी तरह अप्रतिभ और निराश होकर वे इधर उधर पलायित स्थिति में भागते दिखायी देते यदि कहीं राष्ट्रीय सेना से लुके छिपे मुकाबिला हो जाता तो उनकी दुर्गति बन जाती।

क्रान्ति-सेना इसी प्रकार बढ़ती हुई चिनाङ नगर के मुख द्वार पर पहुँच गयी। चिनाङ वही स्थान है जहाँ एक वर्ष पहले जापानियों ने अपनी सेना भेज कर दक्षिणी सेना का मार्गावरोध कर दिया था जिसके फलस्वरूप च्याङ्गईशेक को पीछे हटना और उत्तर-विजय का काम रोक देना पड़ा था। साल भर बीत गया था पर जापानी सेना अब भी वहाँ डटी हुई थी। च्याङ्गई जब अपनी विजयिनी, वीरवाहिनी के साथ नगर द्वार तक पहुँचे तो देखा

कि नगर में जापानी सेना पड़ाव डाले पड़ी हुई है। वे इस समय जापानियों से अथवा किसी भी विदेशी शक्ति से किसी प्रकार की छेड़छाड़ करके अपने कार्य को नष्ट नहीं करना चाहते थे। अत उन्होंने अपने सैनिकों को आज्ञा दी कि वे नगर में प्रवेश न करें। उत्तरी सैनिक नगर को छोड़ कर पहले ही चले गये थे अत चिनाङ को छोड़ कर बगल के रास्तों से पेकिङ्ग की ओर बढ़ना। निश्चित हुआ। च्याङ्कई की आज्ञा होने पर भी चीनी सेना का एक दस्ता गलती से शहर में घुस पड़ा। इस सूचना को पाकर च्याङ्कई स्वयम् चिनाङ पहुँचे और उन्होंने अपनी सेना को नगर स हटा कर बाहर कर दिया।

च्याङ ने समझा कि मामला सँभाल लिया गया। परन्तु थोड़ी देर बाद चीन-स्थित जापानी दूत तथा चिनाङ की जापानी सेना के सेनापति च्याङ से मिलने उनके डेरे पर आये और क्रान्ति सेना के अनुशासन तथा च्याङ्कई के कार्य की बड़ी प्रशसा की। उन्होंने यह भी कहा कि यह सेना जापान से इसलिए आयी थी कि जापानी नागरिकों की रक्षा करे, परन्तु जब क्रान्ति सेना ने स्वयम् ही शान्ति-स्थापन का जिम्मा लिया है तो शीघ्र ही जापानी सेना वापस भेज दी जायगी। च्याङ्कई ने इस तमाम बातचीत का अर्थ यही समझा कि सारी समस्या हल हो गयी। जापानी अधिकारी भी च्याङ के खेमे से उठ कर गये पर उनके जाने के आध घटे बाद ही मशीनगनों से गोलियों के चलने की आवाज आयी। च्याङ घबड़ाये पर इतने ही में उन्हें सूचना मिली कि नगर का फाटक बन्द कर दिया गया है और जापानी सेना चीनी सैनिकों पर गोली बरसा रही है। च्याङ्कई ने आज्ञा दी कि चीनी सेना अपने-अपने बैरकों में वापस चली जाय। इसके बाद उन्होंने जापानी सेनापति फुकूदा को टेलिफोन किया और नम्रता पूर्वक निवेदन किया कि वे इस दुर्घटना की जाँच करे। च्याङ्कई ने कहा कि सम्भवत यह बात गलती से हो गयी है अत अब से सावधानी से काम लिया जाय और जापानी सेना वापस कर ली जाय।

परन्तु च्याङ्कई की प्रार्थना का कोई प्रभाव नहीं हुआ। जापानी सेना गोलियाँ चलाती रही। सशस्त्र मोटर गाड़ियाँ लाकर खड़ी की गयीं और चीनियों पर अन्धाधुन्ध अग्निवर्षा की जाने लगी। पीछे हटते

हुए भी चीनियों पर गोलियाँ बरसती रहीं। कहा जाता है कि जापानी तोपों तक ने गोलन्दाजी की। च्याङ्कई स्वयम् क्रुद्ध हुए और उनके सैनिक जापानियों से बदला लेने के लिए छटपटाने लगे पर च्याङ ने अपने क्षोभ को रोका और सैनिकों को बराबर पीछे हटने के लिए आज्ञा देते रहे। जापानी सेनापति से बराबर उन्होंने प्रार्थना की पर वह पागल की भाँति चीनियों को मारने में ही लगा रहा। अन्त में च्याङ्कई ने समझा कि जापानियों ने जानबूझ कर उत्तेजना उत्पन्न करने के लिए यह सब किया है क्योंकि वे राष्ट्रीय सेना का उत्तर में बढ़ना नापसन्द करते हैं और उसे अपना शत्रु समझते हैं। इस समय च्याङ्कई जापानियों की चाल में फँसना नहीं चाहते थे पर जापानी एक के बाद दूसरी अपमानजनक तथा अनधिकारपूर्ण कार्रवाई करते रहे। उन्होंने राष्ट्रीय सरकार के परराष्ट्र विभाग के मन्त्री जनरल हुआङ-फू को जो इस समय चीनी सेना के साथ थे गिरफ़ार कर लिया। अब तक हजार के ऊपर चीनी सैनिक, अधिकारी तथा नागरिक मारे जा चुके थे, फिर भी च्याङ ने धैर्य से काम लिया था। उन्होंने फुकुदा को सूचना दे दी, "मैंने अपने सैनिकों को आज्ञा दी है कि वे सिनाङ के पास पड़ोस से हट जायँ और ह्वाङ्गहो नदी को पार करके उधर चले जायँ। मैं भी जा रहा हूँ। मुझे आशा है कि आप शान्ति स्थापित करेंगे। मैं चाहता हूँ कि मामला शान्ति से हल हो जाय। मैं थोड़े से सैनिकों को शहर में छोड़े जा रहा हूँ जिसमें वे नगर की शान्ति और व्यवस्था की रक्षा कर सकें।"

यह पत्र लिखकर च्याङ अपनी हटती हुई सेना सहित ह्वाङ्गहो नदी को पार करके उत्तर की ओर बढ़े। जापानियों को इतने पर भी सन्तोष नहीं हुआ। नगर में थोड़ी सी पड़ी हुई चीनी सेना पर बिना सूचना दिये अरक्षित अवस्था में जापानी टूट पड़े और उन्हें बुरी तरह मारा। तीन सौ चीनी सैनिक किसी प्रकार लड़ते हुए जान बचाकर निकल भागे और बाकी वहीं खेत रहे। सिनाङ नगर उजड़ गया। जिधर देखिये उधर लाशें ही दिखायी देती थीं। कारबार चौपट हो गया और नागरिक शहर छोड़ कर भाग गये। सारा शहर स्मशान हो गया। जापानियों की इस दुर्नीति से देश भर में असन्तोष फैल गया। जापानी बर्बरता की कहानियाँ लोगों में बड़े क्षोभ के साथ कही जाने लगीं। समाचार पत्रों ने उनकी पशुता और क्रूरता के चित्र

छापे। सारा चीन जापान विरोधी भावों से भर उठा। च्याङ्ग ने उत्तर की ओर की अपनी यात्रा नहीं रोकी। जापानी कुचक्र उन्हें रोकने ही के लिए था पर वे उससे बचकर निकल गये और पेकिङ्ग की ओर बढ़ते गये। जापानी सेना और उसकी नीति के कारण चीन में ही नहीं बल्कि समस्त सभ्य जगत में जापान बदनाम होगया। जापान सरकार ने फुकुदा को वापस बुलाया और जनरल मात्सुई को चीन भेजा। जापान में इस समय तनाका मन्त्रिमडल पदासीन था। मात्सुई ने चीन से इस मामले को निपटाने की बातचीत चलायी। साम्राज्यवादियों के सहज स्वभाव के अनुसार पहले तो उन्होंने भी चीन पर धौंस जमाने की चेष्टा की, खूब बन्दर घुड़कियां दी गयीं, सारा दोष चीन के ही मस्तक पर मढ़ने की चेष्टा की गयी, पर राष्ट्रीय सरकार ने जब स्वयम् दृढता प्रकट की और जापान पर अभियोग लगाया कि उसने चीन की भूमि पर सेना भेज कर अनधिकार चेष्टा की है और जब तक वह सेना वापस नहीं होती तब तक जापान से किसी प्रकार की बात भी नहीं की जा सकती तब मात्सुई की अक्ल दुरुस्त हुई। वे ठंढे पड़े और चीन जापान में समझौते की बात चली जो इस घटना के एक वर्ष बाद इस मामले को हल करने में समर्थ हुई।

इधर तो यह होता रहा और उधर च्याङ्कई की सेना पेकिङ्ग की ओर बढ़ती गयी। तेहचाउ नगर पर क्रान्ति-सेना का अधिकार हो गया। चाङसोलिङ्ग ने जब देखा कि जापानी चाल असफल हुई और राष्ट्रीय सेना उसके बावजूद भी पेकिङ्ग की ओर बढ़ रही है तो वह घबड़ाया। उसने पहले तो मञ्चूरिया से निकल भागने का इरादा किया और च्याङ को इस सम्बन्ध में लिखा भी पर जब च्याङ ने इतने पर भी उसकी जान छोड़ देने का वचन न दिया तब उसने एक बार सारी शक्ति लगाकर सामना करने का निश्चय किया। चेङचाङ और पाओतिङ्ग नामक स्थानों में गहरी लड़ाइयाँ हुई, पर उत्तरी सामन्त च्याङ्कई के सामने न टिक सके। च्याङ की विजय हुई और चाङसोलिङ्ग पेकिङ्ग छोड़ कर भागा। वह मुकदन भागा जा रहा था कि रास्ते में जिस ट्रेन से जा रहा था उसी के नीचे बम विस्फोट हुआ और चाङसोलिङ्ग घायल होकर कुछ घंटों बाद परलोक सिधार गया। फलत सन् १९२८ की जुलाई के पहले पखवारे में पेकिङ्ग में राष्ट्रीय सेना ने प्रवेश किया और उस नगर पर क्रान्ति पताका फहरा दी। राष्ट्रीय सेना

धारों। सेनापति और च्याङ ने पेकिङ्ग में प्रवेश करने के बाद ही 'वेस्टर्नहिल' को मन्दिर की यात्रा की, जहाँ चीन की राष्ट्रीयता के जनक डाक्टर सुङयातसेन का शव रखा हुआ था। इन नेताओं ने दिवंगत महापुरुष के शव के सम्मुख घुटने टेक कर अपना आदर प्रकट किया और उस काम को पूरा करने के लिए भगवान को धन्यवाद दिया जिसके लिए उनके प्रिय नेता ने अपना सारा जीवन अर्पण कर दिया था।

अब चीन की एकता स्थापित हो गयी। च्याङ ने राष्ट्रीय सेना को लेकर क्वाङ्तुङ से उत्तर में पेकिङ्ग तक राष्ट्रीय सरकार की सत्ता स्थापित कर दी। उनकी यह विजय-यात्रा चीन के इतिहास में अभिनव घटना थी जिसने असम्भव को सम्भव कर दिखाया। अगस्त के प्रथम सप्ताह में कुओमिङताङ्ग का पचमाधिवेशन नाङ्किङ्ग में होनेवाला था। उसमें सम्मिलित होने के लिए च्याङ्ग्ई पेकिङ्ग से नाङ्किङ्ग वापस आये। दक्षिण सदा की भाँति इस समय भी अशान्त ही था। राजनीतिज्ञ कदाचित् ऐसे तत्त्वों से बने होते हैं जो उन्हें शान्त बैठने नहीं देते। कोई काम नहीं होता तो वे आपस म ही लड़ना आरम्भ कर देते हैं। च्याङ उत्तर की विजय में लगे हुए थे और इधर दक्षिण में जो लोग सरकार के और कुओमिङताङ्ग के नेता बने हुए थे वे आपस में उसी पुरानी तू-तू मैं-मैं को जारी रखे हुए थे। कौन बढ गया, किसे नीचे घसाट दो, नया गुट्ट बना लो, कैसे अमुक पद पर अधिकार किया जाव, कौन दक्षिण पक्ष और कौन वामपक्ष—बस इसी झगड़े में नाङ्किङ्ग व्यस्त था। जब च्याङ्ग्ई लौट कर आये तो कुओमिङताङ्ग का पंचम अधिवेशन होने वाला था। पर वहाँ ऐसी खींचातानी हो रही थी कि उन्होंने देखा कि अधिवेशन होना भी कठिन हो रहा है। कोई गुट्ट किसी से मुँह फुलाये है तो कोई दल किसी से नाराज होकर अधिवेशन में सम्मिलित होना नहीं चाहता और कोई किसी की टीका टिप्पणी करने में अपनी जिह्वा को कैंची की तरह चला रहा है। छोटी छोटी बातों को लेकर बे सिर पैर के इन झगड़ों को देख कर च्याङ्ग्ई बड़ी परेशानी मे पड़े। उन्होंने देखा कि इस स्थिति में तो कुओमिङताङ्ग का अधिवेशन भी न हो पायेगा। उन्होंने प्रमुख सदस्यों म भेट की, उनसे प्रार्थना की कि वे बैठक में अवश्य आयें। किसी प्रकार उनके प्रयत्न से अधिवेशन आरम्भ हुआ।

च्याङ्कई ने आरम्भ में ही प्रधान सेनापति के पद से पद-त्याग कर दिया। उन्होंने कहा कि उत्तरी विजय का काम पूरा होगया अत अब मुझे छुट्टी दे दी जाय। पर उनका त्याग-पत्र अस्वीकृत कर दिया गया। आज तो च्याङ्कई ही वह केन्द्र थे जो विरोधी तत्वों को भी आकर्षित कर एक शृंखला में बाँधे हुए थे। सदस्यों ने उनसे प्रार्थना की कि वे इस समय सरकार और दल को सँभालें तथा उत्तर-विजय के कारण जो जिम्मेदारी आ गयी है उसका निर्वाह करने के लिए कुओमिङताङ्ग की सहायता करें। च्याङ्कई ने त्याग पत्र वापस किये जाने पर सदस्यों से सहयोग की प्रार्थना की और कुओमिङताङ्ग का काम सँभाला। उन्होंने सेना तथा सरकार दोनों के नव सगठन के लिए कतिपय प्रस्ताव उपस्थित किये। सैनिकों के सम्बन्ध में वक्तव्य देते हुए उन्होंने कहा—"प्रत्येक सैनिक अधिकारी को सार्वजनिक रूप से यह शपथ ग्रहण करनी पड़ेगी कि उसका किसी से चाहे कितना भी राजनीतिक मतभेद क्यों न हो वह इस झगडे को निबटाने के लिए शस्त्र ग्रहण न करेगा। राष्ट्रीय सेना अब से केवल देश की रक्षा और शान्ति-स्थापना के लिए ही प्रयुक्त होगी। कोई अधिकारी अपने वैयक्तिक झगड़ों के निमित्त उसका उपयोग न कर सकेगा।" इसी प्रकार उन्होंने पार्टी और सरकार के सम्बन्ध को स्थिर करने के लिए भी प्रस्ताव रखे। उनका कहना था कि पार्टी के किसी सदस्य को सरकारी विभागों के काम में हस्तक्षेप करने का अधिकार न होना चाहिए। पार्टी एक बार सरकार का सगठन कर दे और जब वह सगठित हो जाय तो दल के सदस्य उसके काम में टाँग न अड़ायें। यदि सरकार के सम्बन्ध में किसी सदस्य को कुछ कहना हो तो वह दल की समिति से कहे और दल को ही यह अधिकार हो कि वह सरकार को जो चाहे आदेश करके अपने मन का काम करावे अथवा उस सरकार को ही बदल दे।

सरकार के पुन सगठन के सम्बन्ध में भी उन्होंने प्रस्ताव रखा उनका कहना था कि अब वह समय आ रहा है जब शासन का भार क्रान्ति सेना पर से हटा कर दल के सरक्षण में चलने वाली सरकार पर छोडा जाय। डाक्टर सुङ्यातसेन ने जो तीन सीढियाँ निर्धारित की थीं उनमें हमें अब दूसरी सीढ़ी की ओर कदम उठाना चाहिए। अत उन्होंने सरकार के पाँच विभाग निर्धारित

निये और एक-एक विभाग के एक एक अध्यक्ष या प्रधान नियुक्त करने का प्रस्ताव किया। यद्यपि च्याङ्कईशेक के ये प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिये गये फिर भी अधिवेशन में विविध गुटों की खींचा तानी को वे न रोक सके। अधिवेशन के बाद च्याङ्कईशेक ने देश और दल के सदस्यों को सम्बोधित करते हुए जो वक्तव्य दिया उससे इस स्थिति पर काफी प्रकाश पड़ जाता है। च्याङ्कईशेक ने अपने वक्तव्य में कहा—"हमारी क्रान्ति का लक्ष्य उस साम्राज्य वादी आक्रमण और शोषण का अन्त करने के लिए आरम्भ हुआ था जो हमारे देश का सत्यानाश कर रहा था। हमारी क्रान्ति की सफलता की एक मात्र शर्त यह थी कि हम अपनी आन्तरिक एकता को बनाये रखें। जब जब हमारी इस एकता में कमी आयी और बाधा पड़ी तब तब हम असफल हुए और हमको अपमान तथा पराजय स्वीकार करनी पड़ी। हमारी क्रान्ति का सारा इतिहास इसी सत्य की ओर संकेत करता है। सिनाङ्क में जापान ने चीन का अपमान किया। यह अपमान न केवल युद्ध स्थल में किया गया बल्कि जापान ने अपने देश में हमारी अक्षुण्ण प्रभुसत्ता और हमारी स्वतन्त्रता को अस्वीकार करके वस्तुतः हमारे साथ ऐसा व्यवहार किया जैसा पशुओं के साथ किया जाता है। इससे बढ़ कर हमारा और कौन सा अपमान होता ?"

"मैं उसी क्षण से बराबर यह सोचता रहा हूँ कि राष्ट्रीय क्रान्ति के सबसे बड़े शत्रु तो ये साम्राज्यवादी हैं। थोड़े से चीनी सैन्यसत्तावादियों का दमन मात्र कर देने से हमारी समस्या हल नहीं हो जाती। क्रान्ति की सच्ची सफलता तो तब होगी जब सारा देश जागृत हो जाय और उसमें इतनी एकता उत्पन्न हो कि हम अपने अन्तिम लक्ष्य को पूरा कर सकें। अब समय आपस में लड़कर अपनी शक्ति को नष्ट करने का नहीं है। हमें अपनी सैनिक, आर्थिक तथा नैतिक शक्ति का क्षण-क्षण सचय करना चाहिए क्योंकि इसकी आवश्यकता निकट भविष्य में ही पड़ सकती है। दल के प्रत्येक सदस्य का तो एक मात्र कर्तव्य यह है कि वह समय को पहचाने, लक्ष्य को देखे और तुच्छ तथा हेय झगड़ों से परे होकर उस तैयारी में लगे जो क्रान्ति की अन्तिम सफलता के लिए आवश्यक है। च्याङ्कई ने अपने इस वक्तव्य में जिस ओर संकेत किया है वह स्पष्ट है। जापान ने सिनाङ्क में जो दुर्व्यवहार उनके राष्ट्र के

माथ किया था और उससे चीन का जो अपमान हुआ वह कील की तरह उनके हृदय में चुभ रहा था। वे अपने देश की प्रकृत अवस्था से परिचित हो गये थे और अनुभव कर रहे थे कि चीन में यदि बल होता, यदि उस में शक्ति होती तो जापान की क्या मजाल थी जो अपमान करने का साहस करता। जो एक के बदले दो चाँटे रसीद करने की हिम्मत रखता है, जो कुदृष्टि से देखने वाले की आँखों में अपनी उँगली घुसेड़ देने की सामर्थ्य रखता है उसकी ओर नेत्र उठा कर देखने का भी साहस किसी को नहीं होता।

चीन में इसी का अभाव था। अतः जापान ने वैसा व्यवहार किया और सारे राष्ट्र को उसे पी जाना पड़ा। च्याङ्काई शेक इसी की ओर संकेत कर रहे हैं। उत्तर-विजय से चीन का प्रश्न हल नहीं होता। अत्यधिक शक्ति का अपव्यय करके उसने एकता अवश्य स्थापित की पर मुख्य काम था अपने सम्मान की रक्षा के योग्य बनना जिसके लिए अब आवश्यकता थी शक्तिसंचय करने की। गृह युद्ध, दंगा फसाद, पार्टीबन्दी छोड़ कर उसी शक्ति का एकत्रीकरण करना था। इसी में क्रान्ति की सफलता और सार्थकता थी। च्याङ्काई ने देश और दल के सदस्यों का ध्यान इसी ओर आकर्षित किया और उनसे अपील की कि वे इस काम में लग जायँ। स्वयम् उनकी नीति आगे यही रही कि यथासम्भव देश में आन्तरिक बल बढ़ाया जाय। वे हर तरह से इसे बचाने के लिए यत्नशील रहे और जब कोई उपाय नहीं बाकी बचता तभी शस्त्र उठाने को मजबूर होते। वे चाहते थे कि विदेशी शत्रुओं से भिड़ने के लिए राष्ट्रीय शक्ति का संचय किया जाय। अतः अपनी नीति पर प्रकाश डाल कर च्याङ्काई सरकार के निर्माण में लग गये। वे स्वयम् स्टेट काउन्सिल के अध्यक्ष चुने गये जो एक प्रकार से सरकार के अध्यक्ष का पद था। इसके अलावा वे चीन की जल स्थल आकाश सेना के प्रधान सेनापति भी निर्वाचित हुए। व्यवहारतः च्याङ्काई के ऊपर सरकार का सारा बोझ आ पड़ा।

च्याङ्काई विशाल और एकात्म हुए चीनी महाराष्ट्र की राष्ट्रीय सरकार के अध्यक्ष पद पर प्रतिष्ठित हो गये। उत्तर के प्रान्तों में मञ्चूरिया और जेहोल अब भी स्वतन्त्र थे। च्याङ्क सोलिङ्ग मञ्चूरिया को स्वतन्त्र घोषित करके उसके शासक बन बैठे थे। उनकी मृत्यु का

उल्लेख किया जा चुका है। उनके मरने के बाद उनके पुत्र चाङ-सुइल्याङ्ग अपने पिता की गद्दी पर बैठे। चाङसुइल्याङ्ग राष्ट्रीय विचार के नवयुवक थे। जैसे ही वे पदासीन हुए वैसे ही उन्होंने नाङ्किङ्ग सरकार की अधीनता स्वीकार करने के सम्बन्ध में च्याङ्कई को पत्र लिखा। च्याङ्कई और चाङ में अभी यह बात चल ही रही थी कि जापान ने हस्तक्षेप किया और चाङ पर दबाव डाला, और धमकी दी कि वह नाङ्किङ्ग परिधि में सम्मिलित न हों। जापान की आँखें बहुत दिनों से मञ्चूरिया पर लगी हुई थी। चाङसोलिङ्ग को वह अपना ही आदमी समझता था पर चाङ को नाङ्किङ्ग की ओर ढुलकते देख कर तनाका मन्त्रिमण्डल सशंक हो उठा और फलत दबाव डाला जाने लगा। चाङ सुदृढ और बलशील व्यक्ति था। उसने जापान की धमकियों की उपेक्षा की और नाङ्किङ्ग सरकार की सत्ता के नीचे अपनी अधीनता घोषित कर दी। मुकदन पर क्रान्तिकारिणी चीनी पताका आकाश में सिर ऊँचा किये फहराने लगी। इस प्रकार इस समय सारा चीन एकता के सूत्र में आबद्ध हो गया। चाङसुइल्याङ्ग स्टेट काउन्सिल का एक सदस्य नियुक्त कर दिया गया।

च्याङ्कई ने अपने जीवन की एकान्त इच्छा पूर्ण की। वे अपनी मातृभूमि की एकता के लिए गत बीस वर्षों से यत्न कर रहे थे। आज उन्हें स्वर्गीय डाक्टर सुन्यातसेन के सुस्वप्न को सत्य सिद्ध करने का श्रेय प्राप्त हुआ। वह वास्तव में सफल हुए पर उसके बाद च्याङ्कई के सामने महत्वपूर्ण प्रश्न उठ खड़े हुए। चीन पहले से ही गरीब था। उसकी महती जनसंख्या व्यवसाय वाणिज्य की कमी, एक मात्र कृषि का सहारा, देश के जमींदारों और महाजनों का शोषण, उत्पादन के पुराने और अनुपयोगी साधन, तथा जनहित ध्यान में रखनेवाली सरकार के अभाव में चीनी जनवर्ग यों ही दुर्दशा को प्राप्त हो गया था। पुरानी रूढ़ियों और अन्धविश्वासों से ग्रस्त अपढ़ चीनी किसान अपने प्रभुओं की वासना पूर्ति के साधन मात्र थे। फिर विदेशी साम्राज्यवादियों और अनेक महत्त्वाकांक्षी सैन्यसत्तावादी सामन्तों का शोषण उन्हें तबाह कर रहा था। सबसे बढ़कर बीसियों वर्ष के गृह युद्ध और पारस्परिक संघर्ष ने उन्हें तबाह कर डाला था। खेत उजड़ गये और परती पड़े रह गये, किसान मारे मारे फिरते, फसलें बरबाद होतीं और चारों ओर अकाल, दुर्भिक्ष, बरबादी तथा दरिद्रता दिखायी

देदी। जिधर देखिये उधर ही सर्वनाश का दृश्य था। सारा देश महाश्मशान बना हुआ था।

राष्ट्रीय सरकार का उत्तरदायित्व उठा लेने के बाद च्याङ्कई-शेक के सामने मुख्य रूप से देश के नवनिर्माण और उद्धार का काम आ पड़ा। जनता वर्षों से सुन रही थी कि क्रान्ति हो रही है। वह यह भी सुन रही थी कि क्रान्ति का लक्ष्य देश में ऐसी स्वतन्त्रता की स्थापना करना है जिसमें शोषित और बुभुक्षित जनवर्ग अधिक सुख और आनन्द तथा सुविधा से रह सकेगा। जनता की सरकार स्थापित होगी तो जनता के कष्ट दूर हो जायँगे। इसी आशा में उसने क्रान्ति का भार वहन किया कष्ट उठाया और उस दिन की शुभ घड़ी की राह देखी जब देश में जनता की सरकार कायम होगी। अब उसने सुना कि वह सरकार कायम होगयी है। अत वह अपेक्षा कर रही थी कि उसके कष्ट दूर होंगे। च्याङ्कई ने इस स्थिति का अनुभव किया। राष्ट्रीय सरकार चल नहीं सकती—एक क्षण भी उसके लिए टिकना सम्भव नहीं है यदि वह जनकष्ट का परिहार नहीं कर पाती। आवश्यकता थी इस बात की कि देश में वाणिज्य व्यवसाय बढ़े, कृषि उन्नत हो, जनता पेट भर भोजन पाये, उसका शोषण रुके, रहन-सहन का प्रतिमान, ऊँचा उठे और उसे रोजगार मिले जिसमें कमाई करके वह अपने परिवार का भरण पोषण कर सके।

आर्थिक सुधार के साथ ही साथ सांस्कृतिक सुधार भी हो सकता है। भूखे और नगों को कला, विज्ञान अथवा चरित्र की शिक्षा देने की चेष्टा करके भी कोई लाभ नहीं किया जा सकता। पेट भर अन्न मिलने के बाद ही मनुष्य अपने जीवन के अन्य प्रसगों में उन्नति करने की बात सुनता और सोचता है। नयी सरकार को देश की सांस्कृतिक उन्नति भी करनी थी। बिना उसके नवराष्ट्र का विकास नहीं हो सकता था। अत भविष्य का सारा कार्य-क्रम निर्भर करता था आर्थिक सुधार पर। च्याङ्कई ने इस ओर ध्यान देने की नितान्त आवश्यकता समझी। पर आर्थिक सुधार के लिए धन की आवश्यकता थी। केन्द्रीय सरकार के पास धन का अभाव था। उसकी आय इस समय प्राय चालीस करोड चीनी डालर थी और इसमें से करीब ३० करोड़ डालर सेना पर खर्च हो जाता था। युद्ध काल में सेना की भर्ती बड़ी तीव्रगति से [illegible] लोगों को कोई काम नहीं था अत वे

सेना में भर्ती हो गये थे। इस समय चीन की सेना में करीब ४२ लाख सैनिक थे। च्याङ्कई ने देखा कि केन्द्रीय सरकार कुछ नहीं कर सकती। उसके लिए पहला काम यह है कि वह इस अपार सैन्य-समूह को विघटित करे। अब इतनी बड़ी सेना रखने की आवश्यकता भी नहीं थी क्योंकि युद्ध समाप्त हो गया था। पर सैनिक-विघटन का काम सरल नहीं हुआ करता। युद्धों के बाद सरकारों को इस काम की पूर्ति में कभी कभी अपना अस्तित्व तक खो देना पड़ता है। सेना के आदमियों को विघटित करके लाखों आदमियों को बेकार बना देना शत्रुओं की अपार भीड़ निर्मित करना है।

च्याङ बड़े असमंजस में पड़े कि आखिर किया क्या जाय? उन्होंने मित्रों और साथियों के कई सम्मेलन बुलाये, इन प्रश्नों पर बहुत विचार किया और अन्त में इस निश्चय पर पहुँचे कि विघटन की क्रिया तो करनी ही है फिर चाहे जो हो। पर विघटन के लिए भी उन्होंने तरकीब सोची। चीन के सामने विधायक कार्य की कमी नहीं थी। सड़कों, पुलों और गमनागमन के मार्गों का निर्माण करना था, बंजरों और परती जमीनों को जोतवाना था, खानों और कारखानों में काम लगाना था, बाँध और नहरों की खुदाई करनी थी। ये सब काम आर्थिक सुधार के लिए आवश्यक थे। उन्होंने निश्चय किया कि सेना से हटाये गये लाखों आदमी इस काम में लगाये जायँ। उन्होंने निश्चय किया कि केन्द्रीय सरकार की कुल आय का अधिक से अधिक ४० प्रतिशत तक सेना पर खर्च किया जाय। यद्यपि यह रकम भी अधिक थी पर सम्प्रति यहाँ तक स्वीकार किया जा सकता था। यह भी निश्चय हुआ कि ६ लाख से अधिक की सेना न रहे। च्याङ्कई ने दृढतापूर्वक इस काम को उठाया और सेना का विघटन आरम्भ किया। दूसरी ओर सड़कों, नहरों, पुलों और बाँधों के निर्माण का काम आरम्भ हुआ। निर्जन तथा उजड़े हुए प्रदेशों को बसाने की योजना भी काम में लायी जाने लगी।

चीन सरकार ने कतिपय विदेशी सरकारों से बातचीत भी चलायी जो इस बात पर राजी दिखायी देती थीं कि चीन को जकात की नीति संचालन में स्वतन्त्रता दे दी जाय। च्याङ ने अपने साथियों और कर्मचारियों से अपील की कि उन्होंने जिस प्रकार युद्ध का संचालन योग्यता और त्याग की भावना से प्रेरित होकर किया उसी प्रकार इस

नय कार्यक्रम को पूरा करने में जुट पड़ें। सारे देश में जनता में प्रचार किया जाने लगा कि वह अधिक से अधिक उत्पादन करे और सरकार इस बात की चेष्टा करेगी कि उसके माल की खपत हो। चीन का निर्यात व्यापार आयात से अधिक हो इसके लिए जकात और चुंगी की नयी दर स्थापित करने के लिए विचार किया गया। इस सम्बन्ध में कतिपय सम्मेलन किये गये और योजनाएँ भी तैयार हुईं। इस प्रकार नाङ्किङ्ग सरकार ने देश के वाणिज्य-व्यापार को बढ़ाने तथा उत्पादन की मात्रा को अधिकाधिक अधिक करने के लिए प्रचार आरम्भ किया और इसमें जहाँ तक हो सकता था उत्तेजन प्रदान किया। जनता में व्यापक प्रचार किया गया कि वह आलस्य छोड़े, विशेष कर अफीम खाने की बुरी आदत से बाज आये और जहाँ तक सम्भव हो माल की अधिक से अधिक उत्पत्ति करे जिससे व्यापार बढ़े और राष्ट्रीय आय उन्नत हो। कल कारखानों में, ग्रामों के उद्योग-धन्धों में, खेती बारी में जहाँ भी हो अधिकाधिक श्रम किया जाय ताकि उत्पादन की मात्रा बढ़े।

च्याङ्कईशेक ने अपने दल की आर्थिक नीति की व्याख्या करते हुए अपने एक वक्तव्य में कहा—"राष्ट्रीय सरकार ने जकात-सम्बन्धी जो नीति ग्रहण की है वह कार्यान्वित की जा रही है। मुझे पूरी आशा है कि एक वर्ष के अन्दर चीन जकात के सम्बन्ध में पूरी स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेगा। अब से देश की आर्थिक उन्नति के लिए एक आवश्यक उपाय यह करना है कि हमारा निर्यात हमारे आयात से अधिक हो जाय। यदि जकात के सम्बन्ध में स्वतन्त्रता मिल जाती है तो हमारे देश के उत्पन्न पदार्थों के लिए बाजार न मिलने का कोई भय नहीं रह जायगा। हमारी वाणिज्य नीति में जो कमी होगी उसका भी उपाय हम कर लेंगे। हमारे सामने मुख्य विषय तो यह है कि हम उत्पादन की मात्रा कैसे बढ़ायें और किस प्रकार उत्पन्न तथा निर्मित पदार्थों को अधिकाधिक उन्नत करें। यदि हम इसे कर सके तो वही हमारा उत्तर होगा इस प्रश्न का कि चीन स्वतन्त्र राष्ट्रों की पंक्तियों में स्थान पाने के योग्य है अथवा नहीं।"

राष्ट्रीय सरकार की आर्थिक नीति के सम्बन्ध में उपर्युक्त वक्तव्य से अच्छा प्रकाश पड़ता है। वास्तव में च्याङ्कई की नीति वही थी जो पूँजीवादी आर्थिक व्यवस्था की हुआ करती है। अधिकाधिक

सेना में भर्ती हो गये थे। इस समय चीन की सेना में करीब २२ लाख सैनिक थे। च्याङ्ग ने देखा कि केन्द्रीय सरकार कुछ नहीं कर सकती। उसके लिए पहला काम यह है कि वह इस अपार सैन्य-समूह को विघटित करे। अब इतनी बड़ी सेना रखने की आवश्यकता भी नहीं थी क्योंकि युद्ध समाप्त हो गया था। पर सैनिक-विघटन का काम सरल नहीं हुआ करता। युद्धों के बाद सरकारों को इस काम की पूर्ति में कभी कभी अपना अस्तित्व तक खो देना पड़ता है। सेना के आदमियों को विघटित करके लाखों आदमियों को बेकार बना देना शत्रुओं की अपार भीड़ निर्मित करना है।

च्याङ बड़े असमंजस में पड़े कि आखिर किया क्या जाय? उन्होंने मित्रों और साथियों के कई सम्मेलन बुलाये, इन प्रश्नों पर बहुत विचार किया और अन्त में इस निश्चय पर पहुँचे कि विघटन की क्रिया तो करनी ही है फिर चाहे जो हो। पर विघटन के लिए भी उन्होंने तरकीब सोची। चीन के सामने विधायक कार्य की कमी नहीं थी। सड़कों, पुलों और गमनागमन के मार्गों का निर्माण करना था, बंजरों और परती जमीनों को जोतवाना था, खानों और कारखानों में काम लगाना था, बाँध और नहरों की खुदाई करनी थी। ये सब काम आर्थिक सुधार के लिए आवश्यक थे। उन्होंने निश्चय किया कि सेना से हटाये गये लाखों आदमी इस काम में लगाये जायँ। उन्होंने निश्चय किया कि केन्द्रीय सरकार की कुल आय का अधिक से अधिक ४० प्रतिशत तक सेना पर खर्च किया जाय। यद्यपि यह रकम भी अधिक थी पर सम्प्रति यहाँ तक स्वीकार किया जा सकता था। यह भी निश्चय हुआ कि ६ लाख से अधिक की सेना न रहे। च्याङ्ग ने दृढ़तापूर्वक इस काम को उठाया और सेना का विघटन आरम्भ किया। दूसरी ओर सड़कों, नहरों, पुलों और बाँधों के निर्माण का काम आरम्भ हुआ। निर्जन तथा उजड़े हुए प्रदेशों को बसाने की योजना भी काम में लायी जाने लगी।

चीन-सरकार ने कतिपय विदेशी सरकारों से बातचीत भी चलायी जो इस बात पर राजी दिखायी देती थीं कि चीन को जकात की नीति संचालन में स्वतन्त्रता दे दी जाय। च्याङ ने अपने साथियों और कर्मचारियों से अपील की कि उन्होंने जिस प्रकार युद्ध का संचालन योग्यता और त्याग की भावना से प्रेरित होकर किया उसी प्रकार इस

नये कार्यक्रम को पूरा करने में जुट पड़े। सारे देश में जनता में प्रचार किया जाने लगा कि वह अधिक से अधिक उत्पादन करे और सरकार इस बात की चेष्टा करेगी कि उसके माल की खपत हो। चीन का निर्यात व्यापार आयात से अधिक हो इसके लिए जकात और चुंगी की नयी दर स्थापित करने के लिए विचार किया गया। इस सम्बन्ध में कतिपय सम्मेलन किये गये और योजनाएँ भी तैयार हुईं। इस प्रकार नाङ्किङ्ग सरकार ने देश के वाणिज्य व्यापार को बढ़ाने तथा उत्पादन की मात्रा को अधिकाधिक अधिक करने के लिए प्रचार आरम्भ किया और इसमें जहाँ तक हो सकता था उत्तेजन प्रदान किया। जनता में व्यापक प्रचार किया गया कि वह आलस्य छोड़े, विशेष कर अफीम खाने की बुरी आदत से बाज आये और जहाँ तक सम्भव हो माल की अधिक से अधिक उत्पत्ति करे जिससे व्यापार बढ़े और राष्ट्रीय आय उन्नत हो। कल कारखानों में, ग्रामों के उद्योग-धन्धों में, खेती बारी में जहाँ भी हो अधिकाधिक श्रम किया जाय ताकि उत्पादन की मात्रा बढ़े।

च्याङ्कईशेक ने अपने दल की आर्थिक नीति की व्याख्या करते हुए अपने एक वक्तव्य में कहा—"राष्ट्रीय सरकार ने जकात-सम्बन्धी जो नीति ग्रहण की है वह कार्यान्वित की जा रही है। मुझे पूरी आशा है कि एक वर्ष के अन्दर चीन जकात के सम्बन्ध में पूरी स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेगा। अब से देश की आर्थिक उन्नति के लिए एक आवश्यक उपाय यह करना है कि हमारा निर्यात हमारे आयात से अधिक हो जाय। यदि जकात के सम्बन्ध में स्वतन्त्रता मिल जाती है तो हमारे देश के उत्पन्न पदार्थों के लिए बाजार न मिलने का कोई भय नहीं रह जायगा। हमारी वाणिज्य नीति में जो कमी होगी उसका भी उपाय हम कर लेंगे। हमारे सामने मुख्य विषय तो यह है कि हम उत्पादन की मात्रा कैसे बढ़ायें और किस प्रकार उत्पन्न तथा निर्मित पदार्थों को अधिकाधिक उन्नत करें। यदि हम इसे कर सके तो यही हमारा उत्तर होगा इस प्रश्न का कि चीन स्वतन्त्र राष्ट्रों की पंक्तियों में स्थान पाने के योग्य है अथवा नहीं।"

राष्ट्रीय सरकार की आर्थिक नीति के सम्बन्ध में उपर्युक्त वक्तव्य से अच्छा प्रकाश पड़ता है। वास्तव में च्याङ्कई की नीति वही थी जो पूँजीवादी आर्थिक व्यवस्था की हुआ करती है। अधिकाधिक

सेना में भर्ती हो गये थे। इस समय चीन की सेना में करीब २० लाख सैनिक थे। च्याङ्कई ने देखा कि केन्द्रीय सरकार कुछ नहीं कर सकती। उसके लिए पहला काम यह है कि वह इस अपार सैन्य समूह को विघटित करे। अब इतनी बड़ी सेना रखन की आवश्यकता भी नहीं थी क्योंकि युद्ध समाप्त हो गया था। पर सैनिक-विघटन का काम सरल नहीं हुआ करता। युद्धों के बाद सरकारों को इस काम की पूर्ति में कभी-कभी अपना अस्तित्व तक खो देना पड़ता है। सेना के आदमियों को विघटित करके लाखों आदमियों को बेकार बना देना शत्रुओं की अपार भीड़ निर्मित करना है।

च्याङ बड़े असमंजस में पड़े कि आखिर किया क्या जाय? उन्होंने मित्रों और साथियों के कई सम्मेलन बुलाये, इन प्रश्नों पर बहुत विचार किया और अन्त में इस निश्चय पर पहुँचे कि विघटन की क्रिया तो करनी ही है फिर चाहे जो हो। पर विघटन के लिए भी उन्होंने तरकीब सोची। चीन के सामने विधायक कार्य की कमी नहीं थी। सड़कों, पुलों और गमनागमन के मार्गों का निर्माण करना था, बंजरों और परती जमीनों को जोतवाना था, खानों और कारखानों में काम लगाना था, बाँध और नहरों की खुदाई करनी थी। ये सब काम आर्थिक सुधार के लिए आवश्यक थे। उन्होंने निश्चय किया कि सेना से हटाये गये लाखों आदमी इस काम में लगाये जायँ। उन्होंने निश्चय किया कि केन्द्रीय सरकार की कुल आय का अधिक से अधिक ४० प्रतिशत तक सेना पर खर्च किया जाय। यद्यपि यह रकम भी अधिक थी पर सम्प्रति यहाँ तक स्वीकार किया जा सकता था। यह भी निश्चय हुआ कि ६ लाख से अधिक की सेना न रहे। च्याङ्कई ने दृढ़तापूर्वक इस काम को उठाया और सेना का विघटन आरम्भ किया। दूसरी ओर सड़कों, नहरों, पुलों और बाँधों के निर्माण का काम आरम्भ हुआ। निर्जन तथा उजड़े हुए प्रदेशों को बसाने की योजना भी काम में लायी जाने लगी।

चीन-सरकार ने कतिपय विदेशी सरकारों से बातचीत भी चलायी जो इस बात पर राजी दिखायी देती थीं कि चीन को जकात की नीति संचालन में स्वतन्त्रता दे दी जाय। च्याङ ने अपने साथियों और कर्मचारियों से अपील की कि उन्होंने जिस प्रकार युद्ध का संचालन योग्यता और त्याग की भावना से प्रेरित होकर किया उसी प्रकार इस

नये कार्यक्रम को पूरा करने में जुट पड़ें। सारे देश में जनता में प्रचार किया जाने लगा कि वह अधिक से अधिक उत्पादन करे और सरकार इस बात की चेष्टा करेगी कि उसके माल की खपत हो। चीन का निर्यात व्यापार आयात से अधिक हो इसके लिए जकात और चुंगी की नयी दर स्थापित करने के लिए विचार किया गया। इस सम्बन्ध में कतिपय सम्मेलन किये गये और योजनाएँ भी तैयार हुईं। इस प्रकार नाङ्किङ्ग सरकार ने देश के वाणिज्य व्यापार को बढ़ाने तथा उत्पादन की मात्रा को अधिकाधिक अधिक करने के लिए प्रचार आरम्भ किया और इसमें जहाँ तक हो सकता था उत्तेजन प्रदान किया। जनता में व्यापक प्रचार किया गया कि वह आलस्य छोड़े, विशेष कर अफीम खाने की बुरी आदत से बाज आये और जहाँ तक सम्भव हो माल की अधिक से अधिक उत्पत्ति करे जिससे व्यापार बढ़े और राष्ट्रीय आय उन्नत हो। कल कारखानों में, ग्रामों के उद्योग-धन्धों में, खेती-बारी में जहाँ भी हो अधिकाधिक श्रम किया जाय ताकि उत्पादन की मात्रा बढ़े।

च्याङ्काईशेक ने अपने दल की आर्थिक नीति की व्याख्या करते हुए अपने एक वक्तव्य में कहा—"राष्ट्रीय सरकार ने जकात-सम्बन्धी जो नीति ग्रहण की है वह कार्यान्वित की जा रही है। मुझे पूरी आशा है कि एक वर्ष के अन्दर चीन जकात के सम्बन्ध में पूरी स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेगा। अब से देश की आर्थिक उन्नति के लिए एक आवश्यक उपाय यह करना है कि हमारा निर्यात हमारे आयात से अधिक हो जाय। यदि जकात के सम्बन्ध में स्वतन्त्रता मिल जाती है तो हमारे देश के उत्पन्न पदार्थों के लिए बाजार न मिलने का कोई भय नहीं रह जायगा। हमारी वाणिज्य नीति में जो कमी होगी उसका भी उपाय हम कर लेंगे। हमारे सामने मुख्य विषय तो यह है कि हम उत्पादन की मात्रा कैसे बढ़ायें और किस प्रकार उत्पन्न तथा निर्मित पदार्थों को अधिकाधिक उन्नत करें। यदि हम इसे कर सके तो वही हमारा उत्तर होगा इस प्रश्न का कि चीन स्वतन्त्र राष्ट्रों की पंक्तियों में स्थान पाने के योग्य है अथवा नहीं।"

राष्ट्रीय सरकार की आर्थिक नीति के सम्बन्ध में उपर्युक्त वक्तव्य से अच्छा प्रकाश पड़ता है। वास्तव में च्याङ्काई की नीति वही थी जो पूँजी[illegible] व्यवस्था की हुआ करती है। अधिकाधिक

उत्पादन करना और उसके साधनों तथा उत्पन्न पदार्थों को उन्नत करके अपना माल दुनिया के बाजारों में खपाना और मुनाफा कमाना पूँजीवादी राष्ट्रों का लक्ष्य हुआ करता है। इसी को वे राष्ट्रीय धन के नाम से पुकारते हैं। जो देश इसमें जहाँ तक सफल होता है उसकी आर्थिक दशा उतनी ही उन्नत मानी जाती है। पर इसके साथ साथ देश के आर्थिक प्रश्न का एक और पहलू भी होता है जिसका पूँजीवादी कोई समाधान नहीं कर पाता। यह पहलू है किसानों और मजदूरों तथा उन वर्गों के जीवन का जो उत्पादन क्रिया के मुख्य आश्रय और कारण होते हैं, जो पदार्थों की खपत और उपभोग के साधन होते हैं पर धन के उपार्जन में जिनके लिए कोई स्थान नहीं होता। यह विशाल और व्यापक जनवर्ग सदा दरिद्र ही रह जाता है क्योंकि उत्पादन और खपत के लिए उनका शोषण तो होता है पर शोषण से एकत्र हुए धन में उनका कोई भाग नहीं होता। इस स्थिति के कारण पूँजीवादी व्यवस्था के उदर में ही वह वर्ग उत्पन्न हो जाता है जो उसका विरोधी होने लगता है और जो सामन्जस्य स्थापित करने के लिए वर्ग संघर्ष का सहारा ग्रहण करता है।

पूँजीवादी अपनी इस व्यवस्था में सन्निहित हो उसके विरोधी तत्त्व की उपेक्षा करते हैं। वे समझते हैं कि इस विरोध को शान्त करने के लिए व्यवस्था में मौलिक परिवर्तन करने की जरूरत नहीं क्योंकि वैसा करना उनके स्वार्थ का विघातक होगा, पर थोड़ी बहुत अतिरिक्त मजदूरी अथवा मजदूरों और किसानों को अधिक सुविधा प्रदान करके उन्हें शान्त किया जा सकता है। वे पूँजीपतियों के धन को राष्ट्रीय धन समझते हैं और देश के किसान और मजदूर यदि किसी प्रकार खाने भर को पा जायँ तो इसे ही देश की उन्नत आर्थिक दशा मान लेते हैं। क्याइई शेर ने जिस व्यवस्था और नीति का उल्लेख किया है वह वैसी ही है, जिसकी चर्चा ऊपर की गयी है। वे उस मध्यमवर्ग के प्रतिनिधि और ऐसे ही लोगों की सरकार के अध्यक्ष थे। वे सीधी बात इतनी ही समझते थे कि देश में बेकारी और भूख यदि शान्त की जा सके तो इतना ही काफी है और यही होना चाहिए। पर उन्होंने जिस आर्थिक नीति का स्पष्टीकरण किया उससे एक वर्ग तुष्ट न हो सका। वामपक्षियों की ओर से उसका गहरा विरोध होने लगा। वामपक्षी किसानों, मजदूरों के लिए अधिक व्यवस्था चाहते थे। सामन्तों और किसानों से भूमि लेकर

किसानों को बाँट दी जाय, वे उनके प्रभु बना दिये जायँ, जमींदारी समाप्त की जाय, मजदूर अधिक मजदूरी पायें, काम के घंटे कम हों, उनका शोषण कारखानेदार न कर सकें, तत्सम्बन्धी सिद्धान्तों को व्यावहारिक रूप देने के लिए सरकार कानून बनाये आदि आदि उनकी माँगें थीं। स्पष्ट है कि इन वामपक्षियों पर कम्यूनिस्ट विचारों की छाप थी। कम्यूनिस्ट दल के लोग अपनी नीति और काम करने के ढंग के कारण भले ही असमर्थनीय तथा विरोधनीय हों पर कम्यूनिज्म' के वे सिद्धान्त जिन पर उनकी आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था आश्रित है एमे नहीं हैं जिनके प्रभाव को कोई रोक सके। वे विचार इतने प्रौढ़ और समय की पुकार के अनुकूल हैं कि जनवर्ग उनसे प्रभावित और उनकी ओर अवश्य आकृष्ट होगा। कोई उसे रोकने की शक्ति नहीं रखता। जब तक यह व्यवस्था और इसे बनाये रखने के प्रयत्न कायम हैं तब तक उन सिद्धान्तों की ओर लोगों का आकर्षित हो जाना भी अनिवार्य है।

फलतः वामपक्षियों ने इस नीति को निकम्मी, अधूरी और स्थिर स्वार्थी वर्गों के हितवाली कह कर उसका विरोध करना आरम्भ किया। उनका कहना था कि इससे मुख्य आर्थिक प्रश्न कभी हल नहीं हो सकता। च्याङ ने पहले वामपक्षियों को समझाने की चेष्टा की। वे कहते कि आज ऐसे प्रश्नों को उठाने का अवकाश नहीं है जिनसे देश में वर्ग संघर्ष छिड़ जाय। राष्ट्र के सामने बहुत से दूसरे काम हैं। साम्राज्यवादियों से छुटकारा पाके उसे इतना सशक्त बनाना है कि वह विश्व में सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त कर सके। यह तभी होगा जब देश की शक्ति को एकात्म बनायें। वर्ग संघर्ष की बात उठाने का परिणाम विघातक होगा। स्थिरस्वार्थी वर्ग अलग हो जायगा और आपस में ही खींचातानी मचेगी। विदेशी शत्रुओं को चञ्चुप्रवेश करने का अवसर मिल जायगा। अतः आवश्यकता इस बात की है कि आज ऐसी नीति बरती जाय जिससे एक ओर जनता की भूख और बेकारी मिटा कर उसे सांस्कृतिक दृष्टि से उन्नत किया जाय और दूसरी ओर राष्ट्र के प्रत्येक वर्ग की शक्ति को संचित करके इस योग्य बनाया जाय कि समय आने पर साम्राज्यवादियों का सामना किया जा सके।

च्याङ के तर्कों में बल था जिसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता पर वे [illegible] को समझा न सके। सरकारी नीति के विरुद्ध उनका विरोध [illegible] धीरे धीरे उसकी उग्रता बढ़ने लगी। देश भर में

उसका प्रचार होने लगा। ये अपने उत्साह में किसानों में लगान बन्दी और मजदूरों से हड़ताल कराने लगे। कुओमिङ्गताङ्ग काँग्रेस का तृतीय अधिवेशन होनेवाला था। दोनों पक्षों ने अपने अपने मत के सरदारों को भरने की चेष्टा की। काँग्रेस में च्याङ के दल का बहुमत स्पष्ट दिखायी देने लगा। वामपक्षियों ने वक्तव्य निकाल कर घोषणा की कि काँग्रेस में बहुमत प्राप्त करने के लिए दक्षिणपक्षी अपने आदमियों और प्रतिनिधियों को तिकड़म से भर रहे हैं। वामपक्षी च्याङ्ग से क्षुब्ध हुए। बहुतों ने कुओमिङ्गताङ्ग की सदस्यता और प्रतिनिधित्व से पदत्याग कर दिया। काँग्रेस का अधिवेशन उत्तेजित अवस्था में सन् १९२९ के मार्च में आरम्भ हुआ। दक्षिण पक्षियों ने वामपक्षियों तथा उनके नेता वाङचिङ्ग वेई के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव स्वीकार करके उन्हें निष्कासित कर दिया। फिर तो और विरोध बढ़ा। केन्द्रीय सरकार के अन्दर क्वाङ्गची और हुनान प्रान्तों में वामपक्षियों का अधिक जोर था। यह वही प्रान्त हैं जहाँ हाङ्काउ के कम्यूनिस्टों ने किसी समय अपना प्रबल प्रताप स्थापित कर रखा था। यद्यपि स्वयम् वामपक्षी कम्यूनिस्टों को दबाने में अग्रसर हुए फिर भी उन विचारों और उस नीति का प्रभाव उनमें अब भी था जिसका संचालन कम्यूनिस्टों ने किया था। चीन के महाप्रदेश में विभिन्न प्रान्त केन्द्रीय सरकार के अधीन एक सीमा तक स्वतन्त्रता का उपभोग कर रहे थे। इन प्रान्तों की अपनी अपनी सेना भी थी। वे प्रान्तीय सरकार की आय का एक हिस्सा केन्द्रीय सरकार को देते थे पर बहुत सी बातों में स्वतन्त्र थे। इस विरोध ने प्रान्तीयता को जन्म दिया। क्वाङ्गची और हुनान के अधिकारी न केवल केन्द्रीय सरकार की आज्ञा के विरुद्ध चलने लगे, उसकी सत्ता की उपेक्षा करने लगे बल्कि विद्रोह की तैयारी भी होने लगी। वे केन्द्रीय सरकार को उलट कर अपने सिद्धान्तों के अनुरूप सरकार की स्थापना करने की बात सोचने लगे।

ऐसे समय जब आशा की एक रेखा झलक उठी थी और जब यह विश्वास होने लगा था कि निकट भविष्य में चीन के राजनीतिक वायुमंडल में शान्ति विराजेगी एक बार पुनः गृहयुद्ध और उपद्रव तथा रक्तपात के लाल बादल मँडराते दिखायी दिये। केन्द्रीय सरकार ने और विशेष कर च्याङ्ग ने उसे टालने की कोशिश की पर वे किसी प्रकार केन्द्रीय सरकार की सत्ता को गिराकर शान्ति प्राप्त करने के पक्षपाती नहीं थे।

परिणामत उनकी सारी चेष्टाएँ विफल हुईं और पुनः युद्ध का सूत्रपात हुआ। कदाचित् अभी वह समय नहीं आया था जब चीन में एकता विराजती।

दसवाँ अध्याय

व्यापक विद्रोह और भीषण संहार

"हमारे कुछ साथी डाक्टर सुनयात सेन के सिद्धान्तों की अवहेलना करके मनमाना अर्थ लगा रहे हैं। विचारों में गड़बड़ी बुद्धि भेद और दृष्टिकोण में वैपरीत्य उत्पन्न हो गया है। आज हमारे साथी अपने स्वर्गीय नेता के आदर्शों और उनकी शिक्षा का वास्तविक अर्थ समझने में असमर्थ हो रहे हैं। डाक्टर सुनयात के तीनों सिद्धान्त देश के राजनीतिक और सामाजिक जीवन की व्यवस्था के लिए हैं। वे राष्ट्र के राजनीतिक जीवन से उसी प्रकार सम्बन्ध रखते हैं जिस प्रकार सामाजिक जीवन से। उदाहरणार्थ डाक्टर सेन की यह नीति थी कि जिस तरह में भूमि का उचित बँटवारा हो और पूँजीपतियों द्वारा मजदूरों का शोषण यथासम्भव रोका जाय, पर इसके साथ-साथ उन्होंने बार बार देश को सावधान करते हुए यह बात साफ साफ कही कि चीन इस लक्ष्य को वर्ग संघर्ष के द्वारा कभी प्राप्त करने की कोशिश न करे।"

"राजनीतिक दृष्टि से कुओमिंगताङ्ग ने जिस क्रान्ति का सूत्रपात किया है वह सारे देश की जनता के हित के लिए है। नेताओं को यह समझना चाहिए कि अब तक देश की जनता ने ही कष्ट उठाया है पर उसके साथ ही यह भी स्पष्ट है कि जब तक देश एकता के सूत्र में आबद्ध नहीं होता तब तक जनता के कष्टों की समाप्ति असम्भव ही है। प्रश्न यह है कि क्या सचमुच हमारे देश में एकता स्थापित हो गयी है? परिस्थिति से स्पष्ट है कि हम एकता स्थापित करने में समर्थ नहीं हुए हैं। प्रान्तीय सरकारें आर्थिक मामलों में स्वतन्त्र हैं और आज वे अपनी स्वतन्त्रता की सीमा को बढ़ाते जाने की ओर झुकी दिखायी देती हैं। केन्द्रीय सरकार की आज्ञा के बिना वे अस्त्र शस्त्र खरीद रही हैं, सैनिकों की भर्ती कर रही हैं और अपने सैन्यबल को लगातार बढ़ाती जा रही हैं। केन्द्रीय सरकार प्रान्तीय शासकों पर अपना नियन्त्रण

स्थापित करने में असमर्थ हो रही है। और सबसे बुरी बात तो यह हो रही है कि प्रान्तीय सरकारें अपनी शक्ति के आधार पर केन्द्रीय सरकार को अपने मन के मुताबिक नचाने की चेष्टा कर रही हैं। आज केन्द्रीय सरकार की यह दशा हो गयी है कि वह बिना प्रान्तीय शासकों से राय लिये उन मामलों में भी कुछ करने में समर्थ नहीं हो रही है जिनका सम्बन्ध सीधा उसी से है।"

यह अंश है च्याङ्ग्काई शेक के उस भाषण का जो उन्होंने कूओमिङ्ताङ्ग के तृतीय कांग्रेस के अधिवेशन में दिया था। इस भाषण से उस स्थिति पर प्रकाश पड़ता है जो उस समय चीन में फैलने लगी थी। जब तक केन्द्र में राष्ट्रीय सरकार स्थापित नहीं हुई थी तब तक सारा चीनी प्रदेश विभिन्न भागों में बँटा हुआ था जो प्रान्तीय सामन्तों के अधीन थे। ये सामन्त सदा इस चेष्टा में रहा करते थे कि अपनी शक्ति बढ़ावें और स्वयम् स्वतन्त्र हो जायँ। सामन्तशाही देश में सदा युद्ध, रक्तपात और अशान्ति का कारण बनी रही। शताब्दियों से चीन की यही स्थिति थी। मञ्चू राजकुल राज करता था और विधानतः ये शासक उसके अधीन होते थे, पर जब कभी राज पद पर कोई निर्बल राजा आता तो ये प्रान्तीय छत्रपति अपनी स्वतन्त्रता घोषित कर देते और स्वयम् शक्ति बढ़ाने और भूमि हरण करने के लिए परस्पर लड़ने लगते। फिर जब कोई बलशाली राजा होता तो वह इन्हें दबाने और अधीन करने के लिए इनसे युद्ध करता। इस प्रकार सारा देश सदा युद्ध की आग में जला करता। मञ्चू सरकार का उन्मूलन होने के बाद क्रान्तिकारिणी सरकार स्थापित हुई पर उसे लगातार बीस वर्षों तक भीषण संग्राम करना पड़ा। कभी दक्षिण में और अधिकतर उत्तर में ये सैन्यसत्तावादी सामन्त अपनी अपनी सत्ता अलग किये हुए क्रान्ति के मार्ग में बाधक होते रहे। च्याङ्ग को यह श्रेय प्राप्त हुआ कि उन्होंने पेकिङ्ग विजय करके क्रान्तिकारिणी राष्ट्रीय सरकार की स्थापना की। विधानतः चीन में आज एक ही सरकार थी पर उस महाविशाल प्रदेश के सुदूर प्रान्तों का शासन केवल केन्द्र से नहीं हो सकता था। अतः उसके अधीन विभिन्न प्रान्तों में ऐसे लोग शासक बना कर स्थापित कर दिये गये थे जिन पर कूओमिङ्ताङ्ग का विश्वास था और जो राष्ट्रीय क्रान्ति के नेता थे। फिर भी चीन का वह पुराना रोग दूर नहीं हुआ था। जहाँ आवश्यकता इस बात की थी कि सब मिल कर केन्द्रीय

सरकार को सुदृढ़ बनाते और देश का सुशासन करते वहाँ परस्पर की प्रतिस्पर्द्धा, मतभेद, महत्त्वाकांक्षा तथा दलबन्दी ने पुन विद्रोह की आग धीरे धीरे सुलगाना आरम्भ कर दी।

हुनाड हूपे और क्वाङ्ची प्रान्तों मे वामपक्षियों का जोर था। वहाँ की सरकार भी उन्हीं क हाथों में थी। च्याङ से उनका जो मतभेद उत्पन्न हो गया था उसका उल्लेख पहले किया जा चुका है। अब उन लोगों ने नाङ्किङ्ग की वर्तमान सरकार को बल पूर्वक उलट कर विशुद्ध वामपक्षियों की सत्ता स्थापित करने के लिए तैयारी आरम्भ की। वामपक्षी सिद्धान्तों के कारण मध्यचीन की जनता उनके साथ थी। वे लोकप्रिय भी थे। उन्होंने धीरे धीरे अपनी सैन्य शक्ति बढ़ानी भी आरम्भ की। उत्तर और दक्षिण के कुछ प्रान्तों में भी प्रचार किया जाने लगा कि इस विद्रोह मे वे वूचाङ और क्वाङ्ची के नेताओं का साथ दें। काङतुङ्ग में तो विशेष रूप से तैयारी की गयी और यह निश्चय हुआ कि काङतुङ्ग की एक सेना उनकी सहायता के लिए जायगी। वूचाङ और क्वाङ्ची की सेनाएँ अपनी सीमा पर एकत्रित भी होने लगीं। इन प्रान्तों के शासक अब खुल्लम-खुल्ला नाङ्किङ्ग सरकार की आज्ञा का उल्लंघन करने और केन्द्रीय सरकार की सत्ता अस्वीकार भी करने लगे।

केन्द्रीय सरकार के सामने अब विकट परिस्थिति थी। वह इस समय युद्ध को बचाना चाहती थी। च्याङ ने उत्तर विजय करने के बाद जो दृष्टिकोण ग्रहण किया था उसकी चर्चा की जा चुकी है। वे देश की शक्ति का क्षय व्यर्थ के गृहयुद्ध में न करके वह बल उत्पन्न करना चाहते थे जिसके सहारे विदेशियों की अक्ल दुरुस्त कर सकते। सिनाङ म जापान ने जो अपमान किया था उससे उनकी आँखें खुल गयी थीं। फलत ने युद्ध बचाना चाहते थे। पर उन्होंने देखा कि केन्द्रीय सरकार के अस्तित्व की रक्षा भी उतनी ही आवश्यक है। यदि इस प्रकार प्रान्तों द्वारा की गयी उपेक्षा, अवहेला और स्वच्छन्दता को चुपचाप सहन कर लिया जायगा तो केन्द्रीय सरकार फिर कितने दिनों तक टिक सकेगी ? दूसरे प्रान्तों के भी कुछ शासक वूचाङ की ओर देख रहे थे। विशेष कर उत्तर में स्थिति डाँवाडोल थी। उत्तर के कुछ सैन्यसत्तावादी नाङ्किङ्ग सरकार के सहायक होकर उत्तर विजय में च्याङ के साथ थे। फेङ उनमें मुख्य थे। पर अब जब उनके दूसरे प्रतिद्वन्द्वी समाप्त हो चुके थे, वे केन्द्रीय सरकार की सत्ता से छुटकारा पाकर अपना स्वतन्त्र

अस्तित्व स्थापित किया चाहते थे शाङ्तुङ्ग और शाङची के प्रान्तों में धीरे धीरे यह भाव फैल रहा था। च्याङ्क भी यह समझते थे और पूरी तरह मान बैठे थे कि केन्द्रीय सरकार को अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा करनी ही चाहिए इसमें यदि वह शान्तिपूर्वक सफल हो तो अच्छा है अन्यथा शस्त्र भी उठाना पड़े तो उठाना ही चाहिए।

मध्य चीन के प्रान्तों में वामपक्षी तैयारी कर रहे थे। उन प्रान्तों में कम्यूनिस्टों का प्रभाव पहले ही से था। जैसा कि कहा जा चुका है कम्यूनिस्ट जनता में लोकप्रिय भी थे। राष्ट्रीय आन्दोलन से अपने को अलग करके अथवा अपनी उग्रवादिता में पड़ कर परिस्थितियों की उपेक्षा करके वे भले ही बहक जाते रहे हों पर उनके आर्थिक और राजनीतिक सिद्धान्तों का आकर्षण और प्रभाव कम था इसे कोई अस्वीकार नहीं कर सकता। वे आदर्शवादी थे, उच्च सिद्धान्तों के आलोक से प्रभावित थे और उनमें अटूट श्रद्धा रखने के कारण उनके लिए मरने को तैयार रहते थे। बार बार उन पर दमन का वार किया गया पर वे उसका सामना करते हुए अपने कार्यक्रम और अपने सदस्यों को जहाँ तक बचा सकते थे बचा कर ले चलने में पीछे नहीं हटते थे। फलत मध्य चीन के कुछ क्षेत्रों में उनका प्रभाव अब तक स्थापित था और उनका खासा अच्छा और बलशाली गुट काम कर रहा था। जब होनाङ्क और क्याङ्ची के वामपक्षी वाङचिङ्वेई के नेतृत्व में नाङ्किङ्ग सरकार से असन्तुष्ट होकर अपनी सेना तैयार करने लगे थे तो उन्हें कम्यूनिस्टों की भी सहायता मिली। फलत होनाङ और क्याङची की सेनाएँ धीरे धीरे अपने प्रान्तों की सीमा पर एकत्र होने और आस पास के क्षेत्रों पर आक्रमण भी करने लगीं। याङ्चे नदी के तटवर्ती वूहाङ्क प्रान्त के नगरों में उसकी सेना एकत्र खड़ी थी जिससे नाङ्किङ्ग को सीधा खतरा दिखायी देता था।

च्याङ्कई ने पहले कतिपय वक्तव्य निकाल कर वामपक्षी नेताओं से प्रार्थना की कि वे केन्द्रीय सरकार की सत्ता को स्वीकार करें और इस तरह के झगड़ों से देश को बचावें। उन्होंने कहा, "यह आक्षेप निराधार है कि केन्द्रीय सरकार किसी व्यक्तिविशेष के हाथ की कठपुतली है। कुओमिङ्ताङ्क की पार्टी है पार्टी के नेता हैं उसकी समितियाँ हैं, उसके निर्णय होते हैं, वह नीति निर्धारित करती है और नाङ्किङ्ग सरकार उसको

न्चित करती है। सभी पार्टी के आदेश से चलते हैं। फिर यह
ा मुनासिब नहीं है कि सरकार किसी एक व्यक्ति के इशारे पर
ती है। जिन लोगों को शिकायत हो वे आयें और पार्टी के सामने
ल और अपने सिद्धान्तों और विचारों को उपस्थित करके
ूल निर्णय करा लें।"

पर उनके इन वाक्यों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उन पर तो
भी अभियोग था कि उन्होंने पार्टी में अपना बहुमत करने के
तरह तरह के कुचक्र रचे हैं और उसके आवरण में अपनी सत्ता
अपने अधिनायकत्व की स्थापना कर रहे हैं। वास्तव में यदि
ा के आधुनिक इतिहास को देखिये तो एक बात स्पष्ट दिखायी
। इतना रक्तपात, संघर्ष, उपद्रव तथा विनाश विशेषत एक
य कारण का परिणाम है। और वह है च्याङ्कईशेक के प्रति
के साथियों की प्रतिस्पर्द्धा की भावना। सैद्धान्तिक मत भेद तो
यूनिस्टों से उनका अवश्य था पर कुओमिङताङ्ग के वे सदस्य जो
यूनिस्ट नहीं थे वे भी उन पर कुढ़ते रहे। जो आज साथ हैं वे
कल लड़ते दिखायी देते थे। यह दशा सन् १९२९ ई० के आरम्भ
मुख्य रूप से दिखायी पड़ी और इसके बाद वर्षों तक चीनी राष्ट्र
को भयानक विषाक्त फोड़े की भाँति क्षतविक्षत किये रही।

सन् १९२९ में मार्च के अन्त में च्याङ्कई ने सरकारी सेना लेकर
ाङ पर आक्रमण कर दिया। इस समय तक क्याङची, हुनाङ
ार हुपे क प्रान्तों में प्रान्तीय सरकारें प्राय स्वतन्त्र सी हो गयी थीं।
ाङ ने वूचाङ की सेना पर उत्तर, दक्खिन और मध्य से तूफान की
ति आक्रमण किया और घमासान लड़ाई मचा दी। सरकारी सेना
े पीछे हटाती हुई हाङ्कउ की ओर बढ़ी। दो दिन बाद ही हाङ्कउ
ः नाङ्किङ्ग सेना का अधिकार हो गया। केन्द्रीय सेना भागती हुई
न्तीय सेना के पीछे पड़ी। उसे खदेड़ते हुए उसने किङ्गमेङ पर
धिकार किया। इस प्रचंड आघात से वूचाङ की शक्ति छिन्नभिन्न हो
ी। उधर काङतुङ्ग (कैण्टन) में विद्रोहियों ने पहले से तैयारी कर रखी
। उत्तर में अपनी हार होते देख कर काङची की सेना ने दक्षिण में
ण्टन) पर हमला किया। पर च्याङ पहले से ही इस स्थिति को जानते
और उसके लिए तैयार थे। चेङचिनाङ्ग के सेनापतित्व में सर
ारी सेना ने इस बढ़ती हुई आक्रमणकारिणी सेना पर प्रत्याक्रमण

किया और उसे खदेड़ दिया। आगे बढ़कर स्वाताउ पर अधिकार स्थापित करके उसने दक्षिण से क्याङ्ची-सैनिकों को निकाल बाहर किया फिर (पैरुटन) की सेना को भी मिला कर च्याङ्काई ने वूचाऊ पर अधिकार करके क्याङ्ची-सैनिकों का पीछा करते हुए उन्हें नाङ्किङ्ग से निकाल बाहर किया और इस प्रकार हुनाङ्, हूपे और कुआङ्ची प्रान्तों को अपने अधिकार में करके वहाँ सम्प्रति विद्रोह का दमन कर दिया। एक बार पुनः नाङ्किङ्ग की सत्ता जो खतरे में हो गयी थी प्रतिष्ठित हुई और च्याङ्काई उसके अन्यतम नेता के रूप में अवतीर्ण हुए। वूचाङ विद्रोह का दमन करके केन्द्रीय सरकार चीन के बाईसों प्रान्तों म सरकारी कर वसूल पाने लगी।

यद्यपि वूचाङ विद्रोह का दमन हो गया और एक बार शान्ति विराजती दिखायी पड़ी पर इससे यह न समझिये कि सारी समस्या हल हो गयी। चीन तो इस समय ज्वालामुखी हो रहा था। कहीं एक स्थान पर यह आग उगलने लगता और फिर शान्त हो जाता पर वह शान्ति स्थायी न होती। उसके आवरण में भीतर भीतर दूसरे विस्फोट की तैयारी होती रहती और मौका पाकर पहले की अपेक्षा अधिक भीषण और प्रचण्ड अंगारे बरसने लगते। वूचाङ विद्रोह के बाद उत्तर में स्थिति बिगड़ने लगी। शाङ्तुङ्ग प्रान्त में फेङयुन्याङ्ग शासन कर रहे थे जिनके अधीन शाङ्ची और क्याङ्चू के प्रान्त थे। इसी प्रकार शाङ्ची के मुखिया येङ सी शाङ्ग थे। फेंङ ने उत्तर की विजय करने में पहले च्याङ्काई की सहायता की थी। इसी कारण जब नाङ्किङ्ग में सरकार की स्थापना हुई तो फेंङ को युद्ध मन्त्री का पद प्रदान किया गया। पर वे अधिक दिन न इस पद पर रहे और न नाङ्किङ्ग में ठहर सके। शीघ्र ही [illegible] उत्तर चले [illegible] अपने प्रान्त का कारबार देखने [illegible] जाने [illegible] फेंङ च्याङ्काई से असन्तुष्ट [illegible] का [illegible] प्रभाव उन्हें सह्य नहीं था [illegible] की [illegible] के कठोर मुट्ठ पंजे [illegible]

जिस [illegible]

दिखायी

सम्मिलित [illegible]

गति स [illegible]

कि क्या हो रहा है कि उन्होंने उसे कुचल दिया। फेंङ को उस समय तो अवसर नहीं मिला पर च्याङ्काई फेंङ के भाव को समझ रहे थे। वे जानते थे कि इधर से एक दिन विपत्ति के बादल उठेंगे। यूचाङ-विद्रोह के समय से ही यह अफवाह फैलने लगी थी कि फेंङ नाङ्किङ पर धावा करने वाले हैं। वे सैन्य-संग्रह कर रहे हैं। यह खबर थी कि बहुत-से बोल्शेवी एजेन्ट तथा चीनी कम्यूनिस्ट और वामपक्षी वाङ के साथी फेंङ के पास हैं जो उन्हें बराबर सरकार के विरुद्ध विद्रोह करने के लिए उभाड़ रहे हैं।

वस्तुत इन अफवाहों में सत्य था। फेंङ उत्तरी प्रान्तों की आय का वह भाग केन्द्रीय सरकार को नहीं दे रहे थे जो उसे मिलना चाहिए था। पेपिङ्ग हाङ्काउ रेलवे तथा शङ्घाई रेलवे से होनेवाली आय भी वे सबकी सब रख लेते थे। कई लाख की अपनी सेना उन्होंने एकत्र कर ली थी और सारी रकम उसी पर खर्च करते थे। केन्द्रीय सरकार ने नियम बनाया था कि विविध प्रान्तों में निर्धारित सैनिक ही रहेंगे जिसके व्यय का कुछ भाग स्वयम् केन्द्रीय सरकार देगी। इस निर्धारित संख्या से कई गुना अधिक सैनिक फेंङ के पास थे। वे उनके खर्च की निर्धारित रकम केन्द्रीय सरकार से ले लेते थे पर प्रान्तीय आय का उसका भाग नहीं देते थे। च्याङ्काइ इस उत्तरी सैनिक की शक्ति को जानते थे। वे यह भी समझते थे कि उससे युद्ध न फँसना भयावह हो सकता है। अत यूचाङ विद्रोह के समय से ही उन्होंने फेंङ को लम्बे-लम्बे तार भेजने आरम्भ किये। उन्होंने बड़ी नम्रता से उनसे प्रार्थना की कि वे देश की रक्षा करने में केन्द्रीय सरकार की सहायता करें। इन तारों से मालूम होता है कि च्याङ ने उनकी कितनी खुशामद और उनकी देशभक्ति, प्रगतिशीलता और साहस की कितनी प्रशंसा की। उन्होंने लिखा—"आपके सम्बन्ध में जो अफवाहें फैली हुई हैं उन पर मैं विश्वास नहीं कर सकता। आप नाङ्किङ आइये और मुझे जो आज्ञा दीजिये वह मैं करूँ। मैं आपको अपना बड़ा भाई मानता हूँ।"

पर इन सबका कोई प्रभाव फेंङ पर नहीं पड़ा। च्याङ्काई ने फेंङ से यहाँ तक प्रार्थना की कि आपका प्रान्त गरीब है। किसान तबाह और बरबाद हो चुके हैं। उनके कल्याण के लिए देश को इस समय युद्ध से बचाने की आवश्यकता है। परन्तु च्याङ्काई ने जब देखा कि उनकी इन सब प्रार्थनाओं और युक्तसंगत अपीलों का कोई प्रभाव नहीं होता

तो पार्टी की मीटिंग बुलाकर सारे मामले को सामने रख दिया। पार्टी ने फेङ्ग को निर्वासित किया और सरकार ने उनकी गिरफ्तारी की आज्ञा जारी की। इसके बाद भी च्याङ्कई मामले को सँभालना चाहते थे। स्वयम् पेपिङ्ग (पेकिङ्ग का परिवर्तित नाम) की ओर अकेले गये। च्याङ्कई ने वहाँ जाकर असाधारण साहस का परिचय दिया। इस समय पेपिङ्ग असन्तुष्ट उत्तरी प्रान्तीय शासकों का गढ़ हो गया था। पर उन्होंने स्वयम् खतरा उठाकर वहाँ जाना पसन्द किया और उनकी धारणा थी कि इस प्रकार विरोधियों में अपना विश्वास प्रकट करके कदाचित् वे परिस्थिति को सुलझा लेंगे। पेपिङ्ग में च्याङ ने फङ से भेंट की और उनसे कहा, 'आप यदि अपने वर्तमान रुख को छोड़ कर पद त्याग कर दें तो सरकार आपको क्षमा प्रदान कर देगी और आप यदि विदेश जाना चाहें तो आपको न केवल सुरक्षित पहुँचा देगी बल्कि चीन का प्रतिनिधि बनाकर भेजने को तैयार होगी।' फङ ने यह प्रस्ताव स्वीकार किया। तदनुसार नाङ्किङ्ग-सरकार ने उन्हें क्षमा करते हुए उनके विरुद्ध निकाली गयी आज्ञा भी रद्द कर दी।

च्याङ्कई नाङ्किङ्ग वापस आ गये। उन्होंने समझ लिया कि मामला कम से कम अस्थायी तौर पर हल हो गया। शायद मामला हल हो भी गया होता पर वे लोग जो फेङ्ग के पारस्परवर्ती थे तथा वे वामपक्षी और कम्यूनिस्ट जो उनके निकट पहुँच गये थे उन्हें उभाड़ रहे थे। उन्होंने समझा कि च्याङ ऐसे सब लोगों को पार्टी से निकाल देना चाहते हैं जो उनके अधिनायकत्व की स्थापना में बाधक दिखायी देते हैं। वे एक मात्र अपना अधिकार देश में चाहते हैं और इसीलिए फेङ्ग को भी हटाने के प्रयत्न में हैं। देश और पार्टी दोनों की रक्षा इसी में है कि बलपूर्वक नाङ्किङ्ग पर अधिकार करके च्याङ्कई को निकाल बाहर किया जाय और नयी सरकार स्थापित की जाय। फलतः च्याङ का सारा प्रयत्न निष्फल गया और एक दिन युद्ध का आरम्भ हो ही गया। हुनान प्रान्त में स्थित सरकारी सेना पर १४ अक्तूबर को फेङ्ग की सेना ने आक्रमण करके हाङ्काउ की ओर कदम बढ़ाया। उनकी घुड़सवार सेना ने लायाङ्ग और च्येङ्गइ की ओर आक्रमण किया। ये दोनों नगर सरकारी सेना के कब्जे में थे। पहले फेङ्ग की सेना के प्रचंड प्रहार से सरकारी सेना के पैर उखड़ गये, पर तुरन्त ही मामला सँभल गया। च्याङ स्वयम् नयी कुमक लेकर रण-स्थल पर तुरन्त पहुँच गये। उन्होंने गहरा मुकाबिला

किया। कई दिनों तक घमासान लड़ाई होने के बाद उत्तरी सेना भाग खड़ी हुई। भागते हुए वह बहुत सा अस्त्र शस्त्र और सामान छोड़ती गयी। नाङ्किङ्ग की सेना बढ़ती हुई शाङ्घाइ पहुँची और उसे कब्जे में करके सारे हुनाङ को विद्रोहियों से मुक्त कर लिया।

पर इससे यह न समझिये कि चीन में शान्ति हो गयी। अब तो विद्रोहों का सिलसिला आरम्भ हो गया था। एक के बाद दूसरे कतिपय उपद्रव हुए। उत्तर में एक बार विद्रोहियों का प्रयत्न विफल हुआ पर इस विफलता ने उन्हें दूसरी बार तैयारी करके दूसरा महा प्रयास करने के लिए उत्प्रेरित किया। इधर दक्षिण में मध्य चीन में भी उपद्रव होने लगे। हुपे में चाङफाकुई नामक एक जनरल ने बगावत का झंडा ऊँचा किया। चाङ वामपक्षी और वाङच्यङ्वेई के दल का सदस्य था। इस समय नाङ्किङ्ग-सरकार के अधीन हुपे प्रान्त में वह एक सेना का अधिकारी था। च्याङ को यह बात ज्ञात थी कि यह व्यक्ति वाङ दल का है अत इस विषम परिस्थिति में उस पर निगाह रखनी चाहिए। उन्होंने चाङ को आज्ञा दी कि वह अपनी सेना हुपे के इच्याङ नगर से हटा कर लुङ्हाई ले जाय। चाङफाकुई ने सरकार की इस आज्ञा का न केवल उल्लंघन किया बल्कि अपनी सेना काङतुङ्ग की ओर बढ़ायी। उसका इरादा था काङतुङ्ग पर अधिकार स्थापित करके नयी सरकार की रचना कर लेना। उधर चाङ ने काङतुङ्ग की ओर बढ़ने के पूर्व एक वक्तव्य प्रकाशित किया। यह वक्तव्य क्या था नाङ्किङ्ग-सरकार को खुली चुनौती थी जिसमें उसने उससे पाँच माँगें की थीं। सरकार से कहा गया था कि राष्ट्रीय काँग्रेस की बैठक पुन बुलायी जाय, कूओमिङ्ताङ्ग से स्वार्थी वर्ग निकाल बाहर किये जायँ तथा सरकार और दल का पुनस्सगठन किया जाय और वाङच्यङ् उसके अध्यक्ष बनाये जायँ।

नाङ्किङ्ग सरकार ने इस पर चाङ को बर्खास्त कर दिया और चाङ ने सरकार के विरुद्ध बगावत कर दी। उसकी सेना धीरे धीरे बिना किसी प्रतिरोध के काङतुङ्ग की ओर बढ़ी। च्याङ इस समय उत्तर की ओर फँसे हुए थे। चाङ इस प्रकार बिना प्रतिरोध के धीरे धीरे काङतुङ्ग की ओर बढ़ रहा था कि मालूम हो कि वह काङतुङ्ग पर अधिकार ही कर लेगा। च्याङ ने अब इस खतरे की उपेक्षा करना नामुनासिब समझा। उन्होंने शीघ्र ही सेना भेजी। दोनों में घोर युद्ध हुआ और चाङ पराजित हुआ। नाङ्किङ्ग की सेना ने उसे

खदेड़ दिया और तब तक पीछा न छोड़ा जब तक उसकी सेना बुरी तरह छिन्न भिन्न न हो गयी।

धाङ्ग पा के विद्रोह की समाप्ति होते होते अइह्वेई प्रान्त में यही आग लग गयी। नाङ्किङ्ग के बिलकुल सामने क्याङ्ग्ची के उस पार अइह्वेई में बगावत हुई। शिह्यू-च्याङ्ग अइह्वेई प्रान्त के अध्यक्ष थे। च्याङ्ग ने नाङ्किङ्ग से सेना भेज कर इस बगावत का शमन किया। अइह्वेई का यह विद्रोह समाप्त भी न हो पाया था कि पश्चिमी होनाङ्ग प्रान्त में ताङ्गशेङ्ग चिह ने बगावत का झंडा ऊँचा किया। ताङ्ग भी वाङ्ग के शिष्य थे और समर्थक भी। उन्होंने खुल्लम-खुल्ला विद्रोह की घोषणा करते हुए कहा कि वाङ्ग को सरकार तथा दल का अधिपति बनाने की माँग का वे भी समर्थन करते हैं।

च्याङ्काई ने इस बार एक सेना ताङ्ग का दमन करने के लिए पश्चिमी होनाङ्ग में भेजी। कई दिनों तक घमासान युद्ध होने के बाद ताङ्ग असफल हुए और होनाङ्ग से निकल भागे। उनकी अधिकतर सेना कैद हुई जो अशस्त्र करके विघटित कर दी गयी। इस प्रकार एक के बाद दूसरे कतिपय विद्रोहों का दमन करने में नाङ्किङ्ग-सरकार च्याङ्काई के नेतृत्व में बुरी तरह परेशान हो रही थी। यह समय ऐसा विकट और विषम उपस्थित था कि केन्द्रीय सरकार का तो अस्तित्व तक खतरे में हो रहा था। सारे देश में अव्यवस्था अनिश्चितता तथा भय समा गया था। जिधर देखिये असन्तोष उपद्रव तथा रक्तपात दिखायी देता था। यह स्थिति हुई थी आपस के संघर्ष के कारण। वे ही लड़ रहे थे जो क्रान्ति के अग्रदूत थे और जिन्होंने मिल-जुलकर क्रान्ति विरोधियों का दमन किया था। जनता में घोर बुद्धि भेद उत्पन्न हो गया था। वह समझ ही नहीं पाती थी कि जो कल एक थे और जिनकी विजय के बाद देश में शान्ति विराजने की आशा की जा रही थी वे ही आज एक दूसरे के विरुद्ध क्यों खड्गहस्त हुए हैं।

सारे देश में तरह-तरह के प्रदर्शन होते। कभी छात्रों का प्रदर्शन, कभी किसानों का और कभी मजदूरों का। कभी इस दल के विरुद्ध एक प्रदर्शन होता और कभी उस दल के विरुद्ध दूसरा। काङ्गची प्रान्त में कम्यूनिस्टों का दल फिर अपना काम करने लगा था। च्याङ्काई-शेक को फँसा देखकर उन्हें अच्छा मौका मिला था। वे उधर अपनी सत्ता स्थापित करने लगे थे। उनके दल गुप्त स्थानों से निकल आते, अक्सर

सरकारी सैनिक टुकड़ी पर टूट पड़ते और उसे ठोक पीटकर चले जाते। चीनी कम्यूनिस्टों ने जिस प्रसिद्ध गुरिला युद्ध-प्रणाली को जन्म दिया उसका उद्भव इसी काल से हुआ। साधारण जनता में से सैनिकों को लेकर ये छापा मारते और अपना काम करके पुन उन्हीं में मिल जाते। वे कहते कि 'हम मछली की तरह हैं और जनवर्ग वह पानी है जिसमें हम तैर जाया करते हैं।' सरकारी सेना को इनका पता पाना भी कठिन होता। इस प्रकार यह सिलसिला चल ही रहा था कि उत्तर में एक बार पुन भीषण विद्रोहाग्नि के फूट पड़ने के लक्षण दृष्टिगोचर होने लगे। सन् १९३० ई० के फरवरी महीने में येङ्हीशाङ जो शाङ्सी प्रान्त के शासक और फेङ के साथी थे खुल्लम-खुल्ला च्याङ के विरुद्ध उठ खड़े हुए।

उन्होंने नाङ्किङ्ग को तार भेजकर यह माँग पेश की कि च्याङ्कई तुरन्त पद त्याग कर दें क्योंकि बिना इसके शान्ति असम्भव है। च्याङ ने उत्तर में लिखा, "देश की स्थिति इस बात की अपेक्षा कर रही है कि मैं अपने कर्तव्य पर डटा रहूँ और जब तक प्रतिगामियों का दमन नहीं हो जाता तब तक मैं अपने स्थान से नहीं हट सकता।" इस उत्तर को पाने के बाद येङ ने अपनी सेना को धीरे धीरे दक्षिण की ओर बढ़ने का आदेश दिया। च्याङ्कई के यह पूछने पर कि सेना के बढ़ाव का कारण क्या है, येङ ने साफ साफ लिखा—'इसके लिए जिम्मेदार नाङ्किङ्ग है। आज आवश्यकता इस बात की है कि सरकार का आमूल सुधार किया जाय और जैसा कि मालूम होता है नाङ्किङ्ग इसके लिए तैयार नहीं है। अत उससे शान्तिपूर्वक कुछ करा लेने की आशा करना व्यर्थ है।"

इसी समय एक और घटना घटी। वाङलोपिङ्ग नामक एक सज्जन जो वामपक्षी और वाङच्यङ्ग के साथी थे सहसा मार डाले गये। वाङ्च्यिङ्ग ने जब इस घटना को सुना तो उन्होंने वक्तव्य निकाल कर नाङ्किङ्ग गुट्ट को इसके लिए जिम्मेदार ठहराया। अब तक इस रहस्य का उद्‌घाटन नहीं हुआ कि वाङलोपिङ्ग की हत्या किसने और क्यों की, पर इसे बहाना बना कर येङ ने विद्रोह की घोषणा कर दी। फेङ भी येङ के सहायक हुए। इसके थोड़े ही दिनों बाद उत्तर के पचास नेताओं के हस्ताक्षरों से एक वक्तव्य प्रकाशित हुआ जिसमें च्याङ्कई के विरुद्ध सार्वजनिक रूप से गम्भीर अभियोग लगाये गये। इसके बाद

तत्काल फेङ ने उत्तर पश्चिमी सेना का सेनापतित्व ग्रहण किया। येङ ने नाङ्किङ्ग के विरुद्ध आक्रमण करने के लिए अपनी शक्ति और सेना सँभाली। उन्होंने पेपिङ्ग पर अधिकार करके तमाम सरकारी इमारतों को कब्जे में कर लिया और अपनी सैनिक टुकड़ियों को दक्षिण की ओर बढ़ने की आज्ञा दी। इस बार उत्तर में स्थिति भयावह हो गयी। नाङ्किङ्ग के प्राय सभी विरोधी एक होकर उसे समाप्त करने के महाप्रयास में लग गये। च्याङ्कई ने यह सारी तैयारी शान्ति-पूर्वक देखी। उन्होंने नाङ्किङ्ग के भयावने खतरे को भी समझा पर अपने सहज और धीर स्वभाव के अनुसार वे गम्भीर बने रहे। उन्होंने यहाँ तक घोषणा कर दी कि नाङ्किङ्ग विद्रोहियों को दण्ड देने के लिए सम्प्रति कोई सेना न भेजेगी बल्कि वह रक्षापरक कार्रवाई करेगी।

दलवाले च्याङ की इस शान्ति से घबरा उठे। उन्होंने वक्तव्य देते हुए कहा कि विद्रोहियों का दमन इतना आवश्यक नहीं है जितनी आवश्यकता पार्टी और सरकार को इस प्रकार सुधारने की है कि वह अधिकाधिक योग्यता से देश के पुनर्निर्माण के लिए विधायक कार्य कर सके। यदि वास्तविक काम किया जा सका तो विरोधी आप ही आप नष्ट हो जायँगे। प्राय एक महीना इस प्रकार बिताने के बाद वे हाङ्काङ्ग गये और वहाँ से लुङ्हाई रेलवे के निकट जाकर अपना डेरा डाला। अब उन्होंने रक्षापंक्ति खड़ी की तथा सुरक्षा के अन्य आवश्यक आयोजन किये। अपने अच्छे सुशिक्षित और सुसज्जित सैनिक लाकर उन्होंने रुकने और आक्रमण का सामना करने की पूरी तैयारी भी की। उत्तरी नेताओं ने च्याङ्कई की इस शान्ति को उनकी दुर्बलता का चिह्न मान लिया। अत उन्होंने आक्रमण करना उचित समझा और अङ्हुवेई प्रान्त में घुस पड़े। अब च्याङ्कई ने बढ़ कर उनका मार्ग रोका और प्रत्याक्रमण कर दिया। पहले ही संघर्ष में विद्रोहियों को पीछे हटना पड़ा। वे अङ्हुवेई छोड कर शाङ्तुङ्ग की सीमा में चले गये। फिर तो लम्बे मोरचे पर कई स्थानों में युद्ध छिड़ गया। च्याङ्कई की रण-योजना यह नहीं थी कि वे शत्रु को ढकेल कर नगरों पर अधिकार करें। वे तो उनकी शक्ति को विचूर्ण करना चाहते थे। इसलिए उन्हें लड़ाते रहना ही उचित समझ रहे थे। उत्तरी सेना प्रचण्ड वेग से लड़ रही थी। इधर च्याङ उत्तर में फँसे थे उधर उनके पीछे कम्यूनिस्ट

गुरिल्लाओं की कार्रवाई जारी थी। ये यदा-कदा सामने आक्रमण कर बैठते और भीषण हानि पहुँचा कर पुल पहाड़ियों, जंगलों और खोहों की राह लेते। नाङ्किङ्ग की सेना इनसे बुरी तरह परेशान थी।

उत्तरी सेना से न्याङ्ग भिड़े ही थे कि मध्य चीन में वामपक्षियों की सेना जो क्याङ्ची में तैयार थी और उत्तरीयों का साथ दे रही थी एकाएक आगे बढ़ी। ये तीस सहस्र सैनिक हुनाङ की सीमा पार करके आगे बढ़े। उन्होंने एक सप्ताह के भीतर ही उसकी राजधानी चाङशा पर अधिकार कर लिया और अपनी सरकार की घोषणा कर दी। न्याङ्कई क्याङ्ची सेना का सामना करने के लिए नहीं जा सकते थे। वे उत्तर में बुरी तरह उलझे हुए थे। फलन (कैण्टन) क्वाङतुङ्ग से एक सेना भेजी गयी जिसने क्याङ्ची के सैनिकों का मुकाबिला किया और गहरी लड़ाई के बाद उसे पराजित किया। इधर उत्तर में न्याङ्कई की बुरी हालत थी। उत्तरी सेना की अत्यधिक संख्या, उसकी शस्त्र सज्जितता तथा उसकी युद्ध-पद्धति और तोपों से बरसनेवाली घनघोर अग्नि-वर्षा में टिकना न्याङ्कई के लिए कठिन हो रहा था पर अपनी धीरता के बल पर वे इन कठिनाइयों का सामना करते हुए डटे रहे। सरकारी सेना की गहरी क्षति हुई पर वह अपने स्थान से नहीं हटी। अन्त में न्याङ्कई ने पोचाङ नगर पर घेरा डाला और उस पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया।

इधर येङ ने शाङतुङ्ग प्रान्त पर आक्रमण किया। इसकी राजधानी सिनाङ से जो जापानी सेना के कब्जे में थी जापानी अब हट गये थे और नाङ्किङ्ग सरकार ने उस पर अधिकार कर लिया था। येङ ने सिनाङ पर धावा किया और सरकारी सेना को भगाकर अपना कब्जा जमा लिया। न्याङ ने सिनाङ को छीन लेने के इरादे से प्रत्याक्रमण किया और भीषण युद्ध के बाद सफलता प्राप्त की। येङ की सेना सिनाङ छोड़ कर भाग निकली। येङ की भागती हुई सेना ह्वाङ्गहो नदी के किनारे पहुँची और उसे पार करने का यत्न करने लगी। नदी भयावनी बाढ़ से मस्त बह रही थी। इधर न्याङ्कई की सेना उनका पीछा करती हुई आ रही थी। उन्होंने पार जाने की चेष्टा की। सरकारी सेना ने भयावनी गोलाबारी की जिसके फलस्वरूप बहुत-से सैनिक नष्ट हो गये, कुछ डूब कर मर गये और कुछ गिरफ्तार हुए। जो टूटे फूटे बचे वे उत्तर की ओर पलायित हुए।

सरकारी सेना की यह गहरी विजय थी। इसने विद्रोहियों की कमर तोड दी। यद्यपि इसके बाद भी कई महीने तक लडाई चलती रही पर उत्तरी सेना जगह जगह पराजित होती गयी। न्याङ्कई ने एक बार इस व्यर्थ की बरबादी और जनक्षय तथा विनाश को रोकने की चेष्टा की। बार-बार उत्तरी सेना पराजित हुई थी। वह कभी एक अगुल भी आगे बढ़ने नहीं पायी थी। उसके सैनिक मारे गये, नाङ्किङ्ग सरकार के सैनिक धीरे धीरे सर्वत्र बढ़ते जा रहे थे। इस पारस्परिक सघर्ष के फलस्वरूप देश की जनता पिस उठी। वह तबाह हुई। युद्ध के कुफल से नष्ट होने लगी। चारों ओर भूख और दरिद्रता का हाहाकार मच गया। गाँव के गाँव उजाड बंजर बन गये। हरी भरी खेती नष्ट हो गयी। जिधर देखिये अकाल दुर्भिक्ष और बाढ उनका सत्यानाश कर रही थी। विनाशक गृह-युद्ध की आग लगने पर सिवा इसके दूसरा हो क्या सकता था ? च्याङ्कई ने यह दशा देख कर एक बार पुन मित्रता के लिए हाथ बढ़ाया। उन्होंने वक्तव्य निकाल कर कहा—"उत्तर के विद्रोहियों में से जो सैनिक अथवा अफसर सरकार के सम्मुख आत्मसमर्पण कर देंगे वे सम्मानपूर्ण व्यवहार के भागी होंगे और उन्हें कोई दड नहीं दिया जायगा। जो लोग विद्रोह के अगुआ थे वे गिरफ्तार करके सरकार के सिपुर्द कर दिये जायँ और लडाई बन्द कर दी जाय। अब भी एकता स्थापित करने का अवसर है।'

पर येङ और फेङ ने तो अन्त तक लडने का निश्चय कर लिया था। वाङ इस समय पेपिङ्ग में पहुँच गये थे। वहाँ इन लोगों ने एक नयी सरकार की स्थापना की घोषणा की और येङ इस सरकार के अध्यक्ष बनाये गये। वहाँ एकत्र लोगों ने मिलकर एक समिति बनायी जिसे कुओमिङ्ताङ्ग की समिति का नाम दिया गया। च्याङ्कई ने अब पेपिङ्ग की ओर बढ़ने का इरादा किया। मञ्चूरिया में चाङ सोलिङ्ग के पुत्र चाङसुइल्याङ्ग शासक थे। ये अब तक नाङ्किङ्ग के समर्थक थे। च्याङ्कई के कहने पर उन्होंने मुकदन स एक सेना पेपिङ्ग की ओर भेजी। एक ओर से न्याङ्कई बढ़ रहे थे और दूसरी ओर से चाङसुइल्याङ्ग की सेना आ रही थी। जो पेपिङ्ग में थे वे सिर पर खतरा पहुँचा हुआ देख कर भाग खड़े हुए। न्याङ्कई की सेना ने थोडे ही दिनों में पेपिङ्ग और तिएन्त्सीन पर अधिकार कर लिया। नाङ्किङ्ग की सेना ने लोयाङ्ग को कब्जे में करके भागनेवालों का शेङ्ची और

फाङ्चू प्रान्तों मे जाने का मार्ग अवरुद्ध कर दिया। धीरे धीरे सरकारी सेना ने ह्वाङ्हो नदी के दक्षिण का सारा प्रदेश अपनी मुट्ठी में कर लिया। पेपिङ्ग पूरी तरह अधीन हो गया। उत्तरी सेना छिन्नभिन्न हो गयी। बहुतों ने सरकार के सामने आत्मसमर्पण कर दिया। अनेक सैनिक निशस्त्र कर सेना विघटित कर दी गयी। सम्प्रति यह युद्ध लगातार कई महीनों तक चलने के बाद समाप्त हुआ।

इस गृह-युद्ध ने चीन की भूमि को उसी के सुपुत्रों के खून से लाल कर दिया। वास्तव में यह प्रलय ताण्डव था जिसने प्राय तीन लाख चीनियों का सहार किया। सारा देश महा श्मशान हो गया। चारों ओर बुभुक्षित और नग्न नर-कंकालों की भीड़ दिखायी देने लगी।

चीन के इतिहास में यह जनक्षय अभूतपूर्व था। इससे लाभ किसका हुआ यह कौन जाने ? देश के भक्त, देश की सेवा के नाम पर, देश के विनाश में बद्धपरिकर हुए। ऐतिहासिक इस पर कौन-सा निर्णय प्रदान करे ? मानव समाज के विकास में इस रक्तपात से कौन सा लाभ हुआ ? चीन का इससे क्या कल्याण हुआ ? इन प्रश्नों का उत्तर अपनी अपनी रुचि और प्रकृति के अनुकूल विभिन्न व्यक्ति भिन्न भिन्न प्रकार से देंगे। इन पंक्तियों का लेखक तो बहुत विचार करने के बाद भी उन लोगों की प्रशसा करने में समर्थ नहीं होता जो इस घृणित अभिनय के प्रमुख अभिनेता रहे हैं।

ग्यारहवाँ अध्याय

मञ्चूरिया पर जापानी आक्रमण और राष्ट्रीय एकता का प्रयत्न

चीन में जिस समय ये घटनाएँ घट रही थीं उसी समय दूसरे प्रश्न भी नाङ्किङ्ग-सरकार के सामने उठ खडे हुए थे। च्याङ्काई चीन की परराष्ट्र नीति को लेकर जगत् के सामने उपस्थित हुए थे। उन्होंने दुनिया के उन देशों से जो चीन में स्वार्थ साधन, कर रहे थे, जिन्होंने उसे दबा कर अपने हित म असमान सन्धियाँ कर रखी थीं और जिन्होंने चीन के स्वतन्त्र होते हुए भी उसकी प्रभुसत्ता को बाँध कर

विशेष प्रदेशों में विशेष सुविधाओं, अधिकारों और प्रभाव क्षेत्रों की सृष्टि कर रखी थी, उनसे इन बन्धनों को अपने आप शान्तिपूर्वक खोल देने की माँग की थी। आज वे शस्त्र उठाकर चीन के जन्मसिद्ध और मानवता सम्मत अधिकारों के लिए लड़ने का सामर्थ्य नहीं रखते थे फिर भी नव चीन का निर्माण हो रहा था प्रबल राष्ट्र अवतीर्ण हो रहा था जिसकी उपेक्षा करना साम्राज्यवादियों के लिए भी सम्भव नहीं था। साम्राज्यवादी देश जिनका स्वार्थ चीन के स्वार्थ के विपरीत था च्याङ्काई की इस माँग से क्षुब्ध और उनकी शक्ति-वृद्धि से सशङ्क थे।

इन राष्ट्रों में एक रूस अवश्य ऐसा था जो आरम्भ में अपनी ही ओर से चीन के साथ मित्रता स्थापित करने के लिए समान पद पर सन्धि करने को तैयार था और जार के समय में जो अन्यायमूलक अधिकार रूस ने प्राप्त किये थे उन्हें छोड़ने को राजी था। यही कारण है कि काङ्तुङ्ग में सरकार की स्थापना होने के बाद ही रूस और चीन की मित्रता हुई और शीघ्र ही रूस का खासा प्रभाव चीन पर स्थापित हो गया। पर डाक्टर सुइयात सेन की मृत्यु के बाद च्याङ्काई शेक और चीनी कम्यूनिस्टों में पटरी नहीं बैठी। एक समय आया जब चीन से रूसी परामर्शदाताओं को निकाल बाहर किया गया कम्यूनिस्ट पार्टी गैर कानूनी कर दी गयी और सोवियेत दूतावास तक बन्द कर दिये गये। रूस और चीन में धीरे धीरे मनमुटाव बढ़ने लगा और दोनों का सम्बन्ध पूर्ववत् नहीं रह गया। परस्पर के इस दुर्भाव का प्रकटीकरण सन् १९२९ की शरद् ऋतु में हुआ जब रूस ने पूर्वी चीनी रेलवे पर से अपना अधिकार हटाने की अनिच्छा प्रकट की। रूस ने पहले तो इस रेलवे के सम्बन्ध में अपने समस्त स्वार्थों को छोड़ देने का इरादा प्रकट किया था पर बाद की घटनाओं तथा रूस और कम्यूनिस्टों के प्रति च्याङ की नीति और रुख ने उसे इस समय अपनी पुरानी घोषणा के विपरीत भाव ग्रहण करने के लिए बाध्य किया। इस सम्बन्ध में दोनों में खाचातानी चलने लगी। इसके सिवा दूसरे भी कुछ प्रश्न थे। चीन में कम्यूनिस्ट प्रचार को बलपूर्वक निर्मूल कर देने के लिए च्याङ्काई तैयार दिखायी देते थे। इसीलिए उन्होंने उनका कठोर दमन किया। रूस इस मामले का भी निबटारा चाहता था। मङ्गोलिया के उत्तरी हिस्से का प्रश्न भी था। उधर के लोग सोवियेत के साथ मिलना चाहते थे और चीन की परिधि से अपनी स्वतन्त्रता और मुक्ति की माँग कर रहे थे।

चीन और रूस के मित्रतापूर्ण सम्बन्ध के लिए इन सब प्रश्नों का हल होना नितान्त आवश्यक था। जब तक ये बातें सन्तोषजनक ढंग से तय न हो जायें तब तक पूर्वी चीनी रेलवे पर से अपने दावे को छोड़ने के लिए रूस तैयार नहीं था। नाङ्किङ्ग सरकार ने जब इस मामले के सम्बन्ध में मास्को से बातचीत चलायी तो उधर से उसे झिड़की मिली और साफ साफ कहा गया कि नाङ्किङ्ग सरकार जब तक मास्को की माँगो को स्वीकार नहीं करती तब तक वह इस सम्बन्ध में कोई बात करने के लिए तैयार नहीं है। सोवियेत् सरकार ने अपनी माँगे भी पेश कर दीं और उनकी पूर्ति के लिए हलकी सी धमकी भी दी। रूस की इस धमकी का उत्तर च्याङ्ग ने तेजस्वी और कठोर भाषा में दिया। उन्होंने कहा—"नाङ्किङ्ग सरकार स्वतन्त्र राष्ट्रों की भाँति अपना नैसर्गिक पद प्राप्त करने के लिए पूर्ण निश्चय कर चुकी है और इस निमित्त असमान सन्धियों की समाप्ति उसे करनी ही है। वह अब और अधिक अपमान सहन करने के लिए तैयार नहीं है। चीन रूस से किसी प्रकार का झगड़ा करने के लिए इच्छुक नहीं है पर उसने अपनी सीमा के अन्दर कम्यूनिस्ट प्रचार को रोक देने का निश्चय कर लिया है क्योंकि उससे देश और देश की जनता के नष्ट हो जाने की सम्भावना है। रूस ने धमकी हमें इसीलिए दी है कि वह हमें कमजोर समझता है। लण्डन के सोवियेत दूतावास पर वहाँ के अधिकारियों ने धावा किया और पेरिस में फ्रान्सीसी सरकार ने भी वही किया तब क्या रूस को हिम्मत हुई कि इन सरकारों की इस जबदस्ती के विरुद्ध कोई कार्रवाई करे? वह जानता था कि वे राष्ट्र बलवान हैं। पर चीन को धमकी दी गयी क्योंकि वह अपनी रक्षा में असमर्थ समझा जाता है। यदि यही सोच कर हमारा अपमान किया गया है तो मैं चेतावनी दे देना चाहता हूँ कि कोई इस भ्रम में न रहे कि चीन धमकियों से डर जायगा।"

रूस और चीन के मनमुटाव से युद्ध का खतरा उपस्थित हो गया था। च्याङ के सामने विकट स्थिति थी। देश में विद्रोह और गृह-युद्ध की अग्नि प्रज्वलित थी। सरकार और राष्ट्र की शक्ति का क्षय व्यर्थ ही हो रहा था। यदि कहीं युद्ध छिड़ जाता और बाहरी आक्रमण हो गया होता तो मामला टेढ़ा था। पर रूस साम्राज्यवादी तिकड़मों का परित्याग कर चुका था। वह शस्त्र के बल पर चीन से अपना मामला हल किया नहीं चाहता था। फलत विदेशी आक्रमण तो नहीं हुआ फिर भी

विशेष प्रदेशों में विशेष सुविधाओं, अधिकारों और प्रभाव क्षेत्रों की
सृष्टि कर रखी थी, उनसे इन बन्धनों को अपने आप शान्तिपूर्वक
खोल देने की माँग की थी। आज वे शस्त्र उठाकर चीन के जन्मसिद्ध
और मानवता-सम्मत अधिकारों के लिए लड़ने का सामर्थ्य नहीं रखते
थे फिर भी नव चीन का निर्माण हो रहा था प्रबल राष्ट्र अवतीर्ण
हो रहा था जिसकी उपेक्षा करना साम्राज्यवादियों के लिए भी सम्भव
नहीं था। साम्राज्यवादी देश जिनका स्वार्थ चीन के स्वार्थ के विपरीत
था च्याङ्गई की इस माँग से क्षुब्ध और उनकी शक्ति-वृद्धि से सशंक थे।

इन राष्ट्रों में एक रूस अवश्य ऐसा था जो आरम्भ में अपनी
ही ओर से चीन के साथ मित्रता स्थापित करने के लिए समान प
पर सन्धि करने को तैयार था और जार के समय में जो अन्यायमूल
अधिकार रूस ने प्राप्त किये थे उन्हें छोड़ने को राजी था। यही कारण
कि हाङ्कुङ्ग में सरकार की स्थापना होने के बाद ही रूस और चीन
मित्रता हुई और शीघ्र ही रूस का खासा प्रभाव चीन पर स्थापि
हो गया। पर डाक्टर सुनयात सेन की मृत्यु के बाद च्याङ्गई शेक और
चीनी कम्यूनिस्टों में पटरी नहीं बैठी। एक समय आया जब चीन
रूसी परामर्शदाताओं को निकाल बाहर किया गया कम्यूनिस्ट पा
गैर-कानूनी करार दी गयी और सोवियेत दूतावास तक बन्द कर दिये गये
रूस और चीन में धीरे-धीरे मनमुटाव बढ़ने लगा और दोनों
सम्बन्ध पूर्ववत् नहीं रह गया। परस्पर के इस दुर्भाव का प्रकटीकरण
सन १९२९ की शरद् ऋतु में हुआ जब रूस ने पूर्वी चीनी रेलवे पर
अपना अधिकार हटाने की अनिच्छा प्रकट की। रूस ने पहले तो
रेलवे के सम्बन्ध में अपने समस्त स्वार्थों को छोड़ देने का इरादा प्र
किया था पर बाद की घटनाओं तथा रूस और कम्यूनिस्टों के प्रति च्य
की नीति और रुख ने उसे इस समय अपनी पुरानी घोषणा के विपर
भाव ग्रहण करने के लिए बाध्य किया। इस सम्बन्ध में दोनों
खींचातानी चलने लगी। इसके सिवा दूसरे भी कुछ प्रश्न थे। चीन
कम्यूनिस्ट प्रचार को बलपूर्वक निर्मूल कर देने के लिए च्याङ्गई तै
दिखायी देते थे। इसीलिए उन्होंने उनका कठोर दमन किया। रूस
मामले का भी निबटारा चाहता था। मङ्गोलिया के उत्तरी हिस्से का प्र
भी था। उधर के लोग सोवियेत के साथ मिलना चाहते थे और च
की परिधि से अपनी स्वतन्त्रता और मुक्ति की माँग कर रहे थे।

चीन और रूस के मित्रतापूर्ण सम्बन्ध के लिए इन सब प्रश्नों का हल होना नितान्त आवश्यक था। जब तक ये बातें सन्तोषजनक ढग से तय न हो जायें तब तक पूर्वी चीनी रलवे पर से अपने दावे को छोड़ने के लिए रूस तैयार नहीं था। नाङ्किङ्ग-सरकार ने जब इस मामले के सम्बन्ध मे मास्को से बातचीत चलायी तो उधर मे उसे झिड़की मिली और साफ साफ कहा गया कि नाङ्किङ्ग सरकार जब तक मास्को की माँगों का स्वीकार नहीं करती तब तक वह इस सम्बन्ध मे कोई बात करने के लिए तैयार नहीं है। सोवियेत् सरकार ने अपनी माँगें भी पेश कर दीं और उनकी पूर्ति के लिए हलकी सी धमकी भी दी। रूस की इस धमकी का उत्तर च्याङ्ग ने तजस्वी और कठोर भाषा में दिया। उन्होंने कहा—'नाङ्किङ्ग सरकार स्वतन्त्र राष्ट्रों की भाँति अपना नैसर्गिक पद प्राप्त करने के लिए पूर्ण निश्चय कर चुकी है और इस निमित्त असमान सन्धियों की समाप्ति उस करनी ही है। वह अब और अधिक अपमान सहन करने के लिए तैयार नहीं है। चीन रूस से किसी प्रकार का झगड़ा करने के लिए इच्छुक नहीं है पर उसने अपनी सीमा के अन्दर कम्यूनिस्ट प्रचार का रोक देने का निश्चय कर लिया है क्योंकि इससे देश और देश की जनता के नष्ट हो जाने की सम्भावना है। रूस ने धमकी हमे इसीलिए दी है कि वह हमें कमजोर समझता है। लडन के सोवियेत दूतावास पर वहाँ के अधिकारियों ने धावा किया और पेरिस में फ्रान्सीसी सरकार ने भी वही किया तब क्या रूस को हिम्मत हुई कि इन सरकारों की इस जबदस्ती के विरुद्ध कोई कारवाई करे? वह जानता था कि वे राष्ट्र बलवान हैं। पर चीन को धमकी दी गयी क्योंकि वह अपनी रक्षा म असमर्थ समझा जाता है। यदि यही सोच कर हमारा अपमान किया गया है तो मैं चेतावनी दे देना चाहता हूँ कि कोई इस भ्रम मे न रहे कि चीन धमकियों से डर जायगा।"

रूस और चीन के मनमुटाव से युद्ध का खतरा उपस्थित हो गया था। च्याङ्ग के सामने विकट स्थिति थी। देश म विद्रोह और गृह-युद्ध की अग्नि प्रज्वलित थी। सरकार और राष्ट्र की शक्ति का क्षय व्यर्थ ही हो रहा था। यदि कहीं युद्ध छिड़ जाता और बाहरी आक्रमण हो गया होता तो मामला टेढ़ा था। पर रूस साम्राज्यवादी तिकड़मों का परित्याग कर चुका था। वह शस्त्र के बल पर चीन से अपना मामला हल किया नहीं चाहता था। फलत विदेशी आक्रमण तो नहीं हुआ फिर भी

जनता को सम्मिलित करके उसे हिस्सेदार बनाना था। च्याङ की इच्छा थी कि नये विधान के अनुसार नयी सरकार का संगठन करके तीव्रगति से राष्ट्रीय जीवन का उन्नत करने के लिए विधायक कार्यक्रम चलाया जाय। शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, सहयोग, सड़कों, पुलों तथा गमनागमन के साधनों का विकास, ग्रामोद्धार, जनकी रक्षा और सफाई, ग्रामोद्योगों की उन्नति आदि अनेक कार्यक्रम उनके सामने थे। इस कार्य को आरम्भ करने के पूर्व उन्होंने पहले विद्रोहियों और उनकी सेना के प्रति उदारता की नीति बरतने की चेष्टा की। शीघ्र ही कूओमिङताङ्ग के राष्ट्रीय काँग्रेस के अधिवेशन को बुलाने की घोषणा भी कर दी। उत्तरी राजनीतिज्ञों और नेताओं का क्षमा प्रदान करते हुए काँग्रेस के विचारार्थ जो प्रस्ताव उपस्थित करने की इच्छा प्रकट की उसमें मुख्य बात विधान बनाने के लिए जन निर्वाचित सम्मेलन बुलाने की थी। उनका कहना था कि स्थायी विधान की विस्तृत रूपरेखा चित्रित करके उसे कार्यान्वित करने में विलम्ब हो सकता है अत जब तक वह नहीं हो जाता तब तक के लिए एक अस्थायी विधान (योजना) तैयार कर लिया जाय। उन्होंने सम्प्रति सरकार के सम्मुख पाँच मुख्य काम करने के लिए निर्धारित रूप से योजना रखी। राष्ट्रीय आय का उचित प्रबन्ध, उत्तम और विशुद्ध शासन संस्थान, जनता का आर्थिक सुधार, जिलों को अपने स्थानीय स्वशासन का अधिकार प्रदान और कम्यूनिज्म का उन्मूलन, इस योजना के प्रमुख अंग थे। च्याङ ने इन तमाम बातों का स्पष्टीकरण करते हुए जो वक्तव्य दिया उसका समर्थन फेङ, याङ तथा येङ ऐसे उत्तरी विद्रोह के नेताओं ने भी किया और घोषणा की कि सरकार जो करने जा रही है उससे वे सन्तुष्ट हैं और अब सार्वजनिक जीवन से अवकाश ग्रहण करते हैं।

च्याङ ने देश में यात्राएँ कीं और व्याख्यान दिये जिनमें चीन के नव निर्माण की योजना समझायी। विशेष रूप से उन्होंने कूओमिङताङ्ग की देशव्यापिनी समितियों के स्थानीय सदस्यों तथा राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं के चरित्र के सम्बन्ध में कड़ी टीका टिप्पणी की। उनका कहना था कि स्थानीय समिति के सदस्य ही कूओमिङताङ्ग के आधार स्तम्भ हैं। वे ही जनवर्ग के सम्पर्क में आते हैं। जनता उन्हीं के चरित्र और व्यवहार को देख कर कूओमिङताङ्ग के आदर्श

और लक्ष्य की कल्पना करती है। साधारण जनता पर इन्हीं का प्रभाव पड़ता है और ये ही उसे कुओमिङताङ्ग की ओर आकर्षित करने तथा उसके प्रभाव को स्थापित करने के साधन हैं। अत इनका उत्तरदायित्व महान है। यदि ये अपनी निरंकुशता, स्वच्छन्दता तथा भ्रष्टता प्रदर्शित करेंगे तो जनता के ऊपर कुओमिङ्ताङ्ग के विरुद्ध ही प्रभाव पड़ेगा और वह उससे विमुख हो जायगी। इन्हीं की गलतियों का यह परिणाम है कि लोग कम्यूनिस्टों की ओर आकर्षित हो जाते हैं। तात्पर्य यह है कि च्याङ्कई ने राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक अग में नव निर्माण और चेतना की नयी लहर पैदा करने के लिए आधार बनाने का प्रयत्न आरम्भ कर दिया। वे जहाँ कहीं गये वहाँ यह आवाज उठायी—"राष्ट्रीय चरित्र को विकसित कर दूसरों को दोष देने की अपेक्षा आत्म-समीक्षण करो तथा अपनी गलतियों को समझ कर उनमें सुधार करने की चेष्टा करो। इस प्रकार सदा सचेत और सचेष्ट रह कर ही हम राष्ट्रोन्नति के पुनीत काय को पूरा कर सक्ते हैं।"

देश में शिक्षा और कृषि की उन्नति के लिए उन्होंने लोगों की सहायता और सहयोग का आवाहन किया। उनका कहना था कि जब तक देश मे शिक्षा का विस्तार न होगा और दरिद्रता दूर करने के लए राष्ट्र के मुख्य आर्थिक साधन कृषि की उन्नति न की जायगी तब तक देश में फैली हुई अव्यवस्था और अनिश्चितता का विनाश न होगा। युद्ध के कारण शिक्षा तथा कृषि दोनों की उन्नति पर गहरा धक्का लगा था। देश की सारी शक्ति युद्ध की ओर प्रवाहित थी। अब समय आ गया था कि नये उत्साह और बल के साथ उस दिशा मे प्रयास किया जाय। कुछ महीनों तक देश में व्यापक प्रचार करके च्याङ ने उसका सारा वातावरण बदल दिया। पर प्रचार में ही अधिक समय लगाना उचित न था। आवश्यकता थी कुछ ठोस काम करने की और विचारों को प्रत्यक्ष स्वरूप प्रदान करने की। फलत सन् १९३१ की ५ मई को जन निर्वाचित सम्मेलन बुलाया गया। नाङ्किङ विश्वविद्यालय के भवन में बडे धूम धाम और सजधज के साथ समेलन का कार्यारम्भ हुआ। करीब साढे चार सौ के प्रतिनिधि उपस्थित थे। उनके सिवा कुओमिङताङ्ग की कार्य-समिति के पचास सदस्य, सरकार के परामर्शदाता, विविध विभागों के मन्त्रिगण आदि भी उपस्थित थे।

च्याङ ने इस चुनौती का उत्तर यह कह कर दिया— 'आपकी यह कार्रवाई राष्ट्रीय सरकार के विरुद्ध विद्रोह करने के बराबर है।" इस उत्तर को पाकर वे लोग क्षुब्ध हो उठे। चेङचिनाङ्ग जो इस समय कैण्टन में सरकार की ओर से शासक नियुक्त थे इन विद्रोहियों के साथी थे। उन्होंने क्वाङतुङ्ग प्रान्त के गवर्नर को निकाल बाहर करके उसका शासन स्वयम् बलपूर्वक ग्रहण कर लिया। इसके बाद इस गुट ने कैण्टन में एक दूसरी दक्षिणी सरकार की स्थापना कर दी। जब इसकी खबर नाङ्किङ्ग पहुँची तो वहाँ कूओमिङताङ्ग की केन्द्रीय कार्य समिति ने अपनी आवश्यक बैठक की और दक्षिणी नेताओं से अपील की कि व इस समय अपना विरोध और मत भेद भूल कर देश की रक्षा में सहायक हों। अपील में यह भी कहा गया कि चीन के मध्य प्रान्तों में—क्याङ्चा—से आदि कम्यूनिस्टों का खतरा बढता जा रहा है, वे अपना बल बढाते और अपनी स्वतन्त्र सत्ता कायम करते जा रहे हैं। इस खतरे का सामना करने के लिए कूओमिङताङ्ग के लोगों को अपना पारस्परिक भेद भाव भूलकर एक हो जाना चाहिए। पर दक्षिणी नेताओं पर किसी प्रकार की प्रार्थना और विनती का कोई प्रभाव नहीं हुआ और स्थिति धीरे धीरे बिगड़ती ही गयी।

पर अभी दक्षिणी नेताओं से अनुनय विनय हो ही रही थी कि उत्तर में शिहयू शाङ ने बगावत कर दी। एक वर्ष पूर्व जिन नेताओं का दमन उत्तर में किया गया था उनमें यह सज्जन भी थे। पर अभी इनके हृदय की कसक नहीं मिटी थी। दक्षिण में झगड़े की सम्भावना, मध्य में कम्यूनिस्टों का उपद्रव और सुदूर उत्तर मञ्चूरिया में जापानियों की कुदृष्टि का खतरा देख कर इन्होंने केन्द्रीय सरकार को बुरी तरह जाल में फँसा समझ कर अपना पुराना रोष निकालने की सोची। इन्होंने पहले तो पेकिङ्ग हाङ्काउ रेलवे पर आने-जानेवाली गाड़ियों तथा माल को रोकना आरम्भ कर दिया और फिर विद्रोह के लिए सैन्य एकत्र करने लगे। मञ्चूरिया में चाङ्सुइल्याङ्ग नाङ्किङ्ग सरकार के समर्थक थे। उन्होंने शिह-यू का इरादा भाँप लिया और उनका दमन करने के लिए सेना बढायी। शिह-यू ने चाङ को बढते देख कर एक वक्तव्य निकाला जिसमें च्याङ्काई की भर्त्सना करते हुए कैण्टन में स्थापित नयी सरकार के प्रति अपनी भक्ति प्रदर्शित की।

चाङ की सेना यह ही रही थी कि उधर नानकिङ्ग से भेजी गयी सेना आ पहुँची। होनान और शान्सी प्रान्तों की सेना जो नानकिङ्ग सरकार के अधीन थी शिह यू के विरुद्ध बढ़ी और वह चारों ओर से घिर गया और बुरी तरह पिटा। एक ही सप्ताह में उसकी पूरी दुर्गति हो गयी। वह अपनी सेना और सैन्य सम्भार को छोड़ कर भागा और यह घोषणा करता गया कि वह सार्वजनिक क्षेत्र से हटा जा रहा है। यह विद्रोह तो यों ही समाप्त हो गया। अब शिह यू शाङ का विद्रोह तो दब गया पर दक्षिण की दशा क्रमशः जम होती गयी। परस्पर सम्बन्ध इतना कटु हो गया था कि किसी प्रकार के मेल की सम्भावना ही नहीं दिखायी देती थी। कैन्टन में एक विशाल सैन्य सग्रह होने लगा जिसका लक्ष्य था नानकिङ्ग के विरुद्ध उसी प्रकार का युद्ध चलाना जिस प्रकार के युद्ध के द्वारा उत्तरी सैन्यसत्ताधारियों का दमन किया गया था। च्याङ्ग ने समझौते की चेष्टा की पर दक्षिणी नेताओं का कहना था कि समझौते की पहली और मौलिक शर्त यही हो सकती है कि च्याङ पदत्याग कर दे। च्याङ इस समय मध्य चीन के क्याङ्सी प्रान्त में कम्यूनिस्टों के विरुद्ध भिड़े हुए थे। पिछले पृष्ठों में उल्लिखित कतिपय विद्रोहों ने कम्यूनिस्टों को अपनी स्थिति सुदृढ़ करने तथा पग जमा लेने की चेष्टा करने का अवसर प्रदान कर दिया था। दक्षिण में जो स्थिति उत्पन्न हो रही थी उससे कम्यूनिस्ट और प्रसन्न थे। उन्होंने देखा कि कूओमिङ्-ताङ्ग के नेताओं का आपसी कलह उन्हें खा जायगा तब इस अवसर से लाभ उठा कर वे धीरे धीरे अपना क्षेत्र विस्तृत करेंगे और ऐसा मौका कभी पा जायेंगे जब देश की सरकार उनके ही हाथों में होगी।

च्याङ्ग क्याङ्सी में उनके विरुद्ध सारी शक्ति से भिड़े हुए थे पर कम्यूनिस्टों का दमन करने में समर्थ नहीं हो रहे थे। कम्यूनिस्टों की नीति की चाहे जितनी टीका की जाय पर उनके गुणों की भी उपेक्षा नहीं की जा सकती। उनका अपना आदर्श होता है और उसकी पूर्ति के लिए निश्चित सुविचारित योजना होती है। वे अच्छी तरह जानते हैं कि वे *क्या चाहते हैं और उसे प्राप्त करने का तरीका क्या है ?* वे दृढ़तापूर्वक अपने मार्ग पर चले चलते हैं क्योंकि उन्हें अपने लक्ष्य का स्पष्ट ज्ञान होता है। मार्क्सवाद केवल राजनीतिक और आर्थिक सिद्धान्त ही नहीं है बल्कि उससे भी अधिक वह जीवन का एक प्रकार है जो समाज [illegible] रचना का नया दृष्टिकोण, नया ढग और तत्सम्बन्धी

नये भावों और विचारों का प्रजनन करता है। चीन के कम्यूनिस्ट छावनी में अपने को जमाने में इसी कारण सफल होकर सरकार का सामना करने में समर्थ हो रहे थे। वे केवल सिद्धान्त का नहीं बल्कि नये जीवन और नव चरित्र का विकास कर रहे थे। शोषित जनता में शिक्षा का प्रसार और नयी चेतना की लहर बढ़ा रहे थे। वे अपने ढंग से नये समाज का संगठन कर रहे थे। फलतः जनता उनके साथ थी। क्याङ्‌ काई-शेक अपना डेरा डाले हुए उन्हें दबाने में लगे थे। इसी बीच दक्षिण का मामला और पकड़ गया। दक्षिण में सैन्य-संग्रह होते देख क्याङ्‌ ने उस ओर कुछ सेना भेजी। क्याङ्‌सी के मोर्चे से भी कुछ सैनिक टुकड़ियों को हटाकर उन्होंने दक्षिण की ओर भेजा। एक बार पुनः यह मालूम होने लगा कि चीन गृह-युद्ध का रण-स्थल बना चाहता है और अब तक जो किया गया तथा भविष्य में जो करने की इच्छा प्रकट की गयी है वह सब नष्ट हो जायगा।

ऐसे ही समय एक और नयी परिस्थिति उत्पन्न हुई। जापानी आक्रमण का खतरा सामने खड़ा दिखायी दिया। १८ सितम्बर सन् १९३१ ईसवी को मञ्चूरिया स्थित जापानी सेना ने बिना किसी सूचना के आक्रमण कर दिया। सन् १९३२ ईसवी के समाप्त होने के पहले ही उत्तर के तीन प्रान्त उनके अधिकार में हो गये। सन् १९३३ के मई महीने में चीन और जापान में अस्थायी सन्धि हुई जो ताङ्गकू सन्धि के नाम से विख्यात है। इस सन्धि होने के समय तक जापानी सेना सारी मञ्चूरिया और जेहोल पर अधिकार स्थापित करके प्रसिद्ध चीनी दीवार को लाँघ कर भीतर तक घुस चुकी थी। इन दो वर्षों में चीन में बड़ी उथल पुथल हुई। मञ्चूरिया पर किये हुए जापानी आक्रमण का उल्लेख विस्तार से आगे के अध्यायों में करना उचित होगा। सम्प्रति इतना ही समझ लेना है कि इस आक्रमण के कारण चीन में नयी स्थिति उत्पन्न हो गयी। विदेशी आघात के खतरे को देख कर नाङ्किङ्ग सरकार ने क्वाङ्‌तुङ्ग गुट्ट से अनुरोध किया कि इस समय अपना झगड़ा कुछ दिनों के लिए बन्द कर देना ही उचित होगा क्योंकि देश का अस्तित्व खतरे में पड़ गया है। सारे देश ने यही माँग की कि परस्पर के झगड़े को छोड़ कर उस भयावने संकट की ओर ध्यान देना चाहिए जो इस समय मस्तक पर मँडराता दृष्टिगोचर हो रहा है। चीनी राष्ट्र के लिए अभूतपूर्व,

सप्ताह बीतने लगे। जापानी सेना बढ़ता चला पर इधर की दलबन्दी खतम होती दिखायी न पड़ी।

च्यांग ने जब देखा कि मामला सुलझता नहीं और इस समय आवश्यकता है एकता की तो उन्होंने एकता स्थापित करने का निश्चय कर लिया—फिर उसके लिए कुछ भी मूल्य क्यों न देना पड़े। साथ ही च्यांग का हृदय भी फट गया। ऐसा व्यक्ति जिसका कलेजा मातृभूमि की वेदना से विकल हो अपने साथियों और सहयोगियों की संकुचित तथा हानिकर नीति से घुट जाय तो आश्चर्य ही क्या? १५ दिसम्बर सन १९३१ को उन्होंने एकाएक पद-त्याग कर दिया। एक बार पहले भी पद-त्याग करके वे हट गये थे पर इन्हीं मित्रों ने उन्हें बुलाया था। तीन वर्ष तक लगातार परिश्रम करके वे राष्ट्र की सेवा करने में लगे रहे पर पद पद उनके मार्ग में बाधा डाली गयी और उनको परेशान कर डाला गया। अब महान राष्ट्रीय संकट को टालने के लिए जिस एकता की आवश्यकता थी उसकी प्राप्ति में भी उन्हीं को बाधक बनाया जा रहा था। ऐसी स्थिति में उनके लिए हट जाने के सिवा दूसरा मार्ग ही नहीं था। उन्होंने पदत्याग किया और उनके साथ साथ उन तमाम साथियों ने भी जो नानकिंग-सरकार के विभिन्न पदों पर स्थित होकर उसका संचालन कर रहे थे। च्यांग के पदत्याग के बाद कान्टन-दल नानकिंग पहुँचा और उसने नयी सरकार बनायी। च्यांग अपनी पत्नी सहित दूसरे ही दिन अपने जन्म-स्थान को चले गये।

नयी सरकार में वांगचिङ्‌वेई ने कोई पद स्वीकार नहीं किया। डाक्टर सुनफो तथा अन्य लोगों ने इसका सूत्र संभाला। पर च्यांग को गए पन्द्रह दिन भी नहीं बीते थे कि नये शासकों को अपनी कमजोरी का पता लग गया। मानव हृदय की दुर्बलता भी आश्चर्यजनक होती है। मनुष्य का अहम्भाव, उसका मिथ्याभिमान और उसके हृदय का भाव बार प्रतिस्पर्द्धा की आग में जलाता है पर उसे यह देखने का अवसर नहीं प्रदान करता कि किसी का बढ़ना न बढ़ना अपनी योग्यता पर ही निर्भर करता है। च्यांग के जाते ही सर्वशक्तिमान कौमिन्ताङ्ग-सरकार की गाड़ी चलते चलते रुक सी गयी। च्यांग जैसे व्यक्तित्व का अभाव सबको खटकने लगा। नये शासकों ने देखा कि उनके सिवा और भी अनेक महत्त्वाकांक्षी हैं जो सरकार के प्रबल मुखियों के भय से दबके हुए थे पर अब उभरते हुए सिर उठा सकते हैं। [illegible] की [illegible] तो थी ही शान्त

ऊपर जापान का यह आक्रमण अन्तर्राष्ट्रीय गुण्डई और पशुता का प्रथम प्रयास था जिसे महान राष्ट्रों ने दुम दबा कर सहन कर लिया। उनकी इस निर्बलता तथा कापुरुषता ने अन्तर्राष्ट्रीय अराजकवादियों को प्रोत्साहित कर दिया। इस दब्बूपन के कारण तो फिर विश्व की स्थिति ही बिगड़ गयी। अगले वर्षों में अबिसीनिया गया स्पेन नष्ट हुआ, राइनलैंड और आस्ट्रिया पिसा और अन्त में चैकोस्लेवाकिया की हत्या की गयी। म्यूनिच में तो निर्लज्जता और घृणित कायरता की सीमा पार हो गयी। इसी पाप का परिणाम यह विश्वव्यापी, महासंहारकारी युद्ध है जो उन्हीं महान राष्ट्रों को आमूल खतरे में डाल रहा है।

च्याङ ने चीन के इस मामले को राष्ट्र संघ के सुपुर्द करके अपने देश की ओर ही ध्यान दिया। उन्होंने इस घटना के बाद देश के नाम एक सन्देश प्रकाशित किया जिसमें परस्पर के समस्त मतभेदों को छोड़ कर इस राष्ट्रीय संकट का सामना करने के लिए लोगों को आमन्त्रित किया गया था। इस घटना का प्रभाव दक्षिणी नेताओं पर भी हुआ। उन्होंने भी इस समय झगड़े को निपटाने की इच्छा प्रकट की। फलतः दोनों ओर के नेताओं का एक सन्धि-सम्मेलन शङ्घाई में बुलाया गया। दक्षिण के नेताओं में डाक्टर सेङ-फो वाङचिङ्ग्वेइ तथा वू आदि और नाङ्किङ्ग से च्याङ शङ्घाई में एकत्र हुए। कई दिनों तक सम्मेलन होता रहा पर परिणाम निकलता दिखायी न दिया। दक्षिणी गुट की मुख्य माँग यह थी कि च्याङ्ग पदत्याग कर और इसके साथ साथ नाङ्किङ्ग-सरकार में ऐसा परिवर्तन हो जाय कि नियन्त्रण उनके हाथ में आ जाय। बातचीत से प्रकट हुआ कि यही एक ऐसा प्रश्न था जिस पर शान्ति अवलम्बित थी। पर यही तय न हो पाता था। दक्षिणी इसे छोड़ते नहीं थे और नाङ्किङ्ग स्वीकार नहीं करता था। अन्त में बिना किसी निर्णय के सम्मेलन भंग हो गया। अब कुओमिङताङ्ग के दो सम्मेलन हुए। एक काङतुङ्ग में और दूसरा नाङ्किङ्ग में। नाङ्किङ्ग-सम्मेलन ने पुनः एकता की आवाज उठायी पर दक्षिण से उत्तर मिला कि च्याङ का त्याग पत्र पहली शर्त है। दक्षिण के कुछ नेता अपने दल की इस ज़िद से स्वयम् दुखी हो गये। वाङचिङ्ग्वेई तथा डाक्टर सुङफो ऐसे उत्तरदायी देशभक्त च्याङ से और उनकी नीति से असन्तुष्ट होते हुए भी इस समय मत भेद को भूल कर नाङ्किङ्ग सरकार का साथ देने के पक्षपाती थे पर उनके अधिकतर साथियों ने उनकी बात न सुनी। दिन पर दिन और सप्ताह पर

सप्ताह बीतने लगे। जापानी खतरा बढ़ता चला पर इधर की दलबन्दी खतम होती दिखायी न पड़ी।

च्याङ ने जब देखा कि मामला सुलझता नहीं और इस समय आवश्यकता है एकता की तो उन्होंने एकता स्थापित करने का निश्चय कर लिया—फिर उसके लिए कुछ भी मूल्य क्यों न देना पड़े। साथ ही च्याङ का हृदय भी फट गया। ऐसा व्यक्ति जिसका कलेजा मातृभूमि की वेदना से विकल हो अपने साथियों और सहयोगियों की संकुचित तथा हानिकर नीति से घुट जाय तो आश्चर्य ही क्या? १५ दिसम्बर सन् १९३१ को उन्होंने एकाएक पद-त्याग कर दिया। एक बार पहले भी पद त्याग करके वे हट गये थे पर इन्हीं मित्रों ने उन्हें बुलाया था। तीन वर्ष तक लगातार परिश्रम करके वे राष्ट्र की सेवा करने में लगे रहे पर पद पद उनके मार्ग में बाधा डाली गयी और उनको परेशान कर डाला गया। अब महान राष्ट्रीय संकट को टालने के लिए जिस एकता की आवश्यकता थी उसकी प्राप्ति में भी उन्हीं को बाधक बनाया जा रहा था। ऐसी स्थिति में उनके लिए हट जाने के सिवा दूसरा मार्ग ही नहीं था। उन्होंने पदत्याग किया और उनके साथ साथ उन तमाम साथियों ने भी जो नान्किङ-सरकार के विभिन्न पदों पर स्थित होकर उसका संचालन कर रहे थे। च्याङ्काई के पदत्याग के बाद काइतङ्ग दल नान्किङ पहुँचा और उसने नयी सरकार बनायी। च्याङ अपनी पत्नी सहित दूसरे ही दिन अपने जन्म-स्थान को चले गये।

नयी सरकार में वाङ्चिङ्वेई ने कोई पद स्वीकार नहीं किया। डाक्टर सुनफो तथा अन्य लोगों ने इसका सूत्र सँभाला। पर च्याङ्काई को गये पन्द्रह दिन भी नहीं बीते थे कि नये शासकों को अपनी कमजोरी का पता लग गया। मानव हृदय की दुर्बलता भी आश्चर्यमय होती है। मनुष्य का अहम्भाव, उसका मिथ्याभिमान और उसके हृदय का पाप उसे प्रतिस्पर्द्धी की आग मे जलाता है पर उसे यह देखने का अवसर नहीं प्रदान करता कि किसी का बढ़ना न बढ़ना अपनी योग्यता पर ही निर्भर करता है। च्याङ्ग के जाते ही नवनिर्मित नान्किङ-सरकार की गाड़ी जैसे रुक सी गयी। च्याङ्ग ऐसे व्यक्तित्व का अभाव सबको खटकने लगा। नये विधाताओं ने देखा कि उनके सिवा और भी अनेक महत्त्वाकांक्षी हैं जो च्याङ के प्रबल भुजदंडों के भय से दबके हुए थे पर जो उनके हटते ही सिर उठाने लगे हैं। प्रान्तों की प्रान्तीयता दो ही सप्ताह

में भड़की दिखायी पड़ी। फिर राष्ट्र को च्याङ के सिवा दूसरे
शक्ति म विश्वास नहीं था। चारों ओर से च्याङ्ग को वापस बुल
की माँग की गयी। चीन का युवक छात्र-मंडल, जिसने अभी दूसरे
महीने पूर्व प्रचंड प्रदर्शन किया था, जिसने करीब ७० हजार की मा
में देश के कोने-कोने से आकर नान्किङ्ग में च्याङ्ग के वासस्थान पर घर
दिया था, जिसने उनसे माँग की थी कि तत्काल जापान के विरु
युद्ध-घोषणा कर दें और जिसने उनकी गहरी फटकार खायी थी उ
ने च्याङ्ग को तत्काल वापस लाने की जोरदार माँग पेश की। केन्द्री
राजनीतिक समिति ने बैठक करके निश्चय किया कि मास्को त
लिवसह जो दो प्रसिद्ध दक्षिणी नेता सर्वोच्च सरकारी पद पर
च्याङ्ग से अनुरोध करें कि वे तुरन्त नान्किङ्ग लौटें।

अन्त में वाङच्याङ्ग पर जो शङ्घाई में बीमार पड़े हुए थे जो
डाला गया कि वे च्याङ्ग को वापस लायें। जनता की माँग त
सरकार की अनिवार्य आवश्यकता ऐसी हो गयी कि वाङ
रोगशय्या छोड़नी पड़ी। वे हाङ्गचाउ गये और वहाँ उन्हें
च्याङ्ग को बुलाकर भेंट की। दोनों कुछ दिनों तक साथ
रहे। अन्त में इन दो पुराने मित्रों और साथियों ने अपने अप
हृदय का कलुष धोया। २४ जनवरी को वाङ च्याङ्ग को लेक
नान्किङ्ग आये। गत चार वर्षों से इन दोनों में जो विरोध
गया था वह दूर हुआ। वाङच्याङ्ग शासन समिति के अध्य
बनाये गये। च्याङ्ग ने कोई पद नहीं ग्रहण किया यद्यपि वे विभि
सरकारी समितियों के सदस्य की हैसियत में उनसे सम्बन्धित हुए
२८ जनवरी को च्याङ्ग नान्किङ्ग आये और २८ को ऐसी घट
घटी जिसने समस्त चीन को प्रभावित किया। मञ्चूरिया में जापान ने
जो किया था उसके फलस्वरूप सारे देश म जापान विरोधी भावना
दावाग्नि की भाँति व्याप्त हो उठी थी। चीन का वह शिक्षित युवक समुदाय
तो विशेष रूप से क्षुब्ध हो गया था, जो यौवन सुलभ, उग्रता के आवेश
में तत्काल रणदुन्दुभी बजा देने की माँग कर रहा था। सरकार के
लिए उसे काबू में करना कठिन हो गया था। ऐसी स्थिति में शङ्घाई
में छोटा सा जापान विरोधी उपद्रव हो गया जिसमें पाँच जापानी
घायल हुए और एक मारा गया। जापानी दूत ने इस घटना को बहाना
बना कर चीन से कतिपय माँगें कीं। साथ ही उत्तर पाने की राह देखे

बिना जापानी जल सेना की एक टुकडी ने शङ्घाई के च्याङ्कई स्थान पर आक्रमण कर दिया। जो थोडी सी चीनी सेना वहाँ थी उसने जिस वीरता के साथ आक्रमणकारियों का सामना किया उसने न केवल जापानियों की आँखें खोल दीं बल्कि संसार में चीन का सम्मान बढा दिया। चीनी सेना के प्रबल प्रतिरोध के कारण जापान को सन्धि करनी पडी और दोनों की सेनाएँ शङ्घाई से हट गयीं।

शङ्घाई की घटना समाप्त होने के बाद वाङ ने च्याङ्कई पर दबाव डाला कि वे अब उपेक्षा का परित्याग करके सरकार के कार्यों में अधिकाधिक भाग लें। वाङ ने अनुभव किया कि जापानी खतरा इस प्रकार बढता जा रहा है कि किसी भी क्षण सैनिक प्रतिरोध की आवश्यकता पड सकती है और यह काम सिवा च्याङ्कई के और कोई कर नहीं सकता। इसके सिवा एक और नयी समस्या उत्पन्न हो गयी थी। मञ्चूरिया तथा शङ्घाई में जो बातें हुई थीं तथा सरकारी ध्यान जिस प्रकार उधर लगा हुआ था उससे मध्यचीन में कम्युनिस्टों को अपना काम बढाने का अवसर मिला। च्याङ्कई के हट जाने से वे और भी निश्चिन्त हो गये थे। फलत अङ्कवेई, हूपे तथा पेपिङ्ग-हाङ्काउ रेलवे के क्षेत्र पर उनका प्रभाव बेतरह बढ गया था। जापान के आक्रमण के कारण देश में फैली हुई जापान विरोधी भावना कम्यूनिस्टों का बल बढाने में सहायक हो रही थी। कम्युनिस्ट सरकार को दोषी बताते उसे जापानियों का गुप्त एजेन्ट घोषित करते और कहते कि वह चीन को साम्राज्यवादियों के हाथ बेच देने पर तुली हुई है। वे दावा करते कि जापान के विरुद्ध तत्क्षण लडाई छेड देनी चाहिए पर वाङ तथा च्याङ्कई और उनकी सरकार ने जापानियों से गुप्त सन्धि कर ली है अत वे यह कदम नहीं उठा रहे। कम्यूनिस्टों के इस प्रकार दो काम बनते थे। वे लोकप्रिय हो रहे थे तथा नाङ्किङ्ग सरकार और उसके नेताओं को जन दृष्टि में गिरा रहे थे। वाङ तथा नाङ्किङ्ग की सरकार कम्यूनिस्टों के बढ़ते बल से त्रस्त हो रही थी। उसने अनुभव किया कि इस खतरे का सामना करने के लिए सिवा च्याङ्कई के और कोई समर्थ नहीं है। फलत ६ मार्च को च्याङ्कई की इच्छा के विरुद्ध नाङ्किङ्ग ने उन्हें सैनिक परिषद् का अध्यक्ष निर्वाचित किया और वे राष्ट्रीय सेना के प्रधान सेनापति के पद पर पुन प्रतिष्ठित कर दिये गये।

बारहवाँ अध्याय

चीनी कम्यूनिस्टों का दमन

च्याङ्ग के द्वितीय अवकाश ग्रहण और प्रत्यागमन ने देश में उनकी प्रतिष्ठा पूर्व की अपेक्षा कहीं अधिक बढ़ा दी। फिर इस दशाब्दि में उन्हें महान कार्य करने पड़े। द्वितीयागमन के बाद देश की स्थिति में जो जो परिवर्तन हुए और जैसी जैसी घटनाएँ घटीं वे चीन के इतिहास में अभूत पूर्व हैं। वास्तव में यह काल चीनी राष्ट्र का संक्रान्ति युग था। यह वह युग था जब पुरानी इमारतें ढहीं, पुराने बन्धन छिन्नभिन्न हुए और उस उलटफेर के गर्भ से महान चीनी राष्ट्र ने जन्म ग्रहण किया। विश्व के रंगमंच पर इन पंक्तियों के लिखते समय चीन जो अलौकिक अभिनय कर रहा है वह उसकी,उस महत्ता का उज्ज्वल प्रमाण है जिसका प्रजनन और विकास गत दस वर्षों में उसने च्याङ्ग शेक के नेतृत्व में किया है। उस राष्ट्र के साथ साथ च्याङ्ग की महत्ता और विशेषता का ज्ञान संसार को इन्हीं दस वर्षों की घटनाओं ने कराया। चीनी इतिहास के इस काल का अध्ययन करने वाला विद्यार्थी च्याङ्ग की असाधारण योग्यता, उनके अतुल वे अलौकिक गुण, उनकी अदमनीय कार्यक्षमता उनके प्रचंड पुरुषार्थ तथा असीम श्रमशीलता को देखकर सहज ही आदरपूर्वक उनके सामने मस्तक झुका देने को बाध्य होता है।

च्याङ्ग के सामने इस समय मुख्यतः चार काम थे। चारों इतने जटिल, भारभूत तथा कठिन थे कि उन्हें सोच कर ही हृदय त्रास से भर उठता है। चारों में से एक एक ऐसे थे जिन्हें यदि कोई एक मनुष्य पूरा कर लेता तो वह ऐतिहासिक श्रेष्ठ पुरुषों की पंक्ति में अग्रस्थान पा जाता। फिर जिसने चारों की पूर्ति का बोझ उठाया और सफलता प्राप्त की उसकी प्रशंसा के उपयुक्त शब्द कैसे मिल सकते हैं। कम्यूनिस्टों के खतरे से देश की रक्षा, प्रतिस्पर्द्धी सैन्य शक्ति सम्पन्न विद्रोही नेताओं का दमन, राष्ट्रीय जीवन का—उसके आर्थिक, सामाजिक,

राजनीतिक तथा चारित्रिक अंग का—विकास, तथा आक्रमणकारी और घृणित साम्राज्यवादी जापान से भिड़ने की शक्ति का अर्जन—मुख्यत ये चार काम देश के सामने थे। जो राष्ट्र के नयन का उत्तरदायित्व वहन करने का साहस करे उसे इन चारों को पूरा करना था। एक एक समस्या ऐसी थी जिस पर चीन का भविष्य, उसका जीवन मरण अवलम्बित था।

साहस और दृढ़ता के साथ च्याङ्कई को इन सबकी पूर्ति करनी थी। उनके पास समय अधिक नहीं था। पद पद पर यह स्पष्ट होता जा रहा था कि वह समय दूर नहीं है जब चीन के अस्तित्व की रक्षा के लिए जापान से संघर्ष करना पड़ेगा। संघर्ष का अवसर आने के पूर्व इन सब कामों को पूरा कर लेना था क्योंकि इनकी पूर्ति के बिना चीन एक राष्ट्र की भाँति अपने सम्पूर्ण बल का उपयोग करके अपनी रक्षा करने में समर्थ न हो सकता। अशान्त स्थिति में युद्ध में पड़ना विनाश का कारण होता। शक्ति आवश्यक थी और उसकी प्राप्ति निर्भर करती थी एकता पर। फिर एकता के लिए उपर्युक्त कार्यों की पूर्ति आवश्यक थी। विचार कीजिये कि च्याङ्कई सन् १९३२ में पुन पदारूढ़ हुए और सन् १९३७ में जापान से चीन का युद्ध छिड़ गया। इन पाँच वर्षों में ही उन्हें इतना काम करना था और उसे पूरा कर नव राष्ट्र को जन्म दे देना था। इतिहास साक्षी है इस बात का कि इस असाधारण व्यक्ति ने वस्तुत इन चारों को पूरा किया।

लेखक पाठकों के सामने चीन के इस काल के इतिहास को रखना चाहता है। पहले वह कम्यूनिस्टों से होनेवाले संघर्ष की कहानी को ही लेता है क्योंकि इस कार्य ने च्याङ्कई का बहुत सा समय और शक्ति खा डाली। अब तक कम्यूनिस्टों ने जो कुछ किया और च्याङ्कई तथा क्वोमिङताङ्ग को उनके विरुद्ध करना पड़ा उसका उल्लेख पूर्व के पृष्ठों में आ चुका है। सन् १९२७ में क्वोमिङताङ्ग के वामपक्षी जिन्होंने कम्यूनिस्टों के साथ मिलकर हाङ्काउ में अपनी सरकार स्थापित की थी और जो च्याङ्कई द्वारा स्थापित नाङ्किङ्ग-सरकार का विरोध कर रहे थे, कम्यूनिस्टों से लड़ पड़े। पाठक वह घटना भूले न होंगे जब एम एन राय ने अपनी ही भूल से इन दोनों पक्षों को लड़ा कर एक बार चीनी कम्यूनिस्ट पार्टी को मृतप्राय हो जाने दिया था। हाङ्काउ से छिन्नभिन्न हुए कम्यूनिस्ट वहाँ से हट कर मध्य चीन के क्याङ्गची प्रान्त में एकत्र

हुए और वहाँ पुनः अपना पैर जमाने की चेष्टा करने लगे। कुओमिङ्ताङ्ग के दोनों पक्षों में यद्यपि एकता हो गयी थी पर वह कुछ महीनों तक ही जीवित रही। थोड़े दिनों बाद पुनः पारस्परिक विग्रह आरम्भ हुआ जिसमें करीब ३ वर्ष तक चीन तबाह और बरबाद होता रहा। दक्षिण, उत्तर तथा मध्य चीन में एक के बाद दूसरे विद्रोह होते रहे जिनकी ग्लानिजनक कहानी पूर्व के अध्यायों में कही जा चुकी है। कम्यूनिस्टों ने इस अवसर से लाभ उठाया। कुओमिङ्ताङ्ग के परस्पर के झगड़े ने उन्हें दम लेने तथा अपने को सुदृढ़ बना लेने का मौका प्रदान किया। क्याङ्गची प्रान्त के किसानों की हालत बहुत खराब थी। पुरानी सामन्त प्रथा तथा शोषण के शिकार होकर वे बुरी तरह निर्दलित तथा शोषित थे। गृहयुद्ध के कारण शासन यन्त्र भी निकम्मा हो गया था। केन्द्रीय सरकार सुदूर प्रान्तों पर दृष्टि नहीं रख सकती था, अतः उनके कर्मचारी दुष्ट और पतित हो गये थे। जनता उनके अत्याचारों और निरंकुशता से तबाह हो रही थी। इन परिस्थितियों ने भी कम्यूनिस्टों की सहायता की और उन्होंने क्याङ्गची में अपना दल स्थापित किया, सदस्य संख्या बढ़ायी, अपनी प्रबल और विशाल सेना एकत्र की तथा व्यापक प्रदेश का सोवियतीकरण कर डाला। सन् १९२९ में उनके दल के लाखों से अधिक सदस्य हो गये थे। फूकेन प्रान्त के प्रायः समस्त जिलों ने अपनी अपनी सोवियतें स्थापित कर ली थीं। सन् १९२९ से दो वर्षों तक लगातार सरकारी सेना कतिपय विद्रोहों को शान्त करने में लगी हुई थी। फलतः उसे कम्यूनिस्टों से निबटने का पूरा मौका नहीं मिला। इधर उधर लड़ाइयाँ तो उनसे भी चलती रहीं पर आयोजित ढंग से पूरी शक्ति नहीं लगायी जा सकी। इसके विपरीत कम्यूनिस्टों के गुरिलादल सरकारी सेना को परेशान कर रहे थे। सरकारी सैनिक उत्तर या दक्षिण के विद्रोहियों से लड़ने में लगे रहते। कम्यूनिस्ट पर्वतों या कन्दराओं में छिपे रहते और अवसर देखकर इन पर टूट पड़ते। सरकारी सेना को गहरी हानि पहुँचा कर उससे अस्त्र शस्त्र लूट कर तथा रसद-सामान छीन कर निकल भागते और छिप रहते। चीनी कम्यूनिस्ट पार्टी के गुरिला सैनिकों ने सचमुच सरकार को नाकों चने चबवा दिये थे।

यह स्थिति सन् १९३१ तक बनी हुई थी। जब जापान ने चीन पर आक्रमण किया और जिसके फलस्वरूप कैण्टन तथा नान्किङ्ग में सन्धि

हुई। च्याङ्काई को इस बार पुन पद-त्याग करना पड़ा। पर उनके पद-त्याग तथा जापानी झगडे से कम्यूनिस्टों को और मौका मिला और उनकी क्रिया इतनी तीव्र रूप से चली कि नव सगठित नाङ्किङ्ग-सरकार ने बाध्य होकर पुन च्याङ्काई के हाथों मे सेनापतित्व सौंप दिया और कम्यूनिस्ट खतरे से सरकार को बचाने की आज्ञा दी। यही समय था जब पुन च्याङ्काई ने कम्यूनिस्ट दमन का बीड़ा उठाया। इस बार उन्होंने इस मसले को सदा के लिए हल कर डालने का निश्चय किया। तब से लगातार चार वर्षों तक उन्होंने अनवरत प्रचंड संघर्ष किया और अन्त मे कम्यूनिस्टों का दमन करके ही छोड़ा।

जब च्याङ्काई पदारूढ हुए तो उन्होंने क्याङ्गची प्रान्त के कुलिङ्ग नामक स्थान में उन सेनानायकों का सम्मेलन किया जो गत कई वर्षों से कम्यूनिस्टों से प्रभावित भूप्रदेशों में उनके विरुद्ध युद्ध कर रहे थे। इस सम्मेलन म उन्होंने युद्ध की विस्तृत योजना बना ली। कम्यूनिस्टों ने जो युद्ध नीति ग्रहण की थी उसका सामना करने के लिए उपाय ढूँढ़ निकाला गया। गुरिला युद्ध प्रणाली का सामना विशाल सेना के द्वारा भी करना कठिन हो रहा था। कम्यूनिस्ट अपनी गुरिला सेना का सगठन गाँवों के साधारण किसानों के द्वारा करते थे। ये वन नीहड़ों और पर्वत गुफाओं में रह कर युद्ध करते अथवा अपने-अपने गाँव म साधारण किसान की भाँति काम करते। जब आवश्यकता होती और मौका देखते तो सहसा शत्रु सेना पर टूट पड़ते और जब तक वे सँभलें तब तक मार खसोट कर निकल भागते। गाँवों के रहनेवाले हर प्रकार से इनकी सहायता करते। गुरिले स्पष्ट रूप से मैदान में आकर युद्ध नहीं करते। लुक छिप कर वे शत्रु पर आक्रमण करके उसे अधिक स अधिक क्षति पहुँचाते। रेलवे लाइनों को उखाड़ फेंकना, मार्गों को उद्ध्वस्त कर देना, पीने के पानी मे इस प्रकार विष मिला देना कि शत्रु सेना के काम लायक न रह जाय, उससे उसका सामान लूट लेना, गलत रास्ते बहका कर ले जाना और बुरी तरह सङ्कट में फँसा देना—गुरिलों की रण नीति थी।

इस प्रकार कम्यूनिस्टों ने सरकारी सेना को परेशान कर रखा था। च्याङ ने इनका सामना करने के लिए ऐसे ही दलों का सगठन करने की चेष्टा की। उन्होंने निश्चय किया कि गाँव गाँव में स्वयम्सेवकों के सशस्त्र दल सुसगठित किये जायँ जो गाँव की रक्षा का काम करें।

हुए और वहाँ पुन अपना पैर जमाने की चेष्टा करने लगे। कुओमिङ्ताङ्ग के दोनों पक्षों म यद्यपि एकता हो गयी थी पर वह कुछ महीनों तक ही जीवित रही। थोड़े दिनों बाद पुन पारस्परिक विग्रह आरम्भ हुआ जिसमें करीब ३ वर्ष तक चीन तबाह और बरबाद होता रहा। दक्षिण, उत्तर तथा मध्य चीन में एक के बाद दूसरे विद्रोह होते रहे जिनकी रुदनजनक कहानी पूर्व के अध्यायों में कही जा चुकी है। कम्यूनिस्टों ने इस अवसर से लाभ उठाया। कुओमिङताङ्ग के परस्पर के झगड़े ने उन्हें दम लेने तथा अपने को सुदृढ बना लेने का मौका प्रदान किया। क्याङ्गची प्रान्त के किसानों की हालत बहुत खराब थी। पुरानी सामन्त प्रथा तथा शोषण के शिकार होकर वे बुरी तरह निर्दलित तथा शोषित थे। गृहयुद्ध के कारण शासन यन्त्र भी निकम्मा हो गया था। केन्द्रीय सरकार सुदूर प्रान्तों पर दृष्टि नहीं रख सकती थी, अत उनके कर्मचारी दुष्ट और पतित हो गये थे। जनता उनके अत्याचारों और निरकुशता से तबाह हो रही थी। इन परिस्थितियों ने भी कम्यूनिस्टों की सहायता की और उन्होंने क्याङ्गची में अपना दल स्थापित किया, सदस्य सख्या बढ़ायी, अपनी प्रबल और विशाल सेना एकत्र की तथा व्यापक प्रदेश का सोवियतीकरण कर डाला। सन् १९२६ में उनके दल के लाखों से अधिक सदस्य हो गए थे। फूकेङ प्रान्त के प्राय समस्त जिलों ने अपनी अपनी सोवियतें स्थापित कर ली थीं। सन् १९२९ से दो वर्षो तक लगातार सरकारी सेना कतिपय विद्रोहों को शान्त करने में लगी हुई थी। फलत उसे कम्यूनिस्टों से निबटने का पूरा मौका नहीं मिला। इधर उधर लड़ाइयाँ तो उनसे भी चलती रहीं पर आयोजित ढग से पूरी शक्ति नहीं लगायी जा सकी। इसके विपरीत कम्यूनिस्टों के गुरिलादल सरकारी सेना को परेशान कर रहे थे। सरकारी सैनिक उत्तर या दक्षिण के विद्रोहियो से लड़ने में लगे रहते। कम्यूनिस्ट पर्वतों या कन्दराओं में छिपे रहते और अवसर देखकर इन पर टूट पड़ते। सरकारी सेना को गहरी हानि पहुँचा कर उसके अस्त्र शस्त्र लूट कर तथा रसद-सामान छीन कर निकल भागते और छिप रहते। चीनी कम्यूनिस्ट पार्टी के गुरिला सैनिकों ने सचमुच सरकार को नाकों चने चबवा दिये थे।

यह स्थिति सन् १९३१ तक बनी हुई थी। जब जापान ने चीन पर आक्रमण किया और जिसके फलस्वरूप कैण्टन तथा नाङ्किङ्ग में सन्धि

हुई। च्याङ्कई को इस बार पुनः पद-त्याग करना पड़ा। पर उनके पद-त्याग तथा जापानी झगड़े से कम्यूनिस्टों को और मौका मिला और उनकी क्रिया इतनी तीव्र रूप से चली कि नव सगठित नाङ्किङ्ग-सरकार ने बाध्य होकर पुनः च्याङ्कई के हाथों में सेनापतित्व सौंप दिया और कम्यूनिस्ट खतरे से सरकार को बचाने की आज्ञा दी। यही समय था जब पुनः च्याङ्कई ने कम्यूनिस्ट दमन का बीड़ा उठाया। इस बार उन्होंने इस ममले को सदा के लिए हल कर डालने का निश्चय किया। तब से लगातार चार वर्षों तक उन्होंने अनवरत प्रचंड संघर्ष किया और अन्त में कम्यूनिस्टों का दमन करके ही छोड़ा।

जब च्याङ्कई पदारूढ हुए तो उन्होंने क्याङ्गची प्रान्त के कुलिङ्ग नामक स्थान में उन सेनानायकों का सम्मेलन किया जो गत कई वर्षों से कम्यूनिस्टों से प्रभावित भूप्रदेशों में उनके विरुद्ध युद्ध कर रहे थे। इस सम्मेलन मे उन्होंने युद्ध की विस्तृत योजना बना ली। कम्यूनिस्टों ने जो युद्ध नीति ग्रहण की थी उसका सामना करने के लिए उपाय ढूँढ़ निकाला गया। गुरिला युद्ध प्रणाली का सामना विशाल सेना के द्वारा भी करना कठिन हो रहा था। कम्यूनिस्ट अपनी गुरिला सेना का सगठन गाँवों के साधारण किसानों के द्वारा करते थे। ये वन-बीहड़ों और पर्वत गुफाओं में रह कर युद्ध करते अथवा अपने अपने गाँव में साधारण किसान की भाँति काम करते। जब आवश्यकता होती और मौका देखते तो सहसा शत्रु सेना पर टूट पड़ते और जब तक वे सँभलें तब तक मार खसोट कर निकल भागते। गाँवों के रहनेवाले हर प्रकार से इनकी सहायता करते। गुरिले स्पष्ट रूप से मैदान में आकर युद्ध नहीं करते। लुक छिप कर वे शत्रु पर आक्रमण करके उसे अधिक से अधिक क्षति पहुँचाते। रेलवे लाइनों को उखाड़ फेंकना, मार्गों को उद्ध्वस्त कर देना, पीने के पानी में इस प्रकार विष मिला देना कि शत्रु-सेना के काम लायक न रह जाय, उससे उसका सामान लूट लेना, गलत रास्ते बहका कर ले जाना और बुरी तरह संकट में फँसा देना—गुरिलों की रण नीति थी।

इस प्रकार कम्यूनिस्टों ने सरकारी सेना को परेशान कर रखा था। च्याङ्ग ने इनका सामना करने के लिए ऐसे ही दलों का सगठन करने की चेष्टा की। उन्होंने निश्चय किया कि गाँव गाँव में स्वयमसेवकों के सशस्त्र दल सुसगठित किये जायँ जो गाँव की रक्षा का काम करें।

सरकार द्वारा नियुक्त शिक्षक उन्हें सैनिक शिक्षा दें। लड़ने के लिए अस्त्र शस्त्र भी सरकार देगी। पाँच पाँच सौ के ऐसे दल एक दो या अधिक गाँवों के समूह मिला कर बनाये जायँ। प्रान्तीय अधिकारी सेना ले जाने लायक तथा मोटर वगैरह के योग्य सड़कें बनावें जो सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थानों का सम्बन्ध कायम कर सकें। कम्यूनिस्टों ने युद्ध प्रणाली में गुरिला रण नीति को ग्रहण करके वास्तव में सैनिक विज्ञान में नया अध्याय जोड़ा है। यह उनकी ही देन है जिसे स्वयम् सरकार ने ग्रहण किया और जिसका विकास आज चीन का महायक हो गया है। गाँव गाँव म गुरिला-दलों का यह सगठन जापानी सेना के छक्के छुड़ा रहा है और पाँच वर्षों से जापानी अपनी सारी शक्ति लगा कर भी चीन का बल नहीं तोड़ सके हैं। चीन आज अजेय है और उसकी अजेयता में गुरिला दलों का बड़ा हाथ है। इस प्रकार च्याङ ने विस्तृत आयोजन करके कम्यूनिस्टों पर व्यापक चढ़ाई की। कम्यूनिस्टों के दल गुरिला नीति ग्रहण करने वाली सरकारी सेना के आने पर भाग जाते। वे एक स्थान से हटने पर तत्काल दूसरी ओर उभड़ते दिखायी देते। उनके लिए यहाँ वहाँ भागना सरल था क्योंकि सरकारी सना की भाँति सामान ढोने, बड़ी-बड़ी तुपकों को इधर उधर ले जाने की कठिन समस्या उनके सामने नहीं थी। वे तो साधारण किसान के भेष में एक स्थान से दूसरे स्थान को टहल जाते और जहाँ जिस बिन्दु पर सरकारी सेना की कमजोरी देखते वहीं एकत्र होकर आघात कर बैठते।

इस प्रकार यह युद्ध चलता रहा और सरकारी सेना कम्यूनिस्टों को पशुओं की भाँति इधर से उधर खदेड़ती रही। सन् १९३७ के अन्तिम महीनों में तो इन पर प्रचड प्रहार किया गया। गाँव गाँव से उन्हें ढूँढ निकालने की चेष्टा की गयी। वे जहाँ मिले वहीं दण्डित किये गये। अनेक तलवार के घाट उतार दिये गये। कम्यूनिस्टों ने भी अपनी शक्ति भर सामना किया। उनकी बहादुरी और सगठन शक्ति देख कर आश्चर्य होता है। उनकी सगठित सेना लाखों तक पहुँचती थी। उनके पास लाखों बन्दूकें थीं। प्रधान सेनापति ने नानकिङ सरकार को इनके सम्बन्ध में जो रिपोर्ट दी थी उसमें कहा गया था कि कम्यूनिस्टों के पास वायुयान, मोटरबोट और छोटी-छोटी जंगी नौकाएँ हैं। कतिपय स्थानों पर उन्होंने अस्त्र शस्त्र बनाने के

कारखाने खोल रखे हैं। अच्छे शस्त्रागार स्थापित कर लिये हैं। सैनिक शिक्षा के लिए स्कूल खोल दिये गये हैं। अपने प्रचार के साधन जुटा रखे हैं। प्रेस और रेडियो तथा तार-टेलीफोन के सम्बन्ध कायम किये गये हैं। आश्चर्य होता है कि थोड़े समय में उन्होंने ऐसा प्रचण्ड सगठन कर लिया कि वर्षों तक सरकारी सेना का सामना करते रहे। विशाल सरकारी सेना ने उन्हें घेर लेने की चेष्टा की। चारों ओर से सैनिक बढ़े और गाँव-गाँव को कम्यूनिस्टों से साफ करते हुए उन्हें अपनी परिधि में घेर लेने का प्रयत्न किया। बहुत से स्थानों में गहरी लड़ाइयाँ हुई। हजारों की सख्या में वे मारे गये। उनके एक के बाद दूसरे गढ़-स्थानों पर सरकारी सेना अधिकार करती चली गयी। सरकारी सेना ने उनके दो हवाई जहाजों को भी छीन लिया। इन वायुयानों का नाम भी कम्यूनिस्टों ने मनोरंजक रखा था। एक का नाम था 'मार्क्स' और दूसरे का 'लैनिन'। इसी प्रकार उनके दो 'अर्मिंग-बोट' भी छीन लिये गये।

कम्यूनिस्ट सरकारी सेना के फैलाव और घेरे को देखते हुए स्वयम् क्याङ्गची से हट बढ़ कर फैलने लगे। उनका संगठन छिन्न भिन्न होने लगा। वे होनान, हुपे और अन्हवेई प्रान्तों में फैल गये पर युद्ध जारी रखा। सरकारी सना उनका पीछा करती हुई इन प्रान्तों को भी कम्यूनिस्ट विहीन करने पर तुल गयी थी। सन् १९३३ में कम्यूनिस्टों ने पूरा जोर लगा कर सरकारी शक्ति का सामना करने का निश्चय किया। चू ते कम्यूनिस्टों की लाल सेना के प्रधान सेनापति थे। उनके दूसरे नेता माचे तुङ्ग थे। दुनिया के प्रसिद्ध कम्यूनिस्टों में इन दोनों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। चू ते युम्नङ प्रान्त के एक प्रसिद्ध धनी परिवार में उत्पन्न हुए थे जिन्होंने चीनी क्रान्ति में भाग लिया था। बाद में वे कम्यूनिस्ट पार्टी में सम्मिलित हो गये। माचे तुङ्ग हूनङ प्रान्त के एक प्रसिद्ध किसान कुल में उत्पन्न हुए हैं। कहा जाता है कि चीनी कम्यूनिस्ट पार्टी के वे ही मस्तक थे। इन नेताओं ने अपने दल की समस्त सैनिक शक्ति को एकत्र करके सरकारी सेना का सामना करने का निश्चय किया। अनुमान है कि इस समय कम्यूनिस्ट पार्टी की जनशक्ति पाँच लाख से कम नहीं थी। कम्यूनिस्टों ने अपना पूरा बल इस युद्ध में लगा दिया। कतिपय स्थानों पर उन्होंने सरकारी सेना को गहरी हार दी। उन्होंने नाङ्चाङ पर अधिकार स्थापित करने की चेष्टा की। [illegible]की तीन विशाल सेनाएँ तीन ओर से नाङ्चाङ की

ओर बढ़ीं। सम्भवत उन्हें सफलता मिल गयी होती पर च्याङ ने बड़ी दृढ़ता के साथ इस बढ़ाव को रोका।

यद्यपि कम्यूनिस्ट नाङचाङ लेने में सफल नहीं हुए पर च्याङ उनके बल को देख कर समझ गये कि उनका उन्मूलन करना सरल काम नहीं है। अत नाङ्किङ्ग से तथा अन्य मोरचों से और बहुत सी सेना बुलायी गयी और आक्रमण करने के लिए सैन्य सम्भार एकत्र किये जाने लगे। सरकार ने हवाई जहाज़ों से भी काम लिया। आकाश से लाल सेना की गति विधि तथा स्थान आदि का पता लगाया गया और चित्र लिये गये। सन् १९३३ के सितम्बर और अक्तूबर महीनों में च्याङ आक्रमण के लिए तैयारी कर रहे थे। इसी समय लाल सेना ने कई स्थानों पर एक साथ ही आक्रमण कर दिया और कुछ स्थान भी छीन लिये। चेन्ग्वाङ प्रान्त में लाल सेना विशेष रूप से सफल हुई। अन्त में क्षुब्ध हो कर च्याङ ने बड़े वेग से आक्रमण किया। इस आक्रमण ने लाल सेना के पैर उखाड़ दिये। फूकेङ प्रान्त की पूर्वी सीमा पर गहरा युद्ध हुआ। जेकीङ नामक स्थान पर जो युद्ध हुआ उसमें कम्यूनिस्ट बुरी तरह पराजित हुए। सात हज़ार सैनिक मारे गये और दस हज़ार घायल हुए। चीन की आकाश सेना ने ऊपर से अग्निवर्षा आरम्भ की। नीचे सरकारी सेना ने भागते हुए कम्यूनिस्टों का पीछा किया। कम्यूनिस्ट इस प्रकार तितर बितर हुए कि उनका पता ही न लगा और सरकारी सेना की मार से परेशान होकर क्याङसी के दक्षिण की ओर भाग खड़े हुए। इसी प्रकार क्याङसी के उत्तर पश्चिम में भी लाल सेना की हार हुई। अनेक कम्यूनिस्ट नेता गिरफ्तार किये और फाँसी पर लटका दिये गये। पीछा करती हुई सरकारी सेना चारों ओर घूमने लगी। कम्यूनिस्टों के लिए छिपने की भी जगह न मिलती। कहीं कुछ दिनों के लिए ठहरना भी असम्भव हो जाता। इस प्रकार कम्यूनिस्टों के प्रतिरोध की शक्ति क्षीण होने लगी।

निष्पक्ष दृष्टि से देखा जाय तो लाल सेना ने अब तक जो किया था वह भी कम नहीं था। कम्यूनिस्टों ने जिस साहस और धीरता के साथ युद्ध किया वह उनकी वीरता तथा अपने आदर्शों के लिए उनकी अटूट श्रद्धा का द्योतक है। यद्यपि उनकी यह नीति चीन के लिए घातक थी। यदि अपनी दलगत सत्ता की स्थापना तथा राष्ट्रीय शक्ति को विघटित करने की नीति को त्याग कर चीन की स्थिति की विवेचना

करते हुए उन्होंने तत्कालीन क्रान्ति का नेतृत्व ग्रहण किया होता तो न इतना अनपाय हुआ होता और न शक्ति का नाश। सम्भवत उस दशा में वे अपनी राजनीति और अपने दल को अधिक प्रभावशाली बना पाये होते। पर कम्यूनिस्टों में इसी की तो कमी होती है। वे स्वयम् तो वैज्ञानिक बनने का दावा करते हैं पर उनसे बढ़ कर कट्टर अन्धविश्वासी मिलना कठिन है। मार्क्स की पुस्तकों में प्रतिपादित सिद्धान्त तथा मास्को की आज्ञा की परिधि से बाहर देखने के लिए वे तैयार ही नहीं। जैसे किसी कट्टर मुसलमान के लिए कुरान शरीफ की आयतों तथा किसी सनातनी के लिए मनुस्मृति के श्लोकों द्वारा कही गयी बातों में बुद्धि के लिए स्थान नहीं है वैसे ही इनके लिए भी सवत्र द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के सिद्धान्त और तृतीय इन्टरनेशनल के दफ्तर से निकली विज्ञप्तियों के पर कुछ नहीं है। वे समझते हैं कि सारी प्रगतिशीलता और क्रान्ति पूजा, बुद्धिवादिता और वैज्ञानिकता केवल उन्हीं में है और जो उनके विपरीत अथवा उनसे असयत मत रखे वह प्रतिगामी तथा प्रक्रियानुसी है। उनकी यह संकुचित बुद्धि, हठधर्मी तथा मानसिक पराधीनता उनसे अनर्थ कराती है।

चीन की घटनाएँ इसी का प्रमाण थीं। फलत कम्यूनिस्टों की शक्ति चूर होने लगी। च्याङ की तीक्ष्ण बुद्धि से उनकी यह स्थिति छिपी नहीं रही। उन्होंने निश्चय किया कि इसी अवसर पर एक बार सवेग आघात कर देना सदा के लिए कम्यूनिस्टों से पिंड छुड़ा लेना होगा। इसी विचार को व्यवहार म लाने के लिए सन् १९३४ में उन्होंने क्याङची, फूकेङ, क्वाङची, हूपे, हुनान आदि प्रान्तों में एक साथ कम्यूनिस्ट-विरोधी नीति का परिचलन कर दिया। इन प्रान्तों में जहाँ कहीं भी कम्यूनिस्टों के अड्डे का पता मिलता वहाँ धावा बोल दिया जाता। परिणाम यह हुआ कि कम्यूनिस्टों की स्थिति ऐसी हो गयी कि उन्हें भागते ही रहना पड़ता था। छिपना और भागना तथा किसी प्रकार प्राण बचाना यही उनका काम रह गया। धीरे धीरे इन प्रान्तों से वे उखड़ने लगे। जहाँ क्याङची के सत्तर जिलों में कम्यूनिस्टों का गढ़ था वहाँ अब दो चार में भी उनका पता मिलना असम्भव हो गया। सन् १९३४ के नवम्बर में क्याङची से कम्यूनिस्टों का नाम निशान तक मिट गया। उनके लिए उस प्रान्त में वहाँ रहना और अपनी रक्षा करना असम्भव हो गया। सरकारी सेना

ने क्याङ्ची के चाङतिङ तथा कम्यूनिस्ट सरकार की राजधानी जुई किङ पर अधिकार कर लिया। बचे-खुचे कम्यूनिस्ट हूनान, चेख्याङ तथा केचाउ की ओर भागे। अब कम्यूनिस्टों ने देख लिया कि यहाँ रह कर अपनी आत्मरक्षा करना भी असम्भव हो गया है, अतः उन्होंने उत्तर पश्चिम चीन की ओर चले जाने का सङ्कल्प कर लिया। कहते हैं कि लाखों चीनी कम्यूनिस्टों ने माओचे तुङ्ग तथा चू ते के नेतृत्व में क्याङ्ची से उत्तर चीन की ओर का मार्ग पकड़ा। इसमें उनकी स्त्रियाँ और बाल बच्चे भी सम्मिलित थे। कम्यूनिस्टों ने यह यात्रा क्याङ्ची से आरम्भ की और चाङशा, यूनन, सिक्याङ्ग, शाङ्ची आदि प्रायः १० प्रान्तों से होते हुए वे शेङ्ची में चले गये। कम्यूनिस्ट लेखकों ने अपनी इस हिजरत का 'लाङ्ग मार्च' के नाम से लिखा है जिसका इतिहास में दूसरा उदाहरण मिलता है केवल आफ्रिका की बोअर जातियों की १८३५-४० की उस देश परित्याग (दि ग्रेटट्रेक) यात्रा में जिसके फलस्वरूप उन्होंने अपने स्त्री बच्चों सहित केप कालोनी छोड़कर आरञ्ज नदी के उस पार जाकर नैटाल और ट्रान्सवाल बसाया। कम्यूनिस्टों की इस महती जन संख्या ने ६ हजार मील की यात्रा की। शेङ्ची पहुँचने में उन्हें पूरा १ वर्ष लग गया।

कहा जाता है कि शेङ्ची पहुँचते पहुँचते उनकी संख्या केवल आधी बच रही थी। इस यात्रा में कम्यूनिस्टों ने असाधारण साहस का परिचय दिया। दर्जनों पर्वतों का उल्लंघन, आधी दर्जन नदियों का सन्तरण और सैकड़ों बीहड़ वन और उजाड़ भूखण्डों को पार करते हुए ये साधनहीन किन्तु दृढ सङ्कल्प नर नारी बराबर बढ़ते चले गये। सबसे महान आश्चर्य और प्रशंसा की बात यह है कि अपनी इस यात्रा में वे सरकारी सेना से बराबर लड़ते हुए आगे बढ़े। च्याङ्ग ने निश्चय कर लिया था कि इस बार कम्यूनिस्टों का सम्पूर्ण उन्मूलन करके ही दम लेंगे। उनकी इस दृढ प्रतिज्ञा की पूर्ति के लिए जितना भी सम्भव था आवश्यक प्रबन्ध और तैयारी कर ली गयी थी। कम्यूनिस्ट इसी तैयारी और गहरी मार के कारण परेशान होकर और अपने लिए कोई उपाय न देख कर क्याङ्ची से निकल जाने के लिए बाध्य हुए थे। पर सरकारी सेना ने उनका पीछा करना नहीं छोड़ा था। भागते हुए कम्यूनिस्टों के पीछे वह पड़ी हुई थी। फलतः इस काल में भी कम्यूनिस्टों को बराबर युद्ध करते रहना

पड़ा। एडगर स्नो ने अपनी पुस्तक *'चीन पर लाल तारा'* में कम्यूनिस्टों की इस यात्रा का हृदयद्रावक वर्णन किया है। उनके कथनानुसार भागते हुए कम्यूनिस्टों को कम से कम पन्द्रह बड़ी और तीन सौ छोटी लड़ाइयाँ लड़नी पड़ीं। पद पद पर उन्हें सरकारी सेना का सामना करना पड़ा। फिर भी वे न हताश हुए और न उन्होंने आत्मसमर्पण किया। रास्ते में अपना प्रचार करते हुए, नगरों पर कब्जा करते और फिर उन्हें छोड़ते हुए बराबर आगे बढ़ते गये।

वस्तुत आदर्श और सिद्धान्त के लिए इस प्रकार के अदम्य सकल्प का उदाहरण मिलना दुष्कर है। कोई कम्यूनिस्टों की नीति की चाहे जितनी टीका कर ले और उनसे अपना मतभेद प्रकट करे, परन्तु उनके साहस, धैर्य तथा उद्यम और अपरिमेय आदर्श पूजा को देखकर आदर के साथ मस्तक झुकाने को अवश्य बाध्य होगा। इतना कष्ट और इतना त्याग सिवा उसके और कौन कर सकता है जिसने अपना जीवन और अपना अस्तित्व तथा अपनी समस्त भावना, कल्पना और आकाक्षा को इष्ट लक्ष्य के चरणों में अर्पित कर दिया हो? सरकार तथा च्याङ्काई की ओर से बराबर घोषणा की जा रही थी कि जो कम्यूनिस्ट सिद्धान्तों को छोड कर अपने किये पर पश्चात्ताप करेगा सरकार उसे क्षमा कर देगी। ये कम्यूनिस्ट यदि चाहते, आत्म-समर्पण करते और सिर झुका देते तो उनमें से अधिकतर क्षमा कर दिये जाते। इस महान सकट से भी वे बच जाते। पर चीनी कम्यूनिस्ट एक तिल बराबर भी नहीं डिगे। यह उनके महान चरित्र और परम एकान्त निष्ठा का उत्कर्ष उदाहरण है। मरे, कटे, उजड गये दर-दर की ठोकरें खायीं और अन्त में पशुओं की भाँति देश के एक कोने से खदेड कर दूसरे कोने में कर दिये गये—पर वे टस से मस नहीं हुए।

चेल्वाङ, केचाउ, सिकाङ, यूनङ, शेडची और काङचू आदि में सरकारी सेना से कम्यूनिस्टों ने गहरा सघर्ष किया। यद्यपि वे सर्वत्र पराजित हुए पर बिना युद्ध किये कहीं भी नहीं हटे। सरकारी सेना को भी कम कठिनाई नहीं हुई। कहीं गमनागमन साधन उपलब्ध न होते तो कहीं खाने को मिलना कठिन हो जाता। आगे जानेवाली लाल सेना और उनके साथी कम्यूनिस्ट जिस शहर या कस्बे तथा जिस रास्ते से जाते उसे इस प्रकार वीरान कर देते कि पीछे आनेवाली सरकारी सेना को आवश्यक सामान मिलना भी कठिन होता। इस प्रकार प्राय पचास

सहस्र कम्यूनिस्ट धीरे धीरे शेन्सी पहुँचे और उस प्रान्त के उत्तरी भाग में क्रमश: बसने लगे। इनका थोड़ा भाग काउन्सू के कुछ जिलों में भी आ बसा। वहीं उन्होंने इन छोटे से प्रदेशों में अपनी अस्थायी सोवियत सरकार पाओ आङ नामक स्थान में स्थापित की।

सन १९३६ के मध्य तक कम्यूनिस्टों का मामला प्राय: समाप्त-सा हो गया। वे उत्तर के एक कोने में स्थित हो गये। इसके बाद ही देश में ऐसी स्थिति उत्पन्न हुई जिसने इस सम्बन्ध में चीन के इतिहास की धारा दूसरी ओर बदल दी। इस समय जापानी आक्रमण का खतरा बेतरह बढ़ गया था। उत्तरी चीन में उनका प्रभाव और प्रवेश क्रमश: बढ़ता जा रहा था। परिस्थिति पलटा खाने लगी थी। कम्यूनिस्ट अनुभव करने लगे थे कि अब उन्हें अपना ढंग बदलना चाहिए। व्यर्थ के संघर्ष और अनुचित हठधर्मी से उन्होंने न अपना लाभ किया था और न देश का। वे समझने लगे थे कि उनके देश का कल्याण एकता में ही है। जापान का सामना करने तथा साम्राज्यवाद का विरोध करने की पुकार उनकी पहले से ही थी। फलत: वे अपनी नीति बदलने लगे और थोड़े ही दिनों बाद वह समय आया जब उन्होंने नान्किङ सरकार से सहयोग करने की घोषणा की। उन्होंने केन्द्रीय सरकार की सत्ता स्वीकार करके अपने दलगत अस्तित्व को देश के साथ मिलाने की इच्छा प्रकट की। जापानी आक्रमण जब शुरू हो गया और जापान-चीन युद्ध का सूत्रपात हुआ तो च्याङ्काई ने भी कम्यूनिस्टों के सहयोग को स्वीकार किया। इस प्रकार कम्यूनिस्ट समस्या का हल १० वर्ष के निरन्तर संघर्ष और अजस्र रक्तपात के बाद हुआ। कहा जा सकता है कि च्याङ्काई ने कम्यूनिस्टों के प्रति अवाञ्छनीय निष्ठुरता तथा क्रूरता का परिचय दिया। यह टीका सर्वथा सत्य भी है, पर राजनीतिक क्षेत्र का इतिहास ऐसे रक्त से ही सना हुआ इतिहास है। रूस में स्वयम् बोलशेविकों ने जिस हिंसा और क्रूरता का आश्रय लिया था उसका वर्णन सुन कर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। मुसोलिनी, हिटलर और कमाल अतातुर्क ने अपने साथियों और मित्रों के खून से अपना हाथ रँगा यह निष्ठुर सत्य है। फिर च्याङ्काई को भी यही करना पड़ा तो इसमें आश्चर्य ही क्या!

इतिहास के इस स्वरूप पर टीका करना व्यर्थ है। अवांछनीय और रौद्र तथा बीभत्स होते हुए भी उसका रूप ऐसा ही रहा है। ऐसे अनर्थपूर्ण कांडों के विधाता अपने कार्य के औचित्य को यह कह कर

सिद्ध करते हैं कि साध्य यदि श्रेयस्कर और पवित्र है तो उसकी प्राप्ति के लिए चाहे जिस भी साधन का अवलम्बन किया जाय उसके लिए किसी को दोष देना उचित नहीं कहा जा सकता। यदि इस मत को मान लिया जाय तो फिर च्याङ्कई पर भी दोषारोपण नहीं किया जा सकता। साध्य साधन के इस झगडे में केवल गाँधी जी ही एक मात्र व्यक्ति हैं जो कहते हैं कि साध्य की अपेक्षा साधन की पवित्रता अधिक आवश्यक है। जब साधन पवित्र होंगे और उपयुक्त होंगे तभी पुनीत और वाञ्छनीय साध्य की प्राप्ति हो सकेगी। जिस दिन उनका यह अभिनव और दैवी दृष्टिकोण सभ्य जगत् स्वीकार कर लेगा उसी दिन से मानव समाज के इतिहास की धारा भी दूसरा मार्ग पकड लेगी।

अभी तो नाङ्किङ्ग सरकार कम्यूनिस्ट विरोधी अपनी नीति का औचित्य सिद्ध कर ही सकती है। सन १६३४ ईसवी के नवम्बर में एक पत्र प्रतिनिधि से बात-चीत करते हुए च्याङ्कई शेक ने कहा "कम्यूनिस्ट क्याङ्चौ प्रान्त को गत छ सात वर्षों से तबाह किये दे रहे हैं। यह देख कर रोमाञ्च हो जाता है कि उनकी नीति के कारण उस प्रान्त में ६० लाख व्यक्ति गृहहीन हो गये हैं और जगलों में अपना जीवन बिता रहे हैं। उन्होंने करीब दस लाख व्यक्तियों की हत्या कर डाली है। क्याङ्चौ प्रान्त की अधिक जनता उनके कारण ऐसा निकम्मा भोजन प्राप्त करने को बाध्य हुई है कि उसके फलस्वरूप अधिकतर लोग मृत्यु के मुख में समाते चले जा रहे हैं। सरकार ने उनकी सहायता करने की चेष्टा की फिर भी उनकी रक्षा करना सम्भव नहीं हो रहा है। सम्पत्ति का जितना भीषण क्षय इन्होंने कर डाला है उसकी पूर्ति नहीं की जा सकती। गत वर्षों की घटनाओं पर, दृष्टिपात करके यह स्वीकार करने को बाध्य होना पड़ता है कि 'कम्यूनिज्म' अमानुषिक है। हमारी जनता ने इसके द्वारा जिस भीषण कष्ट का सहन किया है उसका वर्णन करने के लिए उपयुक्त शब्द नहीं मिल सकते।"

'सरकार आज इस स्थिति को बदलने मे लगी हुई है। क्याङ्चौ के लोग प्रकृत्या परिश्रमशील हैं। वहाँ की भूमि उर्वर है। चावल, तम्बाखू, कोयला, चाय आदि की उत्पत्ति बहुतायत से होती है। मिट्टी के बर्तन बनाने का पुराना उद्योग प्रसिद्ध है। कम्यूनिस्टों ने इन सबको बर्बाद कर दिया। आज असीम कठिनाइयों का सामना करते हुए सरकार इन्हे पुनर्जीवित करने में लगी हुई है। ग्रामों का पुनस्सगठन और उनके

पुनरुद्धार की योजना तीव्र गति से परिचालित है। लोग अपने-अपने घर वापस आ रहे हैं और अपने उद्योग धन्धों में लग रहे हैं। सरकार उनकी धन से सहायता कर रही है। उनकी रक्षा के लिए स्वयंसेवक दलों का संगठन किया जा रहा है। नव जीवन आन्दोलन लोगों में आशा और उत्साह का संचार कर रहा है। यदि प्रत्येक चीनी आज से देशभक्ति की भावना से ओतप्रोत हो और जनता तथा सरकार परस्पर सहयोग करते चले तो निकट भविष्य में समुन्नत चीनी राष्ट्र का उदय अवश्यम्भावी है। सरकार सशस्त्र दला, गुंडों और डाकुओं का दमन करने में कुछ उठा रखने के लिए तैयार नहीं है। राष्ट्रीय सेना पूर्णरूप से शान्ति स्थापित किये बिना चैन न लेगी।"

च्याङ्काई ने जो वक्तव्य कम्यूनिस्टों के सम्बन्ध में दिया वह कहाँ तक सही है यह तो भगवान ही जाने, पर स्पष्ट है कि जिसका उनके सम्बन्ध में यह विश्वास हो वह उन्हें दबाने में यदि क्रूर और निष्ठुर बनेगा तो भी उसे उचित ही समझेगा। च्याङ ने जिन प्रदेशों को कम्यूनिस्टों से निमुक्त किया उन्हें सरकारी अधिकार में लाकर ही नहीं छोड़ दिया। एक ओर वे कम्यूनिस्टों का दमन कर रहे थे और दूसरी ओर उन्हीं प्रान्तों में रचनात्मक कार्य आरम्भ कर दिया गया था। क्याङ्ची में उन्होंने सरकारी अफसरों तथा उच्च सैनिक अधिकारियों की एक संस्था 'पिहसुन हुई' के नाम से स्थापित की थी। इसी के सुपुर्द यह काम था कि वह ग्रामों के पुनरुद्धार का काम करे। कम्यूनिस्टों को गिरफ्तार करना, आने जानेवालों पर कड़ी दृष्टि रखना, किसानों में शिक्षा का प्रसार करना, उनका संगठन करना तथा सैनिकों पर दृष्टि रखना कि वे किसानों को परेशान न करें तथा किसी प्रकार का दुर्व्यवहार न करें—यही इस संस्था का कार्य था। यह संस्था अपने काम में स्थानीय अधिकारियों से सहायता लेती और उन्हें सहायता प्रदान करती। गाँवों में जुआ खेलने तथा अफीम पीने के अड्डे ढूँढ ढूँढ कर निकाल फेंके गये। सड़कों का निर्माण, युद्ध पीड़ितों को ठहराने तथा उनके भोजन आदि का प्रबन्ध, उनकी खेती बारी का इन्तजाम और उसमें सहयोग प्रदान आदि सभी काम में यह संस्था सहायता करती। शिक्षा प्रसार के लिए पाठशालाओं की स्थापना पर यह संस्था विशेष जोर देती। स्वास्थ्य की रक्षा और सफाई का प्रबन्ध भी किया जाता। लोगों की शिकायतों और परस्पर के झगड़ों को तय करने के लिए गाँवों में पंचायतें बनायी

जातीं। यदि कोई छोटा सरकारी अफसर जुल्म करता तो उसकी शिकायत भी ये पचायतें उच्च अधिकारियों तक पहुँचातीं। स्थानीय ग्राम्य सेना के सैनिकों की शिक्षा का प्रबन्ध भी किया जाता। करीब ३ लाख आदमी इस प्रकार सैनिक शिक्षा से शिक्षित बना दिये गये।

इस संस्था और च्याङ्काई के चरित्र के प्रभाव से वे सरकारी अफसर जो इस काम में लगाये गये थे देशवासियों की सेवा की भावना से ओत प्रोत थे। यदि कभी कोई अधिकारी गफलत करता तो उसे कठोर दड मिलता। सेवा और त्याग के भाव से परिपूर्ण कार्यकर्ता उस प्रान्त में नव जीवन फूँकने में समर्थ हुए। इसके सिवा च्याङ्क की उत्प्रेरणा और नेतृत्व ने देश में व्यापक नव जीवन आन्दोलन को जन्म दिया। महान रचनात्मक कार्यक्रम ने चीन की काया कुछ दिनों में पलट दी। इस आन्दोलन का उल्लेख और वर्णन भावी अध्यायों में स्वतन्त्र रूप से किया जायगा। इसके द्वारा च्याङ्काई ने जहाँ एक ओर दमन किया वहाँ दूसरी ओर देश की आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा नैतिक और चारित्रिक स्थिति के सुधार की चेष्टा भी की। चीन की अशान्ति को दूर करने के लिए यही मौलिक उपचार था। उसी का परिणाम है कि साधनहीन होते हुए भी चीन आज प्रबल साम्राज्यवाद के वेग को सफलतापूर्वक रोके हुए है।

तेरहवाँ अध्याय

नाङ्किङ्ग की सत्ता और नव-निर्माण

इधर कम्यूनिस्टों के दमन का कार्य चल रहा था और उधर जापानियों की दुर्नीति से सरकार का काम कठिन होता जा रहा था। जापानी धीरे धीरे अपना चञ्चु प्रवेश करते जा रहे थे। पाठकों को स्मरण होगा कि उन्होंने मञ्चूरिया पर आक्रमण कर दिया था। सभ्य जगत् जापान की इस निरंकुशता पर आँखें मूँदे पडा था। राष्ट्र सघ ने चीन के प्रति मौखिक सहानुभूति प्रकट करके मौनावलम्बन कर लिया था। मञ्चूरिया के बाद जापानी जल सेना ने शङ्घाई पर भी आक्रमण किया था। सन् १९३३ में जापानी सेना ने शाङ्हेक्वाङ्ग पर गोलाबारी की और [illegible] [illegible]कार स्थापित कर लिया। जापानी

पुनरुद्धार की योजना तीव्र गति से परिचालित है। लोग अपने-अपने घर वापस आ रहे हैं और अपने उद्योग धन्धों में लग रहे हैं। सरकार उनकी धन से सहायता कर रही है। उनकी रक्षा के लिए स्वयमसेवक दलों का सगठन किया जा रहा है। नव-जीवन आन्दोलन लोगों में आशा और उत्साह का सचार कर रहा है। यदि प्रत्येक चीनी आज से देशभक्ति की भावना से ओतप्रोत हो और जनता तथा सरकार परस्पर सहयोग करते चले तो निकट भविष्य में समुन्नत चीनी राष्ट्र का उदय अवश्यम्भावी है। सरकार सशस्त्र दलों, गुडों और डाकुओं का दमन करने में कुछ उठा रखने के लिए तैयार नहीं है। राष्ट्रीय सेना पूर्णरूप से शान्ति स्थापित किये बिना चैन न लेगी।"

च्याङ्काई ने जो वक्तव्य कम्यूनिस्टों के सम्बन्ध में दिया वह कहाँ तक सही है यह तो भगवान ही जाने, पर स्पष्ट है कि जिसका उनके सम्बन्ध मे यह विश्वास हो वह उन्हें दबाने में यदि क्रूर और निष्ठुर बनेगा तो भी उसे उचित ही समझेगा। च्याङ ने जिन प्रदेशों को कम्यूनिस्टो से विमुक्त किया उन्हें सरकारी अधिकार में लाकर ही नहीं छोड़ दिया। एक ओर वे कम्यूनिस्टों का दमन कर रहे थे और दूसरी ओर उन्हीं प्रान्तों म रचनात्मक कार्य आरम्भ कर दिया गया था। क्याङ्‌ची में उन्होंने सरकारी अफसरों तथा उच्च सैनिक अधिकारियों की एक सस्था 'पिङ्‌सुङ्‌-तुई' के नाम से स्थापित की थी। इसी के सुपुर्द यह काम था कि वह ग्रामों के पुनरुद्धार का काम करे। कम्यूनिस्टों को गिरफ्तार करना, आने जानेवालों पर कड़ी दृष्टि रखना किसानों में शिक्षा का प्रसार करना, उनका सगठन करना तथा सैनिकों पर दृष्टि रखना कि वे किसानों को परेशान न करें तथा किसी प्रकार का दुर्व्यवहार न करें—यही इस सस्था का कार्य था। यह सस्था अपने काम में स्थानीय अधिकारियों से सहायता लेती और उन्हें सहायता प्रदान करती। गाँवों में जुआ खेलने तथा अफीम पीने के अड्डे ढूँढ-ढूँढ कर निकाल फेंके गये। सड़कों का निर्माण, युद्ध पीड़ितों को ठहराने तथा उनके भोजन आदि का प्रबन्ध, उनकी खेती बारी का इन्तजाम और उसमें सहयोग प्रदान आदि सभी काम में यह सस्था सहायता करती। शिक्षा प्रसार के लिए पाठशालाओं की स्थापना पर यह सस्था विशेष जोर देती। स्वास्थ्य की रक्षा और सफाई का प्रबन्ध भी किया जाता। लोगों की शिकायतों और परस्पर के झगड़ों को तय करने के लिए गाँवों में पचायतें बनायी

जातीं। यदि कोई छोटा सरकारी अफसर जुल्म करता तो उसकी शिकायत भी ये पचायते उच्च अधिकारियों तक पहुँचातीं। स्थानीय ग्राम्य सेना के सैनिकों की शिक्षा का प्रबन्ध भी किया जाता। करीब ३ लाख आदमी इस प्रकार सैनिक शिक्षा से शिक्षित बना दिये गये।

इस संस्था और च्याङ्गई के चरित्र के प्रभाव से वे सरकारी अफसर जो इस काम में लगाये गये थे देशवासियों की सेवा की भावना से ओत प्रोत थे। यदि कभी कोई अधिकारी गफलत करता तो उसे कठोर दंड मिलता। सेवा और त्याग के भाव से परिपूर्ण कार्यकर्ता उक्त प्रान्त में नव जीवन फूँकने में समर्थ हुए। इसके सिवा च्याङ्ग की उत्प्रेरणा और नेतृत्व ने देश में व्यापक नव जीवन आन्दोलन को जन्म दिया। महान रचनात्मक कार्यक्रम ने चीन की काया कुछ दिनों में पलट दी। इस आन्दोलन का उल्लेख और वर्णन भावी अध्यायों में स्वतन्त्र रूप से किया जायगा। इसके द्वारा च्याङ्गई ने जहाँ एक ओर दमन किया वहाँ दूसरी ओर देश की आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा नीतिक और चारित्रिक स्थिति के सुधार की चेष्टा भी की। चीन की अशान्ति को दूर करने के लिए यही मौलिक उपचार था। उसी का परिणाम है कि साधनहीन होते हुए भी चीन आज प्रबल साम्राज्यवाद के वेग को सफलतापूर्वक रोके हुए है।

तेरहवाँ अध्याय

नाङ्किङ्ग की सत्ता और नव-निर्माण

इधर कम्यूनिस्टों के दमन का कार्य चल रहा था और उधर जापानियों की दुर्नीति से सरकार का काम कठिन होता जा रहा था। जापानी धीरे धीरे अपना चक्षु प्रवेश करते जा रहे थे। पाठकों को स्मरण होगा कि उन्होंने मञ्चूरिया पर आक्रमण कर दिया था। सभ्य जगत् जापान की इस निरंकुशता पर आँखें मूँदे पड़ा था। राष्ट्र-संघ ने चीन के प्रति मौखिक महानुभूति प्रकट करके मौनावलम्बन कर लिया था। मञ्चूरिया के बाद जापानी जल सेना ने शङ्घाई पर भी आक्रमण किया था। सन् १९३३ में जापानी सेना ने शाङ्हेक्वाङ पर गोलाबारी की और उस पर अधिकार स्थापित कर लिया। जापानी वायुयानों ने

चाहे परिणाम कुछ ही क्यों न हो। आपका कार्य भयावह है। सरकार इसे कभी बर्दाश्त नहीं कर सकती। कृपा कर इस मार्ग से विमुख हो जाइये।"

पर फेङ पर इसका कोई असर नहीं हुआ। जापान-विरोधी जन सेना जापान से लड़ने को तो बढी नहीं पर सरकारी सत्ता को चुनौती अवश्य देने लगी। फलत सरकारी सेना सामना करने के लिए बाध्य हुई। होपेई के चहार नामक स्थान के निकट दोनों की मुठभेड़ हुई और फेङ पराजित हुए। हार खाकर उन्होंने तार भेज कर अपनी गलती स्वीकार कर ली और चुपचाप हट गये। फेङ के हट जाने पर उनके एक साथी फाङचेङ्गवू ने उनका काम पूरा करने की चेष्टा की और बची-खुची सेना लेकर आ भिड़े। पर अपने सरदार की भाँति पराजित होकर पलायित हुए। इस प्रकार उत्तर का एक और विद्रोह दबाया गया। पर चीन में तो जब विद्रोहों का सिलसिला आरम्भ होता था तो वह जल्दी खतम होना ही नहीं जानता था। फूकेङ प्रान्त में इसके बाद ही भीषण विस्फोट हुआ। च्याङ्ग के पुराने विरोधी चेङ मिङ आदि कुछ नेताओं ने मिल कर फूकेङ में एक महती सभा की और अपना वक्तव्य प्रकाशित किया। वक्तव्य में सरकार की कठोर निन्दा की गयी और विद्रोह की घोषणा कर दी गयी। विद्रोहियों ने राष्ट्रीय मुक्ति और जापान का प्रतिरोध करने की माँग लेकर अपनी पताका फहरायी। इन्होंने फूकेङ में एक नयी सरकार स्थापित कर ली, जन क्रान्ति सेना के नाम से स्वतन्त्र सेना सगठित करने लगे और सोवियेत रूस तथा चीनी कम्यूनिस्टों के प्रति अपनी मित्रता घोषित कर दी। अब च्याङ के लिए चुप बैठा रहना असम्भव हो गया। सन् १९३३ ई० के नवम्बर में उन्होंने फूकेङ का दमन करने के लिए सेना को बढने की आज्ञा प्रदान की। वे थोड़े दिनों के लिए कम्यूनिस्ट विरोधी मोर्चे को छोड़ कर स्वयम् फूकेङ पहुँचे और सेना की कमान ग्रहण की। सरकारी सेना तीव्र वेग से फूकेङ में प्रविष्ट हुई। दोनों का संघर्ष हुआ और विद्रोही हार गये। थोड़े ही दिनों में इस विद्रोह का भी दमन हो गया। इस युद्ध में चीन की नव स्थापित आकाश-सेना ने अपनी योग्यता का अच्छा परिचय दिया। विद्रोहियों पर बम बरसाकर उसने उन्हें शीघ्र ही छिन्न भिन्न कर डाला।

यद्यपि दो विद्रोह शीघ्र ही दबा दिये गये पर दक्षिण के राजनीतिज्ञ असन्तुष्ट ही रह गये। कैण्टन से बराबर यह ध्वनि निकल रही थी कि नान्किङ्ग जब तक उनकी बात स्वीकार न करेगा तब तक कुओमिङ्ताङ्ग की एकता असम्भव है। वाङ्ग और च्याङ्कई ने इस गुट्ट को समझाने की बड़ी चेष्टा की। उन दोनों ने कई वक्तव्य निकाले, प्रादेशिक सरकारों तथा केन्द्रीय सरकार के अधिकार और कार्यक्षेत्र का विभाजन किया पर दुर्भाग्य से उन्हें इस में अधिक सफलता नहीं मिली। यद्यपि केन्द्रीय सरकार की प्रतिष्ठा और प्रभाव की वृद्धि क्षण-क्षण हो रही थी पर अब तक वह यह दावा करने योग्य नहीं हुई थी कि समस्त चीन की ओर से उसे बोलने का अधिकार प्राप्त है। उत्तर में जापान का प्रभाव बढ़ रहा था। मञ्चूरिया और जेहोल उसके अधिकार में थे। अब उसने उत्तर चीन के पाँच प्रान्तों में प्रान्तीय स्वतन्त्रता की माँग का आन्दोलन आरम्भ कर दिया था। उन प्रान्तों में जापानियों की बस्ती थी। उनके प्रभाव से यह आन्दोलन उत्पन्न हुआ और विकसित भी। जापान की चाल थी कि प्रान्तीय स्वतन्त्रता के नाम पर उत्तर चीन के पाँच प्रान्तों को मिलाकर जापान के प्रभाव और इशारे में चलने वाली एक रियासत कायम कर दी जाय जो ऊपर से चीनी रियासत होते हुए भी वास्तव में जापानी सरकार के हाथ की कठपुतली हो।

इधर दक्षिण-पश्चिम में भी ऐसा गुट्ट था जो व्यवहारत सरकार से स्वतन्त्र था। दक्षिण-पश्चिमी राजनीतिक काउन्सिल और वहाँ की केन्द्रीय कार्य-समिति की नियुक्ति में नान्किङ्ग का कोई हाथ नहीं था। ये संस्थाएँ इस प्रकार काम करती थीं मानो पूर्णत स्वयम्-प्रभु हों। क्वाङ्तुङ्ग और क्याङ्सी प्रान्तों की सेनाएँ नाम-मात्र को राष्ट्रीय सरकार की सेना का ही अंग थीं, पर वास्तव में वे वहाँ के अपने अधिकारियों की ही अधीनता में चलती थीं। ये दोनों प्रमुख प्रान्त जिन्होंने चीनी राष्ट्रीय क्रान्ति मे महत्त्वपूर्ण भाग लिया था आज प्राय स्वतन्त्र ढग से काम कर रहे थे और राष्ट्रीय सरकार की सत्ता को अस्वीकार कर रहे थे। जापानी इस स्थिति से परिचित थे और अपनी शक्ति भर इस झगडे को बनाये रखने तथा बढ़ाते जाने की ही चेष्टा किया करते थे। नान्किङ्ग तथा च्याङ्कई जानते थे कि चीन की एकता का स्वप्न तब तक पूरा नहीं हो सकता जब तक दक्षिण भी

राष्ट्रीय सरकार की परिधि में न आ जाय। उनमें यह शक्ति तो थी कि वे चाहते तो शस्त्र के बल पर दक्षिण को कुचल देते और उनसे अधीनता स्वीकार करा लेते पर वे इससे यथासम्भव बचना चाहते थे। दक्षिण के लोग कूओमिंगताङ्ग के ही एक अंग थे। च्याङ्कई चाहते थे कि समझा-बुझा कर यदि यह काम किया जा सके तो करना चाहिए और जब तक अणुमात्र भी सफलता की आशा हो तब तक बल प्रयोग न करना चाहिए। इसीलिए वे धैर्य से काम लेते रहे थे और दाक्षिणात्यों को समझाने-बुझाने में कुछ उठा नहीं रखते थे।

सन् १९३६ में दक्षिण का मामला अति गम्भीर हो गया। क्वाङ्तुङ्ग की सेना चेङचिताङ्ग के अधीन थी और क्वाङ्सी में ली-सुङ जेङ तथा पाईचुङ्ग-सी मुखिया थे। इन तीनों ने मिल कर अपने प्रान्तों की सेना को संगठित किया और उसे जापान विरोधी राष्ट्रीय सेना का नाम प्रदान किया। चेङ चिताङ्ग उसके प्रधान सेनापति नियुक्त हुए। सारे देश में घोषणा की गयी कि यह देशभक्त त्रिमूर्ति उत्तर में जापान का बढ़ाव असह्य समझती है और राष्ट्रीय सरकार से माँग करती है कि वह तत्काल जापान के विरुद्ध युद्ध घोषणा कर दे। जापान की दुर्नीति के कारण देश में जो व्यापक असन्तोष फैला हुआ था उसमें उनकी यह माँग ठीक जमती दिखायी पड़ी—यद्यपि उनकी सैनिक तैयारी देख कर समझदार लोग सहम उठे। उन्होंने देखा कि यह तो पुन गृहकलह भड़का चाहता है जो इस संकट की स्थिति में किसी प्रकार भी वांछनीय नहीं हो सकता। जून के महीने में दक्षिण की सेना का सचालन आरम्भ हुआ और वह हूनङ प्रान्त में पन्द्रह मील भीतर घुस गयी। जनरलेसिमो च्याङ्कई शेक ने स्थिति गम्भीर होते देख कर चेङ को तार दिया और अनुरोध किया कि स्वतन्त्र रूप से वे इस प्रकार का कार्य न करें। च्याङ्कई ने अपने सन्देश में कहा कि "क्षणिक आवेश में आकर देश के जीवन के साथ क्रीड़ा करना उचित न होगा। आप के उत्साह की प्रशंसा करते हुए भी मैं कहता हूँ कि देश की मुक्ति सारे राष्ट्र के सामूहिक प्रयत्न से ही सफल हो सकती है। छिट पुट कार्य राष्ट्रीय हित तथा उसके सम्मान का विघातक होगा। चीन की मुक्ति का एक मात्र मार्ग यह है कि मिलजुल कर संकट का सामना करें। निश्चित नीति के अभाव में यदि स्वतन्त्र रूप से विभिन्न गुट काम करेंगे तो संसार की दृष्टि में चीन की प्रतिष्ठा गिर जायगी।

सैनिक दृष्टि से भी सफलता के लिए सारे देश को एक के ही नेतृत्व में चलना ठीक होगा। युद्ध का सम्बन्ध देश के जीवन मरण से होता है। और लोगों की राय लिये बिना आप कैसे अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध का आरम्भ कर देना चाहते हैं। आप देशभक्त हैं इसलिए मुझे विश्वास है कि ऐसा कोई काम न कीजियेगा जो राष्ट्रीय हित के विरुद्ध हो। कृपा कर अपने प्रतिनिधि नानकिङ्ग भेजिये ताकि महत्त्वपूर्ण विषयों पर बातचीत की जा सके।"

चेङ के सिवा च्याङ्कई ने दक्षिण के और साथियों के नाम दूसरा सन्देश भी भेजा। उन्होंने इस सन्देश में कहा कि "ऐसे लोगों से होशियार रहिये जो देशभक्ति के आवरण में तथा जापान विरोधी भावना से लाभ उठा कर अपना काम साधना चाहते हैं। राष्ट्रीय सकट दिन दिन उम्र होता जा रहा है। ऐसे समय पर गैर जिम्मेदार लोगों के जाल में न फँसिये अथवा सारा किया कराया काम नष्ट हो जायगा। हमने साथ साथ विपत्तियाँ झेली हैं। आज जब देश का अस्तित्व खतरे में पड़ना चाहता है, तब यह और भी आवश्यक है कि मिल-जुल कर अपनी समस्त शक्ति और योग्यता का उपयोग करके उसकी रक्षा करें। यदि हम सकटपूर्ण स्थिति में हम परस्पर लड़ कर राष्ट्र को नष्ट हो जाने देंगे तो आनेवाली सन्तति तथा भावी इतिहासकार हमें क्या कहेंगे ?" च्याङ्कई के इन सन्देशों का कोई असर चेङ पर तो नहीं हुआ पर दक्षिण में ऐसे लोग अवश्य थे जो च्याङ्कई की राय से सहमत थे। वे अनुभव कर रहे थे कि राष्ट्रीय हित की रक्षा एकता में है और उस एकता को नष्ट करनेवाला क्रान्ति का विरोधी ही होगा। ऐसे लोग चेङ की रण-योजना के विरोधी थे और जोर डाल रहे थे कि केन्द्रीय सरकार के नेतृत्व में ही जो करना हो किया जाय। उन्हें च्याङ्कई के सन्देश से बल मिला पर इससे भी अधिक बल तब मिला जब धीरे धीरे यह बात स्पष्ट होने लगी कि चेङ जापान विरोधी होने की अपेक्षा स्व पक्षपाती अधिक हैं और व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति भी लगे हाथ कर लेना चाहते हैं।

चेङ एक ओर जापान के विरुद्ध आवाज उठा रहे थे और दूसरी ओर जापान उनके हाथ अस्त्र शस्त्र बेच रहा था। जापानी सैनिक कर्मचारी उनकी सेना के शिक्षक और परामर्शदाता बने हुए थे। चेङ के लिए इन बातों का बुरा प्रभाव हुआ। धीरे धीरे उनके कुछ साथी

और सहायक भी उनकी नाङ्किङ्ग विरोधी नीति के विरोधी हो गये। चेङ्ग से इन लोगों का मत भेद इतना बढ़ा कि बहुत से अफ़सर नाङ्किङ्ग चले गये और उस सरकार को अपनी सेवा अर्पित की। वुह्द ने तो खुल्लम खुल्ला यह सन्देह प्रकट किया कि चेङ्ग जापानियों से मिले हुए हैं और उन्हीं के इशारे पर नाङ्किङ्ग सरकार विशेष कर व्याङ्ग को पदच्युत करने के इरादे से देश भक्ति के परदे के पीछे विद्रोह करना चाहते हैं। चेङ्ग के कुछ साथियों ने अपने वक्तव्य में उन पर भीषण आरोप लगाये। एक वक्तव्य में कहा गया था कि "चेङ्ग ने क्वाङ्गतुङ्ग में अभूतपूर्व टैक्स लगाकर जनता को बरबाद किया और व्यक्तिगत रूप से अपार सम्पत्ति जमा की है। क्वाङ्गतुङ्ग और हाङ्गकाङ्ग में उन्होंने जो जायदाद बनायी है उस की दूसरी मिसाल सारे देश में नहीं मिल सकती। स्वयम् उन्होंने अपने लिए कम से कम दस करोड़ डालर एकत्र किया है।" तात्पर्य यह कि चेङ्ग पर ऐसे-ऐसे अभियोग लगाये जाने लगे और उनकी ऐसी मट्टी पलीद हुई कि उनके रहे सहे साथी भी हट गये। उनकी सेना के प्रतिष्ठित कर्मचारी उन्हें छोड़कर नाङ्किङ्ग चले आये।

चेङ्ग की स्थिति अपने ही आप बिगड़ गयी। इसी समय नाङ्किङ्ग में केन्द्रीय कार्य समिति की बैठक हुई जिसमें व्याङ्ग ने अपनी सरकार की परराष्ट्रनीति के सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण वक्तव्य दिया। उन्होंने समिति की बैठक में सम्मिलित होने के लिए दक्षिणवालों को भी आमन्त्रित किया था। इसी अधिवेशन में चेङ्ग क्वाङ्गतुङ्ग के तमाम सरकारी पदों से बर्खास्त किये गये। क्वाङ्गतुङ्ग सेना में परस्पर ऐसा झगड़ा चला कि चेङ्ग के लिए ही खतरा पैदा हो गया। वहाँ की आकाश-सेना के वायुयानवाहक सैकड़ों की संख्या में नाङ्किङ्ग चले आये। वे अपने साथ ६१ मशीनें भी लाद ले आये। चेङ्ग अब भाग कर हाङ्गकाङ्ग चले गये और वहाँ से युरोप। उनकी बेईमानी ने उनकी समाप्ति कर दी। उनकी सेना के लोग जापान विरोधी भाव से परिप्लावित थे पर किसी विश्वासघाती के चक्र में पड़कर राष्ट्रीय सरकार से व्यर्थ ही झगड़ा करने के लिए तैयार न थे। क्वाङ्गतुङ्ग की सेना तथा चेङ्ग की यह दशा देखकर क्वाङ्चीवालों की बुद्धि भी ठिकाने आयी। ली और पाई क्वाङ्ची की सेना लेकर अपने प्रान्त को लौट गये। अब क्वाङ्चीवालों के लिए भी नाङ्किङ्ग-सरकार की अधीनता स्वीकार करने के सिवा दूसरा मार्ग नहीं था।

च्याङ्कई ने उनके साथ उदारता का व्यवहार किया। फलत दोनों में समझौता हो गया। समझौते में पाँच शर्तें थीं। तय हुआ कि राष्ट्र की रक्षा के सम्बन्ध में काङची केन्द्रीय सरकार की आज्ञा के अनुसार चलेगा। काङची-सेना घटाकर ६ डिवीजन कर दी जायगी जो लौ-सुङ्जेङ की कमान में रहेगी। केन्द्रीय सरकार काङ्ची प्रान्त के मुल्की तथा सैनिक प्रबन्ध को ठीक करने के लिए अपने प्रतिनिधि भेजेगी। जुआ तथा अफीम का रोग बलपूर्वक उन्मूलित किया जायगा। इस प्रकार काङ्तुङ्ग और काङ्ची का झगड़ा तय हुआ। जनरलेसिमो ने अपनी बुद्धि, सूझ तथा धैर्य से वर्षों का यह रोग अच्छा कर डाला। न एक बूँद रक्त गिरा, न एक गोली दगी पर सारा दक्षिण केन्द्रीय राष्ट्रीय सरकार की पताका के नीचे आ गया। अब वह शुभ मुहूर्त उपस्थित था जब च्याङ कह सकते थे कि चीन की एकता का स्वप्न पूरा हुआ। २५ वर्षों की सतत साधना आज सफल हुई थी।

चीन की एकता के लिए जो प्रयत्न किये गये उनका उल्लेख पूर्व पृष्ठों में कर दिया गया है। पर कोई यह न समझे कि च्याङ केवल पशुबल का आश्रय लेकर विरोधियों को कुचलना ही भर जानते थे। क्रान्ति का एक अंग जैसे विनाश है वैसे ही उसका दूसरा अंग निर्माण है। विनाश और निर्माण यह प्रकृति के अटल नियम हैं। प्रकृति स्वयम् क्रान्तिमयी है और ये दो क्रियायें उसके दो पहलू हैं। वह क्रान्ति अधूरी है जो केवल विनाश करके शान्त हो जाय। जो हो उसे उखाड़ फेंकना लक्ष्य होता है इसलिए कि उसके स्थान पर वाञ्छनीय की स्थापना की जाय। डाक्टर सुङयातसेन संसार के महान क्रान्तिकारियों में अग्रणी स्थान रखते हैं। उनका इतिहास जगत् की क्रान्ति के महा इतिहास में उज्ज्वल अध्याय के रूप में सदा प्रतिष्ठित रहेगा। च्याङ्कई उन्हीं के शिष्य थे और अपने ही गुरु की समुचित दीक्षा से दीक्षित हुए थे। वे स्वयम् महान क्रान्तिकारी हैं अत उन्हें जहाँ क्रान्ति की विनाशधारा का प्रतीक बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ वहीं उनको सृष्टि क्रिया का निमित्त बनने का भी अवसर मिला। फलत हम यह देखते हैं कि च्याङ्कई ने अपने प्रचंड और प्रबल भुजदंडों के द्वारा जहाँ एक ओर ____ क्रान्ति विरोधी तत्त्वों को विचूर्ण कर डाला

यहीं उन्होंने उन्मूलित और धराशायी व्यवस्था के स्थान पर नव भवन का निर्माण करने का प्रयत्न किया। विधायक कार्यों के द्वारा उन्होंने चीनी राष्ट्र को नवराष्ट्र के रूप में परिवर्तित करने की चेष्टा की। थोड़े से पृष्ठों में इस अंग का वर्णन कर देना भी उचित है। यह च्याङ्कई की सूक्ष्म और तीव्र सूक्ष्म दृष्टि पर अच्छा प्रकाश डालता है।

किसी देश के सुधार के लिए सबसे अधिक आवश्यक और तत्त्वात्मक सुधार है उसकी आर्थिक दशा की उन्नति करना। भूखे नंगे और बेकारों की भीड़ की न तो सांस्कृतिक उन्नति की जा सकती है और न नैतिक, न उसका चारित्रिक, उत्थान सम्भव है और न राजनीतिक, न उसका सामाजिक विकास हो सकता है और न मानसिक तथा शारीरिक। संक्षेप में न उनका भौतिक विकास किया जा सकता है और न आध्यात्मिक। धर्म, काम और मोक्ष भी तो बहुत कुछ अर्थ पर ही निर्भर करता है। जीवन में अर्थ की महत्ता को अस्वीकार करना वास्तविकता से इनकार करना है। च्याङ्कई अपने देश की गिरी हुई आर्थिक दशा से परिचित थे। वे जानते थे कि जब तक इस समस्या को हल नहीं किया जाता तब तक नवराष्ट्र के निर्माण की बात भी सोचना बिलकुल बेकार है। सरकार के सामने समस्या भी स्पष्ट थी। चीन मुख्यतः किसानों का देश है। किसानों की साधारण समस्या के सम्बन्ध में अधिक लिखना व्यर्थ है क्योंकि भारतीय स्वयम् इससे अच्छी तरह परिचित हैं। हमारा देश भी किसानों का ही देश है और हम उनके प्रश्नों का, उनकी स्थिति और समस्या का अनुभव रोज कर रहे हैं।

ऐसी ही समस्याएँ चीन में भी थीं। कृषि से होनेवाली उपज की मात्रा की कमी, किसानों का अलाभकर खेती, लगान का भारी बोझ कर्ज और सूद का भयानक भार तथा कृषि करने के पुराने तरीके और किसानी सम्बन्धी शोषक और अन्यायमूलक कानून, किसानों को बरबाद किये हुए थे। फलतः किसानों की समस्या को मुख्यतः हल करना देश के आर्थिक उद्धार के लिए जबर्दस्त कदम होता, पर आर्थिक उद्धार के लिए और आवश्यकताएँ भी थीं। ग्रामोद्योगों का विकास, सड़कों, रेलों, नहरों तथा गमनागमन के साधनों की उन्नति और निर्माण, उत्पन्न पदार्थों के लिए बाजारों की स्थापना, नये कल कारखानों की सृष्टि,

स्थानों की खुदाई आदि दर्शनों कामों का उल्लेख किया जा सकता है। इसके साथ ही साथ जनता में शिक्षा और सफाई तथा उसके स्वास्थ्य को समुन्नत रखने के लिए उचित प्रबन्ध आवश्यक था। चीन के सामने एक और भारी समस्या थी। प्रति वर्ष नदियों की भीषण बाढ़ से उस देश में हाहाकार मच जाता है और धन-जन का अपरिमित नाश होता है। बाढ़ की समस्या ऐसी थी कि किसी भी सरकार को उसे तुरन्त हल करने के लिए अपनी सारी शक्ति लगा देनी आवश्यक थी।

च्याङ के सामने ये तमाम बातें थीं। फलतः सन् १९३१ में जब उन्होंने चीन के लिए अस्थायी विधान स्वीकार किया उसी समय देश के आर्थिक प्रश्नों को हल करने के लिए 'नेशनल इकनामिक काउन्सिल' (राष्ट्रीय आर्थिक समिति) की स्थापना की गयी। इस काउन्सिल में सरकार के विभिन्न विभागों के मन्त्रिगण ही सदस्य होते थे। उनके सिवा आर्थिक प्रश्नों को समझनेवाले विशेषज्ञ भी रखे जाते। इनका काम था नयी-नयी सुविचारित योजनाओं की रूप रेखा उपस्थित करना और सरकारी मन्त्रियों को उस सम्बन्ध में परामर्श देना। ऐसी जो योजनाएँ स्वीकृत हो जाती थीं वे फिर सरकार द्वारा कार्यान्वित की जाती थीं। इस समिति ने धीरे धीरे महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया। आगे चल कर सरकार के शासन यन्त्र का यह मुख्य अङ्ग बन गयी। राष्ट्र संघ द्वारा भेजे गये विशेषज्ञों की सहायता पाकर तथा चीन के अनेक उत्साही और युरोप और अमेरिका से शिक्षा प्राप्त करके लौटे हुए बहुत से नवयुवक देशभक्तों की सेवा प्राप्त करके राष्ट्रीय आर्थिक समिति ने चीन में असाधारण गौरव पद प्राप्त किया। नव-चीन के निर्माण में इसने वह काम किया है जिसके लिए चीनी इतिहास में उसे आदरणीय स्थान सदा प्राप्त रहेगा। किसानों को बोने के लिए अच्छे बीज तथा खेती करने के उन्नत तरीकों का ज्ञान कराने से लेकर देश की आर्थिक और मुद्रा तथा साख और विनिमय सम्बन्धी नीति तक के आयोजन का सारा काम इसके ऊपर आ पड़ा। देश में किसानों के कर्ज की तथा अन्य आर्थिक समस्याओं के हल करने के लिए सहयोग समितियों की स्थापना के आन्दोलन का सूत्रपात इसी समिति ने किया। इसके प्रयत्न से ३ वर्ष के भीतर चीन में प्राय पन्द्रह हजार से अधिक सहयोग-समितियाँ काम करने लगीं। किसानों को महाजनों के हाथ से बचाना और उन्हें ऋण देने की

व्यवस्था करना जिसमें वे भयानक सूद से अपनी जान बचा सकें इनका मुख्य काम था जिसकी पूर्ति इन सहयोग-समितियों-द्वारा की गयी। विदेशी यात्री तथा चीन की स्थिति को समझने और अध्ययन करनेवाला ने सहयोग समितियों के इस व्यापक जाल को बिछा देखकर आश्चर्य प्रकट किया है।

देश मे शिक्षा के प्रसार के लिए विद्यालयों की स्थापना भी उसने की। शिक्षकों की शिक्षा और सिलाई के लिए केन्द्र खोले, अस्पताल डाक्टरी शिक्षा के लिए 'मेडिकल स्कूल' तथा स्वास्थ्य और सफाई के प्रबन्ध के लिए अनेक सस्थाएँ स्थापित कीं। नहरों द्वारा सिंचाई का व्यापक प्रबन्ध किया। नदियों की भयावनी बाढ रोकने के लिए पानी के बहाव और बाँधो की व्यवस्था की। जनता के प्रति बुद्धिसम्मत तथा सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि रखकर उसने उनके जीवन को उन्नत करने की सब सम्भव चेष्टाएँ कीं। चीन एसे विशाल देश के लिए उपर्युक्त बातो का सारा समुचित प्रबन्ध अत्यधिक धन पर ही अवलम्बित था। केन्द्रीय सरकार के पास धन की कमी थी। इस बाधा के रहते भी जो हो सकता था उसने सब किया। एक वर्ष पहले ही ह्वाङ्हो नदी की बाढ ने भयानक तबाही कर डाली थी। काफी धन आवश्यक था इन नदियों को नियन्त्रित करने के लिए। और वह धन प्राप्त नहीं हो सका था। दरिद्र तथा सतत युद्ध और गृह-कलह की आग मे भस्म हुआ चीन कहाँ से इतना धन देता। फिर भी काउन्सिल ने जो किया वह प्रशसनीय था।

सन् १९२९ में राष्ट्रीय सरकार ने जेनिवा के राष्ट्रसंघ (लीग ऑव नेशन्स) से यह प्रार्थना की कि वह चीन के स्वास्थ्य और सफाई विभाग के परामर्श और नव निर्माण के लिए विशेषज्ञों का एक दल भेजे, जो स्वास्थ्य उन्नति सम्बन्धी व्यापक और व्यावहारिक ज्ञान फैलाने में उसकी सहायता करे। संघ ने विशेषज्ञों का दल भेजा। इस दल ने राष्ट्रीय आर्थिक सुधार समिति के सहयोग से सारे देश का दौरा करके उसकी स्वास्थ्य और सफाई-सम्बन्धी समस्याओं का अध्ययन किया और एक त्रेवार्षिक योजना बनायी। उसने स्वास्थ्य, सफाई तथा रोगोपचार की शिक्षा के लिए केन्द्र खोले जो आधुनिक साधनों और उपकरणों से सुसम्पन्न किये गये। नौ प्रान्तों में इसके अधीन स्वास्थ्य-केन्द्र खोले गये। राष्ट्र सघ ने स्वास्थ्य और सफाई के सिवा दर्जनों शिक्षा विशेषज्ञ, इंजीनियर,

अर्थ शास्त्री, कानूनदाँ तथा सिविल सरविस के संगठन के लिए शासन विज्ञान के पंडित भेजे। केन्द्रीय सरकार ने इन कामों के लिए दो वर्ष के अन्दर पैंतालीस लाख चीनी डालर खर्च किया और आर्थिक काउन्सिल ने धूमधाम से सारे देश में नव निर्माण तथा जीर्णोद्धार का कार्य किया। याङ्ग्ची नदी की भयानक बाढ़ से नष्ट-भ्रष्ट भूप्रदेशों में सहायता कार्य के लिए राष्ट्रीय सरकार ने 'बाढ़ पीड़ित सहायक समिति' बनायी थी। राष्ट्रसंघ की ओर से भेजे गये विशेषज्ञ सर जान होप सिम्पसन ने निरीक्षण का काम अपने जिम्मे लिया और प्रशंसनीय काम किया। गत दस वर्षों में चीन के राष्ट्रीय जीवन के विभिन्न क्षेत्रों का अध्ययन विशेषज्ञों द्वारा किया गया। आर्थिक, सामाजिक, मुद्रा और स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं को समझा गया और उन्हें हल करने की योजना कार्यान्वित की गयी। सड़कों के निर्माण में नहरों द्वारा सिंचाई करने की व्यवस्था में, बाढ़ रोकने में, ग्रामोद्धार में, भूमि की उपज बढ़ाने और उसकी व्यवस्था करने में तथा स्वास्थ्योन्नत करने में प्रशंसनीय उद्योग किया गया।

इस विवेचन से यह न समझ लेना चाहिए कि विदेशी विशेषज्ञों ने ही सारा काम किया। उनसे मिली सहायता बहुमूल्य रही इसमें सन्देह नहीं, पर काम का असल भार तो उन चीनी नवयुवकों ने वहन किया जो विविध विषयों की विशेष शिक्षा प्राप्त कर अपनी मातृभूमि की सेवा में विशुद्ध सवा भावना तथा त्याग वृत्ति से जुट पड़े थे। इनमें से अधिकतर विदेशों से शिक्षा प्राप्त करके लौटे थे और बहुतों ने अपने देश में ही शिक्षा पायी थी। विदेशों में जाकर उन्होंने समुन्नत देशों के विविध विषयों की उन्नति का सूक्ष्म अध्ययन किया था और इस प्रकार उपार्जित ज्ञान और अनुभव का उपयोग अपनी जन्म-भूमि के हित में कर रहे थे। नाङ्किङ्ग सरकार का यह सौभाग्य था और च्याङ्गकाई की राजनीतिक बुद्धिमत्ता तथा नेतृत्व की यह विशेषता थी कि उन्होंने ऐसे लोगों को ढूँढ़ निकाला और एकत्र किया, उन्हें प्रोत्साहन और साहाय्य प्रदान किया तथा अपने देश का काम पूरा किया। शिक्षा के प्रसार में इन लोगों की सहायता से बड़ी भारी सफलता प्राप्त की गयी।

सन् १९२७ तक चीन में शिक्षा का काम विशेष रूप से विदेशी धर्म प्रचारकों और पादरियों के हाथ में था। इन ईसाई धर्म प्रचारकों

ने चीन में बड़ा काम किया था पर विदेशियों द्वारा अपने ढंग से प्रदत्त शिक्षा चीन के राष्ट्रीय जीवन और उसकी आवश्यकता की पूर्ति नहीं कर सकती थी। फलतः राष्ट्रीय शिक्षा पद्धति की आवश्यकता थी जिसका उदय भी समय पाकर हुआ।

राष्ट्रीय सरकार और कुओमिन्ताङ्ग ने इसकी आवश्यकता समझी और उस दिशा में अपना कदम उठाया। इस सम्बन्ध में चीन को राष्ट्र-संघ से भी सहायता मिली। विशेषज्ञों द्वारा शिक्षा के सुधार की योजना बनवायी गयी और उसे कार्यान्वित किया गया। बच्चों की आरम्भिक शिक्षा को शिक्षा पद्धति का आधार बनाया गया। सन् १९२६ में चीन के बच्चों की, जिनकी उमर ६ से ९ साल तक के बीच थी, कुल २१ प्रतिशत संख्या शिक्षा पा रही थी, या ४ करोड़ बच्चों में से सिर्फ ८८ लाख बच्चे स्कूलों में पढ़ रहे थे। सरकार की नयी योजना के अनुसार इनकी संख्या शीघ्र ही १ करोड़ ३० लाख हो गयी। माध्यमिक शिक्षा के प्रसार का भी प्रबन्ध किया गया। नया पाठ्य क्रम बना तथा उचित आवश्यक विषयों की शिक्षा की व्यवस्था की गयी। ३ हजार से ऊपर माध्यमिक शिक्षा की पाठशालायें स्थापित की गयीं। ८१ विश्वविद्यालय स्थापित हुए। इनके सिवा औद्योगिक शिक्षा देने का अलग से खासा व्यापक प्रबन्ध किया गया और प्रौढ़-शिक्षा के लिए भी सरकार ने बड़ा प्रयत्न किया। सन् १९३३ ई० में सारे चीन में प्रौढ़ शिक्षा के लिए प्रायः ४० हजार स्कूल चलने लगे जिनमें करीब ४० लाख प्रौढ़ शिक्षा पा रहे थे। समाचार पत्र और साधारण किताबों को पढ़ लेने तथा नागरिक कर्तव्यों का समझने का शिक्षा दी जाने लगी।

यदि चीन को शान्ति मिली होती और जापान ने उसे जलाकर भस्म कर डालने का पाप न किया होता तो अब तक इस दिशा में आशातीत सफलता हुई होती।

नाङ्किङ्ग सरकार ने अन्तर्राष्ट्रीय जगत में चीन की साख को उन्नत और सुदृढ़ तथा देश में अपनी आर्थिक और मुद्रा नीति को सुव्यवस्थित करने में आशातीत सफलता प्राप्त की। इस कठिन काम को सफलतापूर्वक पूरा करने का श्रेय श्री टी वी सुङ्ग को है। आप 'मदाम च्याङ्कई शेक' के भाई हैं और अपनी बुद्धिमानी तथा सूझ के बल पर चीन के राष्ट्रीय जीवन में प्रमुख स्थान रखते हैं।

चीन की आर्थिक स्थिति बड़ी दयनीय दशा में थी। विदेशी राष्ट्रों के कर्ज बोझ से दबा हुआ चीन तबाह हो रहा था। उसकी चकात-नीति पर विदेशी साम्राज्यवादियों का नियन्त्रण था। सरकार की सम्पूर्ण आय देश की जनता पर लगे हुए विविध प्रकार के करों पर आश्रित थी। दरिद्र देश कर भार से चूर हो रहा था। आवश्यकता थी इस बोझ को कम करने की। परन्तु सारे देश पर नाङ्किङ्ग का अधिकार भी नहीं था। सब जगह से कर की वसूली भी ठीक नहीं होती थी। मुद्रा का प्रचलन भी सर्वत्र समान नहीं था। चीन में कई मुद्राएँ चल रही थीं। नोटों का चलन भी विचित्र था। बहुत सी विदेशी सरकारें अपने अपने क्षेत्र में अपने नोटों को चला रही थीं। तात्पर्य यह है कि इस समय चीन में घोर आर्थिक अव्यवस्था फैली हुई थी।

टी वी सुङ ने इस विभाग को लेकर आशातीत सफलता प्राप्त की। जिस समय जापान ने चीन पर आक्रमण किया उस समय चीन की आर्थिक स्थिति पूर्व की अपेक्षा कहीं अधिक सुदृढ़ हो गयी थी। पहली आवश्यकता थी सरकार की आय बढ़ाने की। सन् १९२८ में उसने चकात की नीति में और तट कर से होनेवाली आय के सम्बन्ध में विदेशी सरकारों से मुक्ति पा ली थी। नाङ्किङ्ग सरकार ने तट-कर को अपने हित के अनुकूल निर्धारित किया। अब तक विदेशी सरकारें अपने लाभ की दृष्टि से दर निर्धारित करती थीं। *उनका लाभ इसी में था कि आयात होनेवाले माल पर कम* टैक्स लगे। स्वतन्त्रता प्राप्त करने पर सरकार ने इस कर में वृद्धि की, जिसके फलस्वरूप इस मद से होनेवाली आय तिगुनी हो गयी। अर्थ मन्त्री सुङ ने आय का दूसरा मार्ग नमक पर कर लगाकर ढूँढ़ निकाला। यह कर पहले भी था पर उसकी उचित व्यवस्था की गयी और आमदनी दूनी हो गयी। इस प्रकार आमदनी बढ़ाकर सरकार ने बहुत से पुराने करों को लुप्त कर दिया और जनता का बोझ हलका किया। तम्बाखू, शराब तथा सूती धागों पर कर लगाये गये और इस प्रकार अप्रत्यक्ष टैक्स के द्वारा जनता पर सीधे पड़नेवाले कर भार को मिटाया गया। पुरानी चुंगी जो आन्तरिक व्यापार को नष्ट कर रही थी खतम की गयी।

प्राय सात वर्ष में सरकार की आय दूनी हो गयी और विदेश में भी उसकी साख बैठ गयी। चीन सरकार ने अपने ही देश में

रूप और उसकी व्यवस्था अनादिकाल से सदा बदलती आयी है। यह परिवर्तन केवल प्राकृतिक विकास की गति का परिणाम-मात्र नहीं है। अवश्य ही विकास की गति और उसका प्रवाह मुख्य स्थान रखता है पर उससे कम महत्त्व उस जीवन को प्राप्त नहीं है जिसने सतत स्थितियों के अनुकूल स्वयम् बनाने की तथा परिस्थितियों को अपने अनुकूल बनाने की निरन्तर चेष्टा की है। जीवन की यह चेष्टा उसका यत्न उस आन्तरिक उत्प्रेरणा का द्योतक है जो जीवन को जीवन होने के नाते प्रकृति द्वारा प्राप्त हुई है। फलतः दुनिया बदली है, समाज बदला है, इतिहास बदला है—जीवन के प्रयत्न, उसकी चेष्टा, उसकी आन्तरिक और अदृश्य उत्प्रेरक शक्ति के बल पर।

किसी राष्ट्र का उद्धार करने के लिए मुख्यतः यह आवश्यक है कि सामूहिक रूप से व्यक्ति व्यक्ति के जीवन की उस चेतना को जागृत कर दिया जाय जो परिस्थितियों के प्रभाव से प्रभावित हो और जो अपने प्रभाव से परिस्थिति को प्रभावित करे। थोड़े से लोग समाज से कहीं ऊँचे उत्तुंग शिखर पर बैठकर तरह तरह के क़ानूनों से मुर्दा हुए लोगों को सचेष्ट और उन्नत नहीं कर सकते। उनकी चेष्टा उनका क़ानून और उनका यत्न तथा प्रभाव भी उसी समय काम दे सकता है जब दूसरे के हृदय में वह तार हो जिसे छूकर झंकृत किया जा सकता हो। अतएव राष्ट्रों का उद्धार तभी होता है जब समष्टि रूप से उस राष्ट्र में उद्भूत और उन्नत होने की प्रबल आन्तरिक प्रेरणा मौजूद हो। यदि यह प्रेरणा, यह चेतना उन्मुखी होगी तो दूसरों का प्रयत्न और उनकी सहायता भी फलवती हो जायगी।

च्याङ्कई चीनी राष्ट्र के हृदय हैं और उसके प्रतीक भी। वे दलित और अपमानित चीन की उस विकलता और पीड़ा के गर्भ से उदीयमान हुए हैं जो अपनी स्थिति को बदलने के लिए उत्सुक थी। फलतः उन्होंने अनुभव किया कि नवराष्ट्र का निर्माण करने के लिए केवल सरकार का प्रयत्न पर्याप्त नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि जन हृदय को इस प्रकार उन्मुख हो जाने का मौका दिया जाय कि वह उन आकांक्षाओं और लालसाओं की पूर्ति के लिए वेग से बढ़ चले जो धूम्राछन्न होकर उसके अन्तस्तल में पड़ी हुई हैं। जनता

अपमान, शोषण और निर्दलन से विकल तो अवश्य थी। वह इस परिस्थिति से छुटकारा चाहती थी और अपनी अवस्था में परिवर्तन की अपेक्षा कर रही थी। पर यह हो कैसे ? आवश्यकता थी उसे मार्ग दिखाने की। उसे यह बताना आवश्यक था कि किन किन कारणों से आज उसकी यह दशा हुई है और किस प्रकार इन कारणों का परिहार किया जा सकता है।

राष्ट्रों का पतन होता है उनकी अपनी ही दुर्बलता के कारण। जीवन यदि संघर्ष है तो उसमें पराजय उसी की होगी जो उस संघर्ष में टिकने में असमर्थ है। इतिहास इसी सत्य का प्रमाण उपस्थित करते हैं। चीन एक समय महान था। ईसा से हजारों वर्ष पूर्व उसने महती संस्कृति को जन्म दिया था। उसमें जीवनी शक्ति थी तभी तो वह हजारों वर्ष के उलट फेर के बाद भी जीवित है। पर उस शक्ति के रहते हुए भी उसका पतन हुआ। संसार में जो होता है उसका कारण भी कुछ न कुछ होता ही है। चीन के पतन का भी कारण रहा होगा। उन कारणों को दूर करना अपने उद्धार के लिए आवश्यक था। च्याङ्कई ने देख लिया कि इस कारण को दूर करना केवल नाङ्किङ्ग सरकार की शक्ति की बात नहीं है। राष्ट्र देह में ही वह विकार मौजूद है जो उसे खाये जा रहा है। उसे निकाल फेंकने के लिए सारे देश को सामूहिक रूप से यत्नशील होना पड़ेगा। फलत सारे राष्ट्र को अपनी दुर्बलताओं और विकार को निकाल फेंकने के लिए सचेष्ट करना तथा उसे इस महा प्रयास में लगाना 'नवजीवन आन्दोलन' का लक्ष्य था।

च्याङ्कई का निदान यह है कि चीन का पतन इस कारण हुआ कि उसने अपने राष्ट्रीय चरित्र का परित्याग कर दिया। जिसमें चरित्र न होगा उसका विनाश अवश्यम्भावी है। जो बात व्यक्ति के लिए है वही राष्ट्र के लिए भी सत्य है। चरित्र के पतन के साथ राष्ट्र का पतन होता है। फिर तो इन दोनों का सम्बन्ध अविच्छेद्य हो जाता है। दोनों एक दूसरे के कार्य कारण बन जाते हैं। राष्ट्रीय पतन चरित्र का नाश करता है और चरित्र का नाश राष्ट्रीय पतन करता है। इस दुश्चक्र से निकलना कठिन हो जाता है। आज चीन को इस दुश्चक्र के बन्धन को छिन्न भिन्न करके निकलना था। 'नव जीवन आन्दोलन' उसी का प्रयास है।

उसका सूत्रपात किया गया था राष्ट्र में चारित्रिक विकास करने के लिए, उसे अपने उद्धार के लिए, अपने आप प्रयत्नशील बनाने के लिए और उसकी उस आन्तरिक और प्राकृतिक चेतना तथा शक्ति को जागृत करने के लिए जिसे मोह में पड़ कर चीन भूल रहा था। उसे अपनेपन, अपने स्वरूप और अपने सम्मान का स्मरण कराना था जिसे भूलकर वह पथ भ्रष्ट हो गया था। च्याङ्कई ने समझा था कि बिना इसके सरकार अथवा किसी का प्रयत्न भी फलप्रद न होगा। जो प्रयत्न किया जायगा उसकी सफलता भी जन सहयोग पर निर्भर है। जन सहयोग तभी प्राप्त होता है जब जनता स्वयम् अपने हिताहित, कर्तव्याकर्तव्य, तथा उचितानुचित का भेद समझे। यह विवेक उसके चरित्र बल से उसके नैतिक बल से ही जागृत होगा। यही है आधार शिला जिस पर नव-राष्ट्र का भव्य भवन प्रतिष्ठित किया जा सकता है। सारे देश में, प्रत्येक नर नारी, वृद्ध और बालक के हृदय में चेतना जागृत कर देना होगा। उसे ज्ञान हो जाना चाहिए कि उसका हित राष्ट्रीय हित में ही है। उसे मालूम हो जाना चाहिए कि अपने तथा अपने देश के प्रति उसका क्या कर्तव्य है। सबसे बढ़कर उसे पता लग जाना चाहिए कि राष्ट्र के पतन का, उसकी वर्तमान अवनति और दुरवस्था का कारण वह स्वयम् है और वह स्वयम् उसके उद्धार और उसकी उन्नति के लिए जिम्मेदार है। उसकी मुक्ति उसके ही हाथ में है। यदि यह काम हो गया तो फिर न कोई जन शक्ति का दमन कर सकेगा और न कोई उसे बहका कर अपना उल्लू सीधा कर सकेगा।

यही लक्ष्य था 'नवजीवन आन्दोलन' के प्रजनन का।

बहुधा छोटी घटनाओं का व्यापक परिणाम होता है। नव जीवन आन्दोलन का जन्म भी इसी प्रकार हुआ। कहा जाता है कि सन् १९३४ में जनरलेसिमो च्याङ्कईशेक एक दिन मोटर पर अपने वास स्थान वापस जा रहे थे। मार्ग में उन्होंने दस वष के एक बालक को देखा जो सिगरेट पीता हुआ सड़क पर चला जा रहा था। इस घटना ने च्याङ्कई पर गहरा प्रभाव डाला। उनके हृदय में तरह तरह के भाव उठने लगे। चीन के बच्चों और नव युवकों का चरित्र जब इतना गिर गया हो जब छोटे छोटे बालक गन्दी आदतों के शिकार हो रहे हों, उस समय राष्ट्र का उद्धार कैसे हो

सकता है ? यह तो तभी सम्भव है जब जनता का चरित्र और उसका जीवन आमूल उन्नत हो और सुधरे। देश के लोगों की दुर्बलता ही राष्ट्र के पतन का कारण हुई है। च्याङ्काई ने कहा, "आज मैंने अपने देश के विनाश का रहस्य समझ लिया। हमारा जीवन, हमारा चरित्र गिर गया है और जब तक इसका सुधार न होगा तब तक राष्ट्रोन्नति की चाहे कितनी भी योजना बनायी जाय और चेष्टा की जाय कोई लाभ नहीं हो सकता।" बस, उन्होंने निश्चय कर लिया कि लोगों के जीवन को बदल देना है। लोगों के हृदय को उत्प्रेरित करना है कि वे अपना दौर्बल्य देखें और दृढ़तापूर्वक उस पर विजय प्राप्त करने की चेष्टा स्वयम् करें। जनता को ही जगा देना है कि वह आत्म समीक्षा कर सके।

नाङ्च्याङ्ग में १९ फरवरी सन् १९३४ को पचास सहस्र जनता की विशाल सभा में च्याङ्काई ने भाषण करते हुए इस आन्दोलन का सूत्रपात किया। च्याङ के इस आरम्भिक भाषण से ही उनका मनोभाव प्रकट हो जाता है। उन्होंने अपने भाषण में कहा, "विचार करो कि हमारे देश का पतन क्यों हुआ ? हम बढ़े थे पर गिरे क्यों ? सोचो कि जर्मनी गत महायुद्ध में बुरी तरह पराजित हुआ, विजयी राष्ट्रों ने उसे धर दबाया पर थोड़े ही वर्षों बाद वह सहसा [illegible] के रूप में अवतीर्ण हुआ। उसने उस हरजाने को देने से भी इन्कार कर दिया जो उसके सिर पर लाद दिया गया था। अपने [illegible] जापानियों को देखो। उनकी अनुशासन प्रियता, उनका चरित्र [illegible] से राष्ट्र को जगत की महती शक्तियों में अग्रस्थान प्रदान किए हुए है। दूसरी ओर आपका देश है जो महान होते हुए भी गिरा हुआ है और आज कोई भी जब चाहता है उसका अपमान कर देता है। क्या [illegible] आपने इसके कारण पर भी विचार किया है। कारण [illegible] है कि हमने अपनी उन विशेषताओं और उस चरित्र का परित्याग कर दिया है जिसकी शिक्षा हमारे ऋषियों ने हजारों वर्ष पूर्व हमें दी थी। [illegible] मान, चेतना ज्ञान, सदाचार विवेक तथा [illegible] आदि गुण हमारे ऋषियों ने हमें सिखाये थे। हमने उनका परित्याग किया अत हमारा पतन हुआ। आज हम यह भी [illegible] कि हमारा हित किसमें है और किसमें अहित है। हमें क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए। जिन लोगों को अपने देश से प्रेम है

अपनी अवनति से पीड़ा होती है उनका कर्तव्य है कि आगे आवें और राष्ट्रीय चरित्र के पुनरुद्धार की चेष्टा करें। तभी नव चीनी राष्ट्र का जन्म हो सकता है।'

च्याङ ने इस आन्दोलन का संगठन किया। उसके लक्ष्य, उसकी रूप-रेखा, उसके सिद्धान्त और उसके नियम बनाये। विस्तार से अपने विचारों की व्याख्या की। इस सम्बन्ध में उन्होंने एक लेख लिखा जिसमें सब बातें साफ की गयीं। उस लेख का अँगरेजी में भी अनुवाद हुआ। उसी का हिन्दी अनुवाद अन्त में परिशिष्ट के रूप में दिया हुआ है। पाठक उसके द्वारा इस आन्दोलन के वास्तविक स्वरूप को समझ लेंगे। देश की जनता के चरित्र निर्माण की कितनी आवश्यकता होती है इसका अनुभव हम भारतीय पद पद पर करते हैं। चीन और भारत की स्थिति में विचित्र समानता है। हम भी एक दिन महान थे पर आज हमसे बढ़कर निकम्मा, निर्जीव और नालायक राष्ट्र धरातल पर ढूँढे भी न मिलेगा। हम भी गिरे, अपमानित हुए, दूसरों की ठोकरें खायीं और आज सभ्य जगत की पंक्ति में स्थान पाने लायक भी नहीं रहे। विचार तो कीजिये कि हमारे इस पतन का कारण क्या है ? क्या हमारे चरित्र का नाश ही प्रमुख कारण नहीं है और क्या हमारे उद्धार का एक मात्र उपाय यह नहीं है कि हम अपने जीवन को उन्नत करने की चेष्टा करें जिसमें मनुष्य बन सकें ? च्याङ्काईशेक ने इस ओर क्या प्रयत्न किया यह जानना हमारे लिए न केवल मनोरंजक होगा बल्कि लाभप्रद भी।

इस आन्दोलन का सूत्रपात कराने के बाद च्याङ्काईशेक ने इसका संचालन करने की योजना बनायी। उन्होंने उन आठ सिद्धान्तों का निर्धारण किया जो उक्त आन्दोलन की गति का संचालन करने के लिए आवश्यक थे। वे सिद्धान्त यह हैं —

(१) अतीत को मृतक समझ कर वर्तमान को सजीव मानिये। पुरानी सड़ी गली आदतों और कुसंस्कारों से छुटकारा पाइये और नवराष्ट्र की रचना कीजिये।

(२) राष्ट्र को पुनरुज्जीवित करने का उत्तरदायित्व स्वीकार कीजिये।

(३) बने हुए नियमों का पालन कीजिये और विश्वास, ईमानदारी तथा दयानतदारी से काम लीजिये।

(४) हमारा खाना, कपड़ा, रहन-सहन सादा, नियमित और स्वच्छ होना चाहिए ।

(५) प्रसन्नतापूर्वक कठिनाइयों का सामना कीजिये ।

(६) हममें ज्ञान तथा नागरिक होने के नाते उज्ज्वल नैतिक चरित्र होना चाहिए।

(७) हमारे कार्य म ढिलाई न हो तथा हमे साहसपूर्वक कर्म-पथ में अग्रसर होना चाहिए।

(८) जो सकल्प कीजिये, जो निश्चय कीजिये उसका पालन अवश्य कीजिये ।

नव-जीवन आन्दोलन को चलाने के लिए ये आठ नियम थे। नानचाङ्ग म शीघ्र ही दो सौ विद्यार्थियो का समूह इस कार्य को उठाने के लिए तैयार हुआ। च्याङ्कई का मत यह था कि एक साथ सर्वत्र इस आन्दोलन का विस्तार न किया जाय। पहले एक क्षेत्र मे काम आरम्भ हो फिर क्रमश उसका विस्तार अन्य प्रान्तों में किया जाय। ये विद्यार्थी नये काय के लिए दीक्षित किये गये, फिर उन्हें जनता मे कार्य करने के लिए भेज दिया गया। उनका काम था कि वे व्याख्यानों द्वारा, परचों और पत्रिकाओं द्वारा तथा लोगा से घर घर मिल कर इसका प्रचार करें और अपने चरित्र से लोगों को प्रभावित करें। देश की धार्मिक तथा नागरिक सस्थाओं को सहयोग प्रदान करने के लिए आमन्त्रित किया गया। जनता में अनुशासन प्रियता शुद्धता, सादगी, श्रमशीलता तथा विवेक आदि गुणों को अपनाने के लिए प्रचार किया जाने लगा। आरम्भ होते ही यह कार्य वेग से बढ़ा और जनता का सहयोग प्राप्त होने लगा। नया उत्साह फैलता दिखायी दिया। नानचाङ्ग मे महीने ही भर बाद जो सार्वजनिक सभा की गयी और जिसमें इस आन्दोलन को राष्ट्रव्यापी बनाने की घोषणा की गयी उसमें जनता की उपस्थितेति एक लाख से अधिक थी। इसी से लोगो के उत्साह का अनुमान किया जा सकता है।

अब तो धीरे धीरे देश भर में इसका प्रचार होने लगा। व्याख्यान होते, परचे बाँटे जाते और जलूस निकलते तथा प्रदर्शन किये जाते। तरह-तरह के पोस्टर देश के कोने कोने मे चिपकाये जाते। किसी मे लिखा होता 'अनुशासन का पालन करो,' 'शरीर और वस्त्र तथा मन शुद्ध और ... 'सडकों पर थूकते मत फिरो,' 'भीड़ न

'मदिरा, स्त्री और जुए से बचो,' 'नम्र और विनयी बनो' आदि आदि तरह-तरह के पोस्टर चिपकाये जाने लगे। पाठक देखें कि इस आन्दोलन में किस प्रकार देश की जनता के नागरिक चरित्र को विकसित करने की चेष्टा की जाने लगी थी। कुछ लोग इस प्रयत्न पर हँसेंगे। कोई इसे पुराना दकियानूसी तरीका बतावेगा और इसे व्यर्थ कहेगा। कुछ कहेंगे कि सारी बुराइयों की जड़ आर्थिक समस्या और व्यवस्था है। उसे उन्नत कीजिये और उस समस्या को हल कर दीजिये। तब सारा विकार आप ही आप दूर हो जायगा। मैं समझता हूँ कि इस प्रकार के विचार वस्तुतः एक प्रकार की हठधर्मी के द्योतक हैं। जीवन की छोटी छोटी बातों से ही मनुष्य का चरित्र बनता है। इनकी उपेक्षा करके अकल्याण ही किया जा सकता है। किसी व्यक्ति की छोटी छोटी दिन प्रतिदिन की बातों से ही उसके चरित्र को समझा जा सकता है। जो अपने रोज के जीवन में लापरवाही दिखाता है उस पर कभी भरोसा नहीं किया जा सकता। जिसमें नागरिक कर्तव्य के प्रति सावधानी नहीं है वह कभी किसी महान कार्य को उठाने की शक्ति प्रकट नहीं कर सकता। फलतः किसी को चरित्र की शिक्षा इन छोटी बातों के द्वारा, जीवन के दिन प्रतिदिन के कार्यों के द्वारा ही दी जा सकती है।

आर्थिक समस्या वाली बात भी कुछ अंशों में ठीक है। यह सच है कि गरीबी और भूख तथा शोषण मानव को गिराता चलता है। किसी के चरित्र के विकास के लिए उसे इस जाल से निकाले बिना काम नहीं चल सकता। जो भूखा है, अपने बच्चों के लिए रोटी भी नहीं जुटा सकता वह क्या सफाई से रहेगा और क्या विवेक का आश्रय ग्रहण करेगा। अतः इसे सही मानते हुए भी मैं कहता हूँ कि वह सवांश में ठीक नहीं है। प्रश्न का एक और पहलू है जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। किसी व्यवस्था को उखाड़ने, उसके स्थान पर दूसरी व्यवस्था स्थापित करने तथा उस व्यवस्था की रक्षा करने की भी योग्यता होनी चाहिए। यदि इस देश का स्वराज्य प्राप्त भी हो जाय तो उसकी रक्षा करनी पड़ेगी। यदि हममें योग्यता न हो तो प्राप्त हुआ स्वराज्य पुनः हाथों से निकल जायगा। स्वराज्य की प्राप्ति भी तभी हो सकेगी जब वह आवश्यक योग्यता हममें वर्तमान हो। इस योग्यता का सम्पादन करने के लिए ही चरित्र की आवश्यकता है। जीवन को नये ढाँचे में ढाले बिना काम नहीं चल

सकता । यही कारण है कि रूस में सोवियेत सरकार ने सारे देश के चरित्र को, उसके जीवन को, उसके संस्कारों को, उसकी परम्परा को, उसकी आदतों को और उसके व्यक्तिगत तथा सार्वजनिक आचरण को—यहाँ तक कि उसके सारे दृष्टिकोण को—बदल कर नया स्वरूप और नया रंग प्रदान करने की चेष्टा की है। उनका यह विधायक कार्य रूसी क्रान्ति का सबसे महत्त्वपूर्ण अंश है जिसकी मिसाल दुनिया में नहीं मिलती। जारशाही के विनाश तथा 'प्रोलिटेरियेट (जनसत्तात्मक) सरकार' की स्थापना से भी अधिक महत्त्वपूर्ण कार्य यही हुआ है।

च्याङ्कई भी यही कर रहे थे। अवश्य ही वे कमाल अतातुर्क अथवा लेनिन तथा फ्रान्स की राज्य क्रान्ति के विधाताओं की भाँति जो कुछ भी अतीत का था—चाहे वह अमान्य ही क्यों न रहा हो—निनष्ट कर देने के लिए तैयार नहीं थे। वे उस राष्ट्र की गोद में पले हैं जिसका उज्ज्वल अतीत रहा है, फिर समस्त अतीत के विरुद्ध युद्ध घोषणा करने को वे तैयार ही कैसे होते? वे तो उस विष को नष्ट करना चाहते थे जो राष्ट्र देह में प्रविष्ट होकर उसे नष्ट करता जा रहा था। वे अतीत के समस्त कलुष को धोकर उसम से केवल वही लेना चाहते थे जो चीन की महत्ता का कारण था और उसे नयी परिस्थिति तथा आवश्यकता के अनुसार गढ़कर अपनाना चाहते थे। साथ साथ उस प्रकाश और उस ज्ञान को ग्रहण करना चाहते थे जो पश्चिम प्रदान कर रहा था। उन दोनों के समन्वय से ही नवचीन राष्ट्र को जन्म प्रदान करना चाहते थे। च्याङ के इस दृष्टिकोण का प्रमाण हम बार बार पाते हैं। उन्होंने 'नव जीवन आन्दोलन' का आरम्भ करते हुए पुरातन चीनी महर्षियों द्वारा प्रतिपादित जीवन तथा आचरण-सम्बन्धी आदर्शों को लेकर उसकी नयी व्याख्या की। उन्होंने 'नव जीवन आन्दोलन' का एक अंग उन ऐतिहासिक पुरातन अवशेषों की रक्षा करना भी निर्धारित किया जो धीरे धीरे नष्ट हो रहे थे। ऐतिहासिक इमारतों, ध्वंसावशेषों, मूर्तियों तथा स्थानों की रक्षा के लिए उन्होंने जनता से अपील की। आज वे एक सोये हुए राष्ट्र को उसके पुराने गौरव की याद दिलाकर जगाना चाहते थे। उन्होंने अपने एक सन्देश में कहा—"अपने अतीत गौरव की ओर देखना आज अपनी स्थिति में सुधार करने का सर्वोत्तम उपाय है। हमारी पाँच सहस्र वर्ष पुरानी सभ्यता ने हमें जो कुछ प्रदान किया है वह राष्ट्र के हजारों वर्षों के परिश्रम, अध्यवसाय, ज्ञान और अनुभव . . . . . है

इस आन्दोलन ने अद्भुत प्रेरणा तो अफीम प्रयोग के विरुद्ध प्रदान की। चीन में अफीम का प्रचार बड़ा व्यापक था जो देश के जीवन को नष्ट कर रहा था। इस अफीम ने ही पहले पहल ब्रिटेन को चीन पर आक्रमण करने के लिए आकर्षित किया था। विदेशी राष्ट्रों ने तलवार के ज़ोर से चीन को अफीम खाने के लिए बाध्य किया। यह प्रमाण है उन लोगों की सभ्यता का जो सभ्य होने का दावा करते हैं। अफीम के आगमन के साथ साथ चीन के अपमान, निर्दलन और शोषण का आगमन हुआ। विदेशी राष्ट्रों का प्रवेश हुआ। चीनी देश भक्त इस निर्माणिका का मिटा देना चाहते थे। राष्ट्रीय जागृति के साथ साथ अफीम के विरुद्ध भी प्रचार आरम्भ हुआ था। राष्ट्रीय सरकार ने तो इसे बन्द करने की बहुत चेष्टा की। इससे होनेवाली आय का लोभ छोड़कर उसने उसके प्रयोग की मनाही की, पर सब कायदे कानून के रहते हुए भी उसका उपयोग होता ही रहा। लुकछिप कर अफीम पैदा की जाती, बेची और खायी तथा पी जाती। सुदूर प्रान्तों में सरकारी कर्मचारी रिशवतखोरी करते और अफीम का रोजगार चलने देते। नानकिङ्ग सरकार परेशान हो गयी थी। 'नवजीवन आन्दोलन' जब आरम्भ हुआ तो इस बुराई की ओर विशेष रूप से ध्यान दिया गया। अफीम के विरुद्ध बड़े प्रचंड वेग से प्रचार आरम्भ हुआ। लोगों को इसकी बुराइयाँ बतलायी जातीं और इसका परित्याग करने के लिए समझाया जाता, पर अफीम की आदत जल्दी छूटनेवाली नहीं होती। किसी भी नशे की आदत का छोड़ना सरल नहीं हुआ करता। फिर अफीम तो सुनते हैं प्राण के साथ छूटती है। 'नवजीवन आन्दोलन' के साथ साथ च्याङ्क ने तरह तरह के नियम बनाये। इन नियमों की भयंकरता देखकर आश्चर्य होता है। किसी सरकारी कर्मचारी को यदि अफीम खाते या पीते पकड़ लिया जाय तो उसे प्राणदंड तक देने की व्यवस्था की गयी थी। अफीम के पौधे को बोनेवाले अथवा बेचनेवाले को बारह वर्ष कठोर कारावास का दंड दिया जा सकता था। लोगों से कहा गया कि तीन वर्ष के अन्दर अफीम की आदत छोड़ दें। इसके बाद यदि कोई अफीम खाता पकड़ा जायगा तो उसे पाँच वर्ष कारावास का दंड दिया जायगा। यदि कोई सरकारी अफसर घूस लेकर अफीम की खेती और व्यापार में सहायता देने के अपराध का अपराधी सिद्ध होगा तो उसे आजन्म निर्वासन का दंड भोगना पड़ेगा।

बड़ी धूम से लोगों में अफीम के विरुद्ध प्रचार किया जाने लगा
लोगों से अफीम छोड़ने के लिए प्रतिज्ञा पत्र भराये जाने लगे, पुस्तिकाओं
परचों, पोस्टरों, सभाओं जलूसों और प्रदर्शनों से इस विनाशकारी
व्यसन के विरुद्ध प्रबल जन मत उत्पन्न करने की चेष्टा की जा
लगी। कोने कोने में अफीम छुड़ाने के लिए केन्द्र खोले गये। औषधाल
कायम किये गये जिनमें अफीम की आदत छुड़ाने के लिए औषधो
चार करने की व्यवस्था की गयी। अन्त में ऐसा उत्साह उमड़ा कि
केन्द्रीय सरकार को देश के कोने-कोने से सहयोग मिलने लगा। विभि
स्थानों में दर्जनों अफीम विरोधी सम्मेलन हुए। जनता की आत्म
आन्दोलन से इस प्रकार जागृत हो गया था कि उसने स्वयम् सरकार
माँग की कि ६ साल के अन्दर अफीम के प्रयोग को सरकार पूरी तर
उन्मूलन कर दे। सरकार तो स्वयम् यही चाहती थी। उसने व्याप
प्रोग्राम बनाया। अफीमखाने, जुओं के अड्डे तथा अफीम की खेती औ
व्यवसाय जड़ मूल से उखाड़ फेंकने की चेष्टा होने लगी। च्याङ्ग शे
और उनकी पत्नी ने विशेष रूप से इस कार्य को उठा लिया।

च्याङ्ग के इस प्रयत्न की तुलना अमेरिका की उस चेष्टा से कीजि
जो हाल में शराब के विरुद्ध वहाँ की गयी थी। अमेरिकन सरका
अपने प्रयत्न में सफल न हो सकी। भारत में भी गाँधीजी के नेतृत्व
मद्य निषेध का आन्दोलन काँग्रेस कार्यक्रम का प्रमुख अंग था। यद्य
इसका प्रचार किया गया। जब प्रान्तों में काँग्रेसी सरकारें स्थापि
हुईं तो इसका प्रबन्ध विशेष रूप से किया गया। बम्बई प्रान्त क
सरकार ने तो विशेष प्रयत्न किया। इसका कितना विरोध शराब
व्यापारियों और पियक्कड़ों की ओर से हुआ यह अभी कल की बा
है। राजनैतिक कारणों से काँग्रेसी सरकारों ने पद-त्याग किया। उन
हटते ही विदेशी गवर्नरों का शासन प्रारम्भ हुआ और इस सिलसि
में काँग्रेसी सरकारों ने जो कुछ किया था उसे भी नष्ट कर दिया गया
हमारे प्रान्त में शराब की जो दूकानें काँग्रेसी सरकार ने बन्द करा
थीं वे पुनः गवर्नरी शासन में चालू कर दी गयी हैं। सरकार देश क
जनता को शराब पिलाकर भी आय उपार्जन करने के लिए तैयार
और उसमें लज्जा का अनुभव नहीं करती। चीन में च्याङ्ग ने इस प्रय
में बड़ी सफलता प्राप्त की। यद्यपि इस बुराई का पूर्ण नाश नहीं
है पर जितना हुआ है उसकी

(१०) जटिल मुद्रा नीति की सरलता।

(११) वैज्ञानिक तरीकों से कर प्रक्षेपण की नीति ग्रहण करना।

(१२) आधुनिक वैज्ञानिक उपायों से राष्ट्रीय आर्थिक दशा को सुधारने के समस्त सम्भव उपायों को अपनाना।

ऐसी ही अनेक बातें हैं जिन्हें सरकार और जनता को परस्पर के सहयोग से पूरा करना है। सरकार को खानों, मजदूरों, कल-कारखानों, कम्पनियों, सहयोग समितियों, कर्ज, लगान आदि के सम्बन्ध में आधुनिक दृष्टिकोण और आवश्यकता के आधार पर नये नये क़ानूनों का निर्माण करना पड़ेगा। 'आर्थिक पुनर्निर्माण आन्दोलन' का लक्ष्य इन कार्यों को पूरा करने में जन शक्ति को लगाना है जिसमें चीन की उन्नति और मुक्ति का ध्येय शीघ्र से शीघ्र पूरा हो सके।"

पाठक च्याङ्ग के इस वक्तव्य से उनके नये आन्दोलन का लक्ष्य समझ गये होंगे। चीन के राष्ट्रीय स्वतन्त्रता दिवस की वर्षगाँठ के अवसर पर भाषण करते हुए १९३५ ई० में उन्होंने कहा—"चीन की गरीबी का मुख्य कारण हमारे आर्थिक भवन का विघटन है जिसके कारण आज हमारी दशा दयनीय हो गयी है। राष्ट्र के सामने मुख्य प्रश्न यह है कि हम आज किस प्रकार इस आर्थिक विघटन को रोकें और जनता को नष्ट होने से बचावें। आज हमारे ऊपर यह भार है कि इस स्थिति को सुलझायें। देश की विचित्र जटिल अवस्था हो गयी है। एक ओर राष्ट्र के उत्पादन के प्राकृतिक साधन अपरिमित मात्रा में होते हुए भी व्यर्थ पड़े पड़े नष्ट हो रहे हैं और दूसरी ओर असंख्य जनता जीवन के लिए आवश्यक पदार्थों के अभाव से क्षय को प्राप्त हो रही है। इस उलटी धारा को हम बदलना है। प्राकृतिक विपत्ति से हम नष्ट हो रहे हैं। हाल की बाढ़ में ५ करोड़ से अधिक नरनारी गृहहीन हो गये और ५० करोड़ डालर से अधिक की सम्पत्ति नष्ट हो गयी। क्या हम उन आधुनिक उपायों से धन क्षय का यह नाश नहीं रोक सकते जो आज उपलब्ध हैं? 'नवजीवन आन्दोलन' के साथ-साथ आर्थिक पुनर्निर्माण का आन्दोलन इसीलिए आरम्भ किया गया है कि हम महती जन शक्ति को इस प्रकार जागृत और संगठित कर दें कि वह अपनी स्थिति को बदल देने के लिए जुट पड़े। नवजीवन आन्दोलन और यह आन्दोलन एक ही वस्तु के

दो पहलू हैं। एक आपके नैतिक जीवन को उन्नत करता है और दूसरा भौतिक जीवन को। दोनों की उन्नति पर ही सामूहिक रूप से राष्ट्रीय जीवन की उन्नति और विकास निर्भर करते हैं।"

च्यांङ्ग की तीव्र बुद्धि स्थिति की समीक्षा की शक्ति और राष्ट्रीय जीवन की समस्या को पहचानने की क्षमता का पता उनके इन प्रयत्नों से भली प्रकार चल जाता है। वे केवल नैतिक नहीं हैं केवल शासक भी नहीं हैं और न केवल रुद्र क्रान्तिकारी ही हैं। बल्कि इन सबके मिश्र वे जनवर्ग के नेता भी हैं राष्ट्र के निर्माता हैं और ऊँचे दरजे के व्यावहारिक आयोजक हैं। इस आन्दोलन को चलाने के लिए लोगों को विशेष विषयों की शिक्षा देने का व्यापक प्रबन्ध किया गया। मिडिल स्कूल और कालेजों के विद्यार्थियों तथा अध्यापकों की सहायता माँगी गयी। सामाजिक कार्यकर्ताओं व्यापार-सघों किसान-सभाओं और सहयोग समितियों के कार्यकर्ताओं का आवाहन किया गया। उच्च सैनिक तथा सरकारी कर्मचारियों को आमन्त्रित किया गया कि वे अपने प्रतिदिन के कार्य के सिवा राष्ट्रीय निर्माण के इस पुनीत यज्ञ में अपने अपने हिस्से की आहुति डालें। जनता को सक्रिय बनाने के लिए उपेक्षा और आलस्य को छोड़कर उठ खड़े होने के लिए, देश की आवश्यकता क्या है यह समझाने के लिए, प्रचार करना आवश्यक था और यह काम उपर्युक्त लोगों पर छोड़ा गया। गाँव गाँव समितियाँ बन गयीं। सार्वजनिक सेवा की भावना से ओतप्रोत युवा वृद्ध नर-नारियों सभीने उसे सहयोग प्रदान किया। व्यापक प्रचार आरम्भ हुआ इस बात का कि जनता अपने आप उठे और उनकी सहायता करे जो उसके उद्धार के लिए काम में लगे थे। सड़कों के निर्माण में और पुलों, बाँधों, नहरों आदि के बनाने में किसानों की अपार भीड़ योग देने लगी।

शीघ्र ही ग्रामोद्धार-समितियाँ बन गयीं। गाँवों की सफाई और शिक्षा के सिवा कृषि की उन्नति के तरीके भी किसानों को समझाये जाने लगे। सरकार की ओर से उत्तम बीज बोने के लिए दिये जाने लगे। सड़कों का बड़ा निर्माण हुआ। सन् १९२७ ई० में चीन में केवल १५ हजार मिलीमीटर लम्बी सड़कें थीं। सन् १९३७ के आरम्भ में यही सड़कें १ लाख किलोमीटर से अधिक हो गयी थीं। हजारों मील लम्बी नयी सड़कें बन गयीं। उन्नत खेती के लिए

प्रदर्शनकारी फार्मों की स्थापना होने लगी। महिलाओं की शिक्षा का प्रचार किया गया। घर-गृहस्थी बच्चों के पालन पोषण, रोगियों की सेवा शुश्रुषा के साथ साथ उन्हें पढ़ने लिखने की भी शिक्षा दी जाने लगी। न जाने कितने पुलों, बाँधों और नहरों का निर्माण हुआ। टेलिफोन के तार और बेतार के तारों का जाल-सा बिछ गया। जनता ने इन सब कार्यों में सहयोग प्रदान करके देश की काया पलट दी। सिंचाई नदियों से आवागमन तथा पानी से बिजली पैदा करने के अनेक केन्द्रों का निर्माण किया गया। किसानों की सहयोग समितियों ने चीन में बड़ा काम किया। उनमें समूह भावना उत्पन्न करने में स्वावलम्बन तथा परस्पर सहायता प्रदान करने की आदत डालने में संस्थाओं ने कमाल कर दिया। किसानों के कर्ज की समस्या तो उसी ने हल कर डाली। सरकार की ओर से १० से २० चीनी डालर तक किसानों को कर्ज दिया जाने लगा। सरकार ने पहले ही वर्ष १ करोड़ चीनी डालर सहयोग समितियों को कर्ज बाँटने के लिए दिये। फिर तो ये धीरे धीरे अपने पैरों पर खड़ी होने लगीं।

च्यांगकैशेक के इन कार्यों में उनकी पत्नी श्रीमती 'मेलिंग सुङ्ग' ने असाधारण योग दिया। पाठकों को यह जान कर आश्चर्य होगा कि इस आन्दोलन का सूत्रपात यद्यपि जनरलेसिमो ने किया पर उसके संचालन और सगठन का सारा बोझ 'मदाम च्यांग' ने स्वयम् उठा लिया। वे वस्तुतः अपने प्रिय पति की शक्ति हैं। उन्होंने अपने व्यक्तित्व अपनी परिश्रमशीलता तथा देश के प्रति अपने अपरिमित अनुराग के द्वारा सारे देश में तथा सरकारी कर्मचारियों में जैसे नयी जान ही डाल दी है। वे गाँवों में जातीं, साधारण किसानों से मिलती-जुलतीं उनके साथ उठती-बैठतीं और उन्हें जागृत कर देती हैं। देश की जनता ने उन्हें जैसे अपना समझा, अपनी इष्ट देवी माना और उनकी आज्ञा में चलने में अपने को कृतकृत्य समझा। उन्होंने इस सम्बन्ध में जो बड़ा भारी काम किया वह था ईसाई मिशनरियों की सहायता प्राप्त करना। चीन में मिशनरियों ने पहले भी विधायक कार्य किया था पर 'मदाम' ने उन्हें चुनौती दी कि उनका यह काम है कि वे अपनी उपयोगिता सिद्ध करें। अब तक चीन की जनता यह समझती रही है कि इन धर्म प्रचारकों ने धर्म के साथ-साथ चीन के सिर पर विदेशियों का शोषण



च्याङ्ई शेक श्रीमती मेलिङ्-सुङ् (मदाम च्याङ्ग ई शक) के साथ

भी डालने में सहायता दी है। आज ये मिशनरी सिद्ध करें कि वे वस्तुतः मानव-समाज के सेवक हैं। उनका धर्म जिस सेवा और प्रेम का उपदेश करता है उसका सजीव प्रमाण उपस्थित करने का समय आगया है। श्रीमती मेलिङ्ग की अपील का पादरियों पर बड़ा प्रभाव हुआ है। इसीलिए हम यह पाते हैं कि चीन के 'नवजीवन निर्माण' में उन्होंने बड़ी सहायता की।

इन आन्दोलनों का सूत्रपात करके च्याङ्ग शेक ने अपनी मातृ-भूमि के दर्शनों की इच्छा से देश के एक कोने से दूसरे कोने तक यात्रा करने का सकल्प किया। इस यात्रा में उनके कई लक्ष्य थे। नव जीवन-आन्दोलन तथा आर्थिक पुनर्निर्माण की प्रगति देखनी थी। साथ ही वे विविध स्थानों में स्वयम् जाकर उसे प्रोत्साहन प्रदान करना चाहते थे। इसके सिवा उनका इरादा यह भी था कि केन्द्रीय सरकार का सम्बन्ध सुदूर प्रान्तों से अधिकाधिक घनिष्ठ रूप में स्थापित हो जाय। आश्चर्य की बात है कि अब तक किसी चीनी शासक ने देश के सब प्रान्तों की यात्रा कभी नहीं की थी। न किसी सम्राट ने और न किसी सैनिक सामन्त अथवा सेनापति ने ऐसा विचार किया था। चीन में यात्रा करना सरल काम भी नहीं है। इसके विशाल भू-प्रदेश में [illegible] के साधनों का [illegible] अभाव था और सब पर्वतों, गहरी नदियों तथा बीहड़ वनों को पार करना इतना दुष्कर था कि कोई इच्छा करके भी यात्रा नहीं कर सकता था। सुदूर प्रान्तों की यात्रा में तो आने के जो साधन थे वे महीनों में निश्चित स्थान तक पहुँचाते थे। पर च्याङ्ग ने नये आधुनिक साधन का प्रयोग किया। उन्होंने आकाशमार्ग से यात्रा की। [illegible] के सुदूर प्रान्तों में [illegible] चले गये। उत्तर पश्चिम के शेन्सी और कान्सू प्रान्तों तक, देश के प्रायः सभी प्रान्तों में जेच्वान, केंग्वाङ और यूनान तथा [illegible] वायुयान द्वारा तूफानी यात्रा की। इस यात्रा में 'मदाम च्याङ्ग' भी उनके साथ थीं।

जनरलेसिमो जहाँ जाते वहाँ उनका अपूर्व स्वागत होता। [illegible] जनता उनके दर्शनों को उमड़ पड़ती। नगर सजाये जाते और [illegible] सम्मान में प्रदर्शन होते। जनरलेसिमो [illegible] की [illegible] समाओं में भाषण करते, विविध वर्गों के [illegible] से [illegible] गाँवों में जाकर वहाँ की स्थिति देखते। [illegible] प्रान्तों के [illegible]

और उनकी आवश्यकताओं को व्यक्तिगत रूप से उन्हें समझने का मौका मिलता। इस प्रकार केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारों का सम्बन्ध स्थापित हुआ तथा सुदूर प्रदेश की जनता को चीन की एकराष्ट्रीयता का ज्ञान हुआ। च्याङ्ग की इस अभूतपूर्व यात्रा ने उन्हें लोकप्रिय बना दिया। केन्द्रीय सरकार के नियन्त्रण तथा निरीक्षण से दूर अगम्य प्रान्तों की स्थिति बहुधा बिगड़ी ही रहा करती थी। छोटे बड़े सरकारी कर्मचारी साधारण जनता को दबाकर उनसे रुपये ऐंठते शासन प्रबन्ध निकम्मा होता और तरह तरह की भ्रष्टता फैली होती। च्याङ्ग ने एकाएक इन प्रान्तों में आकाश से अवतरण करके दूरी की बाधा मिटा दी। प्रान्तों की भ्रष्टता दूर होने लगी जनता का असन्तोष मिटने लगा। कुछ सप्ताहों में उन्होंने वायुयान द्वारा करीब ७ हजार मील की यात्रा पूरी की और वस्तुतः समस्त चीन को एक सूत्र में बाँध दिया।

तभी से यह भी स्पष्ट हो गया कि चीन के लिए नभ-मार्ग और तमाम रास्तों से अपेक्षाकृत अधिक उपयुक्त और सरल तथा आवश्यक है। यही कारण है कि तभी से चीन ने इस साधन को क्रमशः उन्नत और परिपुष्ट बनाने की सतत चेष्टा की है। दस वर्ष पूर्व चीन में वायुयानों तथा उनके उड़ने के मार्ग का कहीं नाम निशान तक नहीं था। परन्तु सन १९३७ ई० के आरम्भ से चीन में वायुयान का आश्चर्यजनक प्रयोग होने लगा था। शङ्घाई, हाङ्काउ, चेङतू, पेपिङ्ग, काङ्ग्तुङ्ग और सिक्याङ्ग के बीच नभ मार्ग से बराबर गमनागमन होने लगा था। 'चाइना नेशनल एविएशन कम्पनी' उन बहुत सी कम्पनियों में एक है जिसने वायुयानों द्वारा यात्रियों की यात्रा का प्रबन्ध किया है। इस कम्पनी के वायुयानों ने जहाँ सन् १९२९ ई० में एक वर्ष में केवल ३५१ यात्रियों की यात्रा करायी उसी ने सन् १९३५ ई० में १० हजार ३०४ यात्रियों को नभ मार्ग का उपयोग कराया। यह एक उदाहरण भी उस उन्नति का द्योतक है जो इस दिशा में हुई। चीन में विमान चालन सम्बन्धी शिक्षा का प्रचार करने के लिए 'सेन्ट्रल एवियेशन एकाडेमी' की स्थापना हुई। इसका उद्घाटन स्वयम् च्याङ्ग ने सन् १९३६ ई० में हाङ्चाउ में किया था। च्याङ्ग ने विमान चालकता में इतना रस लिया और उसकी उन्नति के लिए इतनी

चेष्टा की कि सन् १९३६ ई० के अक्टूबर में जब सारे चीन में उनका पचासवाँ जन्म दिवस बड़ी धूम-धाम से राष्ट्रीय समारोह के रूप में मनाया गया तो देश की जनता ने उनके सम्मान में तथा उनके प्रति अपना प्रेम प्रकट करने के लिए चन्दा करके एक सौ से अधिक विमान खरीद कर उन्हें भेंट किये। च्याङ ने राष्ट्र के इस प्रेम को नम्रता और कृतज्ञता पूर्वक शिरोधार्य किया और ये विमान केन्द्रीय सरकार की सम्पत्ति हो गये। १० वर्षों में विमान सञ्चालन तथा उड़ान की देशव्यापी शिक्षा के लिए चीन में पर्याप्त प्रबन्ध किया गया और देश के युवकों ने इसमें बड़ा आकर्षण और मनोयोग प्रकट किया।

इस प्रकार प्राय ७ वर्ष के अन्दर च्याङ्ग ने देश में वह कर दिखाया जो शताब्दियों में भी नहीं हुआ था। चीन के इतिहास में तो यह समय अभूतपूर्व है। नवराष्ट्र के नवजीवन का निर्माण हो रहा था, देश की काया पलट रही थी। उसकी सोयी हुई आत्मा जाग उठी थी और चीन अँगड़ाई लेकर अपने पैरों पर खड़ा हो गया था। उसने नव बल, नये उत्साह तथा नयी शक्ति के साथ कार्यक्षेत्र में प्रवेश किया था। चीन ने राष्ट्रीय एकता सम्पादित कर ली थी, उसकी रक्षा की योग्यता और शक्ति प्राप्त करने की चेष्टा की थी और अब विश्व के सभ्य राष्ट्रों में समान पद प्राप्त करने की ओर देखना आरम्भ कर दिया था। सन् १९३६ ई० में राष्ट्रीय स्वतन्त्रता दिवस के उप-लक्ष्य में भाषण करते हुए स्वयम् च्याङ्ग शेक ने गत ७ वर्षों की अपने देश की प्रगति का उल्लेख किया। आपने कहा—"जो कुछ गत वर्षों में हुआ है उस पर हम मिथ्या दम्भ प्रकट करना नहीं चाहते, क्योंकि अभी बहुत कुछ करना बाकी है। जो हुआ है उसका केवल इतना महत्त्व है कि वह सबूत है इस बात का, संकेत है चीन की उस शक्ति का, जो सिद्ध करती है कि अवसर मिलने पर चीन अपने भाग्य का निर्माण स्वयम् कर सकता है। यही अवसर हम चाहते हैं और हमें यह अवसर प्राप्त करना है। चीन को यह अवसर प्रदान करना न केवल उसके प्रति मित्रता प्रकट करना है बल्कि विश्व शान्ति के महान लक्ष्य की पूर्ति का प्रयत्न करना है, क्योंकि महान चीन तुष्ट और स्वतन्त्र होकर ... शान्ति की रक्षा के लिए प्रचण्ड साधन [illegible]

बुद्धिशील, वीर, परिश्रमी, दृढ़प्रतिज्ञ तथा चरित्रवान और अनुशासन प्रिय हैं। जापान भारत या चीन की भांति पदाघात सहन करके चुप बैठनेवाला नहीं था। वह तत्क्षण जाग गया। उसने अनुभव कर लिया कि, जगत बदल चुका है अतः उसकी भी बिना बदले गति नहीं है। उन्नीसवीं शताब्दी के चतुर्थ चरण में वहाँ क्रान्ति हुई, मेइजी राजवंश की स्थापना हुई और जापान पश्चिमी देशों की भाँति उत्पादन और रक्षा के आधुनिक वैज्ञानिक साधनों की पूजा में संलग्न हो गया। फिर तो पचास वर्ष में उसने अकल्पित उन्नति कर ली। सन् १९०४ ५, में जार के रूस से युद्ध करके उसने पहले पहल एक पश्चिमी राष्ट्र का प्रचंड पराजय प्रदान की। जिन पश्चिमी देशों ने उसे कुछ वर्ष पहले धर दबोचा था उन्हें उसने ललकारना आरम्भ किया। पश्चिम का यह शिष्य अपने गुरुओं से बढ़ गया। फिर तो सबने उसकी सत्ता स्वीकार की। सन् १९१० तक तो ब्रिटेन आदि उससे मित्रता की सन्धि करने को बाध्य हुए और जापान की गिनती दुनिया के महान राष्ट्रों में होने लगी।

इस प्रकार जापान साम्राज्यवाद में दीक्षित हुआ। पर जिस प्रकार उसने पश्चिमी गुरुओं से सभी दिशा में बाजी मार ली थी उसी प्रकार साम्राज्यवाद में भी बाजी मारी। अपने पड़ोसी चीन के प्रति उसकी कुदृष्टि आरम्भ से ही हो गयी। सन् १८९४ ९५ में ही उसने चीन को पराजित करके उसके फारमूसा द्वीप पर अधिकार स्थापित किया और कोरिया में पैर जमाया। इसके बाद वह सदा चीन पर अपनी सत्ता स्थापित करने की कोशिश करता रहा। इसका कारण भी स्पष्ट है। चीन निबल राष्ट्र था। जापान की भौगोलिक स्थिति ऐसी है कि उसे न सबल चीन वाञ्छनीय है और न निर्बल। सबल होने की अवस्था में जापान का स्वयम् चीन से ही खतरा हो सकता था। इँग्लैंड भी समुद्र में उसी प्रकार स्थित है जिस प्रकार जापान, पर युरोप के भूप्रदेश पर अनेक राष्ट्र हैं जिनकी शक्ति का सन्तुलन करके इँग्लैंड सदा सुरक्षित और प्रबल बना रहा।

पर इधर चीन के समान महाराष्ट्र है जिसकी अपनी अकेली सत्ता है। जैसे सारा युरोप हिटलर की पताका के अधीन होकर यदि एक हो जाय तो ब्रिटेन के लिए भयानक हो जायगा, ऐसे ही चीन प्रबल होकर जापान के भय का कारण होगा। इसलिए वह ...

के वे देश हुए जो अब तक औद्योगिक क्रान्ति से प्रभावित नहीं हुए थे। कृषिप्रधान, कच्चे माल के उत्पादक देश ही पूँजीवादियों के लिए आवश्यक थे। पूर्वी महाद्वीप के देश अब तक इसी श्रेणी में थे। अपनी पुरानी संस्कृति और सभ्यता का हजारों वर्षों तक उपयोग करने के बाद वे मानो क्लान्त होकर मीठी नींद में सो रहे थे। उन्हें मालूम न था कि धरातल के किसी एक कोने में नया प्रकाश और नयी शक्ति प्रादुर्भूत हुई है। फलत वह धारा जो युरोप से चलकर एक दिन समस्त एशिया को बहा ले गयी, भारत, चीन और जापान सभी उसकी चोट खाकर गिरे।

भारत और चीन तो ऐसे गिरे कि शताब्दियों तक उठ ही नहीं सके। आज भी वे उठने के लिए ही सघर्ष कर रहे हैं। पर जापान का इतिहास सौभाग्य से दूसरी दिशा में प्रवाहित हुआ। चोट उसने भी खायी पर वह दूसरों के विपरीत सँभला और सँभल कर ऐसा खड़ा हुआ कि युरोप की प्रचड शक्तियों ने उसकी सत्ता स्वीकार की। उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भिक युग में जापान में सामान्तशाही थी। जापान दुनिया से अपने को अलग रखने में शताब्दियों तक सफल रहा। एक समय था जब जापान की भूमि से किसी देश वाले को बाहर जाने की आज्ञा नहीं थी। सरकारी कानून था कि कोई इतनी बड़ी नौका न बनाये कि उसके द्वारा समुद्र का सन्तरण किया जा सके। जापानी द्वीप को छोड कर बाहर जानेवाले को मृत्यु दड दिया जाता। प्राय दो सौ वर्ष तक जापानी न दुनिया से परिचित थे और न दुनिया उन्हें जानती थी। पर युरोप और अमेरिका के सैलानी यात्रियों से जो पृथ्वी को बाजारों की खोज में छाने डाल रहे थे जापान भी अछूता न बचा। सन् १८५४ में अमेरिका का एक जल-सैनिक बेड़ा एकाएक जापानी तट पर आ धमका। उसने जापान में विशेष सुविधाओं की माँग की। जापानियों ने कभी ऐसी विशाल शक्ति को देखा भी न था। वे डरे और अमेरिका की माँग पूरी की।

अमेरिका की यह करतूत देखकर दूसरे साम्राज्यवादी भी दौड़े। उनको तो गन्ध मिलने की देरी थी। पता पाते ही कि कोई ऐसा स्थान है जहाँ व्यापार की सुविधा है रूस हालैंड, ब्रिटेन, फ्रान्स आदि सभी दौड़े और सबने धमका डराकर जापान से सुविधाएँ प्राप्त कीं। इन घटनाओं का जापानियों पर गहरा प्रभाव पड़ा। जापानियों की जाति

बुद्धिशील, धीर, परिश्रमी, दृढ़प्रतिज्ञ तथा चरित्रवान और अनुशासन-प्रिय है। जापान भारत या चीन की भाँति पदाघात सहन करके चुप बैठनेवाला नहीं था। वह तत्क्षण जाग गया। उसने अनुभव कर लिया कि जगत बदल चुका है अतः उसकी भी बिना बदले गति नहीं है। उन्नीसवीं शताब्दी के चतुर्थ चरण में वहाँ क्रान्ति हुई, मेइजी राजवंश की स्थापना हुई और जापान पश्चिमी देशों की भाँति उत्पादन और रक्षा के आधुनिक वैज्ञानिक साधनों की पूजा में संलग्न हो गया। फिर तो पचास वर्ष में उसने अकल्पित उन्नति कर ली। सन् १९०४-५, में ज़ार के रूस से युद्ध करके उसने पहले पहल एक पश्चिमी राष्ट्र को प्रचंड पराजय प्रदान की। जिन पश्चिमी देशों ने उसे कुछ वर्ष पहले धर दबोचा था उन्हें उसने ललकारना आरम्भ किया। पश्चिम का यह शिष्य अपने गुरुओं से बढ़ गया। फिर तो सबने उसकी सत्ता स्वीकार की। सन् १९१० तक तो ब्रिटेन आदि उससे मित्रता की सन्धि करने को बाध्य हुए और जापान की गिनती दुनिया के महान राष्ट्रों में होने लगी।

इस प्रकार जापान साम्राज्यवाद में दीक्षित हुआ। पर जिस प्रकार उसने पश्चिमी गुरुओं से सभी दिशा में बाजी मार ली थी उसी प्रकार साम्राज्यवाद में भी बाजी मारी। अपने पड़ोसी चीन के प्रति उसकी कुदृष्टि आरम्भ से ही हो गयी। सन् १८९४-९५ में ही उसने चीन को पराजित करके उसके फारमूसा द्वीप पर अधिकार स्थापित किया और कोरिया में पैर जमाया। इसके बाद वह सदा चीन पर अपनी सत्ता स्थापित करने की कोशिश करता रहा। इसका कारण भी स्पष्ट है। चीन निर्बल राष्ट्र था। जापान की भौगोलिक स्थिति ऐसी है कि उसे न सबल चीन वांछनीय है और न निर्बल। सबल होने की अवस्था में जापान को स्वयम् चीन से ही खतरा हो सकता था। इंग्लैंड की समुद्र में उसी प्रकार स्थिति है जिस प्रकार जापान की, पर युरोप के भूप्रदेश पर अनेक राष्ट्र हैं जिनकी शक्ति का सन्तुलन करके इंग्लैंड सदा सुरक्षित और प्रबल बना रहा।

पर इधर चीन के समान महाराष्ट्र है जिसमें अपनी अकेली सत्ता है। जैसे सारा युरोप हिटलर की पताका के अधीन होकर यदि एक हो जाय तो ब्रिटेन के लिए भयानक हो जायगा, वैसे ही चीन एक होकर जापान के भय का कारण होगा। इसलिए वह

और शक्ति-सम्पन्नता का विरोधी है। पर निर्बल चीन भी उसके लिए भयावह है। निर्बल चीन में जगत के दूसरे राष्ट्रों को प्रवेश करने का मौका मिलता है जो किसी समय जापान के लिए खतरनाक हो सकता है। सबसे बड़ी शङ्का तो रूस से ही रहती है। यदि चीन सबल होकर रूस का मित्र हो जाय या निर्बल चीन रूस के अधीन हो जाय तो जापान के लिए फिर सुख की नींद सेना हराम हो जायगा। फलत सभी दृष्टि-कोणों से जापान की इच्छा यही हो सकती थी कि वह चीन को अपने अधीन करे। चीन के समान सस्ता बाजार और उसके सदृश शोषण के योग्य स्थान कहा मिलता। हजारों मील से युरोपियन राष्ट्र आकर लूट मचावें और पड़ोस में रहकर जापान साम्राज्य-लोलुपता की शान्ति न कर पाये, यह उसे कैसे सह्य होता? फलत अति आरम्भिक काल से ही जापान चीन पर अपनी प्रभुता और नियन्त्रण की स्थापना को अपनी परराष्ट्र-नीति का मुख्य अग समझता रहा है। फिर आज तो जापान की यह साम्राज्य पिपासा यहाँ तक बढ़ गयी है कि वह न केवल चीन बल्कि सारी एशिया पर अपना प्रभुत्व जमाना चाहता है।

अब हमको समय-समय पर चीन के प्रति उसके इस भाव का प्रमाण मिलता है। जब सन् १९११ में चीन में क्रान्ति हुई तो उस समय जापान फारमूसा और कोरिया पर तो स्थापित था ही, उसने मञ्चूरिया में विस्तृत अधिकार प्राप्त कर लिये। १९१५ ई० में जब पहला महायुद्ध चल रहा था जापान ने चीन के सामने प्रसिद्ध २१ माँगें पेश कीं। इन माँगों का अर्थ यह था कि चीन के नियन्त्रण का सारा सूत्र जापान के हाथों में आ जाय। चीन में उस समय भी क्रान्ति हो रही थी फिर जिन कारणों से ये माँगें कार्यान्वित न की जा सकीं उनका उल्लेख पहले किया जा चुका है। सन् १९२७ में पुन जापान ने पैर बढ़ाया। पाठकों को स्मरण होगा कि किस प्रकार जापानी सेना ने शान्टुङ्ग प्रान्त में आकर च्याङ्काई शेक का पेकिङ्ग की ओर जाने का मार्ग अवरुद्ध कर दिया था। सन् १९३० में जापानी सेना ने सिनाङ्ग में उत्तर विजय के लिए जाती हुई चीनी सेना पर अनायास आक्रमण कर दिया। सन् १९३१ ईसवी में तो उसने सहसा मञ्चूरिया पर आक्रमण करके उसके तीन प्रान्तों पर अधिकार स्थापित कर लिया और बाद में जेहोल को भी जोड़ लिया। इन तमाम घटनाओं का वर्णन पूर्व के पृष्ठों में किया जा चुका है। ये प्रमाण हैं जापान की उस नीति के जो वह बराबर चीन के प्रति व्यवहृत करता

रहा है। ये साबित करती हैं इस बात को कि वह आरम्भ से ही चीन को अपने चरणों के नीचे रौंदने की चेष्टा में संलग्न था। मञ्चूरिया की घटना के बाद शङ्घाई में जापानी जल सेना ने चीनी सेना पर आक्रमण कर दिया। बहाना बनाया गया चार-छः जापानियों की हत्याएँ, जो चीन में फैले हुए जापान विरोधी आन्दोलन के फलस्वरूप हो गयी थीं।

चीन सरकार ने जापान की इन तमाम जबरदस्तियों को चुपचाप सहन किया। च्याङ्कई शेक की नीति यह थी कि जब तक चीन पूर्णत शक्ति सचय नहीं कर लेता और जब तक राष्ट्रीय एकता और राष्ट्रीय पुनर्जीवन का कार्य सम्पादित नहीं हो जाता, तब तक किसी बाहरी शत्रु से भिड़ना आत्मघात करने के बराबर होगा। वे जानते थे कि जापान चीन को लड़ने के लिए उभाड़ने की चेष्टा कर रहा है जिसमें उसे चीन को कुचलने का अवसर मिल जाय। च्याङ जापान के हाथों में खेल कर उसके कुचक्र में फँसने के लिए तैयार न थे। अत वे उसकी गुंडई और उद्दंडता को सहन करके अपमान का कड़ुआ घूँट पी जाने को तैयार हुए। सन् १९३३ में शङ्घाई, मञ्चूरिया आदि के झगड़े को समाप्त करते हुए चीन और जापान में अस्थायी सन्धि हुई जो 'ताङ्ग कू सन्धि' के नाम से प्रसिद्ध है। इसके बाद सन् १९३३ से लेकर सन् १९३७ तक चीन जापान का सम्बन्ध क्षेत्र बराबर बिगड़ता और इन दोनों राष्ट्रों का पारस्परिक दुर्भाव उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया—यहाँ तक चीन और जापान का बाकायदा युद्ध छिड़ गया। इन पाँच वर्षों में जापान ने उत्तरी चीन को अपनी कुटिलता और स्वार्थ-नीति तथा साम्राज्य पिपासा का आखाड़ा बना रखा था। गुप्तरूप से अथवा प्रकट भाव से उत्तरी चीन के वक्ष स्थल पर बराबर संघर्ष होते रहे। जापान की नीति यह थी कि डरा धमका तथा दबा कर, शक्ति के बल से अथवा राजनैतिक चालबाजी और कुटिलता से वह चीन को छिन्न-भिन्न कर उत्तरी भू भाग को उसी प्रकार अपने अधीन कर ले जिस प्रकार उसने मञ्चूरिया को हड़प लिया था।

नाङ्किङ्ग सरकार च्याङ्कई के नेतृत्व में यद्यपि जापान की इस दुर्नीति का सामना करती रही, पर वह अपनी दृढ़ता न बनाये रखते हुए भी युद्ध को टालने के यत्न में लगी रही। वह सम्प्रति रणालिंगन करने में देश का ... थी। जापानी सैन्यसत्तावादी

चीο

निरंकुशता तथा पशु बल का आश्रय लेकर अपने मन की करा लेना चाहते थे। नाकिंग सरकार फूओमिङताङ के नायकत्व में अस्थिर तो मुख्य चीनी जनता की शक्ति पर भरोसा करके जापान से दबते हुए भी चीन के वास्तविक स्वार्थ के विरुद्ध एक इंच भी हटने को तैयार न थी। फलतः उन गत पाँच वर्षों में जो घटनाएँ घटीं वे चीन-जापान-संघर्ष को किसी समय भविष्य में अनिवार्य बना रही थीं। उत्तरी चीन की ओर जापान की दृष्टि कई कारणों से लगी हुई थी। पहला कारण तो यह था कि चीन का यह भू भाग बड़े आर्थिक महत्त्व का था। उधर के चहार, होपई, शाङतुङ, शान्सी और सियुआन ये पाँच प्रान्त चार लाख वर्ग मील के भू प्रदेश को अपनी सीमा में रखते थे। यह क्षेत्र चीन के कुल भू क्षेत्र का दसवाँ भाग था। पीत नदी के उत्तर में फैला हुआ यह विस्तृत भूखण्ड चीन के अन्य प्रदेशों के सिवा यहीं अधिक उर्वर और प्राकृतिक सम्पत्ति से परिपूर्ण है—यद्यपि चहार और सियुआन का प्रदेश उजाड़ तथा पहाड़ियों से भरा हुआ है। इस प्रदेश में गेहूँ रुई और ऊन बहुतायत से पैदा होते हैं। चीन का ७० प्रतिशत कोयला और ८९ प्रतिशत लोहा शान्सी में ही उत्पन्न होता है। इस क्षेत्र में तेल भी प्राप्त होता है। व्यापार की दृष्टि से भी इसका बड़ा महत्त्व है। अकेले तिइनसिन से ही तट-कर में जो आय होती है वह चीन की सरकार की कुल आमदनी का एक चौथाई भाग है। नमक कर से होने वाली आय भी प्रायः इतनी ही है। इससे स्पष्ट है और आज कहा भी जाता है कि मञ्चूरिया और चीन के उत्तरी भू भाग के बिना चीन महाराष्ट्र बन ही नहीं सकता।

मञ्चूरिया और उसके तीन प्रान्त जापान के अधिकार में थे ही। मङ्गोलिया के भीतरी भाग में जापानियों ने अपने प्रचार के प्रभाव तथा मङ्गोलों से तरह तरह के वादे करके उन्हें मिला ही लिया था। ये लोग बहुत दिनों से अपनी स्वतन्त्र सत्ता की घोषणा करते फिरते थे। अब जापान की नीयत उत्तर के बाकी बचे प्रान्तों की ओर से खराब हो रही थी। यदि वह इन्हें भी अपने नियन्त्रण में कर सके तो फिर सारे उत्तरी चीन पर उसका अधिकार हो जाता था। आर्थिक कारण के सिवा एक राजनैतिक कारण भी था जिसकी पूर्ति उसकी इस योजना से हो रही थी। मङ्गोलिया के उत्तरी भाग की सीमा रूस की सीमा से मिली हुई है। सोवियेत रूस ने

मङ्गोलों की स्वतन्त्रता की आकांक्षा के प्रति सदा से सहानुभूति प्रकट की थी। फलत सन् १९३६ में उत्तरी मङ्गोलिया (जिसे बाह्य मङ्गोलिया भी कहते हैं) और सेवियेत रूस मे पारस्परिक सहायता की सन्धि हुई। चीन ने इस सन्धि का विरोध तो किया ही पर जापान तो बुरी तरह क्षुब्ध हो गया। एशिया में उसे यदि किसी शक्ति से भय है और उससे प्रतिस्पर्द्धा है तो रूस से है। रूस मङ्गोलिया की मित्रता से उत्तर चीन में रूसी प्रभाव फैलने की आशंका थी। जापान इसे सहन नहीं कर सकता था। फलत उसका प्रतिकार करना उसे आवश्यक था।

इस दृष्टि-कोण को सन्मुख रखते हुए जापान उत्तर चीन की ओर बढा। उसका इरादा यह था कि चीन और रूस के बीच जापानाधिरक्षित भू प्रदेश की रचना की जाय जो इन दोनों राष्ट्रों को पृथक रख सके। दक्षिणी मङ्गोलिया में एक कठपुतली सरकार की स्थापना करके वह रूस की उस नीति का उत्तर देना चाहता था जिसके प्रभाव में उत्तरी मङ्गोलिया पनप रहा था। उत्तरी चीन को अपने अधिकार मे करने के लिए जापानी वहाँ भी एक कठपुतली रियासत की स्थापना करने के प्रयत्न में थे और इस प्रकार उत्तर चीन की नाम मात्र की सरकार का सम्बन्ध मञ्चूकुओ से स्थापित करके न केवल उस प्रदेश का आर्थिक शोषण करना चाहते थे बल्कि जापानी प्रभाव की एक दीवार खड़ी कर देने की चेष्टा कर रहे थे। अपने राज्य की इस पूर्ति में वे किसी बाधा को उपस्थित देखने के लिए तैयार न थे। जापानी साम्राज्यवादी चीन को दबाने के लिए उसे सब ओर से असहाय बना देना चाहते थे। वे जानते थे कि चीन यदि उनके अधिकार में आ जाय अथवा उनके चंगुल मे फँसा रहे तो उनकी प्रभुता सारी एशिया पर स्थापित होगी और इस प्रकार निर्मित हुए बृहत्तर जापान का सामना करने में दुनिया की कोई भी शक्ति समर्थ न हो सकेगी। सन् १९३४ ई० में जापानी परराष्ट्र विभाग के मन्त्री श्री हिरोता ने एशिया के लिए 'एशियाई मुनरो सिद्धान्त' की घोषणा की। अमेरिका ने अमरिकना ने यह सिद्धान्त घोषित किया है कि *'दक्षिणी भूगोलार्द्ध' के मामलों में* किसी बाहरी शक्ति को हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं है। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन डाक्टर मुनरो नामक सज्जन ने किया था। अत उसका नाम 'मुनरो सिद्धान्त' पड़ा। हिरोता ने भी घोषणा की कि "पूर्वी गोलार्द्ध के भोग क्षेत्र और शान्ति के लिए जापान अपने को

निरंकुशता तथा पशु बल का आश्रय लेकर अपने मन की करा लेना चाहते थे। नाङ्किङ् सरकार कूओमिङ्ताङ्ग के नायकत्व में उपस्थित गुप्त पानी उपराष्ट्र की शक्ति पर भरोसा करके जापान से दबते हुए भी चीन के वास्तविक स्वार्थ के विरुद्ध एक इंच भी हटने को तैयार न थी। फलतः इन गत पाँच वर्षों में जो घटनाएँ घटीं वे चीन-जापान-संघर्ष को किसी समय भविष्य में अनिवार्य बना रही थीं। उत्तरी चीन की ओर जापान की कुदृष्टि कई कारणों से लगी हुई थी। पहला कारण तो यह था कि चीन का वह भू भाग बड़े आर्थिक महत्त्व का था। उधर के चहार, होपई, शान्तुङ्ग, शान्सी और सियुआन ये पाँच प्रान्त चार लाख वर्ग मील के भू प्रदेश को अपनी सीमा में रखते थे। यह क्षेत्र चीन के कुल भू क्षेत्र का दसवाँ भाग था। पीत नदी के उत्तर में फैला हुआ यह विस्तृत भूखण्ड चीन के अन्य प्रदेशों से कहीं अधिक उर्वर और प्राकृतिक सम्पत्ति से परिपूर्ण है—यद्यपि चहार और सियुआन का प्रदेश उजाड़ तथा पहाड़ियों से भरा हुआ है। इस प्रदेश में गेहूँ, रुई और ऊन बहुतायत से पैदा होती है। चीन का ७० प्रतिशत कोयला और ४९ प्रतिशत लोहा शान्सी में ही उत्पन्न होता है। इस क्षेत्र में तेल भी प्राप्त होता है। व्यापार की दृष्टि से भी इसका बड़ा महत्त्व है। अकेले तिङ्स्तिङ्ग से ही तट-कर में जो आय होती है वह चीन की चुङ्गी की कुल आमदनी का एक चौथाई भाग है। नमक कर से होने वाली आय भी प्रायः इतनी ही है। इससे स्पष्ट है और आज कहा भी जाता है कि मञ्चूरिया और चीन के उत्तरी भू भाग के बिना चीन महाराष्ट्र बन ही नहीं सकता।

मञ्चूरिया और उसके तीन प्रान्त जापान के अधिकार में थे ही। मङ्गोलिया के भीतरी भाग में जापानियों ने अपने प्रचार के प्रभाव तथा मङ्गोलों से तरह-तरह के वादे करके उन्हें मिला ही लिया था। ये लोग बहुत दिनों से अपनी स्वतन्त्र सत्ता की घोषणा करते फिरते थे। अब जापान की नीयत उत्तर के बाकी बचे प्रान्तों की ओर से खराब हो रही थी। यदि वह इन्हें भी अपने नियन्त्रण में कर सके तो फिर सारे उत्तरी चीन पर उसका अधिकार हो जाता था। आर्थिक कारण के सिवा एक राजनैतिक कारण भी था जिसकी पूर्ति उसकी इस योजना से हो रही थी। मङ्गोलिया के उत्तरी भाग की सीमा रूस की सीमा से मिली हुई है। सोवियेत रूस ने

मङ्गोलों की स्वतन्त्रता की आकांक्षा के प्रति सदा से सहानुभूति प्रकट की थी। फलत सन् १९३६ में उत्तरी मङ्गोलिया (जिसे वाह्य मङ्गोलिया भी कहते हैं) और सोवियेत रूस में पारस्परिक सहायता की सन्धि हुई। चीन ने इस संधि का विरोध तो किया ही पर जापान तो बुरी तरह क्षुब्ध हो गया। एशिया में उसे यदि किसी शक्ति से भय है और उससे प्रतिस्पर्द्धा है तो रूस से है। रूस मङ्गोलिया की मित्रता से उत्तर चीन में रूसी प्रभाव फैलने की आशंका थी। जापान इसे सहन नहीं कर सकता था। फलत उसका प्रतिकार करना उसे आवश्यक था।

इस दृष्टि-कोण को सन्मुख रखते हुए जापान उत्तर चीन की ओर बढ़ा। उसका इरादा यह था कि चीन और रूस के बीच जापानाधिरक्षित भू प्रदेश की रचना की जाय जो इन दोनों राष्ट्रों को पृथक रख सके। दक्षिणी मङ्गोलिया में एक कठपुतली सरकार की स्थापना करके वह रूस की उस नीति का उत्तर देना चाहता था जिसके प्रभाव में उत्तरी मङ्गोलिया पनप रहा था। उत्तरी चीन को अपने अधिकार में करने के लिए जापानी वहाँ भी एक कठपुतली रियासत की स्थापना करने के प्रयत्न में थे और इस प्रकार उत्तर चीन की नाम मात्र की सरकार का सम्बन्ध मञ्चूकुओ से स्थापित करके न केवल उस प्रदेश का आर्थिक शोषण करना चाहते थे बल्कि जापानी प्रभाव की एक दीवार खड़ी कर देने की चेष्टा कर रहे थे। अपने लक्ष्य की इस पूर्ति में वे किसी बाधा को उपस्थित देखने के लिए तैयार न थे। जापानी साम्राज्यवादी चीन को दबाने के लिए उसे सब ओर से असहाय बना देना चाहते थे। वे जानते थे कि चीन यदि उनके अधिकार में आ जाय अथवा उनके चंगुल में फँसा रहे तो उनकी प्रभुता सारी एशिया पर स्थापित होगी और इस प्रकार निर्मित हुए बृहत्तर जापान का सामना करने में दुनिया की कोई भी शक्ति समर्थ न हो सकेगी। सन् १९३४ इ० में जापानी परराष्ट्र विभाग के मन्त्री श्री हिरोता ने एशिया के लिए 'एशियाई मुनरो सिद्धान्त' की घोषणा की। अमरिका में अमेरिकन ने यह सिद्धान्त घोषित किया है कि 'दक्षिणी भूगोलार्द्ध' के मामलों में किसी बाहरी शक्ति को हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं है। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन डाक्टर मुनरो नामक सज्जन ने किया था। अत उनका नाम [illegible] सिद्धान्त' पड़ा। हिरोता ने भी घोषणा की कि "पूर्वी [illegible] त्र और शान्ति के लिए जापान अपने को

जिम्मेदार समझता है अतः अन्य राष्ट्र इधर से अपने हाथ खींच लें। जापान अब इधर किसी का हस्तक्षेप स्वीकार न करेगा।" यह घोषणा जापान ने उस समय की जब ग्रेट ब्रिटेन चीन को कर्ज के रूप में लम्बी रकम देने जा रहा था। जापानी साम्राज्यवादियों ने साफ साफ कह दिया कि कोई राष्ट्र यदि चीन को कर्ज देगा अथवा उसके हाथ सैन्य सम्भार बेचेगा तो जापान इसे भी उसका हस्तक्षेप समझेगा।"

उपरोक्त विवरण से पाठक जापानी कूटनीति की रूप रेखा की झलक पा गये होंगे। अस्तु इस लक्ष्य को सामने रखकर जापान ने उत्तरी चीन में विभाजन करना आरम्भ किया। पहले होपेई, शान्तुङ्ग, चाहार, शान्सी और सियुआन के पाँचों प्रान्तों के गवर्नरों से जापानी सैनिक अधिकारियों ने बातचीत आरम्भ की और उन्हें इस बात पर राजी करना चाहा कि वे पाँचों मिल कर उत्तर में अपनी स्वतन्त्र सरकार स्थापित कर लें। उन्हें विश्वास दिलाया गया कि जापान इस माँग की पूर्ति में उनकी सहायता करेगा। एक बार यह भय उत्पन्न हुआ कि जापान की यह चाल चल जायगी और चीन का विघटन ही न होगा बल्कि पाँचों प्रान्तों की स्वतन्त्र सरकारों के झीने आवरण में जापान उत्तर चीन पर अपना अधिकार स्थापित कर लेगा।

नानकिङ्ग सरकार इस स्थिति के प्रति पूरी तरह से सावधान थी। यद्यपि जापान को सफलता की आशा हो गयी थी फिर भी च्याङ्ग ने दृढ़ता से काम लेकर उस योजना को पट कर दिया। उन्होंने पाँचों प्रान्तों के गवर्नरों को आज्ञा दी कि वे जापान से बातचीत करना बन्द कर दें। यदि पहले का समय होता तो कदाचित जापान सफल हो गया होता। पर अब चीन बदल चुका था। डूॅक्टर सनयातसेन की तपस्या फलवती हो चुकी थी। चीन न केवल एक राष्ट्रीय सरकार की पताका के नीचे आ चुका था बल्कि सारे देश में देशभक्ति और राष्ट्रीय सम्मान की लहर लहरा रही थी। उत्तर के किसान, मजदूर, साधारण जनता तथा नवयुवक शिक्षित समुदाय तथा युवक सरकारी अफसर आदि सभी जापान की इस नयी कुटिल नीति के विरोधी थे। जिस समय ये बातें चल रही थीं उस समय उत्तर में जापानियों के विरुद्ध गहरे प्रदर्शन हो रहे थे।

उक्त पाँचों प्रान्तों के किसी भी गवर्नर की यह हिम्मत नहीं हुई कि वह जापानी प्रस्ताव को स्वीकार करे। अस्तु जापान की यह योजना

विफल हुई। तब जापान ने होपेई प्रान्त के पूर्वी भाग में एक गुड़िया सरकार बनाने की चेष्टा की और उसे सफलता भी मिल गयी। इस भू-भाग का 'ताङ्गकू सन्धि' के अनुसार असैनीकरण किया गया था और इङ्ग् फेङ्ग नामक व्यक्ति इन जिलों का इन्सपेक्टर और शासक नियुक्त किया गया था। यह व्यक्ति जापान के चक्कर में आ गया और इसने देश से विश्वासघात करने में संकोच नहीं किया। इन असैनीकृत प्रदेशों को मिला कर उसने अपनी स्वतन्त्रता घोषित कर दी और एक नयी सरकार स्थापित कर ली। उसकी यह हरकत देखकर होपेई और चहार के सैनिक शासक भी फिसल पड़े और उन्होंने भी स्वतन्त्रता की माँग पेश की। जापान को अब मौका मिल गया था। होपेई—चहार की सम्मिलित तथा पूर्वी होपेई के असैनीकृत प्रदेशों की दो (स्वतन्त्र) गुड़िया सरकारें बन गयीं जिन पर जापान की छत्रछाया स्थापित हुई। जापान की इस नीति से चीन में क्षोभ फैल गया। [illegible] खुल्लम खुल्ला घोषणा की कि स्थिति गम्भीर हो रही है और [illegible] जो भी अवस्था उत्पन्न होगी उसका सामना करने [illegible] है। चीनी सरकार इस मामले को अपना घरेलू प्रश्न [illegible]

साधारण अधिवेशन में भाषण करते हुए चीन के अपने देशवासियों को एक ओर और जापानी सैन्यसत्तावादियों को दूसरी ओर स्पष्ट शब्दों में उत्तर दिया। चीन की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति की समीक्षा करते हुए उन्होंने कहा "जो घटनाएँ घट रही हैं उनसे नाङ्किङ्ग-सरकार पूरी तरह परिचित है। वह जानती है कि उसे किस स्थिति में क्या करना है। उसकी परराष्ट्र नीति यह है कि वह अपने पड़ोसी तथा अन्य सब राष्ट्रों के साथ मित्रता का व्यवहार करना चाहती है। चीन विश्व की शान्ति का समर्थक और पक्षपाती है। शान्ति के लिए वह सबके साथ सहयोग करने के लिए तैयार है। पर यह सहयोग एक ही आधार पर हो सकता है। दूसरे राष्ट्रों को चीन के साथ समान पद और सम्मानपूर्ण ढंग से ही व्यवहार करना होगा। चीन राष्ट्र के अस्तित्व, उसके सम्मान तथा उसकी प्रादेशिक एकता तथा सीमा की रक्षा और अक्षुण्णता में किसी प्रकार का परिवर्तन तथा हस्तक्षेप सहन करने को तैयार नहीं है। यह सीमा है जिसके बाद वह दब नहीं सकता। जो राष्ट्र उसके इस तात्त्विक भाव का आदर करेंगे उनसे मित्रता करने के लिए वह त्याग करने को भी तैयार है। हमारा भाव इसमें स्पष्ट हो जाता है।"

च्याङ्कई के इस भाव से देश की जनता जहाँ कुछ तुष्ट हुई वहाँ जापानी सैन्यसत्तावादी बुरी तरह रुष्ट हो गये। वे खुल्लम-खुल्ला च्याङ के विरुद्ध और कूओमिङताङ्ग के प्रति आग उगलने लगे। उन्हें आभास मिल गया कि कूओमिङताङ्ग की नीति और उसकी राष्ट्रीयता उसके मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है। जापानी सैन्यसत्तावादियों ने समस्त अन्तर्राष्ट्रीय सौजन्य और सदाचार को तिलाञ्जलि देकर एक स्वतन्त्र राष्ट्र की सरकार और उसके नेता के प्रति ऐसे भाव प्रकट करना आरम्भ किये जिन पर कोई भी सभ्य देश लज्जा का अनुभव करेगा। मञ्चूरिया में जापानी सेना के सेनापति ने वक्तव्य देते हुए कहा, "जापानी सेना उत्तर चीन तक ही अपना कार्यक्षेत्र परिमित नहीं रखना चाहती बल्कि वह यह भी चाहती है कि चीनी सरकार के अध्यक्ष पद से च्याङ्कई शेक निकाल बाहर किये जायँ, उनका प्रभाव उन्मूलित कर दिया जाय और उत्तरी चीन से कूओमिङताङ्ग का सारा सम्बन्ध विच्छिन्न कर दिया जाय। चीन की सत्ता को नष्ट करनेवाले कम्यूनिस्ट नहीं बल्कि च्याङ्कई और कूओमिङताङ्ग हैं।

जापानी सेना ने निश्चय कर लिया है कि वह कूओमिङ्ताङ्ग के सारे प्रभाव को नष्ट किये बिना दम न लेगी।"

जापानी सैन्यसत्तावादियों के प्रलाप का यह एक उदाहरण है। उन कुछ वर्षों में विभिन्न जापानी नेताओं तथा समाचार पत्रों ने जितना क्षोभ प्रकट किया, कठोर शब्दों में विष का वमन किया धमकियाँ दीं और गालियाँ सुनायीं उन सबका यदि संकलन किया जाय तो एक स्वतन्त्र ग्रन्थ की रचना हो सकती है। पर इन तमाम धमकियों और घुड़कियों की परवाह किये बिना भी चीन की सरकार च्याङ्ग के नेतृत्व में दृढ़तापूर्वक अपने मार्ग पर डटी रही। उसने जापान से युद्ध टालने की चेष्टा अवश्य की पर साथ-साथ चीन के हित और उसकी सीमा तथा प्रभुसत्ता की अक्षुण्णता पर आघात करनेवाले जापानी प्रस्तावों को स्वीकार करने से सदा दृढ़तापूर्वक इनकार किया। यहाँ तक, विशेष कर सन् १९३५ और ३६ ई० में तथा सन् १९३७ ई० के आरम्भ तक अनेक बार चीन जापान की समस्या सुलझाने के लिए इन दोनों देशों के बीच सन्धि चर्चा चली। अनेक बार आरम्भ हुई और अनेक बार टूटी—बार बार जापान ने अपनी माँग मनवाने के लिए धमकियाँ दीं और भय दिखाया पर चीनी नेता ने नम्रता किन्तु दृढ़तापूर्वक ऐसी माँगों को अस्वीकार किया और ठुकराया जिनके द्वारा जापान ने चीन पर अपना नियन्त्रण स्थापित करने अथवा उसके भू प्रदेश छीनने की चेष्टा की थी।

सन् १९३९ ई० में जापान के परराष्ट्र मन्त्री श्री हिरोता ने चीन के सामने तीन बातें रखीं और उनकी स्वीकृति की माँग की।

(१) चीन में समस्त जापान विरोधी आन्दोलन का दमन किया जाय।

(२) चीन मञ्चूकूओ सरकार (जिसकी स्थापना मञ्चूरिया में की गयी थी) की सत्ता स्वीकार कर ले। और

(३) जापान, मञ्चुकूओ और चीन तीनों मिलकर पूर्व में कम्यूनिस्टों के दमन का कार्य करें।

हिरोता की इन तीनों माँगों का अर्थ स्पष्ट है। जापान अप्रत्यक्ष रूप से चीन द्वारा मञ्चूरिया-विजय को स्वीकार करा लेना चाहता था। मञ्चुकूओ सरकार की सत्ता को मान लेने का यही अर्थ होता। कम्यूनिस्टों का दमन करने के लिए जापान के सहयोग का अर्थ भी

कुछ दूसरा था। इसका मतलब यह होता कि जापानी सेना उत्तरी चीन में कम्यूनिस्टों के दमन के बहाने प्रवेश कर जाती। साम्राज्यवादी कुचक्र किस कुत्सित प्रकार से चलता है इसका एक प्रचंड उदाहरण यह भी है। इन मांगों से जापान ने चीन से वह सब करा लेना चाहा जो वह स्वयम् चाहता था। जनरलिसिमो ने साफ़ साफ़ घोषित किया, "चीन को जापान के प्रस्ताव स्वीकृत नहीं हैं। चीन अपनी भौगोलिक सीमा का कोई हेर फेर स्वीकार नहीं कर सकता और न उसे अपने देश के किसी वर्ग का दमन करने के लिए किसी की सहायता की आवश्यकता है।"

च्याङ्ग के इस रुख ने जापानियों का पारा अन्तिम सीमा तक पहुँचा दिया, पर उनके सामने केवल इस क्रोध का सामना करना ही एक काम नहीं था। दूसरी समस्या उत्तर में नये रूप में पैदा हो रही थी। उत्तर चीन में जापानी और कोरियावाले अधिकारी चुङ्गी की अवहेलना कर चोरी से माल उतार कर भीतर कर लेते थे। चुङ्गी विभाग के जो चीनी अधिकारी शिङ्गसीन तथा चिङ्गवाङ्गताउ जिले में थे उनकी आँखों में धूल झोंककर, उनकी अवहेलना करके तथा उनके कार्यों में रुकावट डाल कर उस क्षेत्र के जापानी सैनिक अधिकारी बिना तट-कर अदा किये क़ानूनों की उपेक्षा करके असाधारण मात्रा में माल उतारने और भीतर ले जाकर बेच देने लगे। पूर्वी होपेई की नाम मात्र की गुड़िया सरकार जापानी सरकार के संकेत पर इस काम में उसकी भारी सहायक हो गयी। चीन सरकार ने चीनी उद्योग धन्धों की रक्षा के लिए तट-कर की दर बढ़ा दी थी। इस कर से बच कर अपना माल बेचने के लिए जापान ने पूर्वी होपेई के मार्ग से सामान लाकर चीन के बाजारों तक को पाटना शुरू कर दिया। पहले यह माल रेल द्वारा मञ्चूकुओ से आता था पर बाद में जापानी जहाज खुल्लम-खुल्ला तट तक आते और माल उतार देते। अब तो स्थिति ऐसी हो गयी थी कि यह भी नहीं कहा जा सकता कि आँख बचाकर चोरी से माल उतारा जाता है। वास्तव में दर्जनों जापानी जहाज माल भरे हुए आते और जबरदस्ती तट का कर दिये बिना उसे उतार देते। चीनी अधिकारी इस ज़बरदस्ती और उद्दण्डता का विरोध भी करने का साहस न करते। संसार में निर्बल का न सम्मान होता है और न उसके हित तथा अधिकारों

की रक्षा हो पाती है। असहाय चीन का अपमान उसकी भूमि पर ही करना जापानियों की हिमाकत और उद्दंडता का घृणित प्रमाण था। इस सीनाजोरी की न कोई सीमा थी और न इस पर रुकावट! बहुधा जापानी चीनी रेलवे ट्रेन को कब्जे में कर लेते, चीनी यात्रियों को निकाल बाहर कर देते और अपना माल इस बुरी तरह से लाद कर तिब्स्तीक ले जाते कि रेल के डब्बे भी टूट जाते। जरा दीपक लेकर ढूँढ़िये तो सही कि कहीं इतिहास में ऐसी जबरदस्ती की कोई दूसरी मिसाल भी मिलती है। पशुता और पशु बल का ऐसा नग्न नृत्य होने लगा था!

चीनी सरकार की आय पर इसका बुरा असर होना स्वाभाविक था। प्राय २० लाख चीनी डालर प्रति सप्ताह के हिसाब से सरकारी आय में कमी होने लगी। औसतन एक वर्ष में चीनी सरकार को ५० करोड़ डालर से अधिक की हानि उठानी पड़ती। दूसरे विदेशी व्यापारी जो ईमानदारी से तट कर अदा कर रहे थे पिस उठे। वे इस प्रकार की बेईमानी से आये हुए माल की प्रतिस्पर्द्धा में कैसे टिक सकते थे? इस व्यापार के साथ-साथ जापानी अफीम और कोकीन का व्यापार भी करते थे। एक ओर नाङ्किङ्ग-सरकार इन बुराइयों का उन्मूलन करने में लगी हुई थी और दूसरी ओर जापानी जहाज, जापानी सगीनों की सरक्षकता में जापानी पताका चढ़ाते हुए ये अनर्थमूलक पदार्थ चीन में लाकर बेचते और चीनियों का न केवल शोषण करते बल्कि उनके शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक पतन के कारण बनते। वे जेहोल में अफीम की खेती करते और तिब्स्तीक आदि स्थानों की जापानी बस्ती से अफीम का वितरण होता। जापान ने चीनियों पर बम बरसा कर, लाखों नर-नारियों की हत्या करके और चीनी नगरों को ध्वस्त और बरबाद करकेमहान् पातक किया है, पर जो पाप उन्होंने अफीम और कोकीन बेच कर किया है तथा अपने स्वार्थ के लिए एक राष्ट्र का सर्वनाश इस प्रकार से करने की चेष्टा की है उसके लिए मानवता उन्हें कभी क्षमा नहीं कर सकती।

चीन सरकार ने जापान सरकार के पास अनेक विरोध पत्र भेजे और अनेक चेतावनियाँ दीं, पर किसी का कोई परिणाम नहीं हुआ। जापानी सरकार ने बदले में नाङ्किङ्ग को ही फटकार बतायी कि इस प्रकार चोरी से माल पहुँचने के लिए जिम्मेदार वह स्वयं अधिक

चीन की दवाव नीति तथा ऊँचा हट-कर है जिसमें सुधार होना चाहिए। एक बार जो लज्जा का परित्याग करके बेहयाई का बाना पहन ले वह फिर अजेय हो जाता है। जापान की इस दुर्नीति का विरोध सारे संसार में हुआ। अमेरिका तथा ब्रिटेन के समाचार पत्रों ने राष्ट्र संघ ने, सबने विरोध किया, टीका टिप्पणी की और निन्दा भी, पर किसी का कोई परिणाम नहीं हुआ। अन्त में जापान की इस नीति के फल-स्वरूप चीन में उसके विरुद्ध उग्रभाव उत्पन्न होने लगा। उत्तर में वह पैर फैलाना ही जा रहा था और चीन का अपमान, करके अपना माल बेच रहा था। रोज़ व रोज़ चीनी सरकार और नेताओं को धमकियाँ और झिड़कियाँ दी जा रही थीं तथा खुले आम गाली दी जा रही थी। चीन जिसे नव चेतना प्राप्त हुई थी, जिसमें राष्ट्रीय सम्मान का भाव जग गया था और जिसे अपनेपन का भान होने लगा था उसे इस गुंडई को सहन करना असम्भव होता जा रहा था। अब तक तो चीन लड़ पड़ा होता पर च्याङ की सहनशीलता इस स्थिति को रोके हुए थी। देश भर में आन्दोलन हो रहा था च्याङ की नीति का विरोध किया जा रहा था और जापान का मुकाबला करने की माँग की जा रही थी, पर च्याङ सबका, सामना करते हुए भी बड़ी कठिनाई से अपनी नीति पर अटल रहे। वे अच्छी प्रकार समझ चुके थे कि चीन को समय चाहिए अपने को तैयार कर लेने का। बिना पूरी तैयारी के आवेश में आकर प्रबल शत्रु से भिड़ जाना व्यर्थ ही मौत का आलिंगन करना होगा। यद्यपि वे जापान से लड़ाई बचा रहे थे, पर बराबर देश में उस मुहूर्त की आशा में तैयारी करते जा रहे थे जब उन्हें महान् बलिदान के लिए राष्ट्र का आवाहन करना होगा।

परन्तु च्याङ्ग की चेष्टा के बावजूद जनता अपना रोष संवरण न कर सकी। फल स्वरूप चेङ्गतू, पाखोई, हाङ्काउ तथा शङ्घाई आदि में कतिपय उपद्रव हो गये जिनमें कुछ जापानी मारे गये। इन घटनाओं ने जापान को अवसर प्रदान कर दिया। नयी नयी माँगों की लम्बी सूची लेकर जापानी दूत चीनी सरकार के सामने उपस्थित हुआ। चीनी परराष्ट्रमन्त्री चाङचुङ्ग तथा तत्कालीन जापानी दूत शिगेरू कावागुई के बीच संधि वार्ता आरम्भ हो गयी। बातचीत यद्यपि आरम्भ हुई थी उपर्युक्त घटनाओं के सम्बन्ध में पर जापान की ओर से जो माँग रखी गयी वे मानो चीन का गला घोट देने के

इरादे से उपस्थित की गयी थीं। पाठक जापान की माँगों को स्वयम् देखें और विचार करें कि उनका उन घटनाओं से क्या सम्बन्ध था जिनके विषय में बात-चीत आरम्भ हुई थी।

जापान की ओर से ये सात माँगें रखी गयीं।

(१) जापान विरोधी तमाम आन्दोलनों का दमन, कुओमिंग ताङ्ग के कार्यों पर रुकावट, जापान विरोधी तमाम संस्थाओं की समाप्ति तथा चीनी स्कूलों में पढ़ायी जानेवाली पुस्तकों में से जापान विरोधी वाक्यों तथा भावों का सर्वथा लोप।

(२) उत्तर के पाँचों प्रान्तों की स्वतन्त्रता।

(३) जापानी माल पर लगायी गयी चुङ्गी की दर में कमी।

(४) चीन में जापानी सैनिक परामर्शदाताओं की नियुक्ति।

(५) कम्यूनिस्टों के विरुद्ध सहयोग।

(६) फुकोओका और शङ्घाई के बीच सीधा हवाई मार्ग।

(७) चेङ्गतू में चीनी दूतावास की स्थापना।

इन माँगों पर टीका टिप्पणी करना व्यर्थ है क्योंकि वे स्वयम् ही स्पष्ट हैं। ऐसी शर्तें कदाचित् किसी पराजित देश के सामने ही रखी जा सकती हैं।

चीनी परराष्ट्र मन्त्री ने इन प्रस्तावों को देखकर इन पर विचार भी करने से इनकार कर दिया और इनके स्थान पर चीन की ओर से भी अपनी माँगें रख दीं। उसने माँग की कि

(१) सन् १९३२ का शङ्घाई का समझौता रद्द किया जाय।

(२) ताङ्गकू का समझौता भी रद्द हो।

(३) पूर्वी होपेई में जो सरकार बनायी गयी है वह भंग कर दी जाय।

(४) मञ्चूकुओ की जो सेना चहार में उपस्थित है वह हटा ली जाय तथा

(५) चोरी से माल बेचने की कार्रवाई बन्द की जाय।

चीन की माँग सुन कर जापानी दूत तो आगबबूला हो गया। उसने स्वप्न में भी यह आशा नहीं की थी। अपने बल के दम्भ में अन्धा हुआ जापान चीन की इस हिम्मत को कैसे बरदाश्त करता? उसे यह ज्ञान नहीं था कि आज का चीन इतना बदल चुका है कि वह जापानी भेड़िये का कान पकड़ कर घुमाने

के लिए तैयारी कर रहा है। फलत यह सम्मेलन बिना किसी निर्णय पर पहुँचे भंग हो गया। जापानी दूत ने च्याङ्काई से भेंट की पर उन्होंने भी अँगूठा दिखा दिया। च्याङ्काई शेक ने जापानी दूत से कहा, "जापान चीन के परराष्ट्र मन्त्री से ही बात करे क्योंकि यह विभाग उन्हीं का है और परराष्ट्र मन्त्री का मत चीनी-सरकार का मत है।" उन्होंने दूत को सचेत करते हुए यहाँ तक कह दिया, 'चीन से बात करनेवालों को समझ लेना चाहिए कि वह समान पद और समान अधिकार के आधार पर ही किसी से बात कर सकता है।" इसके बाद फिर और अनेक सम्मेलन चीनी परराष्ट्र मन्त्री तथा जापानी प्रतिनिधियों के बीच हुए, पर उनका कोई सन्तोषप्रद परिणाम न निकला। अन्त में जापान ने और सब बातें छोड़कर चीन को कम्यूनिस्टों का दमन करने में जापान का साथ देने के लिए राजी करना चाहा। जापान की ओर से कहा गया कि उत्तर चीन में कम्यूनिस्ट दमन के कार्य में चीन और जापान की सेना मिल कर काम करे, पर चीन ने इसे भी स्वीकार नहीं किया। इसी समय जर्मनी और जापान में रूस विरोधी समझौता भी हुआ जो "ऐन्टीकोमिन्टर्न पैक्ट" के नाम से प्रसिद्ध है। च्याङ्काई जानते थे कि जापान का इरादा यह है कि वह उत्तर चीन में इसी बहाने अपनी सेना उतार दे। वे यह भी जानते थे कि जापान की रूस विरोधी नीति में उसका साथ देकर चीन को अनायास रूस से लड़ाई में फँसना पड़ सकता है। इसके लिए वे बिलकुल तैयार न थे। वे देख रहे थे कि जापान रूस से अपने सहज विरोधी भाव के फलस्वरूप लड़ने को बाध्य है और अपना यह युद्ध वह चीन के द्वारा लड़ना चाहता है। अस्तु च्याङ्क किसी प्रकार भी जापान के हाथों में खेल कर स्वयम् अपने देश की हानि करने और जापान की गोटी लाल होने देने के लिए तैयार न थे।

सन् १९३६ ई० के अन्तिम दो महीनों में चीन पर जापान ने बड़ा दबाव डाला। तरह तरह की धमकियाँ दी गयीं पर चीन-सरकार अपने स्थान पर डटी रही। उसने इन तमाम धमकियों की उपेक्षा करके यह घोषणा कर दी कि चीन ऐसे किसी प्रस्ताव की ओर आँख उठा कर भी देखने को तैयार नहीं है जो उसके आत्म-सम्मान के विरुद्ध है। जापानी पत्रों और राजनीतिज्ञों तथा सरकारी अधिकारियों

ने साफ-साफ कहना आरम्भ किया कि अब नाङ्किङ्ग से किसी प्रकार की बात चीत न की जायगी। जापान जो करना चाहता है अपने बल के भरोसे स्वयम् करेगा। जापान मे तत्कालीन सरकार के विरुद्ध बड़ा हो हल्ला मचा। इस समय श्री हिरोता जापान के प्रधान मन्त्री थे और श्री अरोता परराष्ट्र-मन्त्री। जापान का सैनिक वग सदा प्रबल रहा है। उसके भय से वहाँ की सरकार बराबर काँपती रहती है। यह वर्ग बहुधा सरकारों को बनाता और बिगाड़ता रहा है। चीन में मुँह की खाने के कारण वह वर्ग क्षुब्ध हो उठा और अपनी सरकार को ही दोष देने लगा। उसका कहना था कि सरकारी दुर्बलता के कारण ही चीन जापान की उपेक्षा और अपमान करने में समर्थ हुआ है। जापान में तथा चीन स्थित जापानी सैनिक अधिकारियों ने यह भी कहना आरम्भ किया कि चीन मे याङ्गची के किनारे-किनारे युद्ध की भीषण और व्यापक तैयारी हो रही है। जापान सरकार को अब अपने ही सैन्यसत्तावादी भूतों से अपनी रक्षा करना कठिन हो गया। चीन के सामने ठोकर खाने का परिमार्जन करने तथा सैन्यसत्तावादियों को तुष्ट करने के लिए उन्होंने सिङ्गताउ में बिना किसी सूचना के जल सेना का एक बेड़ा ला खड़ा किया। उधर उत्तर में सुइयुआन की सीमा पर मञ्चूकूओ और मङ्गोलिया की सेनां लाकर खड़ी कर दी। यह सेना जापानी अधिकारियों द्वारा सचालित थी। एक दिन सहसा इस सेना ने आक्रमण कर दिया और पेइलिङ्म्याउ नामक स्थान पर अधिकार कर लिया। जापानी टैंक और वायुयानों की सरक्षकता म इस सेना ने चीनी सेना पर भी आघात किया।

जापान की इस नृशस कार्रवाई ने सारे चीन में आग लगा दी। जनरलेसिमो स्वयम् युद्ध स्थल पर पहुँचे और सुइयुआन की रक्षा का प्रबन्ध किया। उन्होंने घोषणा की—"चीनी सरकार उत्तरी प्रान्तों की रक्षा के लिए पूरी तरह तैयार है। चीनी सेना ने मञ्चूकूओ की सेना पर प्रत्याक्रमण करके पेइलिङ्म्याउ पर पुन अधिकार स्थापित कर लिया है।" नाङ्किङ्ग-सरकार ने भी इस घटना के सम्बन्ध में वक्तव्य देते हुए कहा, "जापानी चीनी जनता के दृढ़ सकल्प का महत्त्व नहीं समझ रहे हैं। वह समय बीत चुका है जब विदेशी शक्तियाँ चीन को मन-माना नाच नचा सकती थीं। अब यदि उसकी चेष्टा की जायगी तो

ऐसे लोगों को केन्द्रीय चीनी सरकार के मुकाबिले में आना पड़ेगा और इसका अर्थ होगा युद्ध।'

यद्यपि यह मामला सम्प्रति यहीं रुक गया, पर इस घाव से यह निश्चय हो गया कि चीन और जापान के बीच की खाई पट नहीं सकती। च्याङ्ग ने मुक्त-पूर्वों तथा मङ्गोलों से भी यह अपील की—"विदेशी प्रभाव से मुक्त होकर देश के सम्मान की रक्षा कीजिये। आप किस सहारे को लेकर और क्यों अपने ही भाइयों पर आक्रमण करते हैं? क्या आप चाहते हैं कि आपकी भावी सन्तति सदा के लिए गुलामी के बन्धन में बँध जाय?"

सम्प्रति सुइयुआङ्ग की सीमा पर हुआ संघर्ष शान्त हो गया, पर इसने चीन के हृदय में आग लगा दी। इसी का परिणाम था कि दस महीने बाद भयानक चीन-जापान-युद्ध छिड़ा जो इन पंक्तियों के लिखने के समय भी चल रहा है। इस घटना के बाद चीन में जो हुआ वह मनोरंजक है, उसने उसके इतिहास की धारा ही बदल दी।

सोलहवाँ अध्याय

जनरलेसिमो का अपहरण

जापान की दुर्नीति और च्याङ्ग की सरकार की सहन-शीलता ने चीनी जनता को क्षुब्ध कर दिया। राष्ट्र का जितना ही अपमान जापानियों द्वारा होता उतना ही देश में जापान विरोधी भाव उत्पन्न होता जाता। जनता आवेश में आकर माँग करती कि जापान का सामना किया जाय, पर उसकी इस माँग के उत्तर में चीनी सरकार शान्ति और धैर्य बनाये रखने का ही उपदेश देती। सुइयुआङ्ग की सीमा पर जो संघर्ष हुए और जापानियों ने अपना जो स्वरूप दिखाया वह अब चीनियों के लिए सहन करना असम्भव हो गया। चीनी चाहते थे कि नाङ्किङ्ग सरकार युद्ध की घोषणा कर दे। विशेष कर वे नवयुवक जिनके हृदय में देशभक्ति की आग थी और बहुत से सैनिक तथा मुल्की अधिकारी जो राष्ट्रीय सम्मान की रक्षा के लिए सर्वस्व की बाजी लगाने को तैयार थे यह आशा करने लगे थे कि

मुझ्युअङ्ग की घटना के बाद च्याङ्कई शेक जापान के विरुद्ध जरूर युद्ध घोषणा कर देंगे। वे निराश हुए जब उन्होंने देखा कि सरकार इस जहर को भी पी गयी। अब देश में धीरे धीरे यह भाव उग्र होने लगा कि च्याङ्कई जापानियों से लड़ना नहीं चाहते। लोगों की धारणा होने लगी कि जापान के विरुद्ध शस्त्र उठाने में सबसे बड़े बाधक स्वयम् च्याङ्कई शेक हैं और जब तक ये सरकार के सर्वेसर्वा बने रहेंगे तब तक विदेशियों द्वारा इसी प्रकार चीन का अपमान होता रहेगा।

च्याङ्कई के जो विरोधी थे उनके मन में ही यह शंका होती तो कोई बात न थी। काङ्तुङ्ग के राजनीतिज्ञों ने तो वर्षों पहले च्याङ पर यही दोष लगा कर बगावत तक कर दी थी। चीन के कम्यूनिस्ट तो आरम्भ से ही कह रहे थे कि च्याङ्कई अवसरवादी है, अपना सैनिक अधिनायक तन्त्र स्थापित करना चाहता है और अपनी महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति में जापान से सहायता लेने में भी संकोच न करेगा। वे कहते थे कि स्थिर-स्वार्थ वर्गों की प्रभुता की स्थापना के लिए तथा अपनी व्यक्तिगत शक्ति की सुदृढ़ता के लिए जन भाव को कुचल कर यह व्यक्ति जापान से मित्रता करना चाहता है। पर इन लोगों के सिवा अब उन लोगों के मन में भी सन्देह होने लगा जो च्याङ्कई के साथी और मित्र थे। उन्हें डर हुआ कि च्याङ कम्यूनिस्टों के विरुद्ध अपने हृदयगत भावों के कारण कहीं जापान से मित्रता न कर लें। वातावरण इस अफवाह से परिप्लावित था कि जापान उत्तर में कम्यूनिस्टों का दमन करने के लिए चीन के साथ सहयोग करने और उसे प्राप्त करने को दबाव डाल रहा है। चीनी कम्यूनिस्ट क्याङ्सी से निकाले गये थे और वे उत्तर-पश्चिम में जाकर शेन्सी प्रान्त में अपना अड्डा जमा कर बैठ गये थे। च्याङ का प्रयत्न अब भी जारी था और वे अब भी उस स्थान से उन्हें निकालने की कोशिश कर रहे थे। उनका यह प्रयत्न और यह भाव एक ओर था और दूसरी ओर जापान प्रस्ताव कर रहा था कि कम्यूनिस्टों को उत्तर से निकालने में वह चीन को सहायता प्रदान करना चाहता है।

इसी समय जापान जर्मनी का 'कोमिन्टर्न विरोधी' समझौता प्रकाशित हुआ। जापान की ओर से चीन पर यह दबाव भी पड़ने लगा था कि वह ... [illegible] इस गुट में सम्मिलित हो जाय। इ

वायुमंडल में च्याङ के कुछ मित्रों को भी सन्देह होने लगा कि वह कहीं जापान से मित्रता न कर ले। उत्तर में जहाँ कम्यूनिस्टों के विरुद्ध अब तक नाङ्किङ्ग सरकार की कार्रवाई जारी थी उन लोगों ने विशेष रूप से प्रचार करना आरम्भ किया कि च्याङ अन्त में जापान की बात मान लेंगे। समय ही ऐसा था और स्थिति भी ऐसी उत्पन्न हो गयी थी कि च्याङ के उन मित्रों के हृदय में भी, जो अब तक उनके साथी पर अपने अन्तस्थल से जापान के विरोधी थे, गहरा सन्देह उत्पन्न हुआ और वे च्याङ की नीति के सम्बन्ध में विचार करने लगे। चाङ्सुइ ल्याङ्ग का नाम पाठक भूले न होंगे। यह युवक च्याङसोलिङ्ग का पुत्र था जो अपने पिता की मृत्यु के बाद मञ्चूरिया का शासक बना। जापान ने इसे अपनी ओर उसी समय मिलाने का यत्न किया था जब वह गद्दी पर बैठा था, पर चाङ्सुइ देशभक्त था और चीन की राष्ट्रीयता का एकान्त उपासक। उसने मञ्चूरिया के शासन का भार ग्रहण करने के बाद ही नाङ्किङ्ग-सरकार की अधीनता स्वीकार करने की घोषणा की थी। यद्यपि जापान ने उसे कड़ी धमकी दी और राष्ट्रीय सरकार की परिधि से बाहर रखने के लिए बहकाने की भी चेष्टा की, लोभ दिखाया, और साम, दाम, दण्ड तथा भेद सबका आश्रय लिया पर चाङसुइ ने नाङ्किङ्ग सरकार की अधीनता स्वीकार कर ली और मञ्चूरिया पर क्रान्ति पताका फहरा दी। तब से चाङसुइ बराबर च्याङ्कई का साथी रहा। च्याङ्कई से उनका बड़ा प्रेम था। उत्तर विजय में तथा विद्रोहियों और कम्यूनिस्टों के दबाने में वह सदा उनके साथ रहा। जब च्याङ्कई के बहुत से पुराने साथियों और मित्रों ने उनका संग छोड़ा, जब बहुतों ने उनका खुल्लम खुल्ला विरोध किया और उनके विरुद्ध शस्त्र तक उठाये उस समय भी चाङ्सुइ सच्चे और ईमानदार साथी की भाँति च्याङ्कइ के साथ बना रहा और उनकी सहायता करता रहा। च्याङ्कई का भी उस पर अटूट विश्वास था।

ऐसे समय जब विश्वासपात्र साथियों पर ही भरोसा किया जा सकता था च्याङ्कइ ने चाङ्सुइल्याङ्ग को उत्तर में कम्यूनिस्टों के दमन के लिए भेजा था। गत कई महीनों से चाङ्सुइ वहीं था। उत्तर में रह कर उसने जापानियों की दृढ़ता, क्रूरता तथा उनके द्वारा अपने राष्ट्र का अपमान होते अच्छी तरह देखा था। इन घटनाओं का उस पर बड़ा प्रभाव हुआ और उसकी नीति परिवर्तित हुई। वह इस मत का

था कि जापान से अब युद्ध-घोषणा करनी चाहिए और देश के सम्मान की रक्षा के लिए सर्वस्व बलि कर देना चाहिए। अपनी यह राय उसने कई बार च्याङ्काई शेक के सम्मुख भी उपस्थित की, पर उन्होंने जो मार्ग पकड़ा था उससे वे टस से मस न हुए। इसी समय वातावरण में यह भाव भर उठा कि कम्यूनिस्टों को दबाने में जापान सहायता देना चाहता है, अतः च्याङ्काई उससे मित्रता कर ले सकते हैं। चाङ्सुइ के मन में भी च्याङ्काई के विरुद्ध यह सन्देह भली भाँति पैठ गया। उत्तर में कम्यूनिस्ट नेताओं से भी उसकी बातचीत हुई और वह उनसे प्रभावित हुआ। कम्यूनिस्टों के इस मत का उस पर काफी असर हुआ कि च्याङ्काई यदि जापान विरोधी भाव का दमन करने का कारण तथा जापान से युद्ध घोषणा में बाधक हो रहे हैं तो उन्हें भाग से हटा देने में ही देश का कल्याण है। चाङ्सुइ और कम्यूनिस्टों के इस मिलन का प्रभाव उत्तर में उस आन्दोलन तथा प्रबन्ध पर हुआ जो च्याङ्काई ने कम्यूनिस्ट-दमन के लिए किया था। धीरे धीरे इसकी खबरें च्याङ्काई तक पहुँचने लगीं। उन्हें यह मालूम हुआ कि चाङ्सुइ कम्यूनिस्टों से मिल गये हैं और सरकारी नीति के विरुद्ध उनके प्रति विशेष उदारता का व्यवहार कर रहे हैं। च्याङ्काई के लिए यह सम्भव नहीं था कि वे अपने परम प्रिय मित्र, विश्वासपात्र साथी तथा अपने अनन्य भक्त पर सहसा अविश्वास करते। उत्तर में कम्यूनिस्टों की बल वृद्धि का समाचार पाकर वे सशंक अवश्य हुए, पर चाङ्सुइ पर सहसा अविश्वास करने के लिए तैयार नहीं थे। अन्त में च्याङ्काई ने स्वयम् उत्तर जाने की और वहाँ चाङ्सुइ से मिल कर सीधी-सीधी बात चीत कर लेने की ठानी। फलतः वे सन् १९३६ के दिसम्बर में लोयाङ्ग पहुँचे।

जनरलेसिमो की यह यात्रा विमान द्वारा हुई थी। वे अपने साथ अधिक आदमी भी नहीं ले गये थे और न उन्होंने अपनी रक्षा का विशेष प्रबन्ध ही किया था। च्याङ प्रकृत्या साहसी व्यक्ति हैं। उन्हें अपने ऊपर अटूट विश्वास है और अपने व्यक्तित्व के गौरव से वे मानो अनजानों में भी परिचित हैं। फलतः वे अकेले ही लोयाङ्ग गये और वहाँ चाङ्सुइ को बुलाकर उससे बातें कीं। बातचीत के सिलसिले में चाङ्सुइ ने पुनः अपना मत प्रकट किया और कम्यूनिस्टों के सम्बन्ध में सरकार की नीति में परिवर्तन की आवश्यकता बतायी। उसका कहना था कि ... आ गया है जब कम्यूनिस्टों को मिलाने

और देश की सभी शक्तियों को एकत्र करके जापान का सामना करने की चेष्टा करनी चाहिए। च्याङ चाङसुइ की इस बात से सन्तुष्ट नहीं हुए और उन्होंने ऐसा भाव प्रकट किया जिसका अर्थ यह था कि आवश्यक होगा तो वे स्वयम् उत्तर में भी कम्यूनिस्ट-दमन के कार्य का भार उठा लेंगे। च्याङ ने लोयाङ्ग से स्याङ्ग जहाँ उत्तरी पश्चिमी सेना का प्रधान कार्यालय था, जाने की इच्छा प्रकट की। कुछ समय बाद वे स्याङफू पहुँचे। वहाँ उन्होंने चाङसुइ के अन्य अधीनस्थ कर्मचारियों से भेंट की और सबके मन में इस भाव का दर्शन पाया कि वे सरकार की कम्यूनिस्ट विरोधी नीति के पक्षपाती नहीं हैं और उसमें परिवर्तन की इच्छा रखते हैं।

च्याङ दृढ़प्रतिज्ञ व्यक्ति हैं और अपने निर्णय की उपयोगिता तथा सार्थकता में कभी भी सन्देह नहीं करते। इस प्रकार की हठधर्मी बहुधा बड़े आदमियों में पायी भी जाती है, क्योंकि उन्हें यदि अपने सिद्धान्त और निश्चय में ऐसा कट्टर विश्वास न हो तो वे कभी सफलतापूर्वक उन कामों को पूरा ही न कर सकें जिन्हें सम्पादन करके ही बड़े आदमी बड़े आदमी होते हैं। अस्तु उन्होंने निश्चय कर लिया कि चाङसुइ के स्थान पर किसी दूसरे को उत्तर में कम्यूनिस्ट-दमन के काम के लिए उत्तरदायी बनाना चाहिए। अपने निश्चय को उन्होंने तुरन्त कार्यान्वित भी किया और च्याङ-तिङ-वेङ नामक सज्जन को उत्तर पूर्वी कम्यूनिस्ट विरोधी सेना का अध्यक्ष नियुक्त कर दिया। इस नियुक्ति के बाद यह अफवाह फैली कि चाङसुइ ल्याङ्ग अपने पद से हटाये जानेवाले हैं, उनकी सेना विघटित की जानेवाली है और उन्हें कहीं दूर भेज दिया जायगा। दूसरी ओर च्याङ के यहाँ भी यह समाचार पहुँचने लगा कि स्याङ्ग में उनका ठहरना निरापद नहीं है और उन्हें शीघ्र ही हट जाना चाहिए। परन्तु च्याङ का इन अफवाहों पर विश्वास नहीं हुआ। उन्हें अपने ऊपर भरोसा था और अपने मित्र चाङसुइ में विश्वास।

प्राय दस दिन तक वे स्याङ्ग में टिके रहे और प्रतिदिन चाङसुइ से भेंट होती रही। एक दिन रात को च्याङ ने कुछ सैनिक अफसरों को भोज दिया। इसमें चाङसुइ भी आमन्त्रित थे और वे आये भी तथा अन्त तक रहे। भोज की समाप्ति के बाद च्याङ अपने दफ्तर में बैठ कर बड़ी रात तक काम करते रहे कम्यूनिस्टों के दमन के लिए उन्होंने इस रोज विस्तृत योजना बनायी। उनका मतलब यह था कि उस योजना

के अनुकूल आदेश दिये जायँ तो उन्हें आशा थी कि महीने डेढ़ महीने में वे कम्यूनिस्टों का पूरा दमन कर लेंगे। आधी रात तक काम करने के बाद वे विश्राम के लिए शयन-कक्ष में गये। इधर तो यह हो रहा था और उधर दूसरी ही घटना घटनेवाली थी। चाङसुङ तथा उनके साथियों ने इन कुछ दिनों में भली भाँति समझ लिया कि च्याङ्काई के मत में परिवर्तन करना असम्भव है। उनका विश्वास था कि च्याङ जो नीति ग्रहण किये हुए हैं वह गलत है और देश हित के लिए विघातक है। अब तक उन्हें आशा थी कि वे उन्हें समझा बुझा कर राजी कर लेंगे, पर जब उन्हें निश्चय हो गया कि यह असम्भव है तो उन्होंने दूसरा कदम उठाने की तैयारी की।

यह जो कदम उठाया गया उसे जनरलेसिमो च्याङ की प्रकाशित डायरी के उद्धरण से ही सुनिये।

डायरी में लिखा है—"प्रात:काल साढ़े पाँच बजे जब नित्य कार्य और व्यायाम आदि करके मैं खाली हुआ और अपने कपड़े पहन रहा था तो मुझे अपने वास-स्थान के दरवाजे के सामने से बन्दूक दगने की आवाज आती सुनायी पड़ी। मैंने अपने एक अंगरक्षक को यह देखने के लिए भेजा कि मामला क्या है। पर काफी समय बीत गया और वह लौट कर नहीं आया। तब मैंने दूसरे दो आदमियों को भेजा। वे गये ही थे कि गोलियों के लगातार दगने की आवाज आने लगी। मैंने सोचा कि सम्भवतः उत्तर पूर्वी सेना ने विद्रोह कर दिया है। शेन्सी की इस यात्रा में मेरे साथ केवल मेरे खास अंगरक्षक और बीस सैनिक आये थे। मेरे वास स्थान के बाहर सुरक्षा के लिए जो सैनिक तैनात किये गये थे वे चाङसुङ के आदमी थे। इतने में लेफ्टिनेन्ट माओ ने मेरे पास सूचना भेजी कि सेना में बगावत हो गयी है और बागी मेरे मकान के दूसरे द्वार तक घुस आये हैं। पता लगाने पर मुझे मालूम हुआ कि माओ मेरे अंगरक्षकों को लेकर दरवाजे की रक्षा कर रहे हैं। माओ ने मुझसे यह प्रार्थना की थी कि इस मकान के पीछे के रास्ते से निकल जाऊँ। पूछने पर मुझे यह भी मालूम हो गया कि बागी उत्तर पूर्वी सेना के ही सैनिक हैं।"

"मैं दो अंग-रक्षकों के साथ मकान के पीछे की दीवाल लाँघ गया। दीवाल दस ही फ़ीट ऊँची थी। इसलिए उस पर चढ़ जाने में तो दिक्कत नहीं हुई पर दीवाल के नीचे ३० फ़ीट गहरा खड्ड था। अँधेरे के

और देश की सभी शक्तियों को एकत्र करके जापान का सामना करने की चेष्टा करनी चाहिए। च्यांग चाङसुइ की इस बात से सन्तुष्ट नहीं हुए और उन्होंने ऐसा भाव प्रकट किया जिसका अर्थ यह था कि आवश्यक होगा तो वे स्वयम् उत्तर में भी कम्यूनिस्ट दमन के कार्य का भार उठा लेंगे। च्यांग ने लोयांग से स्याङ्ग जहाँ उत्तरी पश्चिमी सेना का प्रधान कार्यालय था, जाने की इच्छा प्रकट की। कुछ समय बाद वे स्याङफू पहुँचे। वहाँ उन्होंने चाङसुइ के अन्य अधीनस्थ कर्मचारियों से भेंट की और सबके मन में इस भाव का दर्शन पाया कि वे सरकार की कम्यूनिस्ट विद्रोही नीति के पक्षपाती नहीं हैं और उसमें परिवर्तन की इच्छा रखते हैं।

च्यांग दृढ़प्रतिज्ञ व्यक्ति हैं और अपने निर्णय की उपयोगिता तथा सार्थकता में कभी भी सन्देह नहीं करते। इस प्रकार की हठधर्मी बहुधा बड़े आदमियों में पायी भी जाती है, क्योंकि उन्हें यदि अपने सिद्धान्त और निश्चय में ऐसा कट्टर विश्वास न हो तो वे कभी सफलतापूर्वक उन कामों को पूरा ही न कर सकें जिन्हें सम्पादन करके ही बड़े आदमी बड़े आदमी होते हैं। अस्तु उन्होंने निश्चय कर लिया कि चाङसुइ के स्थान पर किसी दूसरे को उत्तर में कम्यूनिस्ट दमन के काम के लिए उत्तरदायी बनाना चाहिए। अपने निश्चय को उन्होंने तुरन्त कार्यान्वित भी किया और च्याङ-तिङ-वेङ नामक सज्जन को उत्तर पूर्वी कम्यूनिस्ट विरोधी सेना का अध्यक्ष नियुक्त कर दिया। इस नियुक्ति के बाद यह अफवाह फैली कि चाङसुइ स्याङ्ग अपने पद से हटाये जानेवाले हैं, उनकी सेना विघटित की जानेवाली है और उन्हें कहीं दूर भेज दिया जायगा। दूसरी ओर च्यांग के यहाँ भी यह समाचार पहुँचने लगा कि स्याङ्ग में उनका ठहरना निरापद नहीं है और उन्हें शीघ्र ही हट जाना चाहिए। परन्तु च्यांग को इन अफवाहों पर विश्वास नहीं हुआ। उन्हें अपने ऊपर भरोसा था और अपने मित्र चाङसुइ में विश्वास।

प्रायः दस दिन तक वे स्याङ्ग में टिके रहे और प्रतिदिन चाङसुइ से भेंट होती रही। एक दिन रात को च्यांग ने कुछ सैनिक अफसरों को भोज दिया। इसमें चाङसुइ भी आमन्त्रित थे और वे आये भी तथा अन्त तक रहे। भोज की समाप्ति के बाद च्यांग अपने दफ्तर में बैठ कर बड़ी रात तक काम करते रहे। कम्यूनिस्टों के दमन के लिए उन्होंने उस रोज विस्तृत योजना बनायी। उनका मतलब यह था कि उस योजना

के अनुकूल आदेश दिये जायँ तो उन्हें आशा थी कि महीने डेढ़ महीने में वे कम्युनिस्टों का पूरा दमन कर लेंगे। आधी रात तक काम करने के बाद वे विश्राम के लिए शयन-कक्ष में गये। इधर तो यह हो रहा था और उधर दूसरी ही घटना घटनेवाली थी। चाङ्सुइ तथा उनके साथियों ने इन कुछ दिनों में भली भाँति समझ लिया कि च्याङ्कई के मत में परिवर्तन करना असम्भव है। उनका विश्वास था कि च्याङ्क जो नीति ग्रहण किये हुए हैं वह गलत है और देश हित के लिए विघातक है। अब तक उन्हें आशा थी कि वे उन्हें समझा बुझा कर राजी कर लेंगे, पर जब उन्हें निश्चय हो गया कि यह असम्भव है तो उन्होंने दूसरा कदम उठाने की तैयारी की।

यह जो कदम उठाया गया उसे जनरलिसिमो च्याङ्ग की प्रकाशित डायरी के उद्धरण से ही सुनिये।

डायरी में लिखा है—"प्रातःकाल साढ़े पाँच बजे जब नित्य कार्य और व्यायाम आदि करके मैं खाली हुआ और अपने कपड़े पहन रहा था तो मुझे अपने वास-स्थान के दरवाजे के सामने से बन्दूक दगने की आवाज आती सुनायी पड़ी। मैंने अपने एक अंगरक्षक को यह देखने के लिए भेजा कि मामला क्या है। पर काफी समय बीत गया और वह लौट कर नहीं आया। तब मैंने दूसरे दो आदमियों को भेजा। वे गये ही थे कि गोलियों के लगातार दगने की आवाज आने लगी। मैंने सोचा कि सम्भवतः उत्तर पूर्वी सेना ने विद्रोह कर दिया है। शेन्सी की इस यात्रा में मेरे साथ केवल मेरे खास अंगरक्षक और बीस सैनिक आये थे। मेरे वास स्थान के बाहर सुरक्षा के लिए जो सैनिक तैनात किये गये थे वे चाङसुइ के आदमी थे। इतने में लेफ्टिनेन्ट माओ ने मेरे पास सूचना भेजी कि सेना में बगावत हो गयी है और बागी मेरे मकान के दूसरे द्वार तक घुस आये हैं। पता लगाने पर मुझे मालूम हुआ कि माओ मेरे अंगरक्षकों को लेकर दरवाजे की रक्षा कर रहे हैं। माओ ने मुझसे यह प्रार्थना की थी कि इस मकान के पीछे के रास्ते से निकल जाऊँ। पूछने पर मुझे यह भी मालूम हो गया कि बागी उत्तर पूर्वी सेना के ही सैनिक हैं।"

"मैं दो अंग-रक्षकों के साथ मकान के पीछे की दीवाल लाँघ गया। दीवाल दस ही फीट ऊँची थी। इसलिए उस पर चढ़ जाने में तो दिक्कत नहीं पर दीवाल के नीचे ३० फीट गहरा खड्ड था। अँधेरे के

सरकारी अधिकारियों में नये सेनापति भी थे जिन्हें च्याङ ने चाङ्सुइ के स्थान पर नियुक्त किया था।

च्याङ की गिरफ्तारी की भयसनीदार खबर दूसरे ही दिन नाङ्किङ्ग पहुँच गयी। यह घटना किसलिए घटी और विद्रोहियों का इरादा क्या था इसका स्पष्टीकरण उस तार से भी हो जाता है जिसे चाङ्सुइल्याङ्ग तथा अन्य बारह व्यक्तियों ने अपने हस्ताक्षरों से नाङ्किङ्ग सरकार के पास भेजा था। इस तार में कहा गया था—"उत्तर चीन के पूर्वी प्रान्तों पर विदेशियों ने अपना अधिकार स्थापित कर लिया है। अब जापान और जर्मनी ने परस्पर मित्रता स्थापित कर और चीनी राष्ट्र की बलि चढ़ा कर अपनी गोटी लाल करने की चेष्टा की है। यह संकेत है कोमिन्टर्न विरोधी समझौते की ओर जिससे यह आशंका की जा रही थी कि रूस से लड़ने के लिए जापान और जर्मनी चीन को यामाना बना कर आगे लाना चाहते हैं। इस स्थिति में केन्द्रीय सरकार को चाहिए था कि वह च्याङ्ग की घटना से लाभ उठाती और देश की जनता को जापान का सामना करने के लिए प्रोत्साहित करती। पर इसके विपरीत उसने पुनः जापान से समझौता करने और उसे पुष्ट करने की चेष्टा की है। देश में क्रान्ति की सफलता के लिए हम जो च्याङ्ग्ई के सशस्त्र साथी रहे हैं इस समय अकर्मण्य नहीं बैठ सकते। हम उन्हें अपनी अन्तिम सलाह देने के लिए बाध्य हैं। उनकी रक्षा की पूरी जिम्मेदारी हम अपने ऊपर उठाते हैं। हम उनसे अनुरोध करेंगे कि वे अपनी नीति पर पुनः विचार करें।"

इस तार में उन्होंने उस अष्टांग कार्यक्रम का भी उल्लेख किया जिसकी पूर्ति की वे माँग कर रहे थे। वह कार्यक्रम यह था—

(१) नाङ्किङ्ग-सरकार का इस प्रकार पुनर्संगठन हो कि देश की उन विविध पार्टियों और गुटों का जो राष्ट्र की रक्षा का उत्तरदायित्व लें, शासन भार उठाने के लिए सम्मिलित किया जा सके।

(२) गृह विग्रह की तुरन्त समाप्ति की जाय।

(३) देशभक्त सार्वजनिक नेताओं को जो जेल में बन्द हैं तुरन्त रिहा किया जाय।

(४) शङ्घाइ म गिरफ्तार किये गये नेताओं को मुक्ति दी जाय।

(५) जनता को मिलने-जुलने और सभा करने की स्वतन्त्रता प्रदान की जाय।

(६) जनवर्ग के देशभक्तिपूर्ण आन्दोलनों के विकास का पूरा मौका दिया जाय।

(७) डाक्टर सुन के वसीयतनामे को ईमानदारी से कार्यान्वित किया जाय और

(८) राष्ट्र-रक्षा के लिए समस्त दलों, गुटों तथा संस्थाओं का सम्मिलित सम्मेलन तत्काल बुलाया जाय।

इस कार्यक्रम का उल्लेख करते हुए तार में यह भी कहा गया था—"उत्तर पश्चिम की जनता तथा हम लोगों की यही नीति है जो राष्ट्र-रक्षा की भावना से प्रेरित होकर अपनायी गयी है। हमें आशा है कि सरकार जनता का आदर करके हमारी प्रार्थना स्वीकार करेगी और इस राष्ट्र की मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करेगी। हमारा विश्वास है कि न्याय हमारे साथ है। हमने जो किया है वह उचित है या अनुचित इस पर निर्णय प्रदान करने का काम हम देश की जनता पर ही छोड़ते हैं।"

जनरलेसिमो की गिरफ्तारी और अपहरण का समाचार देश में एक कोने से दूसरे कोने तक विद्युत की तेजी से फैल गया। सारा राष्ट्र सन्न हो स्तब्ध रह गया। किसे आशा थी कि च्याङ्कई, जिसके नाम से विद्रोही काँपते थे और जिसने अपने बाहुबल से चीनी धरातल को क्रान्ति पताका के अधीन कर लिया था इस प्रकार सहसा अपहृत कर लिया जायगा? च्याङ ने अपने जीवन में चाहे और जो गलती की हो पर एक बात में उनका कोई सानी नहीं था। उन्होंने अपने व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए कभी देश के साथ दगा नहीं की थी। समय और परिस्थितियों ने उन्हें नव जागृत चीनी राष्ट्र का हृदय बना लिया था। वे आज असहाय और निर्दलित चीन की शक्ति के एक मात्र स्तम्भ थे। अपनी मुक्ति के लिए पथ पर भटकते फिरते उस साधनहीन महा प्रदेश की आँखों की वे ज्योति थे। वे वह महान प्रकाश-पुंज थे जिसकी आभा के सहारे चीन उन्नत पथाभिमुख होने की आशा कर रहा था। आज उनका गुम हो जाना देश की सारी आशा, उसकी आकांक्षा, उसकी शक्ति और उसकी ज्योति के लुप्त हो जाने के समान था।

यही कारण था कि इस समाचार मात्र से राष्ट्र का हृदय धक् से हो गया। ऐसा मालूम हुआ मानो किसी ने जलते हुए दीपक को बुझा

दिया। चारों ओर सहसा अन्धकार हो गया। सभी परेशान हो उठे। त्राहि त्राहि मच गयी। जिधर देखिये उधर से ही आशङ्का और त्रास की पुकार उठने लगी। सारे देश में चिन्ता, क्षोभ और खेद की घनघोर घटा छा गयी। समाचार पत्रों ने, सार्वजनिक संस्थाओं ने, व्यापारियों और किसानों ने अध्यापक और पुरोहितों ने छात्रों और नवयुवकों ने एक स्वर से जनरलेसिमो की रिहाई की माँग पेश की। बौद्ध मन्दिरों, ईसाई गिरजाघरों तथा मुसलमानों मसजिदों में प्रार्थनाएँ की जाने लगीं कि जनरलेसिमो सकुशल वापस आवें। विद्यार्थियों ने सभाएँ कीं और आँसू बहाते हुए उनके छुटकारे की माँग की। सारे देश में भावुकता की ऐसी नदी उमड़ पड़ी कि उसमें सभी बहने लगे। खेल-तमाशे बन्द हो गये, सिनेमा थियेटर रुक गये, मानो राष्ट्र का आनन्द ही लुप्त हो गया। सब जन सब की जिह्वा पर एक ही प्रश्न था, हृदय में एक ही भावना थी—'च्याङ्काई का क्या हुआ और वे कुशल से तो हैं?'

इधर जापानियों ने अफवाह उड़ा दी कि जनरलसिमो च्याङ्काई शेक की हत्या कर दी गयी। इस समाचार के फैलते ही देश में हृदयविदारक निराशा छा गयी। उत्तरी नेताओं के पास गाड़िया तार भेजे गये थे जिनमें जनरलेसिमो की कुशलता के सम्बन्ध में जिज्ञासा और उनकी रिहाई की माँग पेश की गयी थी। चीन में ही यह दशा रही हो सो बात नहीं है। युरोप, अमेरिका और ब्रिटेन के समाचार पत्रों ने च्याङ्काइ के सम्बन्ध में गहरी उत्कंठा प्रकट की। जगत का मत आज उनका समर्थक था। सब एक स्वर से चिल्ला रहे थे कि चीन का कल्याण करने की शक्ति च्याङ्काई में ही है और कोई उनसे कितना भी मतभेद क्यों न रखे उसे मानना पड़ेगा कि आप चीन में वही एक मात्र व्यक्ति हैं जो उस देश की नैया को खेकर पार लगाने की क्षमता रखते हैं। विद्रोहियों ने च्याङ्काइ को १५ दिन तक ही बन्धन में रखा। इस बीच में उन्हें ज्ञात हो गया कि सारा राष्ट्र आज जनरलेसिमो के पीछे है। सारे देश में उत्तरी नेताओं के विरुद्ध ऐसा घोर विरोधी जनभाव फैला और च्याङ्काइ शेक के सम्बन्ध में लोगों की उत्कंठा इतनी शीघ्र हुई कि स्वयम् चाङ्सुइ ल्याङ्ग को जनरलसिमो के कुशल क्षेम की घोषणा करनी पड़ी।

चाङ्सुइ ने नाङ्किङ्ग में डाक्टर कुङ्ग को तार भेजा जिसमें उन्होंने लिखा था—"मैं जनरलसिमो से आज भी उसी प्रकार स्नेह करता हूँ जैसे

आठ वर्ष पूर्व करता था। मैं उनकी कुशल की पूरी जिम्मेदारी अपने ऊपर उठाता हूँ। सम्भव नहीं है कि उनका बाल भी बाँका हो सके।" चाङसुइ ल्याङ्ग ने च्याङ्कई शेक की पत्नी को भी तार भेजा जिसमें लिखा--"अपने सारे जीवन में मैं कभी जनरलेसिमो के प्रति कृतघ्न सिद्ध नहीं हुआ। मैं ईश्वर के सामने इसकी शपथ खाकर कह सकता हूँ। आप कृपा कर जनरलेसिमो के सम्बन्ध में किसी प्रकार की आशंका तनिक भी न करें।" चाङसुइ ने इन सन्देशों से जापानी अफवाह का खंडन किया और देश की उत्सुकता तथा चिन्ता दूर करने की चेष्टा की। इन सन्देशों से ज्ञात होता है कि उनके हृदय में च्याङ्कई के प्रति वही श्रद्धा आज भी थी जो पहले थी। उन्होंने जो कुछ किया था वह देशभक्ति की भावना से देश हित के लिए आवश्यक समझ कर किया था। कोई नहीं कह सकता कि चाङसुइ के मन में किसी प्रकार की व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा थी अथवा वे अपना कोई निजी स्वार्थ साधन करना चाहते थे। भले ही उनका कार्य किसी की समझ में गलत हो और उनकी नीति दोषपूर्ण समझी जाय पर उनकी नीयत के सम्बन्ध में कोई किसी प्रकार का सन्देह नहीं कर सकता। आगे की घटनाएँ स्वयम् ही इस बात के अकाट्य प्रमाण हैं।

इधर जनरलेसिमो गिरफ्तार कर लिये गये और उधर देश भर में दुश्चिन्ता फैल गयी। नानकिङ्ग-सरकार तो क्षुब्ध हो उठी। उसके लिए यह सम्भव नहीं था कि इस घटना से आमूल कम्पित न हो उठती। जिस क्षण उसे च्याङ्कई की गिरफ्तारी का समाचार मिला उसी समय केन्द्रीय शासन-समिति की स्थायी समिति तथा केन्द्रीय राजनैतिक कमेटी की बैठकें बुलायी गयीं। इन समितियों ने सर्वसम्मति से निर्णय किया कि शासन समिति के अध्यक्ष डाक्टर कुङ नियुक्त किये जायँ, और राष्ट्रीय सैनिक समिति के सदस्यों की संख्या बढ़ा दी जाय जो तत्काल सेना को विद्रोहियों का दमन करने के लिए सचालित करे। चाङसुइल्याङ्ग समस्त सरकारी पदों से बर्खास्त किये जायँ, उनकी गिरफ्तारी की जाय और राष्ट्रीय सैनिक समिति के सम्मुख दंड के लिए उपस्थित किये जायँ। उनकी सेना पर केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण तुरन्त स्थापित किया जाय। देश की इस उत्कंठित तथा उत्तेजित स्थिति में तीन दिन बीत गये पर च्याङ की मुक्ति का कोई समाचार नहीं मिला। तीन दिन बीतते-बीतते १९० सैनिक अफसरों ने केन्द्रीय

सरकार के पास प्रार्थनापत्र भेजा कि सरकार यथाशीघ्र च्याङ के विरुद्ध सैन्य संचालन करे और उन्हें अपने नेता की मुक्ति के लिए अपने प्राणों को होम देने की आज्ञा तुरन्त मिल जाय। डाक्टर कुङ्ग और 'मदाम च्याङ्कईशेक' इस समय शङ्घाई में थीं। इस घटना का समाचार पाते ही ये दोनों तुरन्त नानकिङ्ग पहुँच गये। केन्द्रीय सरकार ने घोषणा की कि परराष्ट्र नीति तथा आन्तरिक नीति के सम्बन्ध में जनरलेसिमो ने जो मार्ग निर्धारित किया था वह उसी पर चलती रहेगी और उसमें किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं किया जायगा। उसने प्रान्तीय शासकों को आदेश दिया कि वे पूर्ववत् अपने अपने काम में लगे रहें और जनरलेसिमो के अपहरण से किसी प्रकार परेशान न हों। सरकार इस सम्बन्ध में जो भी सम्भव होगा वह सब करेगी और विद्रोहियों से किसी प्रकार का समझौता कदापि न करेगी।

श्रीमती मेलिङ्ग भी जो अब 'मदाम च्याङ्कईशेक' के नाम से संसार प्रसिद्ध हैं, नानकिङ्ग पहुँचीं। उनके हृदय की क्या दशा रही होगी इसका अनुमान सरस हृदय पाठक स्वयम् कर सकते हैं। वे परम देशभक्त महिला हैं। चीन के अभ्युत्थान में उन्होंने जो असाधारण काम किया है वह उनकी देशभक्ति और अलौकिक प्रतिभा का द्योतक है। च्याङ दम्पति आज संसार भर में प्रसिद्ध हैं क्योंकि विशाल चीनी राष्ट्र के नव निर्माण का असम्भव काम इन दोनों प्राणियों ने मिल कर सम्भव कर डाला है। अपने सहज देशभक्ति पूर्ण हृदय के कारण वे च्याङ की गिरफ्तारी से अवश्य परेशान हुईं। उनका विश्वास था कि चीन की नैया का कर्णधार आज सिवा च्याङ के दूसरा कोई हो नहीं सकता। चीन के चालीस करोड़ नर-नारियों के वे ही भाग्य विधाता थे। फलतः जन्मभूमि की साधारण सेविका और हितैषिणी के नाते वे च्याङ्कई की रक्षा करना आवश्यक समझती थीं। पर उनके इस विवेक का सम्बन्ध उनके मस्तिष्क से था। इसके सिवा कुछ और भी था जिसका सम्बन्ध सीधे उनके हृदय से था। च्याङ उनके जीवन-साथी थे। वे उनके सौभाग्य के चिह्न, उनके नारी-जीवन के आभूषण उनके कोमल भावों के आधार और उनके हृत्तन्त्री के मधुर स्वर थे। प्रेम विह्वला नारी अपने प्रियतम की मंगल कामना किस भाव-लहरी में बहती हुई करती है इसका वर्णन जड़ लेखनी क्या करेगी? उनके हृदय का एक-एक स्पन्दन आज च्याङ के लिए

आलोड़ित था। चीन की पुरातन पूर्वी सभ्यता ने नारी के लिए पति के रूप में जिन आदर्शों को प्रतिष्ठित किया है, प्रियतम के लिए जिस भावुकता का सृजन किया है तथा स्त्री हृदय प्रकृति द्वारा प्रदत्त जिन नैसर्गिक लालसाओं के आधार पर कोमल अनुभूति प्राप्त करता है उन सबने आज सम्मिलित रूप से इस महिला के अन्तस्तल में मूतमान होकर उसे आन्दोलित कर दिया। देश के नेता और शासक च्याङ्काई की रक्षा के लिए ही नहीं बल्कि अपने प्राणाधार च्याङ्ग की रक्षा के लिए भी वह मानो दामिनी की भाँति गतिशीला हो गयीं। उनका रोम रोम अपने जीवन-सहचर के इस संकट काल में उनके सान्निध्य के लिए तड़प उठा। वे नाङ्किङ्ग पहुँचते ही स्याङ्फू जाने के लिए उत्सुक हो उठीं। इस सम्बन्ध में उन्होंने चाङ्गसुइल्याङ्ग को तार भी दिया जिसका उत्तर भी उन्हें मिला। चाङ ने लिखा था कि आपका स्याङ्ग आना अभिनन्दनीय होगा।

नाङ्किङ्ग-सरकार ने जब पाँच दिन तक जनरलेसिमो के छुटकारे की कोई सूचना न पायी तो उसने विद्रोहियों के विरुद्ध सैनिक कार्रवाई करने का निश्चय किया। १६ दिसम्बर को कूओमिङ्तांग की राजनीति की केन्द्रीय आवश्यक बैठक ने निश्चय किया कि विद्रोहियों के दमन के लिए तत्काल सेना रवाना की जाय और उसके सेनापति होङ्ङ्चिङ्ग नियुक्त किये जायें। दूसरे ही दिन सरकारी सेना ने विद्रोहियों के गढ़ को घेरना आरम्भ कर दिया। सरकारी विमान स्याङ्फू पर उड़ने लगे और विद्रोहियों की सेना के समाचार लाकर देने लगे। सरकार ने विद्रोहियों को दबाने के लिए अपना यन्त्र अवश्य सचालित कर दिया पर इससे लोगों की आशंका और अधिक बढ़ गयी। भय होने लगा कि विद्रोही कहीं अपने कैदी को लेकर और सुदूर न भाग जायें। कुछ को तो यह भी डर हुआ कि कहीं सरकार की इस नीति से जनरलेसिमो के प्राण पर न आ बने। सरकार की कार्रवाई के कारण 'मदाम च्याङ्काई-शेक' विशेष रूप से त्रस्त हुई। उन्होंने जोर लगाया और प्रार्थना की कि 'कुछ' दिनों के लिए सरकार दंडात्मक सैनिक कार्रवाई रोक दे। इसमें उन्हें सफलता भी मिली। सरकारी सेना यद्यपि स्याङ्ग को घेरे खड़ी रही और सरकारी विमान भी उड़ते रहे पर विद्रोहियों पर बाजाब्ता आक्रमण नहीं किया गया। इधर उधर कुछ साधारण मुठभेड़ें तो हो गयीं पर व्यापक युद्ध आरम्भ नहीं

किया गया। सरकार ने लोगों के दबाव से मुहलत देने का निश्चय कर लिया।

इधर ये तैयारियाँ हो रही थीं और उधर रयाङ की 'न्यू-बिल्डिंग' में जनरलेसिमो बन्दी जीवन बिता रहे थे। चाङ्गसु इल्याङ्ग ने उन्हें कैद कर लिया था और अब वे इस दुःखद घटना का अन्त शीघ्र ही करना चाहते थे। च्याङ्ग के प्रति उनकी श्रद्धा पूर्ववत् अटूट बनी रही। उन्होंने उन्हें किसी व्यक्तिगत विरोध अथवा स्वार्थ के वशीभूत होकर गिरफ्तार नहीं किया था। जीवन में ऐसे अवसर आते हैं जब अपने पूज्यजनों तथा प्रियजनों का विरोध भी करना पड़ता है। देश के लिए अथवा सिद्धान्तों के लिए ऐसे लोगों के विरुद्ध शस्त्र भी उठाना पड़ता है जिनके इशारे पर हम अपना प्राण तक विसर्जन करने को तैयार रहते हैं। जीवन के ये मुहूर्त कष्टकर होते हैं। मनुष्य को महान निर्णय करना पड़ता है। सबमें सामर्थ्य नहीं होती कि वह ऐसे निर्णय कर सकें। इसकी शक्ति उन्हीं में होती है जिनका चरित्र महान होता है जो व्यक्तित्व को समष्टि के हित में लय कर देते हैं और जो उत्कर्ष आदर्शों के लिए अपनी प्रिय से प्रिय वस्तु की बलि चढ़ाने की आशा रखते हैं। ऐसे ही लोग इस प्रकार आगे बढ़ने में समर्थ होते हैं। चाङ्गसुइ ल्याङ्ग ने दुरम्य धारा पर अपना चरण रखा था। उनके सामने वह क्षण उपस्थित हो गया था जब उन्हें जनरलेसिमो को कैद करने का निर्णय करना पड़ा। वे उनके प्रति अपने स्नेह की बलि चढ़ाने को तैयार हो गये क्योंकि चीन के करोड़ों नर नारियों का हित उन्हें इसी में दिखायी दे रहा था। राष्ट्र का सम्मान, उसकी स्वतन्त्रता और उसकी एकता के लिए उन्हें यह मूल्य प्रदान करना था। वे अनुभव कर रहे थे कि च्याङ्कई की नीति देशहित के विरुद्ध है और उसे बदलवाने के लिए चाङ्गसुइ ने उन्हें गिरफ्तार किया। इससे उन्होंने अपने उज्ज्वल चरित्र ही का परिचय दिया था।

पर उनका कोई इरादा उन्हें शारीरिक हानि पहुँचाने का न था। यदि चाङ्गसुइ के हृदय में व्यक्तिगत स्वार्थ होता तो वे सहज ही च्याङ्कई के शरीर को समाप्त करके अपनी सत्ता स्थापित कर सकते थे। पर वे बढ़े थे देश के लिए और जानते थे कि देश का हित च्याङ्क के जीवन की रक्षा में ही है। उन्हें पता था कि चीन में आज च्याङ्क

ही ऐसे व्यक्ति हैं जो सारे राष्ट्र को एक सूत्र में आबद्ध रख सकते हैं। उन्हें ज्ञात था कि जापान के विरुद्ध राष्ट्रीय युद्ध का संचालन सफलतापूर्वक करने की सामर्थ्य भी सिवाय च्याङ्ग के आज और किसी में नहीं है। हाँ, उनकी समझ में आवश्यकता इतनी ही थी कि किसी प्रकार जनरलेसिमो पर इतना दबाव डाला जा सके कि वे अपनी नीति में परिवर्तन करें। इसके लिए पहले उन्होंने उन्हें समझाया बुझाया और जब देखा कि इससे काम नहीं चलता तो उन्हें कैद कर लिया और धमकाकर काम लेना चाहा। इस विद्रोह का इतना ही रहस्य था।

इसीलिए वे बार बार नाङ्किङ्ग को आश्वासन दे रहे थे कि जेनरलसिमो सुरक्षित हैं और उनकी कोई हानि न होगी। वे नाङ्किङ्ग सरकार से लड़ना नहीं चाहते थे। जब हो इङ्ग चिङ्ग उनका दमन करने के लिए नाङ्किङ्ग सरकार की ओर से नियुक्त हुए तो चाङ्ग ने नाङ्किङ्ग को तार भेजा जिसमें कहा कि 'आप लोग एक व्यक्ति की रक्षा के लिए तो अनावश्यक उत्कंठा प्रकट कर रहे हैं, पर उस सिद्धान्त की उपेक्षा कर रहे हैं जिसे हमने आप लोगों के सामने उपस्थित किया है।' चाङ्गसुइ चाहते थे कि जनरलेसिमो की गिरफ्तारी से नाङ्किङ्ग-सरकार पर इतना दबाव पड़े कि वह उस नीति की घोषणा कर दे जिसका प्रतिपादन वे लोग कर रहे थे। उन्होंने बार-बार इसकी चेष्टा की कि नाङ्किङ्ग-सरकार उनसे सममौत की बात चलावे। शङ्घाइ के रायटर के सम्वाददाता को वक्तव्य देते हुए उन्होंने अपनी स्थिति स्पष्ट कर दी। उन्होंने कहा—'चीन की रक्षा का एक मात्र उपाय यह है कि जापान का सक्रिय प्रतिरोध करने की नीति ग्रहण की जाय। जनता आज एक मत से इसी की माँग कर रही है। हमने बार बार जनरलसिमो का इस नीति की आवश्यकता और उपयोगिता समझाने की चेष्टा की पर उन्होंने हमारी बात अनसुनी कर दी। फलत हम उन्हें यहाँ रोक रखने के लिए बाध्य हुए जिसमें उन्हें अपनी भूल समझने का अवसर मिल जाय। ज्योंही जनरलेसिमो अपनी भ्रमपूर्ण नीति का परित्याग करके जापान का विरोध करने का निर्णय करेंगे वैसे ही हम सब पुनः पहले की भाँति उनके अनुयायी बन जायँगे और उनकी आज्ञा के अनुसार रणस्थल में जीवन की आहुति छोड़ेंगे। हमने जो कुछ किया है उसमें व्यक्तिगत स्वार्थ का लेश भी नहीं है।

उद्देश्य शुद्ध राष्ट्र हित की पूर्ति करना है। इसे बगावत कहना भूल है। यह तो हमारा प्रयत्न है देश की समस्त राजनैतिक पार्टियों को एकत्र करने के लिए, जिसमें सब मिल कर शत्रु से राष्ट्र की रक्षा करने का उत्तरदायित्व उठावें। जनरलेसिमो यहाँ स्वस्थ और प्रसन्न हैं। उनकी सेवा में किसी प्रकार की कोर कसर न की जायगी।'

चाङ्गसुइ ने रेडियो पर भाषण करते हुए बार बार नाङ्किङ्ग से अपील की कि वह किसी प्रकार के समझौते पर आवे। स्याङ्ग में जिन सरकारी अधिकारियों को गिरफ्तार कर लिया गया था उनमें च्याङ्ग तिङ वेङ्ग भी थे। यह वही सज्जन थे जिन्हें जनरलेसिमो ने उत्तर में कम्यूनिस्टों के दमन के लिए चाङ्गसुइ के स्थान पर सरकारी सेना का अधिकारी नियुक्त किया था। इनके द्वारा चाङ्गसुइ ने नाङ्किङ्ग के अधिकारियों के नाम एक पत्र भेजा जिसमें प्रार्थना की गयी थी कि वे शान्ति के साथ स्थिति पर विचार करें और गृह युद्ध समाप्त करके जापान-विरोधी सक्रिय नीति के संचालन पर ध्यान देने का वचन दें। ये तमाम बातें द्योतक हैं इस बात की कि चाङ्गसुइ झगड़ा बढ़ाने की इच्छा नहीं रखते थे। उन्होंने च्याङ्कई को इसलिए गिरफ्तार नहीं किया था कि दूसरा गृह-युद्ध आरम्भ हो जाय बल्कि उनकी नीयत यह थी कि जो कलह चल रहा है वह भी समाप्त किया जाय और देश की सारी शक्ति जापान के विरुद्ध परिचालित की जाय। उन्होंने नाङ्किङ्ग के अधिकारियों को आश्वासन दिया कि जो किया गया है वह शुद्ध देशभक्ति के भाव से ही प्रेरित होकर किया गया है और जनरलेसिमो को किसी प्रकार की क्षति न पहुँचने पायेगी। उन्होंने यहाँ तक लिखा कि 'मैं देशहित के लिए अपने जीवन को अर्पण करने के लिए तैयार हूँ और जनरलेसिमो के साथ स्वयम् नाङ्किङ्ग आऊँगा और अपने को देश वासियों को सौंप दूँगा जिसमें वे मेरे कार्यों की विवेचना करके अपना निर्णय प्रदान करें।' बावजूद इन तमाम प्रयत्नों के नाङ्किङ्ग-सरकार तब तक किसी विषय पर विचार भी करने के लिए तैयार न थी जब तक विद्रोही जनरलेसिमो को मुक्त न कर दे।

नाङ्किङ्ग के इस भाव को भी समझा जा सकता है। चाङ्गसुइ की नीयत चाहे कितनी भी शुद्ध रही हो पर उनकी नीति ऐसी नहीं थी जिसे कोई सरकार विद्रोह के सिवा कुछ और समझ सकती। सरकार के अध्यक्ष तथा अपने प्रधान सेनापति को बलपूर्वक कैद कर रखना

कोई साधारण बात न थी। चाङ्गसुइ के लिए यह उचित नहीं था कि वे इस प्रकार के घोर अवैधानिक प्रकार का आश्रय ग्रहण करते। अस्तु नाङ्किङ्ग किसी प्रकार भी कुछ सुनने के लिए तैयार नहीं हुआ। चाङ्गसुइ ने अब देखा कि पूरी तरह से खिच पैदा हो गयी है। आवेश में आकर उन्होंने जनरलेसिमो को कैद तो अवश्य कर लिया था पर इसके बाद क्या होगा इस पर विचार नहीं किया था। वे सरकार से लड़ना अथवा च्याङ्ग के जीवन को कोई हानि पहुँचाना नहीं चाहते थे। दूसरी ओर सरकार किसी प्रकार का वचन देना तो दूर रहा बात भी करने को तैयार न थी। अब क्या किया जाय यही नयी समस्या थी? चाङ्गसुइ ने जनरलेसिमो से बहुत सी बातें की। वहाँ क्या हुआ इसका बयान भी पाठक जनरलेसिमो की डायरी के शब्दों में ही पढ़े।

च्याङ्ग अपनी डायरी में लिखते हैं, "मुझे बन्दी बनाने के बाद चाङ्गसुइ ने मेरे सामने अपनी बातें रखने की चेष्टा की। चाङ्गसुइ जब पहले पहल मेरे सामने आये तो उन्होंने 'जनरलेसिमो' कह कर मेरा सम्बोधन किया। मैंने तुरन्त कठोर शब्दों में उत्तर दिया। "तुम मुझे जनरलेसिमो मत कहो। यदि मेरे लिए इस शब्द का प्रयोग तुमने किया है तो तुम मेरे अधीन कर्मचारी हो। आज मेरे प्रति तुम दो में से किसी एक प्रकार का ही व्यवहार कर सकते हो। यदि तुम मुझे अपना अफसर समझते हो तो तुरन्त मुझे मुक्त करो और स्याङ्ग तक चल कर पहुँचा आओ। पर यदि तुम ऐसा नहीं करते तो मैं तुम्हें विद्रोही समझता हूँ। यदि मैं विद्रोहियों के हाथ में हूँ तो मैं कोई बात नहीं कर सकता। तुम तत्काल मेरी गरदन काट कर इस दृश्य को समाप्त करो।' चाङ्गसुइ मेरी बात सुन कर स्तब्ध होगये। उस दिन बिना कुछ अधिक कहे सुने वे चले गये। तीन दिन बाद चाङ्गसुइ पुनः मेरे पास आये। उन्होंने कहा, "जनरलेसिमो हम लोगों ने आपकी डायरी पढ़ी है और उस पढ़ कर यह जाना है कि आप कितने महान व्यक्ति हैं। क्रान्ति के लक्ष्य तथा देश की रक्षा करने के प्रति आपकी दृढ़ता तथा आपका उत्तरदायित्व इतना नैष्ठिक तथा सचाई से भरा हुआ है कि हम लोगों ने कभी उसकी कल्पना भी नहीं की थी। आपने अपनी डायरी में मेरे सम्बन्ध में लिखा है कि मुझमें चरित्र का अभाव है। आज मैं सचमुच अनुभव कर रहा हूँ कि आपका कहना सत्य है। आपका बड़ा भारी दोष यह रहा है कि आपने अपने

साथियों का कभी अपने मन का हाल जानने का मौका ही नहीं दिया। आपकी डायरी में जितना लिखा है उसका दशांश भी यदि हमें पहले मालूम हो गया होता तो मैं कभी यह काम न करता जो आज आवेश में कर गया हूँ। आज मुझे यह मालूम होगया कि आपके सम्बन्ध में मेरी धारणाएं गलत थीं।" इसी बीच श्री डब्लू० एच० डानाल्ड स्वाङ्ग आये। ये मेरे भी मित्र थे और चाङ्गसुइ के भी। चाङ्गसुइ इनके साथ ही मुझसे फिर मिले। पहले उन्होंने यह अनुरोध किया कि न्यूयिन्डिङ्ग से हटा कर वे मुझे दूसरे स्थान पर रखना चाहते हैं। पहले मैंने उनका अनुरोध यह कहकर अस्वीकार किया कि मैं सरकारी कार्यालय के भवन में ही मरना पसन्द करूँगा, पर चाङ्गसुइ ने बड़ा ही अनुरोध किया और डानाल्ड के भी कहने पर मुझे हटना पड़ा।

फिर मैं एक मकान में लाकर रखा गया जो चाङ्गसुइ के वासस्थान के निकट ही था। यहाँ चाङ्गसुइ के विश्वस्त अंगरक्षक विशेष रूप से मेरी रक्षा के लिए नियुक्त किये गये। अब तक मैं चाङ्गसुइ से अधिक बात नहीं करता था पर अब उनकी नम्रता ने मुझे उनसे बातें करने के लिए बाध्य किया। नये स्थान पर मुझसे और चाङ्गसुइ से बातें हुईं। मैंने चाङ्गसुइ से कहा कि तुम्हारे प्रस्ताव चाहे कुछ भी क्यों न हों और सुनने में वे चाहे कितने भी अच्छे क्यों न लगें पर तुम्हारे कार्य की ईमानदारी में कोई विश्वास नहीं कर सकता। तुमने जो किया वह गलत है। चाङ्गसुइ ने अपनी सफाई देते हुए मुझसे प्रार्थना की कि मैं उनके अष्टांग कार्यक्रम पर विचार करूँ। मैंने उनसे कहा कि जब तक मैं कैद हूँ तब तक मैं न किसी कागज पर हस्ताक्षर करूँगा और न किसी बात का वचन दूँगा। इसके लिए मुझे अपना सिर दे देना पड़े तो प्रसन्नता पूर्वक दे दूँगा। मैंने कहा कि तुम मेरी स्थिति क्यों नहीं समझते? मेरे शरीर को तुम कैद में रख सकते हो पर मेरी आत्मा का दमन नहीं कर सकते। मैं जब तक नानकिङ्ग नहीं पहुँचता तब तक किसी प्रस्ताव की ओर देखना भी पसन्द नहीं करता। चाङ्गसुइ ने कहा कि आप बड़े जिद्दी हैं। साधारण नागरिक की हैसियत में भी मुझे अपने विचारों को उपस्थित करने का अधिकार तो होना ही चाहिए।

मैंने चाङ्गसुइ को डॉट बताते हुए कहा कि देश के जीवन मरण का उत्तरदायित्व आज हमारे ऊपर है। प्रत्येक देशभक्त नागरिक का कर्तव्य है कि मेरी आज्ञा माने। मुझे कैद करके बलपूर्वक मुझसे अपने मन की



चाङसुएल्याङ्ग, श्रीमती चाङ, मदाम च्याङ और जनरलेसिमो च्याङकैशेक स्याङफू से मुक्त होने के बाद

फराने की चेष्टा करते हुए भी तुम अपने को नागरिक समझते हो। फिर तुम तो नागरिक श्रेणी में भी नहीं हो। तुम तो सैनिक कर्मचारी हो जिसे अपने अफसर की आज्ञा में चलना होगा। जो कोई भी देश के भाग्य को खतरे में डालता है वह मेरा शत्रु है। तुम्हें यदि कुछ कहना था तो तुम पार्टी की मीटिंग में कहते और उसके निर्णय के आगे सिर झुकाते।" थोड़ी देर तक मौन रहने के बाद चाङ्गसुइ ने कहा—"आपके विचार बहुत पुराने हैं। आपका चरित्र महान है पर आपमें दोष यह है कि आप दक्षिण पक्ष की ओर अत्यधिक झुके हुए हैं।" मैंने चाङ्गसुइ से पूछा कि वे नये विचार किसको कहते हैं। "यदि उनका तात्पर्य मार्क्स के सम्पत्ति' (दि केपिटल) के विचारों से है तो मैंने उस पुस्तक को आज से १५ वर्ष पूर्व पढ़ा था और तब से कई बार फिर भी पढ़ चुका हूँ। यदि कम्यूनिज्म से उनका मतलब है तो मुझसे बात करके देख लें कि मैंने तत्सम्बन्धी पुस्तकें उनसे कहीं अधिक पढ़ी हैं या नहीं।"

"चाङ्गसुइ की समझ में मेरी बातें आती ही न थीं। वे पूछते कि मैं सिद्धान्तों पर इतना जोर क्यों देता हूँ। उन्होंने बार-बार कहा—"आज देश का नेतृत्व करने की शक्ति सिवा आपके और किसी में नहीं है। फिर आप थोड़ा दबकर भी दूसरों की बात क्यों नहीं मान लेते?" उनका कहना था कि जीवन का बलिदान मात्र किसी क्रान्ति का लक्ष्य नहीं है बल्कि काम निकालने के लिए वे उस इच्छा का दावा जाना भी अनुचित नहीं मानते। मुझे चाङ्गसुइ के तर्कों को सुनकर आश्चर्य हुआ। "मैंने उनसे कह दिया,"तुमने क्रांति का वास्तविक अर्थ नहीं समझा और न उसके आदर्शों की झलक ही पायी है। जो व्यक्ति आज अपने को देश के जीवन मरण के लिए जिम्मेदार समझता है वह यदि अपने प्राण के भय से उस मार्ग से हट जाय जिसे वह उचित समझता है तो सचमुच उसने जीकर राष्ट्र की हत्या कर डाली। पर यदि वह अपने पथ पर रहकर, लक्ष्य का आश्रय लेकर, प्राण विसर्जन करता है तो वह मरकर भी राष्ट्र को जीवन-दान देता है। देश उससे स्फूर्ति ग्रहण करेगा और उसके सामने उसके आदर्श की स्थापना हो जायगी।" चाङ्गसुइ अन्त में निराश हो गये और समझ गये कि वे मुझे दबाकर कोई काम नहीं निकाल सकते।"

च्याङ्कई की डायरी से एक ओर जहाँ विद्रोहियों के मन्तव्य का पता मिलता है वहीं जनरलेसिमो के महान चरित्र और अदम्य साहस

पर भी प्रकाश पड़ता है। वस्तुतः उनमें नेतृत्व के अपरिसीम गुण वर्तमान थे। जीवन को सङ्कटापन्न देखकर जो आदर्शों से च्युत हो जाय वह किसी महान राष्ट्र के नेतृत्व का भार कैसे ग्रहण कर सकता है? च्याङ्ग महाप्राण व्यक्ति हैं इसमें सन्देह नहीं। उनकी दृढ़ता ने चाङ्गसुइ को उनके प्रति और अधिक आकर्षित कर दिया। पर जो गुत्थी पैदा हो गयी थी वह सुलझ ही नहीं रही थी। इसी उधेड़बुन में दस दिन का समय बीत गया। जो खाई पैदा हो गयी थी वह पटे कैसे? मदाम च्याङ्ग अब तक उत्सुकतापूर्ण हृदय से घटनावलि की ओर देख रही थीं। उन्हें आशा थी कि मामला सुलझ जायगा। ये दस दिन दस युग के समान बीते। अब उनके लिए तटस्थ रहना असम्भव होगया। देश का भाग्य और साध्वी वीराङ्गना का भाग्य एक साथ ही सङ्कटापन्न हो गया था। अब वे कैसे शान्त बैठी रहतीं? अस्तु चीन के इस रंगमंच पर 'मदाम च्याङ्ग' ने भी अभिनय करने का निश्चय किया। वे स्याङफू जाने के लिए तैयार हो गयीं। मित्रों ने उन्हें रोकना चाहा, अधिकारियों ने अनुरोध किया कि इस स्थिति में वे न जायँ, पर नारी का हृदय कब रुकता है। मदाम सरकारी प्रतिनिधि होकर नहीं परन्तु पतिपरायणा जीवन-सङ्गिनी के रूप में जा रही थीं। सती के आन्तरिक उद्रेक को रोकने में कब कौन समर्थ हुआ है? उन्होंने चाङ्गसुइ को अपने स्याङ जाने की सूचना देते हुए विमान से उस दिशा की यात्रा कर दी। उनके भाई श्री टी० वी० सुङ्ग उनके साथ हो लिये। सात सौ मील की लम्बी नभ यात्रा करके दोनों भाई बहन उसी रोज सायंकाल में स्याङफू पहुँच गये।

सारे देश में 'मदाम' की इस यात्रा से सनसनी फैल गयी। देश की आँखें एकबारगी स्याङ्ग की ओर लग गयीं। सबने इस यात्रा की सफलता की कामना की। इसकी सफलता पर चीन का भाग्य निर्भर था, उसका भविष्य आश्रित था और जो कुछ अब तक यह राष्ट्र कर पाया था, उसकी रक्षा निर्भर थी। सब जानते थे कि जनरलेसिमो को यदि कुछ हो गया तो चीन में गृह-कलह की वह आग धधक उठेगी जो किसी के बुझाये शान्त न होगा। राष्ट्रीय एकता, स्वतन्त्रता तथा सौभाग्य अब एक मात्र इस प्रयत्न पर ही अवलम्बित था। सारे देश की अनिमेष दृष्टि 'मदाम' पर लगी हुई थी। उत्सुक हृदय से राष्ट्र इस

प्रयत्न के परिणाम की राह देखने लगा। स्याङ्ग में जब 'मदाम' को लेकर उनका विमान आकाश से पृथ्वी पर आया उस समय उनका अभिनन्दन करने के लिए चाङ्गसुइ वहाँ उपस्थित थे। उन्होंने मदाम का स्वागत किया। यह महिला असाधारण साहसी है। पति के साथ अनेक युद्ध स्थलों पर भी रह चुकी हैं। देश की आकाश सेना के सगठन का भार उनके ऊपर रहा। शासन तथा परराष्ट्र नीति के सम्बन्ध मे उनकी राय मूल्य रखती है। चीन की सरकार तथा सार्वजनिक जीवन में अपनी प्रतिभा, योग्यता, बुद्धि तथा क्षमता के बल पर उनका अपना स्वतन्त्र स्थान है। परन्तु इस समय राजनीतिज्ञा नहीं किन्तु एक पत्नी अपने पति की विपत्ति में उसका साथ देने आयी थी। अपने पहुँचने के घंटे भर बाद ही वे जनरलेसिमो के दर्शन प्राप्त कर सकी।

स्याङ्ग ने अपनी पत्नी से पूछा कि वे क्यों आयीं ? इस मृत्यु जाल मे तुम्हारे आने की क्या आवश्यकता थी ? " पाँच दिनों तक मदाम जनरलेसिमो के साथ रहीं। इस थोड़े मे समय मे उन्होंने वह कर डाला जो बड़े-बड़े राजनीतिज्ञों के किये नहा हो पाया था। पाँच दिनों तक लगातार बातचीत और सम्मेलन होते रहे। 'मदाम' का मोहक व्यक्तित्व, उनकी प्रभावकारिणी प्रतिभा तथा असाधारण बुद्धिमत्ता सफल हुई।

२५ दिसम्बर को सहसा स्याङ्ग मुक्त कर दिये गये। अपनी पत्नी और सुङ्ग के साथ व तत्काल नाङ्किङ्ग के लिए रवाना हो गये। सारे देश में स्याङ्ग की रिहाई का समाचार बिजली की तरह फैल गया। राष्ट्र के सिर से मानो भारी बोझ उतर गया। समाचार पहुँचना था कि देश के कोने-कोने में उन्मत्त प्रसन्नता लहरा उठी। चारों ओर आनन्दोत्सव मनाये जाने लगे। सारा देश नाच, रग और आनन्द के भूले में झूलने लगा। कहीं दीपावलि मनायी गयी, कहीं सार्वजनिक प्रदर्शन हुए और कहीं नगर सजाये गये। देश ने लाखों रुपया आतिशबाजियों में फूँक दिया। आज उसका हृदय उल्लास से झूम रहा था। राष्ट्र की महती विपत्ति टल गयी थी। चीन ने अपनी खोयी हुई आत्मा पुन पायी थी।

२६ दिसम्बर को जनरलेसिमो अपनी पत्नी सहित नाङ्किङ्ग पहुँच गये। चाङ्गसुइ ल्याङ्ग भी उनके साथ ही नाङ्किङ्ग आये थे।

नाङ्किङ्ग पहुँच कर चाङसुइ ने घोषित किया—"मैं संसार की दृष्टि में चीन का पद ऊँचा उठाने के लिए आया हूँ। जगत देख ले कि सारा देश आज जनरलसिमो के पीछे है। संसार यह भी देख ले कि मैं अपने सम्बन्ध में राष्ट्र के निर्णय की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। मेरा मस्तक उसके सामने है।" चाङ्गसुइ के इस कार्य से उनका चरित्र जगत के सामने उज्ज्वल हो उठता है। निस्सन्देह इस नवयुवक के देश प्रेम और साहस तथा महत्ता की जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। उसने नाङ्किङ्ग पहुँचकर च्याङ को एक पत्र लिखा। इसमें कहा गया था—"मैं प्रकृत्या असभ्य गँवार हूँ जिसके कारण ऐसा कार्य कर बैठा जो गैर कानूनी था। मैंने महान अपराध किया है। मैं आपके साथ नाङ्किङ्ग इसलिए आया हूँ कि मुझे दंड दिया जाय। मेरे अपराध की गम्भीरता को देखते हुए दंड जितना भी गुरु हो मुझे मिलना चाहिए। इससे न केवल कानून और अनुशासन की रक्षा होगी बल्कि ऐसे लोगों के लिए यह सबक होगा जो इस प्रकार के काम करने का साहस करते हैं। देश के लिए जो हितकर हो उसे पूरा करने में मैं कभी अपना पग पीछे न रखूँगा चाहे इसके लिए मुझे अपना प्राण ही क्यों न देना पड़े। मेरे प्रति आपके हृदय में जो स्नेह है उसे आप इसमें बाधक न होने दें। मेरे योग्य जो दंड हो उसे देने की शक्ति आपको प्राप्त हो यही मेरी कामना है।"

च्याङ ने भी चाङसुइ ल्याङ्ग को पत्र लिखा—"आप लोगों के बहकावे में आकर गलत काम कर बैठे। यदि सचमुच मैं स्वार्थी हूँ, अन्यथा मैंने अपने जीवन में कभी मुल्क के साथ गद्दारी की हो और क्रान्ति के आदर्श के प्रति उपेक्षा दिखायी हो तो आज भी आपको अधिकार है कि आप मुझे गोली मार दें। मेरा जीवन तो खुला हुआ पट है। यदि एक कार्य भी आपको ऐसा दिखायी दे जो राष्ट्रीय हित के विरुद्ध हो तो आप मेरी निन्दा ही न करें बल्कि मेरे प्राण लेने के लिए स्वतन्त्र हैं। मुझे सन्तोष है इस बात का कि आज तक मैंने जो किया है वह अपनी बुद्धि के अनुकूल स्वार्थ पाश से विमुक्त होकर केवल देश हित के लिए किया है। यही कारण है कि मुझे अपने किसी काम पर लज्जित होने का अवसर दिखायी नहीं देता। हमें स्मरण रखना चाहिए कि राष्ट्र का जीवन अन्य और तमाम बातों से अधिक महत्त्व रखता है। हमारा जीवन भले ही चला जाय पर राष्ट्र की मर्यादा और

उसके अनुशासन की रक्षा होनी चाहिए। इसी कारण मैं आपसे कोई वादा करने अथवा किसी वक्तव्य या आदेश पत्र पर हस्ताक्षर करने से बराबर इनकार करता रहा। मैं अपने जीवन मरण की अपेक्षा नैतिक सिद्धान्तों की रक्षा करना इसी कारण अधिक आवश्यक समझता हूँ। मुझे आपके देश प्रेम पर विश्वास है जिसका प्रमाण यह है कि आपने अपने को उसके सुपुर्द कर दिया है। मुझे आशा है कि आप केन्द्रीय सरकार के निर्णय की राह देखेंगे और वह जो फैसला देगी उसे बिना किसी मीन मेख के स्वीकार करेंगे। राष्ट्र की मर्यादा और उसके गौरव की रक्षा का यही एक मात्र उपाय है।"

चाङ्सुइ के मामले पर सरकार ने विचार किया और उन्हें दस वर्ष कारावास तथा सदा के लिए नागरिकता के अधिकार से वंचित कर देने का दंड दिया। सरकार का फैसला होगया और चाङ्सुइ ने उसे स्वीकार किया, पर च्याङ्कई ने इसमें हस्तक्षेप किया। उन्होंने कहा—'चाङ्सुइ ने जिस चरित्र का परिचय दिया है उसके कारण सरकार को उन्हें क्षमा प्रदान करना चाहिए।" अतः चाङ्सुइ की सजा माफ कर दी गयी और वे रिहा कर दिये गये। इस प्रकार इस घटना की समाप्ति हुई, पर इसका परिणाम बड़ा व्यापक हुआ। जनरलेसिमो च्याङ की प्रतिष्ठा बढ़ी और उनका प्रभाव अक्षुण्ण होगया। जगत ने देख लिया कि चीन में उस महान व्यक्तित्व का उदय होगया है जिसमें चालीस करोड़ नर नारियों की आकांक्षा और लालसा मूर्तमान हुई है। च्याङ चीनी राष्ट्रीयता के प्रतीक हैं। उसके बल, आदर्श और अभिलाषा के मूर्तमान प्रतिनिधि हैं। उनकी वाणी चीन की वाणी है, उनकी नीति राष्ट्र की नीति है और उनका लक्ष्य राष्ट्र का अभीप्सित इष्ट है। इस घटना ने मदाम की प्रतिभा को भी खूब प्रकाशित कर दिया। डोनल्ड के शब्दों में "जनरलेसिमो की मुक्ति का श्रेय मदाम को ही है। उन्होंने खतरों की उपेक्षा करके च्याङ की यात्रा की। जहाँ और कोई असफल हुआ होता वहाँ वे सफल हुईं। उनका मनोहर और मंजुल व्यक्तित्व गुत्थियों को सुलझाने में सफल हुआ। उन्होंने चीनी राष्ट्र की अलौकिक सेवा की है।"

पर जहाँ यह सब हुआ वहाँ इस घटना ने चीन के आधुनिक इतिहास की धारा बदल दी। अवश्य ही च्याङ्कई ने बन्धन में रह कर कोई वचन नहीं दिया, पर इन घटनाओं से वे आपाद मस्तक प्रभावित

हुए। उन्होंने अच्छी तरह अनुभव किया कि विद्रोहियों की माँग में तथ्य है और समय आ गया है जब उन्हें अपनी नीति में परिवर्तन करना चाहिए। इस घटना के बाद से सरकार ने कम्यूनिस्टों का पीछा करना और उनके दमन की क्रूर योजना बनाना धीरे धीरे बन्द करना आरम्भ कर दिया। कुछ दिनों बाद वह एक दम से रोक दी गयी। दूसरी ओर कम्यूनिस्टों ने भी अपना सुधार किया। चीनी कम्यूनिस्टों की देश भक्ति और जन सेवा के भाव में पहले भी सन्देह नहीं किया जा सकता था। आज तो उनकी व्यावहारिक बुद्धि भी, जिसके अभाव ने देश में इतना रक्तपात कराया, जागृति हुई। उन्होंने अनुभव किया कि जापान से देश की रक्षा करने के लिए च्याङ्कई शेक का नेतृत्व आवश्यक है, क्योंकि उन्होंने राष्ट्र को वह एकता प्रदान की है जिसकी उसे आवश्यकता थी। चीनी कम्यूनिस्ट पार्टी की कार्य समिति ने नाङ्किङ्ग को एक तार भेजा जिसमें उन्होंने सूचना दी थी कि—

(१) कम्यूनिस्ट पार्टी शस्त्र के बल पर राष्ट्रीय सरकार को उलट देने का अपना प्रयत्न रोक देगी।

(२) चीन में स्थापित सोवियेत सरकार अपना नाम बदल कर 'चीनी प्रजातन्त्र के विशेष क्षेत्र की सरकार' रखेगी और लाल सेना आगे से 'राष्ट्रीय क्रान्ति सेना' के नाम से विख्यात होगी। वह अब से नाङ्किङ्ग सरकार और उसकी सैनिक समिति के अधीन रहेगी।

(३) विशेष क्षेत्र की सरकार अपनी सीमा में डाक्टर सुनयात् सेन के तीन राजनैतिक सिद्धान्तों के अनुसार ही शासन करेगी।

(४) कम्यूनिस्ट भूमि की जब्ती के अपने कार्यक्रम को रोक देंगे।

इसके बदले में कम्यूनिस्टों ने यह आशा प्रकट की कि

(५) राष्ट्रीय सरकार गृह युद्ध को रोककर सारे देश की शक्ति जापानी विरोध में लगावेगी।

उन्होंने यह इच्छा भी प्रकट की कि

(६) सरकार समस्त राज बन्दियों को छोड़ देगी और सब दलों का सम्मेलन बुलायेगी ताकि सब मिलकर राष्ट्र की रक्षा के काम में योगदान कर सकें।

सरकार और कम्यूनिस्टों के बीच की खाई पट गयी। उसे वह एकता प्राप्त हुई जो चीन के ५ सहस्र वर्ष के इतिहास में कभी प्राप्त नहीं हुई थी। चीन एक राष्ट्र के रूप में प्रादुर्भूत हुआ। उसकी

शक्ति अनायास ही बढ़ गयी। कुछ महीनों बाद चीन ने जापान से लोहा लिया। आज चीन का युद्ध जन युद्ध है। संसार उसकी वीरता और त्याग देख कर विस्मित है। देशभक्त चीनी कम्यूनिस्ट अपनी मातृभूमि के लिए युद्ध स्थल में जो काम कर रहे हैं वह अद्भुत और आश्चर्य जनक है। सारे चीन को साधारणतः और कम्यूनिस्टों को विशेषतः उन पर गर्व करने का अधिकार है।

जनरलेसिमो च्याङ्ग ने कम्यूनिस्टों की इस घोषणा और उनके भाव परिवर्तन का सहर्ष स्वागत किया। उन्होंने राष्ट्रीय सैनिक समिति में भाषण करते हुए कहा—'चीनी कम्यूनिस्ट पार्टी की घोषणा प्रमाण है इस बात का कि राष्ट्रीय हित अन्य तमाम विचारों और प्रश्नों से ऊपर है। उसने जो वचन दिये हैं वे इस धारणा को पुष्ट करते हैं कि वह विदेशी आक्रमण का प्रतिरोध करने में राष्ट्रीय सरकार की शक्ति को सुदृढ़ बनायेगी। कम्यूनिस्ट पार्टी ने डाक्टर सुनयात् सेन के सिद्धान्तों को कार्यान्वित करने का वचन देकर इस बात को स्पष्ट कर दिया है कि राष्ट्र की सारी शक्ति अब एक ही लक्ष्य की पूर्ति की ओर प्रवाहित है। मुझे पूरा विश्वास है कि हमारे कम्यूनिस्ट उस वचन का प्रतिपालन करेंगे जो उन्होंने प्रदान किया है और सारे देश के साथ मिल कर राष्ट्रीय मुक्ति के महाप्रयास को सफल बनायेंगे।"

घटनाएँ सिद्ध कर रही हैं कि चीनी कम्यूनिस्ट देश की प्रथम पंक्ति में जीवन की बलि चढ़ा रहे हैं।

सत्रहवाँ अध्याय

जापान का आक्रमण

चीन की एकता स्थापित हुई! चीनी देशभक्त गत २५ वर्षों से जो स्वप्न देख रहे थे वह पूरा हुआ, परन्तु एकता स्थापित होते ही चीन की परीक्षा आरम्भ होगयी। अब उसे यह सिद्ध करने की आवश्यकता आ पड़ी कि वह संसार के वक्ष स्थल पर जीवित रहने का अधिकारी है अथवा नहीं। निसर्ग ने विकास की जिस अजस्र धारा को प्रवाहित किया है उसके अनुकूल परिवर्तनशील विश्व में सब पदार्थों को अपनी अपनी उपयोगिता सिद्ध करनी पड़ती है। जीवन स्वयम् संग्राममय है।

जीवित रहने का अधिकार उसी को है जो निरन्तर होनेवाले संघर्ष में अपनी योग्यता सिद्ध कर सके। जो योग्य होते हैं वे टिकते हैं और जो निकम्मे होते हैं वे मिट जाते हैं। प्रकृति की इस नियामक प्रक्रिया से कोई बच नहीं सकता। चीन को भी आज इस बात का सबूत देना पड़ा कि वह विश्व के रंग मंच पर जीवित रहने के योग्य है। उसके सामने संघर्ष आ पड़ा। शताब्दियों से साम्राज्यवादी गिद्धों की तीव्र दृष्टि उस पर पड़ी हुई थी। वे समय-समय पर अपनी घृणित लोलुपता की शान्ति के लिए उसके अंग प्रत्यंग को नोच नोच कर उसका नाश कर रहे थे। सुषुप्त और अचेत राष्ट्र ने नया जन्म ग्रहण करने की चेष्टा की। गत २५ वर्ष की घटनाएं चीन की वसुन्धरा की प्रसव-वेदना की द्योतिका हैं। आज वह वेदना समाप्त हुई और नव राष्ट्र ने पदार्पण किया। धरातल पर चरण प्रक्षेप करते ही उसे अपनी योग्यता और शक्ति का परिचय देना पड़ा क्योंकि जीवित रहने का अधिकार उसी को है जो संघर्ष में योग्य सिद्ध हो। वही संघर्ष अब चीन के सिर पर आ पड़ा।

जापान की नीति की विवेचना पूर्व के पृष्ठों में की जा चुकी है। उसने चीन को दबा कर अपनी गोटी लाल करनी चाही पर उसकी बन्दर घुड़कियाँ और कूटनीति चल नहीं सकी। च्यांग की घटना पर जापान को प्रसन्नता हुई थी। उसने समझा था कि चीन में पुनः गृह-युद्ध की ज्वाला जलेगी और उसे अपना काम करने का अवसर मिलेगा। पर उसकी इस आशा पर तुषारापात होगया जब च्यांग सकुशल नान्किङ्ग वापस आये। कभी-कभी बुराई से भी भलाई हो जाती है। च्यांग की दुर्घटना के मार्ग से चीनी राष्ट्र की अभूतपूर्व एकता का प्रादुर्भाव हुआ। न केवल च्यांग एक मात्र नेता के रूप में अवतरित हुए बल्कि कभी भी न सुलझती दिखायी देती कम्यूनिस्ट समस्या का भी अन्त होगया। चीन के मामले में जापान की प्रतिष्ठा को गहरी ठेस लगी थी। उसने सोचा था कि सदा की भाँति चीन अब भी अभीभचा है जिसे डाँट डपट कर काम निकाल लेना बायें हाथ का खेल होगा। उत्तरी चीन के प्रान्तों की स्वतन्त्रता की माँग, मञ्चूकुओ की गुड़िया सरकार की स्वीकृति तथा कोमिन्टन विरोधी समझौते में चीन का योगदान आदि एक बात भी तो नहीं मानी गयी। चीन-सरकार ने सारी जापानी रंगबाजी को अपनी दृढ़ता से धूल में मिला दिया। जापान स्वभावतः क्रोधी तथा सैन्यसत्तावादी राष्ट्र है। उसने अब चीन पर

आक्रमण करने का निश्चय कर लिया। सैन्यसत्तावादी राष्ट्रों का अन्तिम तर्क तो विमान से बरसनेवाले गोले ही होते हैं। यदि चीन ने किसी प्रकार उसकी बात नहीं माना तो अब सगीनों से मनवाने का निश्चय किया गया।

जापान की आँखें खुल गयीं। उसने देखा कि चीन एक हो रहा है और आधुनिकता की ओर बढ़ कर बल सचय कर रहा है। यदि एक बार वह इसमें सफल होगया तो जापान क्या ससार की किसी भी शक्ति में उसकी ओर आँख उठाकर देखने का साहस नहीं हो सकता। फलत यह बात समझ में आयी कि समय रहते चीन को कुचल देने में ही भलाई है। यदि भिड़ना है तो ऐसे ही समय भिड़ जाना चाहिए जब विरोधी निर्बल हो। सोच विचार कर जापानी साम्राज्य वादियों ने चीन से झगड़ा मोल लेने का निश्चय किया। उन्होंने कोई बहाना ढूँढने की भी चेष्टा की और बहाना मिलने में देर भी नहीं लगी। कहा जाता है कि सैनिक कवायद करते हुए पेपिङ्ग के पास एक जापानी सिपाही गुम हो गया। जापानियों ने उसे ढूँढने के लिए उन कोनों में घुसने की माँग की जहाँ चीनी सेनाएँ मौजूद थीं। उनकी यह माँग स्वीकार नहीं की गयी। जापानियों को इतना ही काफी था। उन्होंने पेपिङ्ग नगर के पास 'मारकोपोलो ब्रिज' नामक स्थान में ७ जुलाई सन् १९३७ को चीनी सैनिकों पर गोलियाँ दागनी शुरू कर दीं। चीनियों ने गोली का उत्तर गोली से दिया। बस इतनी ही घटना है जिसने उस विनाशक महायुद्ध का प्रवर्तन किया जो गत छ वर्षों से चीन की भूमि पर हो रहा है। एशिया भूखण्ड मे कदाचित इतना बड़ा युद्ध ऐतिहासिक काल में इसके पूर्व नहीं हुआ था। न जाब्ते से युद्ध घोषणा की गयी और न अन्तर्राष्ट्रीय नियमों का पालन किया गया।

सहसा जापान ने आक्रमण कर दिया। चीन ने अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए कमर कसी और उसने भी शस्त्र उठाया। बस वह युद्ध आज तक चल रहा है। चीन युद्ध के लिए तैयार नहीं था। उसके पास न आधुनिक साधन थे और न अस्त्र न शस्त्र। बरसों पूर्व से वह अपनी विपत्ति का मारा हुआ अपने ही झगड़ों से तबाह था। घरेलू लड़ाई के कारण देश बरबाद हो गया था। नगर के नगर उजड़ गये थे। विस्तृत उर्वर भूमि वीरान पड़ी था। लाखों आदमियों का सहार हो चुका था। माल और रोजगार नष्ट होगया था। साम्राज्यवादियों द्वारा शासित

निरङ्कुश उन्मत्तों की भाँति उन्होंने चीनी महिलाओं पर खुलेआम बलात्कार किया, अधिकृत प्रदेशों में क्रूर लूट मचायी और फिर असहायों को जलते हुए नगर में जिन्दा भस्म हो जाने के लिए बाध्य किया। यह सब सहते हुए भी चीनी अपने पथ से नहीं डिगे। चीनी सेना ने तीन महीने तक डट कर शङ्घाई में जापानी सेना का सामना किया।

चीनियों की केवल इतनी ही कठिनाई नहीं थी कि उनके पास आधुनिक अस्त्र शस्त्र नहीं थे। उनकी बड़ी भारी बाधा तो वे विदेशी शक्तियाँ थीं जो शङ्घाई में बैठ कर न केवल इस प्रलय लीला और अत्याचार को चुपचाप देख रही थीं बल्कि चीनियों को अपनी रक्षा करने की सुविधा प्रदान करने से भी इनकार कर रही थीं। 'मदाम च्याङ्काई शेक' शङ्घाई के इस युद्ध के सम्बन्ध में लिखती हैं—"विदेशी शक्तियों ने चीन को इस बात की अनुमति देना भी उचित न समझा कि वह शङ्घाई के आस पास अपने बचाव के लिए खन्दकें तक खोद लेते। आश्चर्य है कि उन्होंने जापानियों को इस बात की आज्ञा दे दी थी कि वे शङ्घाई को हवाई तथा फ़ौजी अड्डे की भाँति प्रयोग में लावें। यह सब होते हुए भी वीर चीनी सिपाहियों ने तीन महीने से अधिक समय तक जापानियों का सामना किया। जब कभी शङ्घाई के युद्ध का इतिहास लिखा जायगा तो उस समय उन असंख्य चीनी वीरों की वीरता का गुणगान किया जायगा जिन्होंने अपने प्राणों की बलि चढ़ायी।" अवश्य ही उस इतिहास में एक ओर जहाँ चीनी देश भक्तों के प्रति इतिहासकार आदर से मस्तक झुकावेगा वहीं उसकी लेखनी उन श्वेत साम्राज्यवादियों के कुकर्म पर घृणा प्रकट करेगी जो चीन की भूमि में रह कर भी चीनियों को अपनी रक्षा तक करने का अवसर प्रदान नहीं कर रहे थे। उनकी उस कायरता को इतिहासकार छिपाना न चाहेगा जो जापानियों के डर से उन्हें चीन का नाश करने के लिए शङ्घाई का उपयोग करने देने की अनुमति प्रदान करने में लज्जित न कर सकी।

शङ्घाई के पतन के बाद जापानियों ने नाङ्किङ्ग पर धावा किया। उन्होंने सोचा था कि नाङ्किङ्ग के पतन के साथ साथ चीन आत्म समर्पण कर देगा। नाङ्किङ्ग नष्ट हुआ पर चीनी सरकार जीवित रही और देश में प्राण का सञ्चार करती रही। इसके बाद एक के बाद दूसरे

चीनी नगरों पर जापानी अधिकार स्थापित होता गया। हाङ्कउ और काङ्तुङ्ग तक पर जापानियों ने अपनी पताका फहरायी। काङ्तुङ्ग में भी अन्तर्राष्ट्रीय बस्ती थी। जापानियों को डर था कि काङ्तुङ्ग पर आक्रमण करने के कारण उन्हें कहीं ब्रिटेन से झगड़ा मोल लना न पड़े। कुछ दिनों तक इसी भय से वे काङ्तुङ्ग की ओर नहीं बढे, पर अन्त में उन्होंने उस पर भी आक्रमण किया और आश्चर्य की बात है कि सब कुछ सहन करते हुए भी विदेशी सरकारों ने मौखिक विरोध कर देने के सिवा और कुछ भी करना उचित न समझा। धीरे धीरे जापान ने समस्त चीनी बन्दरगाहों पर अधिकार स्थापित कर लिया। उत्तर म उसने अपने हाथ की कठपुतली सरकार बना ही ली थी, मध्य चीन में भी एक सरकार सगठित कर दी गयी। जापानियों ने यह आशा की थी कि इस तिकड़म में उनका साथ देने के लिए इतने देशद्रोही चीन म ही मिल जायँगे कि वे उसकी शक्ति को विघटित करने मे समर्थ होंगे, पर उनकी यह धारणा भी गलत सिद्ध हुई। चीन एकात्म रूप से आज अपनी राष्ट्रीय सरकार के पीछे है जो नाङ्किङ्ग के पतन के बाद चुङ्किङ्ग चली गया है और वहीं आज भी उसका प्रमुख कार्यालय है।

चीन के स्थल-मार्ग, उसकी रेलें, उसके बन्दरगाह, उसके राजपथ और उसके बड़े-बड़े नगर प्राय सभी जापानी उदर में समा गये। चीन सरकार का सम्बन्ध बाहरी दुनिया से विच्छिन्न हो गया। बाहर से आने वाले अस्त्र शस्त्र तथा सैन्य सम्भार के लिए कोई मार्ग नहीं रह गया। चीन के विशाल भू प्रदेश के विविध भागों म सेना भेजना कठिन हो गया। एक स्थान की सेना का दूसरे स्थान की सेना से सम्बन्ध बनाये रखना असम्भव हो गया। सरकार समुद्रतट से दूर जा कर एक प्रकार से सुदूर प्रदेश में घिर गयी। यह सब कुछ हुआ पर चीन की पराजय नहीं हुई। चीन की आत्मा आज भी स्वतन्त्र है। जापानी विजय पर विजय प्राप्त करें, पर अपनी विजय को सगठित करने की शक्ति उनमें नहीं है। जिस नगर में उनकी सेना है, जिस रलवे लाइन पर उनका अधिकार है, उसीके आस पास की मील दो मील जमीन पर वे अपनी प्रभुता भले ही स्थापित कर लें, पर उसके आगे उन्मुक्त चीन अपनी रक्षा क लिए सन्नद्ध रहता है। जापानी एक अधिकृत स्थान से दूसरे स्थान का सम्बन्ध तक नहीं जोड पाते। उनका यह युद्ध मृगमरीचिका के समान हो गया है। एक स्थान में विजय प्राप्त करके बढ़ते हैं और दूसरे दिन

उसी स्थान पर चीनी अधिकार हो जाता है। चीन की विस्तृत सीमा में जापान ऐसे एक दर्जन राष्ट्र समा जा सकते हैं। कहाँ है उनके पास इतनी जन शक्ति कि वे प्रत्येक इस विजित भूमि में अपनी सेना स्थापित रख सकें ?

चीन के ग्रामों में अब भी चीनी शासन करते हैं। उन्हीं की व्यवस्था, उन्हीं का प्रबन्ध और उन्हीं की प्रभुता परिचालित है। यदि आज उन्हें उस स्थान को छोड़ भी देना पड़ता है तो वे इस आशा को लिए हुए हटते हैं कि कल वे उस पर फिर अधिकार स्थापित कर लेंगे। उनकी यह आशा शीघ्र ही फलवती भी होती है। चीन का जन-बल अपार है। वह देश तो मानवों का जंगल है। पैंतालीस पचास करोड़ की जन संख्या में करोड़ दो करोड़ नर नारियों का बलिदान उसका क्या बिगाड़ देगा ? गाजर की एक टाँग टूट ही गयी तो क्या हुआ ? पर जापान को यदि इतने आदमी स्वाहा करने पड़े तो फिर उस छोटे से द्वीप में महिलाओं के सिवा पुरुष तो देखने को भी न मिलेंगे। इसलिए चीन अपराजित है और अपराजित रहेगा भी। उसकी इस शक्ति का कारण उसका अदम्य दृढ़ संकल्प और अपने देश की रक्षा करने की प्रचंड भावना ही है। जब तक उसका यह आध्यात्मिक बल जागृत और सजीव है तब तक उसके पराजित करने की शक्ति किसी में भी नहीं है। आज चीन की तीस लाख सेना जापान की कमर तोड़े दे रही है। सरकारी सेना जो कर रही है वह तो कर ही रही है उसके सिवा चीनी कम्यूनिस्टों की बानरी युद्ध प्रणाली ने जापानियों के छक्के छुड़ा दिये हैं।

चीनी कम्यूनिस्टों की लाल सेना जो आठवीं स्थल सेना (एट्थ रूट आर्मी) के नाम से विख्यात है, सरकारी नियन्त्रण में और उसी के संचालन में लड़ रही है। उत्तरी चीन के शान्सी, स्योहिङ्ग आदि प्रान्तों में उसने जापानी सेना का नाकों दम कर रखा है। उधर के पार्वत्य प्रदेश में आज जापानी एक स्थान पर कब्जा करते हैं तो कल उन्हें उसे विसर्जन कर देना पड़ता है। गुरिल्लाओं के दल उन पर टूट पड़ते हैं उन्हें लूट लेते हैं, अस्त्र शस्त्र उठा ले जाते हैं और पीट पाट कर निकल भागते हैं। यातायात के साधन नष्ट कर देना, रेल की पटरी उखाड़ देना, सड़कों का खराब कर डालना, कुओं के पानी में जहर मिला देना इनका रोज का काम है। जापानी सेना को ही लूट कर और उन्हीं के अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित करके ये उन्हीं का विनाश कर रहे हैं। गाँवों में एक-

एक किसान को जापानी बन्दूकों और मशीनो से लैस करके इन्होंने १४ लाख से अधिक की सेना खड़ी कर रखी है। उत्तर में सम्भव नहीं है कि जापानी सेना बिना आवश्यक प्रबन्ध और सावधानी के अपने मुख्य स्थान से चार या छ: मील भी इधर उधर जा सके। यही कारण है कि जापान सम्भवत: चीन पर अपने आक्रमण करने की ग़लती का अनुभव करने लगा है। प्रचड धन जन का क्षय करके भी वह आज समझ नहीं पा रहा है कि इस दुश्चक्र से कभी उसे पनाह भी मिलेगी या नहीं।

चीनी योद्धाओं की बड़ा भारी विशेषता तो यह है कि वे कभी आत्म समर्पण करना अथवा शस्त्र रख देना जानते ही नहीं। आज इस महा भयानक युद्ध का चलते छ वर्ष हो गये। सम्भवत: एक भी उदाहरण ऐसा न मिलेगा जब चीनी सेना ने कहीं हथियार डाल दिये हो। एक नहीं सैकड़ों ऐसे अवसर आये होंग जब चीनी घिर गये और उनके लिए न निकल जाने का मार्ग बाकी रहा और न यही आशा रही कि बाहर से किसी प्रकार की सहायता पहुँचनी सम्भव है। पर इस स्थिति में भी वे लड़े और उनका एक एक सैनिक वीर-गति को प्राप्त हुआ, पर प्राण रहते न उन्होंने शस्त्र डाले, न प्रतिरोध करना बन्द किया और न आत्मसमर्पण किया। गत वर्ष जब प्रशान्त महासागर के युद्ध का सूत्रपात हुआ उस समय श्वेत जातियों ने अपनी जो कला दिखायी उससे चीनियों की तुलना कीजिये। हाङ्गकाङ्ग और सिङ्गापुर तथा बर्मा और मलाया का स्मरण कीजिये। अपनी शक्ति का दम भरनेवाली तथा अपनी वीरता का अभिमान करनेवाली शक्तियाँ देखते देखते विचूर्ण हुईं। सिङ्गापुर में करोड़ों रुपये स्वाहा कर दिये गये। उसे सुदृढ़ सैनिक अड्डा बनाने में वर्षों तक प्रयत्न किया गया था। दावा किया जाता था कि सिङ्गापुर के ऊपर चिड़िया भी पर नहीं मार सकती। पर वही सिङ्गापुर एक सप्ताह के अन्दर धूल में मिल गया। आश्चर्य है कि ब्रिटिश सेना ने इतने ही समय में आत्मसमर्पण भी कर दिया। बर्मा और हाङ्गकाङ्ग में उड़नेवाली ब्रिटिश पताका बलपूर्वक उखाड़ फेंकी गयी और ब्रिटिश सेना ने आत्मसमर्पण करके प्राण की रक्षा की। यह परिचय है उनकी शक्ति का जो अपनी हुङ्कार से जगत को थर्राने का दम भरते थे। दूसरी ओर असहाय और साधनहीन तथा पिछड़े हुए चीनी हैं जो एक युग बीत गया पर जापानी शक्ति का सामना करते चले जा रहे हैं। वे पूर्व

की अपेक्षा आज अधिक बलशाली हैं। उनका उत्साह अदम्य है, प्रतिरोध की उनकी शक्ति अक्षुण्ण है और उनकी दृढ़ता ऊर्ध्वाभिमुख तथा संकल्प अटल है।

विश्व के सामरिक इतिहास में पृथ्वी के पूर्वी भू भाग में चलने वाला यह युद्ध अतुलनीय है। एक ओर प्रचंड शस्त्र शक्ति है, क्रूर साम्राज्य लोलुपता है, समस्त आधुनिक साधना से सम्पन्नता है और आक्रमणकारिता के साथ चीन को मिटा देने की लालसा है। और दूसरी ओर न शक्ति है, न अस्त्र शस्त्र हैं, न सैन्य सम्भार है और न आधुनिक विज्ञान की सहायता है। जो है वह केवल मातृ-भूमि की रक्षा और राष्ट्रीय सम्मान के लिए, न्याय के लिए, मानवता के लिए और जबरदस्ती के सामने सिर न झुका देने के लिए अटल निश्चय तथा स्थिर प्रतिज्ञा है। धर्म चीनियों की ओर है, इसमें किसी का सन्देह करने की गुंजाइश नहीं है। मानवता की पुकार थी और है कि जगत की समस्त सहानुभूति, सुसंस्कृत मानव समाज की समस्त न्याय भावना, चीन का साथ देगी। गुंडई और आक्रमणशीलता तथा निर्बल को पीस डालने की चेष्टा यदि अविरोध गति से चलती रहेगी तो वसुन्धरा नर्क के तुल्य हो जायगी। जिसकी लाठी उसका राज तो उस मात्स्य-न्याय का द्योतक है जिसे मिटा कर ही मानवता मानवता कहलाने की अधिकारिणी हो सकती है। धिक्कार है हमारी सभ्यता और मानव समाज के दम्भ को यदि जगतीतल में मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए मनुष्यता का गला घोंट देने की चेष्टा करे। खेद तो यह देख कर होता है कि सन् १९३७ से लेकर सन् १९४१ तक पशुता का नग्न ताण्डव चीन में होता रहा, पर उन लोगों का एक रोम भी न सहमा जो न्याय, स्वतन्त्रता, सभ्यता और मनुष्यता के हिमायती तथा रक्षक बनते हैं। मानते हैं कि हिटलर और मुसोलिनी तथा जापानी साम्राज्यवादी नर द्रोही हैं जो विश्व का संहार तक करके अपने घमंड और अपनी सनक की पूर्ति करना चाहते हैं। पर कहाँ गये थे वे जो लोकतन्त्र का नाम लेकर गला फाड़ते हैं? कहाँ गयी थी उनकी न्याय प्रियता, शान्ति पूजा और धर्म भावना जब असहाय चीन की क्रूर हलाली की जा रही थी? मिथ्याचार और झूठे दम्भ की यह मिसाल मानव-समाज के इतिहास को सदा कलंकित करती रहेगी।

चीन पर जब जापान ने बिना युद्ध घोषणा किये आक्रमण कर दिया उस समय उसने 'राष्ट्रसंघ' से अपील की। चीन राष्ट्र संघ का

चीनी सेना गैस से बचाव की ड्रिल करती हुई

सेना द्वारा रेल पथ निर्माण

सदस्य था। रक्त-लोलुप साम्राज्यवादी पिशाचों को सामने मुँह बाये खड़ा देख कर उसने न्याय के नाम पर सभ्यता के नाम पर जगत की सहायता माँगी। पर सभ्यताभिमानी न्याय के पारखियों के कान पर जूँ भी नहीं रेंगी! चीनी शहर स्मशान हुए, जनता निर्दलित हुई, अरक्षित भू-प्रदेश ढूह बना दिये गये, स्त्रियों का सतीत्व लूटा गया, क्रूर बर्बरता की सीमा पार हो गयी, पर लोकतन्त्र और स्वतन्त्रता के रक्षक चुपचाप यह तमाशा देखते रहे! एक समय था जब चीन पर उन्होंने स्वयम् दाँत गड़ाया था। पश्चिमवालों ने स्वयम् चीनियों को पदे-पदे अपमानित किया था। सगीनों की नोक के बल पर उनके बन्दरगाहों को अपना व्यापार करने के लिए मुक्तद्वार बना रखा था। उन्होंने शताब्दियों तक चीन के अधिकारों को अपने बूटों के नीचे कुचलते हुए उसके अनेक नगरों पर अपना अधिकार जमा लिया था। अपने पाप को अवतरित करने के लिए उन्होंने इन नगरों को प्रभाव क्षेत्र, अन्तर्राष्ट्रीय बस्तियाँ तथा विशेषाधिकार क्षेत्रों के नाम से विख्यात किया। किसी राष्ट्र का इससे बढ़ कर और अपमान क्या हो सकता है कि उस राष्ट्र की सीमा के भीतर बसनेवाले वहाँ की सरकार के नैसर्गिक अधिकारों से भी अपने को अछूता समझें। एक समय था जब चीनी अदालतें चीन में बसनेवाले युरोपीय प्रजाजनों पर मुकदमा भी नहीं चला सकती थीं। किसी चोर, गिरहकट, जालसाजी, व्यभिचारी या लुटेरे और हत्यारे अँगरेज, फ्रान्सीसी या अमेरिकन पर चीनी अदालत में मुकदमा नहीं चलाया जा सकता था। उन्होंने चीन की सारी आर्थिक नीति अपने हाथ में कर ली थी। विनिमय की दर वे तय करें और जकात की दर वे निर्धारित करें। नमक का महसूल, रेलें आदि सबका प्रबन्ध उन्होंने अपने हाथों में ले लिया था। यह सब अनर्थ और कुकर्म अपने को सभ्यता और संस्कृति का एकलौता बेटा समझनेवाले, स्वतन्त्रता के पुजारी पाश्चात्यों ने किया था! ऐसा मिथ्याचार कहीं देखने को भी न मिलेगा!

जिस समय जापान का आक्रमण चीन पर हुआ उस समय इन विदेशी शक्तियों का अपना स्वार्थ भी चीन में मौजूद था। न केवल उनकी बस्तियाँ और प्रभाव क्षेत्र वहाँ थे, बल्कि उनका गहरा आर्थिक स्वार्थ सन्निहित था। सन् १९३१ ई० में चीन में जो विदेशी पूँजी लगी हुई थी वह ४९ करोड़ ६० लाख पौंड के करीब थी। इस रकम का ४९ प्रतिशत, अर्थात् करीब २४ करोड़ ६० लाख पौंड अँगरेजों

की पूँजी था। सन १९३६ में चीन के आँकड़े देखने से पता चलता है कि ब्रिटेन और अमरिका के हाथ में कुल व्यापार का क्रमश १२ और २० प्रतिशत के करीब था। चीन के कच्चे माल का निर्यात सभी देशों में होता था पर अकेले ब्रिटेन के हाथ में ९ प्रतिशत से अधिक का माल जाया करता था। चीन की जहाजरानी के व्यापार का ४० प्रतिशत ब्रिटेन के हाथ में था। स्पष्ट है कि विदेशी शक्तियों का स्वार्थ कितना महान था। उनकी स्वार्थ की पूर्ति तभी हो सकती थी जब चीन स्वतन्त्र रहता और उन्हें अपना व्यापार करने का मौका मिला करता। जापान के अधीनस्थ चीन में विदेशियों की दाल न गल सकेगी यह स्पष्ट था। मञ्चूरिया पर अधिकार स्थापित करने के बाद जापान ने वहाँ अपना एकाधिकार स्थापित कर लिया था। मञ्चूरिया में समस्त विदेशी व्यापार प्राय बन्द सा हो गया था। स्पष्ट था कि चीन पर अधिकार स्थापित करके जापान अन्य सब विदेशियों का वहाँ से निकाल बाहर करने के लिए उत्सुक था। 'एशियाटिक मुनरो सिद्धान्त' की घोषणा करके उसने अपने इरादे का साफ साफ प्रकट कर दिया था।

फलत, विशेषा साम्राज्यवादी तथा लोकतन्त्रवादी देशों को यदि और किसी कारण से नहीं तो कम से कम अपने विशुद्ध भौतिक तथा आर्थिक लाभ की दृष्टि से ही चीन के मामले में हस्तक्षेप करना चाहिए था, पर उन्होंने इसकी ओर भी ध्यान नहीं दिया। ब्रिटेन में उस समय चेम्बरलेन की सरकार थी। अमेरिका और ब्रिटेन दोनों देशों की जनता का बहुत बड़ा अंश यह समझता था कि चीन में उनके स्वार्थ का जापान की विजय से गहरा धक्का लगेगा। अत वे चाहते थे कि उनकी सरकारें उसे सहायता प्रदान करें, परन्तु जिन लोगों के हाथों में शासनसूत्र था वे चुपचाप तमाशा देखने में ही अपना कल्याण समझते थे। उनकी धारणा तो सम्भवत यह थी कि जापान की विजय यदि होती है तो हो जाने दी जाय, क्योंकि इससे उनका अकल्याण नहीं होगा। सन् १९३८ के १ली नवम्बर को ब्रिटिश पालियामेन्ट की साधारण सभा में भाषण करते हुए तत्कालीन ब्रिटिश प्रधान मन्त्री श्री चेम्बरलेन ने चीन के सम्बन्ध में जो भाव व्यक्त किए उनसे उपर्युक्त धारणा ही स्पष्ट होती है। पार्लियामेन्ट में बहुत से सदस्यों ने यह प्रश्न उठाया था कि यदि चीन पर जापानी सत्ता स्थापित हो जाती है तो इसका अर्थ होगा उस क्षेत्र से

ब्रिटेन का पूर्ण निष्कासन ! और इससे ब्रिटिश आर्थिक हितों को गहरा धक्का लगेगा।

श्री चम्बरलेन ने इस तर्क का उत्तर देते हुए जो कहा उससे पाठकों को उनकी नीयत का पता चल जायगा। आप बोले—"युद्ध के बाद चीन वास्तविक बाजार के रूप में तभी विकसित हो सकेगा जब वहाँ अपरिमित पूँजी लगायी जायगी। युद्ध में इतनी पूँजी स्वाहा हो रही है, अत उसके बाद अपेक्षाकृत अधिकाधिक धन की आवश्यकता पड़ेगी। वह पूँजी कहाँ से आवेगी ? स्पष्ट है कि जापान में इतनी क्षमता नहीं है कि वह अकेले आवश्यक पूँजी और रकम प्रदान कर सके। ऐसी स्थिति में भविष्य के सम्बन्ध में यह कल्पना करना कि एक समय ऐसा आवेगा जब जापान चीन में एकाधिकार स्थापित करके ब्रिटेन आदि राष्ट्रों को निर्वासित कर देगा, वास्तविकता की उपेक्षा करना है।" श्री चेम्बरलेन का तर्क और सकेत स्पष्ट है। उनका तात्पर्य यह था और वे कल्पना करते थे कि जापान विजय प्राप्त करने के बाद भी अकेले चीन के व्यापार को न हथिया सकेगा, क्योंकि उसकी इतनी पूँजी लगाने की शक्ति नहीं है। अत दूसरे पूँजीवादी राष्ट्रों को उसे सम्मिलित करना ही होगा। सम्भवत इसी धारणा के कारण उन्होंने चीन को तबाह होने से बचाने की आवश्यकता नहीं समझी। उनके तर्क के उलटफेर को जाने दीजिये पर उस निकृष्ट स्वार्थपरता को देखिये जिसका प्रकटीकरण उन्होंने उपर्युक्त वाक्यों में किया है। यह है वास्तविक स्वरूप उन लोगों का जो साम्राज्यवाद के परिपोषक होने का दावा करते हैं और लोकतन्त्र तथा न्याय की दुहाई देते हैं।

अब ऐसे मिथ्याचारियों के हाथ में जगत का भाग्य-सूत्र हो तो सिवा इसके और क्या आशा की जा सकती थी कि एक कोने में मानवता का निर्दलन हो और दूसरी ओर लोग कानों में तेल डाले पड़े रहें। इन्होंने विश्व शान्ति को खतरे में पड़ने की आशंका देखते हुए भी मौनावलम्बन क्यों किया यह प्रश्न ही निराधार है ? मञ्चूरिया पर आक्रमण करके जापान ने राष्ट्रसघ की अनुपयोगिता और निरर्थकता पहले ही सिद्ध कर दी थी। अब चीन पर आक्रमण करके उसने जगत की महती शक्तियों की पोल खोल दी ! उनकी कायरता और नपुंसकता पूरी तरह प्रकट हो गयी। फलत सन् १९३७ की जुलाई से लेकर ... दिसम्बर तक प्राय साढे चार वर्ष तक चीन

में पशुता अपनी समस्त विभीषिका के सहित तबाही ढाहे दे रही थी। पर किसी ने चीन की सहायता करने की आवश्यकता न समझी। माना कि चीन के लिए जापान से युद्ध घोषणा करना सम्भव न था, पर अन्य उपायों से उसकी सहायता की जा सकती थी। उसे अस्त्र शस्त्र दिये जा सकते थे, सैनिक सलाहकार भेजे जा सकते थे और आवश्यक धन कर्ज के रूप में दिया जा सकता था। पर विशेष रूप से इससे भी बचा गया और खुल्लमखुल्ला नैतिक समर्थन तक नहीं प्रदान किया गया, यद्यपि अमेरिका और ब्रिटेन की जनता की सहानुभूति चीनियों के प्रति अवश्य रही होगी।

सहायता करना तो दूर रहा लोकतन्त्रवादी देशों ने स्पष्टत जापान के सामने दब्बूपन दिखाया। काउलून हाङ्काङ रेलवे जापानियों के अधिकार में चली गयी थी। उसके बन्दरगाह छिन गये थे। अब चीन के लिए दो ही स्थल मार्ग बचे थे जिनके द्वारा वह बाहर से सामग्री आदि प्राप्त कर सकता था। फ्रान्सीसी हिन्द चीन से यूनान तक एक सड़क जाती है और दूसरी प्रसिद्ध बर्मा रोड है जो यूनान पहुँचती है। फ्रान्स उस समय ब्रिटेन का मित्र था और उसके गुट में था। जापान ने धमकी दी कि यह सड़क बन्द कर दी जाय। फ्रान्स ने उस धमकी के सामने सिर झुकाया और वह सड़क बन्द कर दी गयी। ब्रिटेन ने कुछ दिनों तक बर्मा सड़क को चलने दिया, पर बाद में सन् १९४० के अन्त में जापान की धमकी के कारण कई महीने के लिए बन्द कर दिया। यह सच है कि कुछ महीने बाद वह पुन खोल दी गयी, पर खोली गयी तब जब यह स्पष्ट हो गया कि जर्मनी और जापान की मित्रता उस सीमा तक पहुँच गयी है जब मित्र-राष्ट्रों को जापान से लड़ना पड़ेगा। उन्होंने सड़क चालू की चीन के लिए नहीं बल्कि अपने स्वार्थ के लिए। इस प्रकार लगातार चार वर्षों तक एकाकी चीन जगत के प्रचंड बलशाली साम्राज्यवाद का सामना करता रहा। उसके कल-कारखाने नष्ट किये गये, उद्योग धन्धे चौपट हो गये और चीनी नागरिक असीम संख्या में मारे गये, पर वह निश्चल भाव से लड़ता गया।

आखिर एक दिन आया जब परिस्थितियों ने पलटा खाया। किये हुए कुकर्म का फल एक दिन भोगना ही पड़ता है। मानवता का अभिशाप वज्र की भाँति पश्चिमी राष्ट्रों के सिर पर आ टूटा। स्वर्गीय

चेम्बरलेन की दुर्नीति ब्रिटेन के गले की फाँसी बन गयी। अमेरिका भी अपने पाप का फल भोगने के लिए बाध्य हुआ। अन्तर्राष्ट्रीय उद्दंडता के सामने सिर झुका कर गुंडई को प्रोत्साहित किया गया था। ऐबिसीनिया, स्पेन, आस्ट्रिया, मञ्चूरिया और चीन में हुए आक्रमणों की उपेक्षा की गयी थी। *म्यूनिख में घुटने टेक कर नाक रगड़ी गयी* और अपने हाथों अपने मुख में कालिख पोत ली गयी थी। सोचा यह गया था कि उद्दंड शासकों को सन्तुष्ट करके और दूसरे निर्बलों की हत्या के द्वारा उनकी जठराग्नि को शान्त करके, अपने को बचा लिया जायगा। सीधी सी बात समझ में नहीं आयी कि इस प्रकार की दुर्नीति उन लोगों का मन बढ़ा देने का कारण होगी जो मदमत्त होकर संसार को अपने चरणों के नीचे रगड़ने का स्वप्न देख रहे हैं। श्री चेम्बरलेन यूक्रेन की ओर संकेत करके शान्ति लाभ करना चाहते थे, पर एक दिन वह तलवार उन्हीं के गले पर लहरायी जो अब तक निर्बलों की हत्या कराते जा रहे थे।

स्पष्ट है कि चेम्बरलेन के पाप से विश्व भस्म हो रहा है और ब्रिटिश साम्राज्य भी आमूल काँप उठा है। जो युरोप में हुआ था वही एशिया में भी हुआ। गुंडई को उत्तेजना मिली तो उसका चतुर्मुख उभड़ना स्वाभाविक ही था। सोचा गया था कि चीन नष्ट होता है तो हमारी बला से। जापान की खुशामद की गयी और यहाँ तक आशा *की गयी कि चीन की पराजय के बाद भी ब्रिटेन का निर्वासन वहाँ से* न होगा। पर समय ने पलटा खाया और जापान ने ७ दिसम्बर सन् १९४१ को प्रशान्त महासागर में आग लगा दी। फिलिपाइन द्वीप समूह गया, बर्मा और मलाया गया, सुमात्रा और जावा गया, प्रशान्त के एल्यूशियन द्वीप मालाकी कतिपय मणियाँ गयीं, न्यूगिनी, न्यूजीलैंड और आस्ट्रेलिया खतरे में पड़े और भारत तक के मस्तक पर विपत्ति के बादल मँडराने लगे। पर्ल हारबर और होनोलुलू उद्ध्वस्त हो गये। चीन में हाङ्काङ्ग से ब्रिटिश सत्ता मिटा दी गयी। जब यह स्थिति उत्पन्न हुई तो स्वार्थ में अन्धे हुए लोगों की भी आँख खुलीं। फिर तो जापान उनका शत्रु हुआ और चीन बना मित्र। जो चीन *वर्षों तक इन्हीं राष्ट्रों की लड़ाई लड़ता रहा था, पर जिसकी ओर आँख* उठा कर देखने की आवश्यकता भी नहीं समझी गयी थी, उसे चीन के सामने आज करबद्ध उपस्थान किया जा रहा है। जनरलेसिमो च्याङ्काई

शेक की चाटुकारिता करने में आज ये लज्जित नहीं होते जो दो वर्ष पूर्व उनसे बात करना भी अपनी शान और अपने स्वार्थ के विपरीत समझते थे। अब चीन मित्रराष्ट्रों की पंक्ति का सम्मानित और आदरणीय सदस्य है। आज वह एकाकी नहीं है। उसका युद्ध उस विश्व संग्राम का एक अंग बन गया है जो इस भूमंडल को गेंद की तरह उछाल रहा है। मार्शल च्यांग अब विश्व की विभूति हो गये हैं। वे उन महानायकों में अग्रणी हैं जिनके हाथों जगत के भाग्य-सूत्र का संचालन हो रहा है। वे प्रशान्त के युद्ध स्थल के प्रकांड और धीर सेनानी के पद पर स्थित हैं। चीनी सेना ने न केवल चीन में बल्कि मलाया और बर्मा में भी मित्रराष्ट्रों की सहायता करके आदर प्राप्त किया है। आज वहाँ की सेना इस देश में भी भारत की रक्षा के लिए आयी हुई है।

चीन को अमेरिका और इँग्लैंड से आज भी कितनी सहायता मिल रही है और आगे क्या मिलेगी यह तो भावी इतिहासकार बतावेगा, पर इतना स्पष्ट है कि युरोप में रूस और एशिया में चीन ये दो स्तम्भ हैं जिन पर मित्र राष्ट्रों का सारा भविष्य निर्भर करता है। इन्हीं दोनों राष्ट्रों के मित्र बल पर ब्रिटेन और अमेरिका भी पुनीत हो गये हैं और जगत की सहानुभूति प्राप्त कर रहे हैं। घटनाओं ने और संयोग ने यह स्थिति उलट करके इनका कल्याण किया है। यह महा भयानक और व्यापक संघर्ष आज भी उपस्थित है। चीन और रूस के कारण यह संग्राम जन संग्राम का रूप धारण कर रहा है। परिणाम क्या होना है यह अभी भविष्य के गर्भ में है। इतना अवश्य स्पष्ट है कि यह युद्ध वास्तविक रूप में यह महाक्रान्ति है जो जगत की रूप रेखा बदलने के लिए गतिशील है। जो अब तक रहा है वह आगे न रहेगा। जो होगा उसका रूप क्या होगा इसे कोई नहीं बता सकता। पर विश्वास किया जा सकता है कि जो निर्मित होगा उसके निर्माण में चीन का प्रमुख भाग होगा। चीन-जापान के युद्ध की विस्तृत कहानी तो कभी बाद में ही लिखी जायगी। तब तक इतना ही कहना पर्याप्त है कि आज का चीन गत दस वर्ष पहले का चीन नहीं रहा। वह अब निर्दलित और अपमानित राष्ट्र नहीं है, बल्कि आदरणीय और बलशाली देश है जो दूसरे राष्ट्रों का नेतृत्व करने के लिए अग्रसर हो रहा है। युद्ध की आग में से तपन पाकर

खरे सोने की भाँति निखरा हुआ यह राष्ट्र अजेय है और अजेय रहेगा। आज उसने अपने बाहु बल से समानता प्राप्त कर ली है। अभी कल की बात है जब अमेरिका और ब्रिटेन ने अपने विशेषाधिकारों, प्रभाव क्षेत्रों और विशेष सुविधाओं का त्याग कर दिया है। चीनी राष्ट्र नायकों का स्वप्न पूरा हुआ। चीन एक है और स्वतन्त्र है। संसार में स्वतन्त्र राष्ट्रों की पंक्ति में सम्मान पद पर स्थित है। उनके इस स्वप्न से भी कुछ और अधिक हुआ। वह न केवल अपने बल्कि जगत के भाग्य का विधाता होने जा रहा है।

हम भारतीय इस युद्ध के आरम्भ से ही चीन के प्रति अपनी सहानुभूति प्रदर्शित करते रहे हैं। जब सब चुप थे उस समय भी राष्ट्रीय भारत ने चीन की विजय कामना की थी। सुदामा के तन्दुल की भाँति इस पराधीन भारत ने अपनी सद्भावना प्रदर्शित करने के लिए अपना चिकित्सक-मंडल चीन भेजा था। आज भारत का बच्चा बच्चा चीन की विजय की कामना करता है। हम जानते हैं कि चीन और भारत का अतीत में सांस्कृतिक सम्बन्ध रहा है, जब दोनों ने जगत का पथ प्रदर्शन किया था। हमारा विश्वास है कि भविष्य में पुन हमारा सांस्कृतिक, राजनैतिक तथा सामाजिक सम्बन्ध स्थापित होगा, जब दोनों राष्ट्र मिलकर एक बार फिर सन्तप्त मानवता का नयन करेंगे।

अठारहवाँ अध्याय

चीन का पुनर्निर्माण

राष्ट्रीय लोकतन्त्र की ओर

किसी राष्ट्र की विशेषता और उसकी आत्मा का बल शान्ति काल में उतना प्रतिभासित नहीं होता जितना युद्ध के समय होता है। व्यक्ति की प्रतिभा का परिस्फुरण तथा उसकी आभा जिस प्रकार विपत्ति मे प्रदर्शित होती है वैसी सुख और शान्तिकाल मे नहीं होती। व्यक्ति और राष्ट्र के जीवन मे बहुत कुछ साम्य है। फलत सजीव राष्ट्र आपदा पन्न होने पर पूर्ण प्रकाश के साथ प्रदीप्त हो उठते हैं। युद्ध से बढ़ कर दूसरी विपत्ति और क्या हो सकती है। वह युद्ध यदि रक्षात्मक हो

और आक्रमणकारी आततायी के विरुद्ध हो तो फिर क्या पूछना। अपनी ओर धर्म है, न्याय है, जगत की सहानुभूति है, मानवता सम्मत सारे आदर्श हैं—यह जान कर चीन की छाती फूल जाती है। अपने सम्मान, अपने परिवार, अपनी स्वतन्त्रता, अपने संस्कार और अपनी संस्था तथा अपने इतिहास की रक्षा के लिए मानव हृदय में जो नैसर्गिक सत्प्रेरणा वर्तमान रहती है वह सहज ही सजीव और सजग हो उठती है। चीन में भी यही हुआ। एक ओर ऐसा राष्ट्र था जिसकी विचार धारा जीवन और समाज को पशु-बल पर आश्रित करने में अपना विश्वास समझती है। उसका लक्ष्य था जगत की अन्य जातियों को कुचलकर भू-मंडल में 'निप्पोन' की पताका फहराना। उसने अपनी इस आकांक्षा की पूर्ति के लिए गत अनेक वर्षों से भीषण तैयारी करनी आरम्भ कर दी थी। सारी राष्ट्र की शक्ति संहार के विविध साधनों के निर्माण और एकत्र करने में लगी हुई थी। दूसरी ओर चीन था जिसकी ऐतिहासिक परम्परा शान्ति और भलाई को जीवन की सार्थकता के लिए आवश्यक समझ रही है। सहस्रों वर्षों के इस संस्कार से संस्कृत होकर उसने जो धारा पकड़ी थी उसमें पशु-बल के लिए कोई महत्त्वपूर्ण स्थान न था।

पर मामला यहीं समाप्त नहीं हो जाता। अनेक ऐतिहासिक कारणों के फलस्वरूप चीन निस्तेज और निर्बल हो गया था। वर्षों के गृहयुद्ध ने उसका रहा सहा दम भी निकाल दिया था। ऐसे समय अपने प्रबल पड़ोसी का सामना करने की शक्ति उसमें न थी। जनरलेसिमो च्यांग को जो थोड़ा सा अवकाश मिला था उसमें उन्होंने उसकी आत्मा को जागृत करने का भगीरथ प्रयत्न किया। उसी के बल पर आज उन्होंने धर्म के लिए, न्याय के लिए और मानवीय अधिकारों के लिए, बलि चढ़ जाने का संकल्प करके दृढ़ता के साथ कदम बढ़ाया है। इस स्थिति में चीन ने अपने आध्यात्मिक बल का जो परिचय दिया उसका दूसरा उदाहरण भी विश्व के इतिहास में मिलना कठिन है। गत पाँच वर्षों से वह अपनी परीक्षा दे रहा है और अब तक सौभाग्य से उसमें उत्तीर्ण होता रहा है। पर चीन की विशेषता इससे कहीं अधिक है। उसमें सजीवता है, बल है, प्रेरणा और आन्तरिक स्फूर्ति है। इसका प्रमाण युद्ध-काल की उसकी वीरता से ही नहीं मिलता, बल्कि उसकी उस विधायिका शक्ति से मिलता है जिसका परिचय वह आज दे रहा

है। गृह युद्ध का दमन करने के बाद जनरल च्याङ्काई को तबाह हुए मुल्क को पुनर्जीवित करने के लिए चार छ वर्ष भी तो पूरे नहीं मिले थे। केन्द्रीय सरकार को अच्छे प्रकार अपने पैरों को जमाने का मौका भी तो नहीं मिला था। राष्ट्र देह क्षतविक्षत हो चुका था, देश श्रान्त हो गया था और सरकार अब भी शैशवावस्था में ही थी। आवश्यकता थी कि कोई अच्छा चिकित्सक उपचार करके मातृभूमि को भयानक क्षतों से मुक्त करता। इसी समय जापान ने और करारा घाव मारा। देखने वाले त्रस्त हो गये। सबने सोचा कि घाव पर घाव खाकर बूढ़ा चीन सदा के लिए यमलोक पधार जायगा। उसके देह में एक बूँद भी रक्त बाकी न बचेगा जो उसके हृदय के स्पन्दन को जारी रख सके। पर देखिये उसकी अलौकिक सहनशक्ति को। उसने धैर्य और शौर्य के साथ यह चोट बरदाश्त की। उज्जीवन की असाधारण शक्ति का प्रदर्शन किया। न केवल उसने शत्रु का सामना किया और उसके विरुद्ध तलवार उठायी बल्कि भविष्य के निर्माण का काम भी बराबर जारी रखा।

लम्बे युद्ध में लड़ते रहने की तैयारी के साथ साथ जिसमें चीन के रक्त तथा उसके अपार धन का अपरिमित व्यय अवश्यम्भावी था, उसने देश के भावी सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक संगठन के आधार का निर्माण भी करना आरम्भ किया जो उसे युद्ध के बाद जगत की प्रगतिशील शक्तियों में प्रमुख स्थान प्रदान करने का कारण होगा। गत पाँच वर्षों के उसके संकटमय जीवन का यह अंग पहले की अपेक्षा कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है। चीनी जनता की मौलिकता, उसके चरित्र, उसकी सहनशक्ति और उसकी सप्राणता का प्रमाण उसका यही कार्य उपस्थित करता है। जिस समय चीनी आकाश बर्बर जापानी विमानों से आच्छादित हो, जब नभ से होनेवाली अग्निवर्षा से देश धू धू जल रहा हो और जब आततायियों की सेना उसके वक्ष स्थल पर सवार उसका रक्तपान करने के लिए सन्नद्ध दिखायी दे रही हो उस समय भी चीन धैर्य के साथ नष्ट हुए प्रदेशों, नगरों कल कारखानों और उद्योग धन्धों का निर्माण करता चला जा रहा है। देश के आर्थिक धन के उत्पादन के लिए जोरदार प्रयत्न हो रहा है, नवसमाज का निर्माण हो रहा है, नवराष्ट्र प्रादुर्भूत हो रहा है और सबसे बढ़ कर देश में लोकतन्त्र की सच्ची स्थापना के लिए प्रयत्न

हैं। समीक्षा या परीक्षा से उनका तात्पर्य यह था कि सरकार ऐसे लोगों का चुनाव करे जो उसकी सेवा में रहकर काम करें। सिविल सर्विस की स्थापना की जाय और परीक्षा द्वारा योग्यतम व्यक्तियों का चुनाव हुआ करे। नियन्त्रण से अर्थ यह था कि सरकारी अफसरों की देख-रेख की जाय और अयोग्यों की निन्दा तथा उनसे जवाब तलबी की जा सके।

राष्ट्रीय जनतन्त्रात्मक सरकार की स्थापना के लिए उन्होंने क्रमशः तीन सीढ़ियाँ बनायीं। पहले क्रान्ति के बाद राष्ट्रीय तत्त्वों को एकता के सूत्र में आबद्ध करने तथा क्रान्ति विरोधियों का दमन करने के लिए सैनिक सरकार स्थापित हो। इस कार्य के हो जाने पर कुओमिंगतांग दल की सरपरस्ती में सरकार का संगठन हो। यह दूसरी सीढ़ी है जब शासन का भार तो कुओमिंगतांग पर ही रहे पर साथ-साथ जनता को लोकतन्त्र की शिक्षा देने का काम किया जाय। इसके उपरान्त तीसरी अवस्था वह आवेगी जब वैधानिक लोकतन्त्र की स्थापना होगी जिसमें सारा राजनैतिक अधिकार जनता के हाथों में समर्पण कर दिया जायगा।

इस तरह प्रथमावस्था में देश का शासन सैनिक दृष्टि से किया जाय और दूसरी अवस्था का आरम्भ उस समय हो जब विविध प्रान्तों में शान्ति स्थापित हो जाय। ऐसा कोई प्रान्त जिसमें यह स्थिति आ गयी हो दूसरी सीढ़ी पर चढ़ सकता है। उस प्रान्त के विभिन्न मंडल या जिले विस्तृत रूप से अपनी जनसंख्या का संकलन करें, तमाम भूमि की नापजोख (सर्वे) की जाय, स्थानीय रक्षा दलों का संगठन कर दिया जाय, उसकी मुख्य सड़कें बना डाली जायँ और लोगों में राजनैतिक शिक्षा का प्रचार करके उन्हें प्रबुद्ध कर दिया जाय जिसमें वे अपने अधिकारों और कर्तव्यों को समझ सकें। जब किसी प्रान्त के सब जिले इस प्रकार तैयार हो जायँ तो वहाँ वैधानिक, प्रतिनिधिमूलक शासन व्यवस्था स्थापित की जाय। जब देश के आधे से अधिक प्रान्तों में शासन प्रतिनिधिमूलक हो जाय तो जन सम्मेलन बुलाया जाय जो देश के लिए लोकतन्त्रात्मक शासन विधान का निर्माण करे। इसके बाद देश में पूर्ण जनतन्त्रमूलक राष्ट्रीय सरकार स्थापित हो जो जनसम्मेलन के प्रति उत्तरदायी हो।

डाक्टर सुन की उपर्युक्त कल्पना और सिद्धान्त के आधार पर ही कुओमिंगतांग ने कार्य करना आरम्भ [illegible] आज यही विचार चीन के राजनैतिक, आर्थिक [illegible] मूलशिला हैं जिन

पर भावी व्यवस्था का भवन निर्मित हो रहा है। जो पद्धति निर्धारित की गयी थी उसके अनुसार सन् १९२७ ई० तक सैनिक शासन परिचालित था। जब उत्तर की विजय समाप्त होने को आयी तो दल की संरक्षकता में राष्ट्रीय सरकार की स्थापना की गयी। नानकिङ्ग में बनी राष्ट्रीय सरकार कूओमिन्ताङ्ग के नेतृत्व और संरक्षण में निर्मित हुई थी। यह कूओमिन्ताङ्ग के प्रति उत्तरदायी थी और उसी की आज्ञा से काम करती थी। एक प्रकार से कूओमिन्ताङ्ग और राष्ट्रीय सरकार एक ही वस्तु थी। उसका एक विभाग राष्ट्रीय सरकार भी थी। सन् १९२८ में निश्चय किया गया था कि दल का संरक्षण और दलगत सरकार की समाप्ति ६ वर्ष में हो जानी चाहिए और उस समय जन-सम्मेलन बुला कर नया शासन विधान स्वीकार कर लिया जाना चाहिए। पाठकों को स्मरण होगा कि च्यांङ्काई शेक ने सन् १९३१ ई० में दल की कांग्रेस बुलायी थी जिसने एक सम्मेलन बुलाया। इस सम्मेलन में अस्थायी विधान स्वीकार किया गया और निश्चय हुआ कि जनतन्त्रात्मक स्थायी विधान का मसविदा बनाया जाय। सन् १९३४ में यह मसविदा बनाने का काम आरम्भ हुआ। कूओमिन्ताङ्ग की कार्य समिति के तृतीयाधिवेशन में डाक्टर सुन फो का एक प्रस्ताव स्वीकार किया गया जिसमें कहा गया था कि सन् १९३५ में जन सम्मेलन बुलाया जाय और व्यवस्थापक विभाग शीघ्र से शीघ्र विधान का एक मसविदा तैयार करे जो विधान उसके सामने उपस्थित किया जाय।

इस निर्णय के अनुसार व्यवस्थापक विभाग ने ४२ सदस्यों की एक कमिटी बनायी जिसका अध्यक्ष डाक्टर सुन्-फो को निर्वाचित किया गया। इस समिति ने विधान का एक मसविदा बनाकर प्रकाशित किया और उसके पक्ष विपक्ष में जन मत का आवाहन किया। सन् १९३३ से १९३६ ई० तक कूओमिन्ताङ्ग इस काम में लगी रही। विशेषज्ञों और जन-मत के अनुसार एक दो बार नहीं बल्कि चार बार अपने प्रस्तावित विधान के मसविदे में परिवर्तन किया। अन्त में १९३६ ई० में आखिरी मसविदा देश के सामने आया। निश्चय हुआ कि सन् १९३७ में जन-सम्मेलन बुला कर इस मसविदे को स्थायी और वैधानिक रूप प्रदान किया जाय। पर घटनाओं ने दूसरी धारा पकड़ी जिससे यथासमय जन-सम्मेलन का संयोजन असम्भव हो गया। जापानी आक्रमण हो जाने पर इस कार्य को स्थगित कर देना आवश्यक हुआ। यह सम्भव

ही नहीं है कि एक ओर विदेशी शत्रु द्वार पर खड़ा हो और घर में कानूनी बहस आरम्भ की जाय। चीन का अस्तित्व ही जब खतरे में पड़ा था तो फिर विधान बनाने की बात कौन करता। यद्यपि यह काम रुका, फिर भी युद्धकाल में सरकार ने अपने विधान में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किये। ये परिवर्तन उसे वैधानिक लोकतन्त्र की ओर बढ़ाने में ही सहायक हुए हैं और इस बात के संकेत हैं कि इस विपत्ति के समय में भी चीन युद्ध के साथ साथ राजनैतिक प्रगति में अग्रसर होता जा रहा है।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है आज चीन में क्वोमिङताङ्ग की सरकार स्थापित है। इस संस्था के सदस्य देश भर में फैले हुए हैं। इन्हें निश्चित रूप से सदस्यता की भीख के रूप में दी जाती है। क्वोमिङताङ्ग का सदस्य कोई उसी समय हो सकता है जब प्रार्थी को सदस्य बनाने की सिफारिश दूसरे कोई दो पुराने सदस्य करें। वह अपने सदस्यों पर कठोर अनुशासन रखता है और सदस्य को शपथ लेना पड़ता है कि वह क्वोमिङताङ्ग, डाक्टर सुन के तीन सिद्धान्त तथा राष्ट्र के प्रति सदा अपनी भक्ति रखेगा। क्वोमिङताङ्ग की प्रान्तीय और जिला समितियाँ देश भर में फैली हुई हैं। क्वोमिङताङ्ग इस प्रकार देश की सर्वोच्च संस्था है। दो वर्ष में एक बार उसका सम्मेलन होता है। इस कांग्रेस के प्रतिनिधियों का चुनाव जिला कमिटियाँ करती हैं। क्वोमिङताङ्ग द्वारा निर्धारित नीति और निर्णीत विषयों को कार्यान्वित करती हैं उसकी केन्द्रीय कार्य-समिति और केन्द्रीय निरीक्षक समिति। इन दोनों का निर्वाचन और संगठन स्वयम् कॉंग्रेस करती है। कांग्रेस का अधिवेशन जब समाप्त हो जाता है तो ये ही दोनों समितियाँ उसका प्रतिनिधित्व करती हैं और पार्टी तथा सरकार के संचालन का सारा भार इन्हीं पर होता है। इन दोनों कमिटियों के सदस्यों की कुल संख्या प्रायः २६० होती है जो हर छठे महीने अपने अधिवेशन में एकत्र होते हैं। केन्द्रीय कार्य-समिति को अधिकार है कि दल तथा सरकार के किसी मामले के सम्बन्ध में नीति निर्धारित करे। उसका निर्णय अन्तिम है और सिवा कांग्रेस के उसे बदलने का अधिकार किसी को नहीं है। पर यह समिति भी सदस्यों की अत्यधिक संख्या के कारण जल्दी जल्दी अधिवेशन नहीं कर सकती। सरकार का काम ऐसा जटिल है कि उसके लिए उसके आदेशों

की आवश्यकता बहुधा पड़ा करती है। इसलिए कार्य समिति एक छोटी स्थायी समिति की नियुक्ति करती है जो 'राजनैतिक समिति' (पोलिटिकल कौन्सिल) के नाम से विख्यात है। इस समिति का सम्बन्ध विशेष कर सरकारी नीति और व्यवस्था से होता है और यही सरकार तथा कुओमिङ्ताङ्ग के बीच दोनों को जोड़े रहने के लिए सूत्र का काम करती है।'

डाक्टर सुन के सिद्धान्त के अनुसार चीनी सरकार इन पाँच विभागों में विभक्त है—शासन विभाग, व्यवस्थापक विभाग, न्याय-विभाग, परीक्षा और नियन्त्रण विभाग। इन विभागों की समितियों को चीन में 'युआङ' कहते हैं। इन पाँचों युआङ की समितियों तथा उनके अध्यक्ष की नियुक्ति कुओमिङ्ताङ्ग की कार्य समिति अपने सदस्यों में से करती है। राष्ट्रीय सरकार के अध्यक्ष की नियुक्ति भी यही करती है। इस प्रकार ये सरकारी विभाग सब कुओमिङ्ताङ्ग की कार्य-समिति के अधीन हैं, उसके प्रति उत्तरदायी हैं और उसी के आदेश से चलते हैं। यह कार्य समिति उत्तरदायी है कुओमिङ्ताङ्ग की राष्ट्रीय काँग्रेस के प्रति जिसके प्रतिनिधियों का चुनाव ज़िले ज़िले की ज़िला कमिटियाँ करती हैं। संक्षेप में चीन सरकार की यही व्यवस्था है। स्पष्ट है कि यह व्यवस्था शुद्ध लोकतन्त्रात्मक नहीं है। कुओमिङ्ताङ्ग दल की ही सत्ता के संरक्षण में सरकार परिचालित होती है। यह स्थिति उस समय तक चलती रहेगी जब तक वैधानिक लोकतन्त्र की स्थापना न हो जाय। कुओमिङ्ताङ्ग ने निश्चय किया था कि अब वह अपने संरक्षण को समाप्त करके जनता के हाथों में उसका वह अधिकार समर्पित कर दे जिसकी रक्षा संरक्षक की हैसियत से वह राष्ट्रीय जीवन के संक्रान्तिकाल में कर रहा था। इसके लिए प्रयत्न भी आरम्भ हो गया था, विधान का मसविदा बना कर प्रकाशित कर दिया गया था और जन-सम्मेलन का आयोजन भी किया जानेवाला था, पर उसकी सारी योजना जापानी आक्रमण के कारण रुक गयी। जब देश का अस्तित्व ही खतरे में पड़ा तो फिर चीन को डाक्टर सुन की कल्पना के अनुसार प्रगति की तीसरी अवस्था को पहुँचने के स्थान पर एक कदम पीछे हट कर पहली अवस्था में आ जाना पड़ा। युद्ध की आवश्यकता की अपेक्षा थी कि सब कार्य और सरकार का सारा संचालन सैनिक आवश्यकता की पूर्ति की दृष्टि से किया जाय।

सन् १९३७ का जा सम्मेलन तो रुक गया पर कुओमिङ्ताङ्ग की कांग्रेस का अधिवेशन हाङ्काउ में सन् १९३८ में हुआ। कांग्रेस के सामने युद्धजन्य परिस्थिति के कारण बहुत से प्रश्न विचारणीय थे। युद्धकाल की आवश्यकता किस प्रकार पूरी की जाय, किस प्रकार सरकार के हाथों में सारा अधिकार केन्द्रीभूत किया जाय जिसमें युद्ध का सचालन सुचारु ढग से हो सके और किस प्रकार कुओमिङ्ताङ्ग का सगठन सुदृढ़ बनाया जाय। देश की आर्थिक स्थिति को सँभालने आदि में भी अनेक प्रश्न उसके सामने थे। कांग्रेस ने सबसे बड़ी आवश्यकता तो यह समझी कि युद्धकाल की विशेष परिस्थिति में अधिकारों का केन्द्रीकरण किये बिना काम नहीं चल सकता। अत उसने निश्चय किया कि अब समय आ गया है जब उसे अपना एक नेता निर्वाचित करना चाहिए और सारा अधिकार उसे सौंप देना चाहिए। इस निर्णय के अनुसार च्याङ्काई शेक को उसने अपना सर्वेसर्वा नियुक्त किया। डाक्टर सुनयात सेन के देहावसान के बाद कुओमिङ्ताङ्ग ने किसी को अपना एक मात्र दल नेतृत्व नहीं प्रदान किया था। नेतृत्व का सारा काम वह स्वयम् सामूहिक रूप से कर रही थी। आज उसने च्याङ्कइ को बाजाब्ता नेता चुन कर उन्हें अपने सचालन का अधिकार सौंप दिया। च्याङ्काई को 'सुङ्गचाई' ? (प्रधान सचालक) का पद प्रदान किया गया। इसके साथ कांग्रेस ने 'सशस्त्र प्रतिरोध और राष्ट्रीय पुनर्निर्माण का विस्तृत कार्यक्रम बनाया जिसके लिए निम्नलिखित दस बातें आधार रूप स्वीकार की गयीं। इन दस बातों का यहाँ उल्लेख कर देना आवश्यक है, क्योंकि गत पाँच वर्षों से चीन की सरकार और कुओमिङ्ताङ्ग उन्हीं के अनुसार कार्य कर रही है और सारी व्यवस्था उन्हीं के अन्तर्गत प्रचलित है। देश की समस्त शक्ति उसी में लगी हुई है। वे बातें इस प्रकार हैं —

(१) डाक्टर सुन के राजनैतिक और क्रान्तिकारी सिद्धान्त युद्धकालीन कार्यक्रम तथा राष्ट्रीय पुनर्निर्माण की सारी योजना के पथ प्रदर्शक तथा मान्य लक्ष्य घोषित किये जाते हैं। युद्धकालीन अधिकार और नियन्त्रण कुओमिङ्ताङ्ग तथा जनरलेसिमो च्याङ्काई के हाथों में समर्पण किये जाते हैं।

(२) चीन उन समस्त शक्तियों राष्ट्रों तथा समूहों से मित्रता स्थापित करता है जो विश्व शान्ति की स्थापना के प्रयत्न में लगे हैं

तथा जापानी साम्राज्य शक्ति का विरोध करने के लिए तैयार हैं। यह शान्ति की स्थापना और साम्राज्यवाद की आक्रमणशीलता को नष्ट करने के लिए जो भी समझौते या सुलहनामे हों उनमें सम्मिलित होने के लिए तैयार हैं।

(३) शारीरिक दृष्टि से सभी समर्थ पुरुषों को सैनिक शिक्षा दी जायगी। मशस्त्र जनता गुरिल्ला दलों में संगठित की जायगी, घायल तथा मृत सैनिकों के आश्रित जनों को पेन्शन दी जायगी तथा इन सैनिकों के परिवारों के योग क्षेम का प्रबन्ध किया जायगा जो युद्ध स्थल पर लड़ रहे हैं। सेना को अधिकाधिक राजनैतिक शिक्षा दी जायगी।

(४) जनता के प्रतिनिधियों की एक समिति 'पापुलर पालिटिकल काउन्सिल' के नाम से संगठित की जायगी जिसमें राष्ट्र के बुद्धिमान लोगों का सहयोग प्राप्त किया जा सकेगा और जो राष्ट्रीय नीति के निर्धारण तथा कार्यान्वित करने में सहायता प्रदान करेगी।

(५) स्थानीय स्वशासन के सिद्धान्त को व्यावहारिक रूप दिया जायगा। प्रान्तों के विभिन्न जिले इसके आधार बनाये जायँगे। कोशिश की जायगी कि ये जिले जल्दी से जल्दी इस लायक हो जायँ कि उस नये राजनैतिक तथा सामाजिक व्यवस्थापन के आधार बन सकें जो अन्त में देश में वैधानिक लोकतन्त्र की स्थापना करने में सहायक होगा।

(६) केन्द्रीय तथा प्रान्तीय और स्थानीय शासन यन्त्रों में ऐसा सुधार किया जायगा जिससे वे अधिक सीधे और सरल हो जायँ और युद्धकाल की आवश्यकता पूर्ण कर सकें।

(७) आर्थिक पुनर्निर्माण का कार्य जोरों से आरम्भ किया जायगा। गाँवों की आर्थिक स्थिति सुधारी जाय, सहयोग समितियों की स्थापना हो और उन्हें उत्तेजन प्रदान किया जाय। खनिज पदार्थों को ढूँढ निकाला जाय, यातायात के साधन उन्नत किये जायँ सट्टेबाजी चाल रोक कर मुनाफा कमाने की प्रवृत्ति नियन्त्रित हो और लेनदेन तथा बैंकों के व्यवसाय पर अंकुश रखा जाय।

(८) भाषण करने, लिखने तथा मिलने-जुलने की स्वतन्त्रता घोषित की जाय, पर शर्त यह हो कि इसका दुरुपयोग डाक्टर सुन के सिद्धान्तों के विरुद्ध प्रचार करने में न किया जाय।

(९) देश का युवक-समुदाय शिक्षित बनाया जाय। शिक्षा पद्धति में आमूल परिवर्तन किया जाय और विशेष योग्यतावाले विशेषज्ञ सब पदों पर नियुक्त किये जायँ।

(१०) जापान ने चीन में अपने हित के लिए जितनी संस्थाएँ गढ़ कर खड़ी की हैं वे ग़ैर क़ानूनी घोषित की जाती हैं और जो नागरिक इनके बर्ता हैं तथा जो कार्य उन्होंने किया है उसे अस्वीकार किया जाता है।

पार्टी काँग्रेस के इस निर्णय की विशेषता स्पष्ट है। ध्यान देने की बात है कि उसने केवल 'सशस्त्र प्रतिरोध' का ही नारा बुलन्द नहीं किया; बल्कि उसके साथ ही 'राष्ट्रीय पुनर्निर्माण' का भी अपना लक्ष्य बनाया। चीन दोनों काम साथ साथ करना चाहता है। उसके लिए यह युद्ध भी राष्ट्रीय पुनर्निर्माण का अवसर प्रदान करने का कारण हुआ है। जापान पर विजय प्राप्त करना साधन है और सिद्धि है चीनी राष्ट्र का नव निर्माण और पुनरुज्जीवन, जिसके कारण वह जगत में अपने योग्य पद प्राप्त कर सकेगा। चीनी जन-नायकों की बुद्धि, चरित्र और सूझ का यह परिणाम है कि वे संकट की आग में जलते हुए भी धैर्य धारण किये हुए हैं और जापान को पराजित करने के साथ-साथ राष्ट्रोत्थान के काम में संलग्न हैं। उनकी यही विशेषता उनके बल, उनकी शक्ति और उनकी दृढ़ता का स्रोत बनी हुई है जो उस जापान का मुक़ाबला सफलतापूर्वक कर रहा है जिसने युरोप की शक्तियों की जड़ हिला दी है और सिंगापुर में एक सप्ताह में अपनी पताका फहरा दी है। यह सच है कि चीन में युद्ध काल में वैधानिक सरकार की स्थापना का आन्दोलन रोक देना पड़ा। इसके विपरीत अधिकार का केन्द्रीकरण करना आवश्यक हो गया। च्याङ्काई शेक सरकार के अध्यक्ष और क्वोमिङताङ्ग के एकमात्र नेता, दोनों पदों पर प्रतिष्ठित हुए। संरक्षण सभा और राजनैतिक समिति के भी वही प्रमुख हुए। इसके सिवा आर्थिक तथा सामाजिक नीति और शिक्षा के सम्बन्ध में जितनी समितियों का निर्माण हुआ प्रायः उन सबका अध्यक्ष उन्हें बनना पड़ा। यह इसी दृष्टि से किया गया कि युद्धकाल में विविध विभागों की एकता आवश्यक है और अधिकार का केन्द्रीकरण होना ही चाहिए।

पर चीनी जहाँ वर्तमान को सोचता है वहाँ वह प्रकृत्या भविष्य को भुलाने में समर्थ नहीं होता। यह सब होते हुए भी वैधानिक प्रगति

की बात उसके दिमाग से बाहर नहीं हो गयी है। यद्यपि वैज्ञानिक शासन की स्थापना की योजना चलायी नहीं जा सकती, पर उस ओर बढ़ते रहना सम्भव हो सकता है। इस सम्भावना की उपेक्षा कुओमिङ्ताङ्ग तथा च्याङ्काई शेक ने नहीं की है। विभिन्न ज़िलों को स्थानीय स्वशासन का अधिकार प्रदान करके उन्हें लोकतन्त्र के विज्ञान में शिक्षित करने का काम बराबर जारी है। गत तीन वर्षों से इस दिशा में असाधारण शीघ्रता के साथ बराबर काम होता रहा है। पूर्व के पृष्ठों में लिखा जा चुका है कि डाक्टर सुङ के मतानुसार केन्द्रीय लोकतन्त्रात्मक सरकार की स्थापना तभी होनी चाहिए जब विविध प्रान्त और उनके अधीनस्थ ज़िले स्वशासन के योग्य हो जायँ। फलतः यह काम किया जा रहा है जो अन्त में चलकर केन्द्र में जनतन्त्र की स्थापना का आधार होगा। दूसरी बात 'जनता की राजनैतिक समिति' की स्थापना है। इसके सदस्यों की संख्या दो सौ के करीब है। गैर-सरकारी तथा विविध क्षेत्रों के प्रभावशाली तथा प्रतिनिधित्व करनेवाले लोगों का सगठित करके यह स्थापित की गयी है। सरकार के लिए अनिवार्य है कि किसी नीति को ग्रहण करने के पूर्व इस समिति की राय ले ले। इस समिति ने प्रान्तों तथा ज़िलों में अपनी शाखा कमिटियाँ स्थापित कर ली हैं। जनमत का प्रतिनिधित्व करनेवाली यह समिति एक प्रकार से सरकार को प्रभावित करती रहती है।

यद्यपि इतने से लोकतन्त्रात्मक सिद्धान्त पूर्ण नहीं होता, पर जनमत के प्राबल्य की भावना का विकास इससे अवश्य होता है जो आगे चलकर समय आने पर विशुद्ध जनतन्त्र की स्थापना में सहायक होगा। तीसरे कुओमिङ्ताङ्ग ने युद्ध में पड़े रहने पर भी सन् १९४० में जन सम्मेलन बुलाने का निश्चय किया। पर अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों के कारण यह काम पुनः पूरा न हो सका। देश के विभिन्न कोनों से दो हज़ार प्रतिनिधियों को एक स्थान पर एकत्र करना भी सम्भव नहीं था, ऐसे समय में जब प्रत्येक भू भाग बमों की मार से उद्ध्वस्त हो रहा था। फलतः उसे पुनः जन-सम्मेलन को टाल देना पड़ा, पर यह इस बात का प्रमाण है कि कुओमिङ्ताङ्ग अपने हृदय से शीघ्र से शीघ्र जन सरकार की स्थापना के लिए इच्छुक है। आज इन बातों से स्पष्ट है कि यद्यपि चीन में युद्ध के कारण जनता के प्रतिनिधियों का शासन स्थापित नहीं हो पाया है और न

विशुद्ध लोकतन्त्र प्रादुर्भूत हो रहा है फिर भी चीन उसकी ओर बढ़ता जा रहा है और उसके नेता उसे उस लक्ष्य तक पहुँचाने के लिए उत्सुक हैं। युद्ध के समाप्त होते ही कूओमिंताङ्ग जनता को उस पवित्र धरोहर को उसे सौंप देगा जिसकी रक्षा वह गत तीस वर्षों से कठिन तपस्या और अध्यवसाय के साथ कर रहा है। चीनियों का यह विश्वास आज उन्हें कूओमिंताङ्ग की पताका के नीचे एक राष्ट्र के रूप में एकत्र किये हुए है।

उन्नीसवाँ अध्याय

चीन का पुनर्निर्माण

आर्थिक स्वतन्त्रता की ओर

आर्थिक क्षेत्र में चीन ने गत पाँच वर्षों में जो कुछ किया है उसे देख कर तो स्तब्ध हो जाना पड़ता है। विपत्ति में पड़ कर किसी राष्ट्र की प्रतिभा का परिस्फुरण किस आश्चर्यजनक ढंग से होता है इसका प्रमाण जिसे पाना हो वह चीन की ओर देखे। भारत ऐसा देश जो ब्रिटिशों का दास बन कर अपनी सारी आन्तरिक प्रेरणा खो बैठा है और जहाँ के लोग समझते हैं कि अँगरेज चले गये तो असहाय भारतीय कुछ कर ही न सकेंगे उसे विशेष रूप से अपने पड़ोसी की ओर देखना चाहिए। चीन की गजब की कार्यक्षमता देखकर ज्ञात हो जायगा कि मनुष्य यदि करना चाहे तो महान विपत्तियों से भी बल प्राप्त कर असम्भव को सम्भव कर दे सकता है। युद्ध के लिए चीन को अनेक पदार्थों की आवश्यकता थी। कोयला, लोहा, तेल आदि खनिज पदार्थों की, सेना के लिए गोला बारूद, अस्त्र-शस्त्र, अन्न, वस्त्र, जूते, हवाई जहाज आदि सैन्य सम्भार की, देश की जनता के लिए खाने पीने के सामान तथा तन ढाँकने के लिए कपड़े की और इसके बाद बेकार तथा बुभुक्षित लोगों को काम की और युद्ध की सफलता के लिए रेल, सड़कों, पुलों तथा यातायात के

अन्य साधनों की। कहाँ तो ये आवश्यकताएँ और कहाँ साधनहीन चीन ? कोई विदेशी राष्ट्र उसकी सहायता करनेवाला नहीं था। मुकाबिला करना था जापान ऐसे प्रबल राष्ट्र का !

कल्पना तो कीजिये चीन की कठिन समस्या की जो उसके सामने उपस्थित थी और प्रशंसा कीजिये उसके धैर्य और लगन की कि उसने गत पाँच वर्षों में इस समस्या के सुलझाने की चेष्टा की और आज युद्ध की अपेक्षा कहीं अधिक सुदृढ़, साधन सुसम्पन्न तथा बलशाली है। युद्ध के पूर्व चीन में महान राष्ट्रीय कल कारखानों का अभाव सा था। समुद्र तटवर्ती प्रदेशों में अच्छे कारखाने थे पर उनका स्वामित्व विदेशी पूँजीपतियों और व्यवसायियों के हाथों में था। पर गृह-युद्ध के बाद राष्ट्रीय आवश्यकता, विदेशी शत्रु के प्रतिरोध और अपने पुनर्निर्माण की दृष्टि से विस्तृत उद्योग धन्धों का विकास हुआ। जिस समय चीन पर जापान का आक्रमण हुआ उस समय देश में कल-कारखानों की स्थापना के लिए सरकार की सत्प्रेरणा से त्रैवार्षिक योजना कार्यान्वित हो रही थी, पर युद्ध के कारण उस योजना में मौलिक परिवर्तन करने पड़े। बड़े बड़े कल कारखाने जापानी बमों के प्रहार से उद्ध्वस्त हो रहे थे। हाङ्काउ के पतन के बाद चीन सरकार ने इस बात का अनुभव किया कि यदि यही गति रही और इसी प्रकार हमारे कारखाने और फैक्ट्रियाँ नष्ट होना रहीं तो फिर न केवल चीन भर में उद्योग नष्ट हो जायँगे, बल्कि [illegible] लिए शत्रु का सामना करना भी असम्भव हो जायगा। [illegible] उसने निश्चय किया कि पूर्वी चीन के बड़े बड़े कारखानों को [illegible] सुदूर पश्चिमी प्रदेशों में ले जाया जाय। क्याङ्सी, हूपेह, और [illegible] प्रान्तों की फैक्ट्रियाँ हटा कर चेग्नाङ, सिक्याङ, युनान, [illegible] क्वाङ्गची तथा काङचू प्रान्तों में ले जायी गयीं। [illegible] प्रदेशों में फैक्ट्रियों को ले जाकर पुन स्थापित करने [illegible] के आर्थिक विभाग को महान प्रयास करना पड़ा, [illegible] पूर्वक इस काम को उठाया और उसी के [illegible] आरम्भ हुआ।

आर्थिक विभाग ने कल कारखानों को [illegible] कर दूसरे स्थान में ले जाने और स्थापित [illegible] उसने बड़ी [illegible] सुविधा तथा [illegible]

प्रान्तों में उनका बँटवारा किया। युद्ध के आरम्भ होने के समय चीन में छोटे बड़े कुल मिलाकर करीब चार हजार कल कारखाने थे। ये सबके सब व्यक्तिविशेषों की निजी सम्पत्ति थे। इन कारखानों में १२ सौ से अधिक केवल शङ्घाई में थे। पूर्वी तट पर युद्धारम्भ होते ही सरकार की सहायता तथा प्रबन्ध से प्राय छ सौ कारखाने पश्चिमी चीन की ओर हटाये गये। सरकार ने इनका बँटवारा भी विविध प्रान्तों में किया। २५० चेरवाङ में, १२१ युनान में, ४३ शेडची में, २५ क्वाङ्गची में तथा इसी प्रकार १३ कारखाने और दूसरे प्रान्तों में स्थापित किये गये। सवा लाख टन के करीब इन कारखानों का माल और करीब एक लाख होशियार तथा जानकार मजदूरों को पूर्व से पश्चिम की ओर लाया गया। चुङ्किङ्ग में आज ४४३ कल कारखाने स्थापित हैं। युद्ध के बाद से नये और पुराने कुल मिलाकर करीब साढ़े तेरह सौ विशुद्ध चीनी कारखाने देश भर में फैले हुए हैं जो राष्ट्र के पुनर्निर्माण तथा शत्रु के प्रतिरोध में सहायता पहुँचा रहे हैं। विविध प्रकार के कारखानों में जो वृद्धि हुई है उसे देख कर ताज्जुब होता है। सूत कातने और कपड़ा बुननेवाले कारखानों की संख्या जहाँ पहले १०२ थी वहाँ अब यह बढ़ कर पौने तीन सौ हो गयी है। मशीनों के कल पुरजे बनानेवाले कारखाने ३७ से ३७९, धातु की ढलाई और खदान के कारखाने ४ से ८७, रासायनिक पदार्थ बनानेवाले ७८ से ३८०, बिजली के सामान बनानेवाले कारखाने १ से ४४ हो गये हैं। तेल को शुद्ध करनेवाले, शराब बनानेवाले कागज बनानेवाले, सीमेन्ट बनानेवाले कारखाने सैकड़ों की संख्या में युद्ध के बाद स्थापित हुए हैं। कोयले और लोहे की खानें खोदने का काम हाल में ही आरम्भ किया गया है। लोहे की १२२ तथा कोयले की १६ सौ खानों में काम किया जा रहा है। युद्ध के पूर्व कोयले की कुल ७४३ और लोहे की ३३ खानें काम कर रही थीं। ये भी पुराने ढंग से सकुचित क्षेत्र में ही काम करती थीं। निजी कल-कारखानों के सिवा १०० से ऊपर विशाल कारखाने सरकार के आर्थिक विधान के अधीन काम कर रहे हैं।

आज चीन इन कारखानों के कारण अपनी प्राय समस्त आवश्यक चीजों के सम्बन्ध में स्वावलम्बी हो गया है। कहा जाता है कि चीन को कोयले की कमी नहीं है। विशेषज्ञों का अनुमान है कि चीनी भूमि के गर्भ में २५० खरब टन कोयला भरा पड़ा है। युद्ध के पूर्व

देश में कोयले की जो खपत थी उतने की पूर्ति के लिए चीन के पास इतना कोयला है कि वह दस हजार वर्ष तक आराम से अपना काम चला सकता है। लोहे के सम्बन्ध में उसे कठिनाई पड़ेगी ऐसा ख्याल किया जाता है, तथापि उसकी भी काफी मात्रा उसे उपलब्ध है। लोहे के उत्पादन के लिए सरकार विशेष रूप से सचेष्ट है। कहा जाता है कि केवल चेख्याङ प्रान्त में १४ करोड ७८ लाख टन से अधिक लोहा पृथ्वी के उदर मे मौजूद है और सारे चीन में सम्भवत १ खरब टन लोहा निकल आवेगा। सरकार बड़े-बड़े कारखानों को स्थापित करके उनकी उत्पत्ति को बढ़ाने के लिए सचेष्ट है। कारखानों के उपयोग के लिए पानी से बिजली पैदा करने पर विशेष जोर दिया जा रहा है। युद्ध के पूर्व जितनी बिजली इस प्रकार पैदा की जाती थी उसकी पचगुनी अब पैदा की जा रही हे और उसका उत्पादन धीरे धीरे बढ़ता ही जा रहा है। कपास के सूत की कताई और कपड़े की बुनाई का मुख्य व्यवसाय युद्ध के पूर्व अधिकतर विदेशियों के हाथ में था। चीनी कारखाने पहले थोडा बहुत उत्पादन अवश्य करते थे पर विदेशियों की प्रतिस्पर्द्धा के मारे टिकने नहीं पाते थे। युद्धारम्भ के थोड़े दिनों बाद ही सरकार ने इधर ध्यान दिया। सन् १९३७ या १९३८ में जहाँ ३३ हजार गाँठ सूत चीनी कारखाने तैयार करते थे वहाँ आज १ लाख से अधिक गाँठ का माल तैयार हो रहा है।

आज चीन के सुदूर और भीतरी पश्चिमी प्रान्त जो कुछ वर्ष पूर्व अनुन्नत तथा पिछड़े हुए थे, उद्योग धन्धों से भरपूर होकर आधुनिक औद्योगिक नगर का दृश्य उपस्थित कर रहे हैं। चेल्वाङ, सिक्याङ, चेड्चाङ, युन्नड, होनाङ, काङ्चू शेङ्ची, क्वाङ्चो आदि पूर्ववत् औद्योगिक प्रदेश हो गये हैं, पर इस समय बड़े-बड़े कारखानों से चीन अपनी समस्या हल नहीं कर सकता। एक स्थान से मशीनों को उखाड़ कर लाना और दूसरे स्थानों में स्थापित करने मे समय लगता है। फिर जितने कारखाने हैं वे काफी भी नहीं हैं। नये कारखानों की स्थापना अवश्य हुई, पर आज-कल के युद्ध के लिए इतने कारखानों से काम नहीं चल सकता। चीन के पास इतनी पूँजी न थी कि वह अपनी आवश्यकता के अनुसार कल-कारखाने बना लेता। इन सबके सिवा जापानी बम्बारों का विशेष खतरा था। ऐसी सब समस्याओं को सुलझाना था। जनता के कष्टों को दूर करने के लिए उसके लिए आवश्यक कपड़े आदि

की माँग को पूरा करने के लिए ये कारखाने पूरे नहीं पड़ते थे, क्योंकि ये अधिकतर सैनिक काम में व्यस्त थे। इन तमाम बातों को देखकर चीन में एक नये आन्दोलन को जन्म दिया गया। इस आन्दोलन को चीनी भाषा में 'इन्डस्को' कहते हैं। इसके जन्मदाता चीन सरकार के अर्थमन्त्री डाक्टर कुंग हैं। चीनी 'औद्योगिक सहयोग' (चाइनीज इंडस्ट्रियल को-आपरेटिव) आन्दोलन का जन्म इसलिए हुआ कि देश में जनता को इस प्रकार जागृत कर दिया जाय कि गाँव-गाँव में सहयोग-समितियों के आधार पर ग्रामोद्योगों की स्थापना की ओर कदम उठाया जाय। इन कुटीर-व्यवसायों को न बम के प्रहार से खतरा था और न उन्हें इधर-उधर हटाने बढ़ाने में अधिक कठिनाई पड़ सकती थी। नये कुटीर-उद्योगों के द्वारा बेकार चीनी जनता काम में लगायी जा सकती थी और उसे जीवनोपयोग का साधन उपलब्ध हो जाता था। इस प्रकार इस आन्दोलन का लक्ष्य दोहरा है। एक ओर यह उत्पादन की क्रिया में सहायता प्रदान करके युद्ध का प्रतिरोध करने के लिए राष्ट्रीय शक्ति को बढ़ाने का काम करेगा और दूसरी ओर जनता की दिन प्रतिदिन आवश्यकताओं को पूर्ण करते हुए जीवनोपयोग का साधन हो सकेगा और ग्रामोद्योगों की सृष्टि करके देश के पुनर्निर्माण में सहायता पहुँचावेगा। आज इस आन्दोलन ने सहयोग तथा स्वावलम्बन के उस सिद्ध मन्त्र से अपने देश की जनता को दीक्षित किया है जिसकी साधना करने पर जनवर्ग प्रबल और शक्तिसम्पन्न हो जाता है। ये छोटे छोटे उद्योग चीन में आर्थिक जीवन को न केवल विस्मित कर रहे हैं बल्कि, युद्ध में चीन की सफलता के मुख्य कारण बन रहे हैं।

आन्दोलन के लक्ष्य की पूर्ति के लिए साधारण तीन क्षेत्रों में औद्योगिक केन्द्रों का बँटवारा किया गया है।

(१) देश के भीतर—युद्ध क्षेत्र से बहुत दूर तो उन बड़े-बड़े कारखानों का क्षेत्र है जो अचल हैं और जिन्हें हटाना या इधर उधर ले जाना अति कठिन काम है।

(२) मध्य क्षेत्र में—जो हाङ्चू से लेकर फूकेन तक फैला हुआ है ऐसा क्षेत्र है जिसके युद्ध स्थल बनने का भय तो नहीं है पर बम-वर्षा का खतरा बना रहता है। अतः इस क्षेत्र में उद्योग-केन्द्रों को इधर उधर छितरा कर दूर-दूर स्थापित किया गया है।

हवाई हमले के बाद चुङ्किङ्ग का पुहतङ मिडिल स्कूल

पश्चिमी चीन में उठाकर लाये हुए कारखाने

स्वतन्त्र चीन की एक सूत कातने की मिल

(३) अन्तिम क्षेत्र उन गुरिल्ला उद्योग केन्द्रों का है जो युद्ध स्थल तथा जापानी सैनिक पंक्ति के पीछे उसमें सटे हुए स्थापित किये गये हैं।

ये उद्योग ऐसे हैं जो जब चाहें सरलता से एक स्थान से दूसरे स्थान तक हटाये जा सकते हैं। थोड़ा बहुत साज-सामान उठाया और जैसे आवश्यकता उत्पन्न हुई वैसे ही चल दिये। सन् १९३८ के दिसम्बर से इस आन्दोलन का आरम्भ किया गया और एक वर्ष भी नहीं बीत पाया था कि एक सहस्र से अधिक सहयोग समितियाँ स्थापित हो गयीं। सरकार ने देखा कि यह आन्दोलन आशातीत सफलता से काम कर रहा है। उसकी विशेषता ही यह है कि शत्रु के आक्रमणापन्न क्षेत्रों से मशीनों तथा उत्पादन के अन्य साधनों को शीघ्रता के साथ हटाया जा सकता है और तुरन्त दूसरे स्थान में स्थापित करके उत्पादन क्रिया आरम्भ कर दी जा सकती है। आपद्ग्रस्त शरणार्थियों को शरण देने तथा काम देने में और बेकार कारीगरों और मजदूरों को उद्योग में लगा कर अपनी रोटी कमाने के योग्य बनाने में यह आन्दोलन इतना सफल हुआ है कि तत्सम्बन्धी समस्या को सुलझाने में सरकार बहुत बड़ी सीमा तक संकट से पार हो गयी है।

सन् १९४२ के आँकड़े तो अभी प्राप्त नहीं हुए हैं पर सन् १९४१ के ३१ दिसम्बर तक चीन में १७३७ सहयोग समितियों की स्थापना हो चुकी थी जिनकी सदस्य संख्या २३ हजार ८८ थी। इन समितियों ने सहायतार्थ अपने सदस्यों को १ करोड़ ३८ लाख ९३ हजार चीनी डालर कर्ज में दिये थे और अपनी कमाई में से स्वयम् मजदूरों ने शेयर के जो हिस्से जमा किये हैं वह रकम १९ लाख ७२ हजार से अधिक है। ध्यान देने की बात है कि इन समितियों ने जो माल पैदा किया है उसका मूल्य उस रकम से अधिक है जिसे सरकार ने उनकी स्थापना में लगाया है। समितियों ने हर महीने १ करोड़ ४४ लाख ७८ हजार ७ सौ ६० चीनी डालर की कीमत का सामान बनाया। इन समितियों में बहुत से ऐसे मजदूर हैं जो 'अपरेन्टिस' हैं अथवा काम सीख रहे हैं। सेना के लिए कम्बल बनानेवाली जैसी कुछ ऐसी समितियाँ हैं जो अभी प्रयोग कर रही हैं। इन लोगों ने जो माल पैदा किया है उसकी गणना उपर्युक्त रकम में नहीं की गयी है। आज तो यह आशा की जा रही है कि इन उद्योगों से ३ करोड़ डालर का माल

मासिक रूप से निर्मित हुआ करेगा। सन् १९४० में सरकार ने यह योजना बनायी है कि इन समितियों के सदस्यों की संख्या दुगुनी हो जानी चाहिए और उनका उत्पादन तिगुना हो जाय। सरकार का आर्थिक विभाग बड़े उत्साह और लगन से इस काम में जुटा हुआ है। उदाहरणस्वरूप उत्तर में सिड़पू के मोरचे पर और दक्षिण में याङ्ची के पास चेवाङ्क के युद्ध-स्थल में वहाँ की समितियों ने जो असाधारण कार्य किया है उसकी ओर देखिये। युद्ध-स्थल के आस पास दोनों दिशाओं में दो सौ से अधिक सहयोग-समितियाँ स्थापित की गयी हैं। सरकार ने ४० लाख डालर की पूँजी लगायी। ३० हजार डालर मासिक खर्च भी उसने अलग से देने का निश्चय किया। समितियों ने जूता, कागज, रासायनिक चीजें, स्याहियाँ, कल कारखानों के बनाने के पुरजे तथा कपड़ा बुनने का काम आरम्भ किया। आज इन समितियों ने न केवल शरणार्थियों को शरण दी है, बल्कि उनके बनाये हुए माल से उस दिशा की सेना तथा जनता की जरूरतें अच्छी तरह पूरी हो रही हैं।

इन कुटीर और चल औद्योगिक केन्द्रों में छोटी मोटी मशीनें और उनके पुरजे बनाने तथा धातु ढालने के काम और खाद्य पदार्थ बनाने, तथा खनिज पदार्थों का खोद निकालने के काम हो रहे हैं। कपड़ा बुनने का काम विशेष महत्त्वपूर्ण है। ३४ प्रतिशत उद्योग कपड़ा बुनने का ही है। चीन में आज कपड़े की बड़ी आवश्यकता है। सैनिकों तथा नागरिकों के लिए समान रूप से वस्त्र की आवश्यकता है। आज इस कमी को पूरा करने के लिए उस देश के कोने कोने में चरखों और करघों का प्रचार हो गया है। लाखों नर नारी इस काम में लगे हुए हैं। जनरलेसिमो की पत्नी 'मदाम च्याङ्कई शेक' ने इस क्षेत्र में असाधारण काम किया है। उन्होंने स्त्रियों का विशेष रूप से संगठन किया और उन्हें उत्साहित किया कि वे चरखों और करघों की शरण लें। उन्होंने प्रसिद्ध नगरों की प्रतिष्ठित महिलाओं की सभाएँ और सम्मेलन बुला कर इस कार्य की ओर उन्हें उत्प्रेरित करने की चेष्टा की। हाथ की कताई और बुनाई की शिक्षा के लिए योजना बनायी गयी। तीन महीने का पाठ्यक्रम तैयार किया गया। पहले महीने में विद्यार्थिनियों के रहने और भोजन का सारा खर्च सरकार ने उठाया। दूसरे ही महीने से ये स्त्रियाँ अपने ही काम से अपना खर्च स्वयम् दे देती

हैं और तृतीय मास की पूर्ति होने तक तो इतना कमाने लगती हैं कि अपने परिवार का भरण पोषण कर सकें। कपास की खेती को बड़ा प्रोत्साहन दिया गया है। बहुत से स्थानों में सहयोग-समिति के सदस्य कपास पैदा करने में लगे हुए हैं। आज चीन में चरखों और करघों की भरमार हो गयी है। सहयोग उद्योग विभाग ने सैनिकों के लिए कम्बलों की माँग की और समितियों ने कम्बल बुनने का प्रयोग आरम्भ किया जिसमें उन्हें कल्पनातीत सफलता प्राप्त हुई। चमड़ों की सफाई और जूता बनाने का व्यवसाय भी इसी प्रकार आवश्यक और प्रमुख उद्योग हो गया है।

हम भारतीयों के लिए इस क्षेत्र में चीन की सफलता विशेष महत्त्व रखती है। गाँधी जी के चरखे और करघे के पीछे उनकी सारी विचार धारा बहती है। चरखा उस विचार धारा का प्रतीक बन गया है। वह विचार-धारा यही है कि भारत ऐसे गरीब देश में जहाँ बड़े बड़े कल-कारखानों की सृष्टि अनेक कारणों से निकट भविष्य में नहीं हो सकती, जनता की दरिद्रता और बेकारी को दूर करने का एक मात्र साधन है ग्रामोद्योगों की स्थापना। गाँधी जी तो बड़ी मशीनों को मानवता के लिए अभिशाप मानते हैं। वे तो समझते हैं कि उत्पादन की इस क्रिया ने ही पूँजीवाद और साम्राज्यवाद की सृष्टि की है जो जगत में दासता, शोषण, युद्ध और हिंसा का कारण हो रहा है। वे मानते हैं कि मानवता का कल्याण इसी में है कि इस मशीनी सभ्यता का विनाश हो जाय और उसके स्थान पर ग्रामोद्योगों की स्थापना हो। न उत्पादन की यह पद्धति रहेगी न पूँजीवाद विकसित होगा और न तज्जन्य बुराइयाँ पैदा होंगी। पर गाँधी जी की इस कल्पना और विचार को यदि विवादग्रस्त विषय समझ कर छोड़ दिया जाय और केवल व्यावहारिक दृष्टि से देखा जाय तो भी मानना पड़ेगा कि भारत और चीन ऐसे देशों में जहाँ उद्योगीकरण नहीं हुआ है और न निकट भविष्य में वैसा होने की सम्भावना है, वहाँ ग्रामोद्योगों और कुटीर व्यवसायों का अपना विशेष और महत्त्वपूर्ण स्थान है। यदि यह कहा जाय कि बेकारी तथा दरिद्रता दूर करने और जीवन यापन के लिए आवश्यक साधन जुटाने के लिए एक मात्र तरीका यदि कोई है तो वह ग्रामोद्योगों की स्थापना और उत्तेजन प्रदान करना, तो अनुचित न होगा। आज चीन इस

मासिक रूप से निर्मित हुआ करेगा। सन् १९४२ में सरकार ने यह योजना बनायी है कि इन समितियों के सदस्यों की संख्या दुगुनी हो जानी चाहिए और उनका उत्पादन तिगुना हो जाय। सरकार का आर्थिक विभाग बड़े उत्साह और लगन से इस काम में जुटा हुआ है। उदाहरणस्वरूप उत्तर में सिड्यू के मोरचे पर और दक्षिण में याङ्ची के पास चेवाङ के युद्ध-स्थल में वहाँ की समितियों ने जो असाधारण काम किया है उसकी ओर देखिये। युद्ध-स्थल के आस पास दोनों दिशाओं में दो सौ से अधिक सहयोग समितियाँ स्थापित की गयी हैं। सरकार ने ८० लाख डालर की पूँजी लगायी। ३० हजार डालर मासिक खर्च भी इसने अलग से देने का निश्चय किया। समितियों ने जूता, कागज, रासायनिक चीजें, दवाओं, कल कारखानों के बनाने के पुरजे तथा कपड़ा बुनने का काम आरम्भ किया। आज इन समितियों ने न केवल शरणार्थियों को शरण दी है, बल्कि उनके बनाये हुए माल से उस दिशा की सेना तथा जनता की जरूरतें अच्छी तरह पूरी हो रही हैं।

इन कुटीर और चल औद्योगिक केन्द्रों में छोटी मोटी मशीनें और उनके पुरजे बनाने तथा धातु ढालने के काम और खाद्य पदार्थ बनाने, तथा खनिज पदार्थों को खोद निकालने के काम हो रहे हैं। कपड़ा बुनने का काम विशेष महत्त्वपूर्ण है। ४८ प्रतिशत उद्योग कपड़ा बुनने का ही है। चीन में आज कपड़े की बड़ी आवश्यकता है। सैनिकों तथा नागरिकों के लिए समान रूप से वस्त्र की आवश्यकता है। आज इस कमी को पूरा करने के लिए उस देश के कोने कोने में चरखों और करघों का प्रचार हो गया है। लाखों नर नारी इस काम में लगे हुए हैं। जनरलेसिमो की पत्नी 'मदाम च्याङ्कई शेक' ने इस क्षेत्र में असाधारण काम किया है। उन्होंने स्त्रियों का विशेष रूप से संगठन किया और उन्हें उत्साहित किया कि वे चरखों और करघों की शरण लें। उन्होंने प्रसिद्ध नगरों की प्रतिष्ठित महिलाओं की सभाएँ और सम्मेलन बुला कर इस कार्य की ओर उन्हें उत्प्रेरित करने की चेष्टा की। हाथ की कताई और बुनाई की शिक्षा के लिए योजना बनायी गयी। तीन महीने का पाठ्यक्रम तैयार किया गया। पहले महीने में विद्यार्थिनियों के रहने और भोजन का सारा खर्च सरकार ने उठाया। दूसरे ही महीने से ये स्त्रियाँ अपने ही काम से अपना खर्च स्वयम् दे देती

हैं और तृतीय मास की पूर्ति होने तक तो इतना कमाने लगती हैं कि अपने परिवार का भरण पोषण कर सकें। कपास की खेती का बड़ा प्रोत्साहन दिया गया है। बहुत से स्थानों में सहयोग-समिति के सदस्य कपास पैदा करने में लगे हुए हैं। आज चीन में चरखों और करघों की भरमार हो गयी है। सहयोग उद्योग विभाग ने सैनिकों के लिए कम्बलों की माँग की और समितियों ने कम्बल बुनने का प्रयोग आरम्भ किया जिसमें उन्हें कल्पनातीत सफलता प्राप्त हुई। चमड़ों की सफाई और जूता बनाने का व्यवसाय भी इसी प्रकार आवश्यक और प्रमुख उद्योग हो गया है।

हम भारतीयों के लिए इस क्षेत्र में चीन की सफलता विशेष महत्त्व रखती है। गाँधी जी के चरखे और करघे के पीछे उनकी सारी विचार धारा बहती है। चरखा उस विचार धारा का प्रतीक बन गया है। वह विचार-धारा यही है कि भारत ऐसे गरीब देश में जहाँ बड़े बड़े कल कारखानों की सृष्टि अनेक कारणों से निकट भविष्य में नहीं हो सकती, जनता की दरिद्रता और बेकारी को दूर करने का एक मात्र साधन है ग्रामोद्योगों की स्थापना। गाँधी जी तो महती मशीनों को मानवता के लिए अभिशाप मानते हैं। वे तो समझते हैं कि उत्पादन की इस क्रिया ने ही पूँजीवाद और साम्राज्यवाद की सृष्टि की है जो जगत में दासता, शोषण, युद्ध और हिंसा का कारण हो रहा है। वे मानते हैं कि मानवता का कल्याण इसी में है कि इस मशीनी सभ्यता का विनाश हो जाय और उसके स्थान पर ग्रामोद्योगों की स्थापना हो। न उत्पादन की यह पद्धति रहेगी न पूँजीवाद विकसित होगा और न तज्जन्य बुराइयाँ पैदा होंगी। पर गाँधी जी की इस कल्पना और विचार को यदि विवादग्रस्त विषय समझ कर छोड़ दिया जाय और केवल व्यावहारिक दृष्टि से देखा जाय तो भी मानना पड़ेगा कि भारत और चीन ऐसे देशों में जहाँ उद्योगीकरण नहीं हुआ है और न निकट भविष्य में वैसा होने की सम्भावना है, वहाँ ग्रामोद्योगों और कुटीर-व्यवसायों का अपना विशेष और महत्त्वपूर्ण स्थान है। यदि यह कहा जाय कि बेकारी तथा दरिद्रता दूर करने और जीवन यापन के लिए आवश्यक साधन जुटाने के लिए एक मात्र तरीका यदि कोई है तो वह ग्रामोद्योगों की स्थापना और उत्तेजन तो अनुचित न होगा। आज चीन द्वारा

बात का प्रमाण उपस्थित करता है कि ग्रामोद्योग कितने सफल हो सकते हैं और राष्ट्रीय जीवन के आर्थिक अंग में कितना अद्भुत अभिनय कर सकते हैं। गांधीजी के तीस वर्ष के परिश्रम और प्रचार पर हम हँसते थे। 'चरखा-चरखा' की उनकी रट पर नाक-भौं सिकोड़नेवालों और उसे अपनी प्रगतिशीलता की शान में धब्बा लगानेवालों की कमी नहीं थी। वे देख लें कि चीन ने इन्हीं चरखे और करघे को लेकर अपने देश का कितना कल्याण किया है। आज यदि ये ग्रामोद्योग न होते तो चीन कभी का समाप्त हो गया होता।

चीनी उद्योग समितियों का संगठन बड़ा सरल है। चीन के १८ प्रान्तों में इसके ८६ डीपो स्थापित हैं। ये ८६ डीपो सात क्षेत्रों में विभक्त हैं। इन सातों क्षेत्रों में प्रमुख कार्यालय हैं जिनके अधीन ये डीपो काम करते हैं। ये सातों प्रमुख कार्यालय केन्द्रीय कार्यालय के अधीन हैं जिसका दफ्तर चुङ्किङ में है। इनका सर्वोच्च अधिकारी 'बोर्ड ऑव डाइरेक्टर्स' है जिसके अध्यक्ष मिस्टर एच० एच० कुङ हैं जो चीन सरकार के अर्थमन्त्री तथा शासन समिति के अध्यक्ष हैं। अध्यक्ष की सहायता के लिए तीन सदस्यों की स्थायी समिति है जो उन्हें परामर्श दिया करती है तथा योजनाओं और नीति का निर्माण करती और उनके कार्यान्वित होने पर ध्यान रखती है। आज यह सहयोग आन्दोलन चीनी प्रतिरोधात्मक शक्ति का स्रोत और आधार बन रहा है। जापानी अधिकृत प्रदेशों से भागे हुए चीनी नर-नारी भूख और बेकारी की आग में जल रहे थे। उन्हें न आश्रय था, न काम था और न उनके पास ऐसा साधन था जिससे अपने बाल-बच्चों का परिपालन कर सकते। विपत्ति के मारे अपने देशवासियों में प्राण संचार करने वाला यह आन्दोलन ही है। इसने शरणार्थियों के रहने का प्रबन्ध किया, उन्हें काम दिया और उन्हें राष्ट्र की विजय के लिए मजबूत और सुदृढ़ सैनिक बना दिया। जिन क्षेत्रों में लड़ाई के कारण उद्योग धंधे नष्ट हो गये थे और लोग अनाथ तथा असहाय हो गये थे उन्हें इसने सनाथ तथा साधन सम्पन्न बनाया। सहयोग की भावना उत्पन्न होने से समूह-चेतना जागृत होती है और जो अपने को निर्बल समझते रहते हैं उनमें प्राणसंचार होता है। इस आन्दोलन ने केवल आर्थिक समस्या ही नहीं सुलझायी है बल्कि जनता का नैतिक तथा सांस्कृतिक पुनरुत्थान भी किया है।

देश के कोने-कोने में इस आन्दोलन के लिए प्रचार किया गया है। सहयोग समितियों ने अपने सदस्यों तथा उनके परिवार के लोगों की शिक्षा दीक्षा तथा योग-क्षेत्र में बड़ा भारी भाग लिया है। इनके बच्चों को पढ़ाने के लिए प्रारम्भिक पाठशालाएँ हैं। प्रौढ़ों के लिए शिक्षालय हैं स्वास्थ्य रक्षा के लिए औषधालय तथा चिकित्सालय हैं। विशेष कारीगरी की शिक्षा देने का प्रबन्ध अलग है और माल बेचने के अपने साधन हैं। समिति के सदस्यगण तो इनसे लाभ उठाते ही हैं, आसपास की जनता का भी पर्याप्त लाभ होता है। इन लोगों ने अपने प्रयत्न से देश की काया पलट दी है और आम जनता के चरित्र का विकास किया है जिसके फलस्वरूप चीन की मुकाबला करने की शक्ति आज अटल हो गया है। गाँव-गाँव में गुरिल्ला सैनिकों का जो दल सगठित हुआ है उनका सारा काम आज इन सहयोग समितियों के बल पर चल रहा है। इन सैनिकों के परिवारवालों तथा आश्रितजनों की देखरेख तथा भरण-पोषण का बोझ और उनके संगठन का काम ये समितियाँ कर रही हैं। विचार तो कीजिये कि जब किसी सैनिक को यह ज्ञात होगा कि उसके त्याग और बलिदान का आदर है तथा उसके आश्रितजनों को भूखा न मरना पड़ेगा तो उसकी छाती किस प्रकार दूनी हो जायगी। अपनी संस्थाओं का जाल-सा बिछा कर ये समितियाँ नव-राष्ट्र के निर्माण में अलौकिक सफलता प्राप्त कर रही है। इन्होंने अपनी नाटक समितियाँ, प्रचार विभाग, वाचनालय तथा राजनैतिक शिक्षा के विभाग भी खोल रखे हैं। स्वावलम्बन और सहयोग तथा आत्म-सम्मान के साथ-साथ उनमें यह भाव फैला हुआ है कि वे अपनी मातृभूमि की सेवा और रक्षा के पुनीत कार्य में लगे हुए हैं। आज यही भाव चीन के युद्ध को जन युद्ध का रूप दे रहा है। जापान को उस राष्ट्र से लड़ना पड़ रहा है जिसका बच्चा बच्चा उसका सामना करने को तैयार है। क्या कभी ऐसा देश पराजित हुआ है? निश्चय है कि जापान की रीढ़ टूट जायगी पर चीन का बल बढ़ता ही जायगा।

सहयोग-आन्दोलन के एक अच्छे सगठित केन्द्र में दो तीन बातें तो मुख्य रूप से होती रहती है। एक बड़ा 'हाल' या पचायतघर जिसमें सभा, सुसाइटी या नाटक वगैरह हो सकें, वाचनालय, एक या दो आरम्भिक पाठशालाएँ, छोटे मोटे औषधालय, दो या तीन

केन्द्रों में अच्छे साधनसम्पन्न अस्पताल हैं जो अपने सदस्यों के सिवा अपने क्षेत्र के पास की जनता की अच्छी सेवा करते हैं। उत्पादन और वितरण करनेवाली सहयोग समितियों के सिवाय कुछ दूसरे प्रकार के सहकारी संगठन भी हैं जिनका उल्लेख कर देना आवश्यक है। आहत सैनिकों की सहयोग समिति भर्ती और शिक्षा देनेवाली सहयोग समिति और विशेष कारीगरी सिखाने वाली समितियाँ भी कतिपय केन्द्रों में स्थापित हैं जो अच्छा काम कर रही हैं। आहत सैनिकों की सहयोग समितियाँ तो मास्को में से पाँच क्षेत्रों में संगठित हो गयी हैं। इन समितियों की स्वच्छता और सुव्यवस्था तथा अनुशासन विशेष रूप से प्रकट दिखायी देता है। सैनिक जीवन के नियन्त्रण की छाया इनके इस संगठन पर स्पष्ट झलकती है। इन समितियों का काम है कि आहत सैनिक जो और काम करने लायक न हों उन्हें रोटी कमाने के लिए व्यवसाय सिखाकर जीवन रक्षा की निश्चिन्तता प्रदान की जाय। अधिकतर सैनिक जो किसी योग्य नहीं रह गये हैं इन समितियों के द्वारा रोटी कमा लेते हैं। कुछ तो विवाह शादी करके घर बसा लेते हैं और नागरिक जीवन बिताते हुए देश की सहायता करते हैं। इसी प्रकार सहयोग के कार्य करने योग्य व्यक्तियों की भर्ती करने और उन्हें उस क्षेत्र में शिक्षित करने के लिए अलग सहयोग-समितियाँ वर्तमान हैं। ये अच्छे और तेजस्वी युवकों को सहयोग के आधार पर तथा सहयोग विभाग में काम करने के योग्य बनाने में विशेष रूप से काम कर रही हैं। नये लोगों को भर्ती करके उनमें समान सेवा तथा त्याग की भावना का संस्कार भरा जाता है ताकि उनका दृष्टिकोण व्यापक हो जाय और उनके जीवन में नयी स्फूर्ति पैदा हो।

इस सहयोग विभाग में आज हजारों नवयुवक काम कर रहे हैं जो उचित और आवश्यक क्षेत्रों में जाकर समितियों का संगठन करते हैं और जनता के हृदय में उनके प्रति दिलचस्पी उत्पन्न करते हैं ये नवयुवक शिक्षित, त्यागी और जन-सेवा के भाव से ओत प्रोत होते हैं। युनिवर्सिटियों के स्नातक तथा बहुत से विदेशी शिक्षा प्राप्त कर लौटे हुए युवक इनमें काम कर रहे हैं। सरकार का सहयोग विभाग जगह जगह शिक्षा-केन्द्र खोलकर अपने विभाग को शिक्षा देने का प्रयत्न कर रहा है। बहुत से लोग बही-खाता रखने, सहयोग

समितियों का सगठन करने तथा उन्हें सचालन करने योग्य बनाये जा रहे हैं। कुछ विश्वविद्यालयों ने इस सम्बन्ध में अपने यहाँ विशेष विभाग ही खोल दिये हैं। इन केन्द्रों में सहयोग सिद्धान्त की उच्च शिक्षा उक्त शास्त्र के पंडित और विद्वान दे रहे हैं। आज सहयोग समितियों की कुल पूँजी ढाई करोड डालर के करीब है, जिसका ३५ प्रतिशत सरकार ने दिया है, १० प्रतिशत सदस्यों के हिस्सों (शेयर) से आया है और बाकी रकम चीन के बैंकों ने लगायी है। इनके सिवा चीन के कतिपय बैंक आवश्यकता पडने पर विशेष ऋण के रूप में पूँजी जुटा देते हैं। आज चीन के इस आन्दोलन की ओर अन्तर्राष्ट्रीय दिलचस्पी पैदा हो गयी है। उसने दुनिया के लोगो की दृष्टि अपनी ओर आकर्षित की है। ग्रेट ब्रिटेन और अमेरिका में ऐसी समितियाँ बनी हैं जो चीन के इस आन्दोलन की सहायता कर रही हैं। इन संस्थाओं की सहायता से प्राय ५० लाख चीनी डालर विदेश से आया है जिसके सहारे सहयोग विभाग नयी योजनाओं को कार्यान्वित करने में सफल हुआ है। शिक्षा, शरणार्थियों की सहायता, आक्रान्त प्रदेशों से लोगों को हटाने का काम, उपयोगी कल कारखानों और सामान को ढोकर दूसरे सुरक्षित स्थानों म पहुँचाने की व्यवस्था, तरह-तरह के नये प्रयोग करने और आवश्यक प्रचार तथा प्रकाशन आदि में विशेषकर ऐसी रकमें ही सहायक हुई हैं जो मित्रों तथा प्रशंसकों द्वारा प्राप्त हुई हैं। बहुत से विदेशी विद्वान और विशेषज्ञ भी इस सम्बन्ध में चीन की सहायता कर रहे हैं। वे अपने ज्ञान और अनुभव का अंश प्रदान करके सरकार की महत्त्वपूर्ण सेवा में लगे हुए हैं।

जापान ने चीन पर अधिकाधिक घेरा डाल दिया है। उसे बाहर जगत से अलग करने में कुछ उठा नहीं रखा गया है। उसके बन्दरगाह छिन गये, यातायात के साधन नष्ट हो गये, सड़कें नष्टभ्रष्ट कर डाली गयीं, नगरों को तबाह कर दिया, कलकारखाने बरबाद हो गये और पूँजी छीन ली गयी। इस स्थिति में उसके लिए एक ही उपाय था। कच्चे माल के उत्पादन से लेकर छोटे बड़े से बड़े पदार्थों का निर्माण किसी प्रकार करना था। चीन ने स्वावलम्बन का मार्ग पकड़ा। सहयोग के आधार पर अधिक से अधिक उत्पादन और निर्माण ही एक-मात्र मार्ग था। उसने [illegible] और उत्साह के साथ उस पथ पर यात्रा की। आज देश [illegible] पर राष्ट्रों की [illegible] और [illegible]।

के बड़े-बड़े कल-पुर्जों तक का निर्माण ये समितियाँ कर रही हैं। हाल में लेखक को एक चीनी [illegible] के निरीक्षण का सौभाग्य मिला था। उसने बताया कि इतने छोटे पुर्जों में कारीगर [illegible] और बन्दूकों तक का निर्माण कर रहे हैं और [illegible] बन्दूकें [illegible] बनाकर तैयार हो रही हैं।

[illegible] पदार्थों की [illegible] दूर करने के लिए खेती के नये साधनों का [illegible]। [illegible] फसलें बोयी जा रही हैं। [illegible] किया जा रहा है कि यथासम्भव अन्न का उपयोग करें। [illegible] भाँतियों और फलों [illegible], मूँगफली आदि अन्य पदार्थों की खेती होने लगी है [illegible]। चीन में शराब चावल से बनती है। शराब [illegible] प्रचार [illegible] किया जा रहा है जिससे [illegible] जल्दी [illegible] किया जा सके।

इस समय चीन के [illegible] आरम्भ हो गया है। [illegible] पर [illegible] का अधिकार हो गया है और बहुत सा [illegible] हो गयी है। पर चीन इससे हताश नहीं हुआ। [illegible] और रत्न-गर्भा वसुन्धरा के [illegible] कर दिये गये। सरकार का खनिज विभाग इस क्षेत्र में विशेष काम कर रहा है। उसके पास जो आँकड़े उपस्थित हैं उनसे ज्ञात होता है कि [illegible] प्रान्त में कोयला, लोहा, पेट्रोल तथा सीसा उपलब्ध है। हूपेई में कोयला और लोहा तथा हुनान में सोना, कोयला, ताँबा, सीसा, जस्ता, और गन्धक प्राप्त हैं। [illegible] और कोयला तथा ताँबा युनान में सोना [illegible] में तथा अन्हवेई और क्याङ्सू में लोहा, कोयला, टीन तथा आदि उपलब्ध हैं। स्मरण रखने की बात है कि ये प्रान्त ऐसे हैं जिनकी प्राकृतिक सम्पत्ति अब तक अछूती रही है और जो चीन के सुदूर भीतर हैं तथा जहाँ जापान का पहुँचना कठिन है। खनिज विभाग [illegible] ठेके ता सरकारी दफ्तरों में चला रहा है और [illegible]३२ निजी कारबार करने वाले हैं जिन्हें सरकार ने अनुमति प्रदान की है। शेन्सी अन्हवेई, हापेई, चक्याङ, चेकयाङ, हुनान, क्वाङ्तुङ, युनान, केचाउ, सिक्याङ, क्याङ्सी, होनान, फूकेन, तथा कान्सू प्रान्तों में खनिज द्रव्यों को खोद निकालने का काम हो रहा है। कोयला तो प्राय ५ लाख टन

प्रति वर्ष खोद निकाला जा रहा है। इसी प्रकार लोहे की उत्पत्ति भी बढ़ रही है। सन् १९४० में २ लाख टन लोहा खानों से बाहर निकाला गया। चेक्याङ, शेङ्सी और शाङतुङ्ग प्रान्तों में पेट्रोल भी काफी प्राप्त हुआ है। आज अन्दाज यह किया जाता है कि जगत के पेट्रोल उत्पादक देशों में चीन का नम्बर छठा है। सन् १९४१ में २६ लाख गैलन से अधिक पेट्रोल निकाला गया। सोना खोद निकालने का काम भी हो रहा है। अनुमान किया जाता है कि चीनी भूमि के उदर में पर्याप्त मात्रा में स्वर्ण वर्तमान है। कहा जाता है कि इस सम्बन्ध में सरकार ने जो योजना बनायी है वह यदि पूरी उतर आये तो चीन जितना सोना उत्पन्न करता है उसमें प्रति वर्ष ४० हजार आउन्स की वृद्धि हो जायगी।। चेक्याङ सिक्याङ के क्षेत्रों में यह काम आरम्भ हो गया है। सन् १९४१ के पूर्वार्द्ध में १ लाख आउन्स सोना खानों से निकाला गया। कहा जाता है कि सरकार ने उस वर्ष के अन्त में व्यक्तिगत खानों के मालिकों से २ लाख ६० हजार आउन्स सोने की खरीद की।। इसी से चीन की भूमि की उर्वरा शक्ति की कल्पना की जा सकती है।

चीन ने खाद्य पदार्थों की समस्या भी हल की। आज उसे इतने गल्ले की आवश्यकता थी जो देश की जनता का पेट भरने के लिए पर्याप्त हो। उस गल्ले को देश के विविध कोनों में ले जाने की सुविधा प्रदान करने की जरूरत थी। युद्ध के पूर्व चीन खाद्य पदार्थों का आयात करता था। पर युद्धारम्भ के बाद सरकार ने खाद्य पदार्थों की उत्पत्ति के लिए भी स्वावलम्बी बनने की चेष्टा की। चीन का भू भाग खून विस्तृत है। उसके १८ प्रान्तों में अरबों बीघा जमीन पड़ी हुई है। अब तक खेती जितनी भूमि में होती रही है वह बहुत ही कम रही है। अधिकतर भूमि परती पड़ी हुई थी। चीन में गेहूँ और चावल विशेष रूप से भोज्यान्न माने जाते हैं। उत्पन्न चावल का ८३ प्रति शत और गेहूँ का ७४ प्रति शत चीन की जनता के भोज्य के काम में आ जाता था। अब तक जितना गल्ला पैदा होता था वह चीन की बढ़ती जनसंख्या के लिए काफी नहीं होता था। विद्वानों का कहना है कि १० प्रति शत चीनी ऐसे थे जिन्हें खाने को नहीं मिल सकता था, अतः चीन को अन्न तथा खाद्य पदार्थों का आयात करना पड़ता था। पूर्वी तट के प्रदेशों पर जापानी अधिकार स्थापित हो जाने पर वहाँ के लोग अपना स्थान छोड़कर अनधिकृत

प्रदेशों में घुस आये। परिणामतः वहाँ की भूमि पर उत्पत्ति का और बोझ बढ़ गया। बाहर से आयात भी कम हो गया। सरकार के लिए आवश्यक हो गया कि अधिकाधिक खाद्य पदार्थों की उत्पत्ति की व्यवस्था करे। सरकार ने इस ओर ध्यान दिया। सरकार के कृषिविभाग ने खेती का परिमाण बढ़ाने तथा खाद्य पदार्थों की अधिकाधिक उत्पत्ति के लिए ९५ लाख डालर रकम अलग कर दी।

सन् १९४२ में यह रकम बढ़ाकर १ करोड़ ४७ लाख ८४ हजार कर दी गयी। जो लोग इस काम में लगे हुए हैं वे विशेष रूप से अपने काम में दक्ष तथा उसके जानकार हैं। चीन में पहले एक ही फसल पैदा की जाती थी। गरमी के दिनों में धान की खेती होती थी पर जाड़े में अधिकतर यह भूमि परती पड़ी रहती थी। इस विभाग ने इस ओर ध्यान दिया और धान के वे खेत जो शीत ऋतु में दूसरी फसलों के जोते बोने जाने लायक थे काम में लाये गये। परिणाम यह हुआ कि उत्पन्न होनेवाले पदार्थ की मात्रा अत्यधिक बढ़ गयी। इसके सिवा सरकार ने और भी कार्य किये। परती पड़ी हुई भूमि तोड़ी गयी और कृषि के योग्य बनायी गयी। सिंचाई के लिए नहरों का देशव्यापी जाल सा बिछा दिया गया, कीटों और टिड्डियों से फसल की रक्षा करने के उपाय ढूँढ निकाले गये और जमीन को उपजाऊ करने के लिए वैज्ञानिक खादों तथा दूसरे प्रकार के साधनों का प्रसार किया गया। उत्तम बीजों का प्रबन्ध सरकार ने अपनी ओर से किया। चावल, गेहूँ तथा दूसरे सब प्रकार की फसलों को बोने के लिए उत्तम बीजों का प्रबन्ध करना आसान नहीं था, फिर भी दो वर्ष के भीतर सरकार ने इसमें बड़ी सफलता प्राप्त की। किसानों को नये वैज्ञानिक साधनों से लाभ उठाने के लिए प्रोत्साहित करने में कुछ उठा नहीं रखा गया। सैकड़ों बैंक कायम किये गये जहाँ से किसानों को कर्ज दिये जाते थे। प्रदर्शन करनेवाले फार्म और नुमाइशें स्थापित की गयीं। सरकार ने ऐसे बैंक की स्थापना की है जिसके द्वारा वह किसानों से यदि वे बेचना चाहें तो उनकी भूमि खरीद लेती है और बाद में जब कभी किसान की हालत अच्छी हो तो निश्चित अवधि के भीतर उतने रुपये अदा करके वह अपनी भूमि वापस ले सकता है। इससे किसान महाजनों के चंगुल से बचता है और समय कुसमय में अपनी भूमि बेचकर काम चला सकता है। इस नीति से चीन सरकार भूमि का

राष्ट्रीयकरण कर रही है और कुछ व्यक्तियों के हाथ में भू-स्वामित्व न पड़ जाय इसका भी प्रबन्ध कर रही है। आज चीन का किसान पूर्व की अपेक्षा कहीं अधिक सुखी है। उसकी फसल अच्छी होती है, उसे पैसा मिलता है और देश गल्ले के मामले में स्वावलम्बी हो चला है। उसे अब दूसरे देशों का मुँह जोहने की आवश्यकता नहीं है। वह आर्थिक स्वतन्त्रता की ओर बढ़ रहा है।

बीसवाँ अध्याय

चीन का पुनर्निर्माण

सामाजिक नव-चेतना की ओर

कोई जीवित समाज कभी गतिविहीन, स्थिर और निश्चेष्ट नहीं हुआ करता। जीवन का धर्म ही है गतिमान होना। विकास की यही प्रक्रिया है प्रगति का यही रहस्य है। जिस समय यह गति रुकेगी, उसी क्षण जीवन का लोप हो जायगा। चीन में जीवन है इसका प्रमाण तो पूर्व के पृष्ठ ही दे रहे हैं। फलतः उसका गतिमान होना भी निश्चित है। चीन का सामाजिक जीवन विकास पथारूढ़ है। बरसनेवाली आग और जापानी नृशंसता, टूटे फूटे और उद्ध्वस्त नगरों तथा रक्तपात के मध्य से नयी चेतना और नवभावनोद्दीप्त नवराष्ट्र प्रादुर्भूत हो रहा है। युद्ध ने उस देश को एकात्मता प्रदान की है। विघटनकारी तत्त्व आपसे आप लुप्त हो रहे हैं। प्रान्तीयता और सामन्तशाही अतीत की वस्तु हुई जा रही हैं। राष्ट्रीयता और राष्ट्रीय सरकार की एकान्त अक्षुण्ण सत्ता स्थापित है। पशुबल से पूर्ण महापराक्रमी शत्रु का सामना करने तथा साथ साथ राष्ट्र का पुनरुज्जीवित करने का काम साधारण नहीं होता। असीम अकल्पित कठिनाइयाँ मार्ग में बाधक थीं। दलगत झगड़े तथा सामन्तों की महत्त्वाकांक्षा पूर्णतः निर्मूल नहीं हुई थी, जब चीन पर आक्रमण हुआ। उसके हितैषी भयभीत थे कि आन्तरिक मतभेद और झगड़ों की भँवर में फँसकर युद्ध के इस भयङ्कर झंझावात के आघात के समय चीन की नैया कहीं डूब न जाय। पर राष्ट्रीय जागरण में जिस चेतना का उत्थान हो रहा था और जीवन के प्रति जिस नव दृष्टि-

फोण की उत्पत्ति हो गयी थी उसने राष्ट्रीयता और स्वतन्त्रता की पूजा करने की दीक्षा दे दी थी। परिणामतः आसन्नसंकट को देखते ही देश कुओमिंटांग की क्रान्तिकारिणी पताका के नीचे आ खड़ा हुआ। एक राष्ट्रीय सरकार, एक नेता, एक पताका और एक कार्यक्रम आज चीन के जीवन पर छाया हुआ है। युद्ध का सामना करने के लिए देश के विभिन्न कोनों से विशेष प्रान्तों के सैनिक लाखों की संख्या में एक दिशा से दूसरी दिशा को जा रहे हैं। विविध प्रान्तों के निवासियों का रक्त साथ साथ धरातल पर गिर रहा है और साथ ही सूख रहा है। बम के प्रहारों से उजड़ हुए नगरों के लोग शरणार्थी होकर एक स्थान से दूसरे स्थान को, एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त को जा रहे हैं और बस रहे हैं। सारा देश मिलकर समान संकट का सामना करने में संलग्न है। ऐसी स्थिति में प्रान्तीयता की दीवार कहाँ खड़ी रह सकती है। देश की जनता की दृष्टि व्यापक हो गयी है। उसे अपने विराट रूप का ज्ञान हो गया है और वह सहज ही अपने को चीन की सन्तति समझने लगी है। यह नयी भावना चीन को जापानी आक्रमण की देन है।

आज से कुछ वर्ष पूर्व सुदूर प्रान्त में रहनेवाला चीनी किसान यह जानता भी नहीं था कि उसके तथा आस पास के गाँवों के सिवा भी कोई और दुनिया है। अनेक चीनी ऐसे रहे होंगे जिनकी जिन्दगी बीत गयी पर वे अपने आस-पास पचास मील से अधिक दूर कहीं गये भी न रहे होंगे। आज जापानी बमों ने उन्हें एक कोने से दूसरे कोने की यात्रा करने को बाध्य किया है। सहज ही उनकी दृष्टि व्यापक और बुद्धि विकसित हो गयी है। उन्हें अपने देश की विशालता का ज्ञान हो गया है और उसके प्रति प्रेम और आकर्षण उत्पन्न हो गया है। चुङ्किङ, चेङ्कू, कुङमिङ्ग, कंइलिङ, सियाङ ऐसे भीतरी नगरों में आज विविध प्रान्तों के चीनी अपनी विभिन्न भाषा बोलते दिखायी देते हैं। युद्ध न हुआ होता तो इनमें से बहुत से कदाचित् जीवन पर्यन्त इन नगरों को देखना तो दूर रहा इनका नाम भी न सुने होते। आज ये साथ साथ दुख-सुख भोग रहे हैं, परस्पर सहायता कर रहे हैं और शत्रु का सामना करने की चेष्टा कर रहे हैं। सहज ही एकात्मता और सहनशीलता तथा पारस्परिक पहचान और मिलाप की क्रिया सम्पादित हो रही है।

देने लगे लगे हैं क्योंकि ये मुनाफा कमाने के लिए पदार्थों को संग्रह करनेवाले स्वार्थी और धूर्त माने जाते हैं। इन सबके सिवा सैनिक वर्ग ने जो आदर और सम्मान प्राप्त किया है वह किसी का नसीब नहीं हुआ।

एक समय था जब भाड़े के टट्टू सैनिकों की ओर जनता घृणा की दृष्टि से देखती थी। वे हिंस्र, दुराचारी, आततायी तथा क्रूर समझे जाते थे। उनका काम भी कुछ ऐसा ही था। शासकों और सामन्तों के वेतनभोगी होकर ये रक्तपात करने, गाँवों को उजाड़ने, जनता का शोषण करने और उन्हें लूटने के ही काम तो आते थे। सैनिक को देख कर लोग भयभीत हो जाते थे। पर आज यह स्थिति बदल गयी है। सैनिक देश का रक्षक, वीर और उद्धारक माना जाता है जो मातृभूमि के लिए अपना सिर चढ़ाने को उद्यत है। आज जिसके घर का कोई व्यक्ति सेना में है वह उस पर गर्व करता है और लोग उसका आदर करते हैं। आज चीन के सैनिकों का आदर होने का एक कारण और भी है। युद्धारम्भ होने पर विद्यार्थी और शिक्षित नवयुवक तथा अध्यापक असंख्य संख्याओं में सेना में सम्मिलित हुए। युद्ध के पूर्व विद्यार्थी समाज राष्ट्रीय सम्मान के लिए जापान से युद्ध घोषणा की माँग कर रहा था और केन्द्रीय सरकार के विरुद्ध प्रदर्शन आदि भी हो रहे थे। अन्त में जब सरकार ने घोषणा की तो यह वर्ग बड़े उत्साह से सेना में भरती हुआ। लाखों की संख्या में ये शरीक हुए। उन्होंने गुरिला दलों का संगठन किया, प्रचार और युद्धस्थल में आहतों की सेवा और शुश्रूषा का भार उठाया। शिक्षितों के सम्मिलन के कारण सेना का स्तर सहज ही ऊँचा हो गया और वह आदरणीय हो गयी।

चीन के विद्यार्थी, शिक्षक तथा, शिक्षित-समुदाय ने सामाजिक जीवन में सदा से ऊँचा स्थान पाया है, पर आज तो वे जो कर रहे हैं उसके लिए सारा राष्ट्र उनका चिर ऋणी रहेगा। राष्ट्रीय जीवन के अंग-प्रत्यंग में प्रवेश करके ये प्रतिरोध की शक्ति को बढ़ा रहे हैं। राष्ट्र का नेतृत्व और संचालन ये ही कर रहे हैं। ये देश की आशा के आधार और उसके भविष्य के अग्रदूत हैं। औद्योगिक, सैनिक, सांस्कृतिक, आर्थिक सभी क्षेत्रों में भाग लेकर ये प्रतिरोध और पुनर्निर्माण की योजना की रीढ़ बन गये हैं। पूर्वी तट से चीनी विद्यार्थियों

और अध्यापकों ने दक्षिण और उत्तर पश्चिम की जो यात्रा की थी वह उनके अदम्य उत्साह और पुनीत देशभक्ति का उज्ज्वल उदाहरण है। अपने विश्वविद्यालयों और पाठशालाओं के समस्त सामानों को लिये लिये, वर्षों की पैदल यात्रा करके बमों और शत्रु की सेना का प्रहार सहते हुए, अनेक विघ्न-बाधाओं को पार करते हुए वे दक्षिण-पश्चिम और उत्तर पश्चिम के प्रदेशों में आये और उन्होंने वहाँ अपने केन्द्र स्थापित किये। पहले पहल पेपिङ्ग तिङ्स्तीङ्ग तथा पाओतिङ्ग क्षेत्र के विद्यार्थियों ने उक्त स्थान से अपना साज-सामान समेट कर सुदूर पश्चिम की यात्रा की। युद्ध के पूर्व उत्तरी चीन का प्रदेश शिक्षा का केन्द्र था। उपर्युक्त तीन नगरों में चीन के आठ विश्वविद्यालय स्थापित थे और ११ कालेज तथा तीन औद्योगिक स्कूल प्रतिष्ठित थे। सन् १९३७ में युद्ध आरम्भ होते ही जापानी सेना ने इन पवित्र शिक्षा संस्थाओं पर आक्रमण कर दिया। जापानी चीन की शिक्षा संस्थाओं से विशेष रूप से क्षुब्ध थे। ये स्थान जापान विरोधी भाव के उद्गम और स्रोत थे। जापानियों ने इन्हें नष्ट करके अपना क्षेत्र प्रशस्त करना चाहा। सिङ्हुआ विश्वविद्यालय चीन के विश्वविद्यालयों में विशेष प्रतिष्ठित और सम्मानित था। जापानियों ने इसे अपना विरोधी मान रखा था। विश्वविद्यालय के भवन पर आक्रमण करके उस पर अधिकार स्थापित कर लिया गया। चीन में उक्त विश्वविद्यालय का पुस्तकालय सर्वश्रेष्ठ माना जाता था। पुस्तकालय भवन में जापानी सैनिकों के अस्पताल की स्थापना की गयी और उसकी व्यायामशाला को जापानी घोड़ों के अस्तबल के रूप में परिवर्तित कर दिया गया। यही दशा पेकिङ्ग विश्वविद्यालय, नाङ्कई विश्वविद्यालय तथा अन्य सब विश्वविद्यालयों की हुई।

इन विश्वविद्यालयों के विद्यार्थी और अध्यापकों ने जापान की चुनौती स्वीकार की। जापान विरोधी भाव के गढ होने के अपराध में बर्बर जापानियों ने उनकी पवित्रता भ्रष्ट की थी अतः उन्होंने अपनी संस्था को किसी भी हालत में मरने न देने का निश्चय किया। पन्द्रह सौ मील की पैदल यात्रा करके महीनों में ये विद्यार्थी और अध्यापक कुङमिङ्ग तथा चुङ्गङ्ग पहुँचे जहाँ इन्होंने मिल-जुल कर अपने विश्वविद्यालय स्थापित किये। इसी प्रकार कुछ विद्यालय के विद्यार्थियों ने हजारों मील की यात्रा करके शेंङ्ची के दक्षिण में हाङ्चुङ्ग

और चेङ्कू में अपने केन्द्र स्थापित किये। पर्वतों, अगम्य नदियों और जंगलों को पार करते हुए, हजारों विद्यार्थियों और उनके अध्यापकों ने अपने बाल बच्चों और परिवारवालों और साज-सामान तथा विद्यालय की सामग्रियों के सहित यात्रा की। इनके साथ सैकड़ों छात्राएँ भी थीं। कठिन पथ और कठोर विघ्न-बाधाओं की चिन्ता न करके अपनी शिक्षा संस्था की पवित्रता की रक्षा करने के लिए ऐसे अपूर्व बलिदान का उदाहरण कहाँ मिलेगा? इसी प्रकार शङ्घाई सूचाउ, नाङ्किङ्ग और हाङ्कउ की शिक्षा संस्थाओं ने भी इन नगरों के पतन के बाद स्थान-परिवर्तन के लिए यात्रा की। इस क्षेत्र की चार युनिवर्सिटियों की इमारतें तो धूल में मिला दी गयीं। उनके पुस्तकालय और उनकी प्रयोगशालाएँ जलाकर राख कर दी गयीं। नाङ्किङ्ग का केन्द्रीय राष्ट्रीय विद्यालय तो पाँच पाँच बार जापानी बमवर्षकों का शिकार हुआ। इस संस्था की इमारत पर जापानियों ने साढ़े पाँच-पाँच सौ पौंड के बम गिरा कर उसकी एक एक ईंट को चूर कर डाला। छात्रालय तथा विद्यार्थिनियों के वास स्थान नष्ट कर डाले गये। सौभाग्य से अधिकारियों ने इतनी सावधानी बर्ती थी कि छात्र और छात्राएँ पहले ही हटा दी गयी थीं। नाङ्किङ्ग विश्वविद्यालय के छात्र और अध्यापकों ने बची हुई पुस्तकों, वैज्ञानिक प्रयोग के सामानों तथा और पदार्थों को लेकर १० सौ मील की यात्रा पूरी करके चुङ्किङ्ग में शरण ली जहाँ वे इस समय स्थापित हैं।

सन् १९३८ में काङ्चुङ्ग, चूचङ और हाङ्कई के पतन के बाद इस क्षेत्र के विश्वविद्यालयों तथा शिक्षा संस्थाओं ने भी अपने स्थान का परित्याग किया। नेशनल चूङ्ग्ह विश्वविद्यालय अपनी सुन्दरता, भवनों की भव्यता तथा विशालता के लिए सारे चीन में प्रसिद्ध था। इस विश्वविद्यालय के पाँच सौ विद्यार्थियों और पाँच सौ अध्यापकों ने अपने पुस्तकालय की पुस्तकों तथा प्रयोगशाला के सामानों के सहित चेकङ प्रान्त के क्याङतिङ्ग नामक स्थान में शरण ली। इस प्रकार एक के बाद दूसरे चीनी विश्वविद्यालय अपने स्थान से हट कर सुदूर पश्चिम जाने को बाध्य हुए। प्राय कुल चीनी विश्वविद्यालयों को अपना स्थान छोड़ना पड़ा। नये स्थानों में इन संस्थाओं की स्थापना [illegible] गयी, पर आज उनके पास न सामान है साधन हैं और [illegible] स्थान हैं जहाँ शिक्षा का काम [illegible]

से चल सके। झोपड़ियों में, पर्वत की उपत्यकाओं में, वृक्षों के नीचे, टूटे फूटे खँडहरों में चीनी छात्र और अध्यापक ज्ञान-ज्योति के आराधन में साहस के साथ लगे हुए हैं। शिक्षा के साथ साथ चीनी विद्वान देश की समस्याओं के सम्बन्ध में शोध कर रहे हैं। विज्ञान के विद्वान यह खोजते दिखायी देते हैं कि वैज्ञानिक ज्ञान के द्वारा देश की सहायता कैसे की जाती है। चीन के अर्थशास्त्र के विद्वान राष्ट्रीय पुनर्निर्माण की योजना बनाने में तथा देश की आधुनिक आर्थिक समस्याओं को हल करने के उपाय सोचने में लगे हुए हैं। चीनी अध्यापक कठिनाइयों को सहन करते हुए भी ज्ञानार्जन में संलग्न हैं। गरमी, बरसात और ठंडक सहन करते हैं, सुदूर ऊजड़ स्थानों में जीवन के लिए आवश्यक पदार्थों के अभाव में कष्ट उठाते हैं, पर सब मिल-जुल कर प्रसन्नतापूर्वक अपनी संस्था चलाये जा रहे हैं। अच्छे अच्छे विद्वान, जो संसार के पंडितों में स्थान पा सकते हैं फटे पुराने चिथड़े पहने हुए अपने विद्यार्थियों के साथ तपस्वी जीवन बिता रहे हैं। यह दशा द्योतक है उस महान और उज्ज्वल चरित्र की जिसका विकास चीन के सामाजिक जीवन में हो रहा है। ऐसे राष्ट्र को महान होने से रोक सकने की शक्ति किसमें है और कौन इसकी आत्मा पर विजय प्राप्त करने की हिमाकत कर सकता है?

उच्च शिक्षा के केन्द्रों के इस विघटन का स्वभावतः व्यापक परिणाम चीन के सहस्रों विद्यार्थियों पर पड़ा। बहुतों का अध्ययन बीच ही में टूट गया। कुछ अध्यापक भी अनेक कारणों से अपनी सम्मानित संस्था के साथ प्रवास ग्रहण न कर सके। उनकी जीविका और व्यवसाय छूट गया। सरकार ने इस बात का अनुभव किया कि बहुत से विद्यार्थी अपने कालेजों और विश्वविद्यालयों के साथ रह कर विद्याध्ययन नहीं कर सकते, अतः उसने यह व्यवस्था की कि ऐसे विद्यार्थी दूसरी शिक्षा संस्थाओं में भी रहना चाहें तो वहाँ पर उन्हें अपनी परीक्षा बाद में अपने विश्वविद्यालयों में देने का अधिकार होगा। हजारों विद्यार्थियों ने इस योजना से लाभ उठाया। यह सब होते हुए भी हजारों विद्यार्थी विद्याभ्यास और शिक्षा से वंचित रह गये। ऐसे विद्यार्थियों ने या तो सेना में अपनी भर्ती करायी या गुरिल्ला सैनिक बन गये। विश्वविद्यालयों के कतिपय प्रतिष्ठित प्रोफेसरों ने गुरिल्ला सेना के संगठन का काम सँभाला।

बहुत से आज गुरिल्ला दलों के प्रमुख और सेनापति हैं। बहुत से विद्यार्थी अपने को प्रचारकों की टोली में संगठित करके देश के कोने-कोने में फैल गये। जनता में देशभक्ति का प्रचार किया, नाटक खेले, कीर्तन किये, व्याख्यान दिये और अब इस युद्ध में जापान का सामना करने के लिए जनता को उभाड़ने का काम कर रहे हैं। इन प्रचारक दलों में पुरुषों के साथ साथ अनेक छात्राएँ भी हैं जो देशों में घूम घूम कर चीन की महिलाओं को पुनरुज्जीवित कर रही हैं। अनेकों छात्रों ने केवल छात्रों की सेनाएँ संगठित कीं जो युद्धस्थल पर शत्रु के साथ लड़ती रही हैं। क्वाङ्चो के विद्यार्थियों की सेना में ३७ छात्र हैं जो मोर्चे पर बराबर लड़ रहे हैं। इस दल में ३ सौ छात्राएँ थीं जो खाकी वर्दी पहने, टोप शिरस्त्राण लगाये, हाथों में फेंकने वाले बम लिये हुए साक्षात् चण्डी की मूर्ति बनी हुई प्रत्यक्ष युद्ध में भाग लेती रही हैं। ये महिलाएँ लोगों को आक्रान्त स्थानों से हटाने में, घायलों की सेवा करने में तथा देश की जनता में प्राण संचार करने में असाधारण सफलता के साथ काम कर रही हैं। शत्रुओं का मार्ग नष्ट करने के लिए, सड़कों को खोद देने और नष्ट कर देने में ये बड़ा काम कर रही हैं। कहा जाता है कि किसी युद्ध स्थल पर जब चीनी सिपाही थके, श्रान्त और हताश दिखायी देते हैं तो छात्राओं के दल पहुँच जाते हैं जो उन्हें उत्साहित करते और देशभक्तिपूर्ण संगीत के द्वारा उनका मनोरंजन करते हैं। अपने देश की देवियों के उत्साह को देखकर उनका अनुराग और उनकी वीरता से प्रभावित होकर सैनिक जूझ पड़ते हैं और दम में दम रहते पीछे पैर नहीं हटाते।

पुरुष का स्वभाव भी कुछ ऐसा होता है कि वह स्त्री-समुदाय अपने सर्वोत्तम गुणों का प्रदर्शन सहज और अनजान में ही करने लगता है। इस नैसर्गिक प्रवृत्ति को महिलाएँ जानती हैं और इसी से लाभ उठा कर चीनी छात्राओं ने अनेक मोर्चों पर पलायमान चीनी सैनिकों को पुनः शत्रु का सामना करने के लिए प्रेरित किया है और इसमें विजय प्राप्त की है। इस प्रकार चीन के युवकों ने अपने राष्ट्र ... में यह आदर्श स्थापित किया है जिसका अनुकरण ... किसी देश का युवक-समाज अपने को धन्य मान ... १९४५। करेंपान छात्र आधे पेट रह

फटे चिथड़े पहन कर, वृक्षों के नीचे और उजाड़ स्थानों में बैठ कर सरस्वती की आराधना करते दिखायी देते हैं। पुरातन काल के तपोधन का दृश्य उपस्थित दिखायी देता है। जो अध्ययन नहीं कर रहे हैं वे राष्ट्र की सेवा में प्राण होमे दे रहे हैं और युद्ध में सक्रिय भाग ले रहे हैं। जो पढ़ रहे हैं और संस्था को संगठित किये बैठे हैं वे जापान विरोधी भाव के स्रोत बने हुए हैं। सन् १९४१ में राष्ट्रीय दक्षिण पश्चिमी विश्वविद्यालय के भवन पर जापान ने पुन बम वर्षा की। उसके भवन तहस नहस कर दिये गये। बम वर्षा के बाद विद्यार्थियों ने घोषणा की और विज्ञप्ति प्रकाशित की जिसमें कहा गया था कि जापान के प्रति हमारा विरोध क्षण क्षण बढ़ता ही जा रहा है। बम बरसाकर हमारे भवन भले ही नष्ट कर दिये जायँ पर हमारी आत्मा का हनन नहीं किया जा सकता। हम जापानियों से घृणा करते रहेंगे।

चीनी युवक और युवतियाँ भावी समाज के प्रतीक हैं। आज उनके चरित्र और आदर्श, तपस्या और त्याग को देख कर पाठक अनुमान कर सकते हैं कि कल का चीन कैसा होगा। देश भर में युवकों का संगठन हो रहा है। उन्हें शिक्षा भी जा रही है। युवकों की शिक्षा के आधारस्वरूप जो सिद्धान्त स्थिर किये गये हैं उनका उल्लेख करना आवश्यक है। भारत के युवक समुदाय पर ही इस देश की आशा निर्भर करती है, पर युवकों की दोषपूर्ण शिक्षा पद्धति के कारण उनका चरित्र नष्ट हो रहा है। भारतीय देशभक्तों के सामने यह प्रश्न है कि युवकों की शिक्षा में किस प्रकार परिवर्तन किया जाय कि वे देश तथा राष्ट्र के हित के अनुकूल बन सकें। फलत चीन ने जो किया है उसे जान लेना लाभप्रद हो सकता है। चीन सरकार के शिक्षा विभाग ने युद्धारम्भ के बाद समस्त पाठशालाओं को आदेश दिया कि युवकों का विशेष रूप से संगठन किया जाय और विशेष सिद्धान्तों के आधार पर उन्हें सुसंस्कृत और दीक्षित किया जाय। उन्होंने इसके लिए निश्चित कार्यक्रम बनाये जिनका आधार नीचे लिखे सिद्धान्त स्थिर किये गये —

(१) राष्ट्र के [illegible] करने की इच्छा उत्पन्न हो,
(२) चीनी राष्ट्र [illegible] प्रवृत्ति का ज्ञान हो,
(३) राष्ट्र को [illegible] युवक यवती सरकार

के हित का साधन करने की इच्छा रखे और देश की स्वाधीनता, समानता और सम्मान के लिए सदा लड़ते रहने की भावना जागृत हो।

ये वे लक्ष्य हैं जिन्हें सामने रखकर चीनी युवकों की शिक्षा का प्रबन्ध किया जाता है। श्रद्धा चरित्र, स्वास्थ्य शौच और सेवा ये पाँच गुण हैं जिन पर विशेष जोर दिया जाता है। चरित्र के विकास के लिए द्वादश नियम निर्धारित किये गये हैं जिसमें पहली बात है 'देश-भक्ति, जिसका आधार है देश के प्रति ईमानदारी और वीरता। इस प्रकार युवकों को शिक्षित करके देश भर में उनके संगठन स्थापित किये जा रहे हैं। इस संगठन के प्रमुख और अध्यक्ष जनरलेसिमो च्याङ्काई शेक स्वयम् हैं। जनरलेसिमो ने युवक आन्दोलन के लक्ष्य की व्याख्या करते हुए घोषणा की कि इसके तीन उद्देश्य ये हैं।

(१) युवक-समुदाय शत्रु का विरोध करने के लिए देश में प्रतिरोध की शक्ति पैदा करे और राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के लिए जितनी योजनाएँ परिचालित हों उनकी पूर्ति में पूरा सहायता प्रदान करे।

(२) राष्ट्रीय क्रान्ति के अन्तिम लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक हो, और

(३) डाक्टर सुनयत् सेन के तीन सिद्धान्तों को कार्यान्वित करने में अपनी शक्ति लगा दे।

इस संगठन के शिखर पर जनरलेसिमो स्वयम् ही प्रतिष्ठित हैं। उनको परामर्श देने के लिए एक समिति बनायी गयी है। नेता केन्द्रीय कार्यालय ही सारा काम करता है। इसके अधीन प्रान्तीय और उसके अधीन जिला तथा मंडल के कार्यालय हैं। इन क्षेत्रों का प्रधान नेता स्थानीय नेताओं की नियुक्ति करता है। आज युवक-संगठन के अधीन चीन के चार लाख युवक हैं। सर्वोत्तम, चरित्रवान, देश-भक्त तथा चीनी युवक समाज के कथित तत्त्व इसमें सम्मिलित हैं। इस संगठन का काम करनेवाले, युवकों की शिक्षा का प्रबन्ध करने वाले स्थान-स्थान में संस्था की शाखा खोलनेवाले युवकों की संख्या ६० हजार है जो इसी काम में लगे हुए हैं। प्रत्येक विश्वविद्यालय, कालेज, स्कूल और मिडिल स्कूल में इसकी शाखा स्थापित है। भविष्य के प्रतीक आनेवाले समय के संचालक, राष्ट्र के भावी नेता युवकों का संगठन और उनके नवजीवन का निर्माण देश की धारा ही बदले दे रहा है। ये जीवन के प्रत्येक अंग में क्रान्ति कर रहे

हैं। उन पुरानी रूढ़ियों और कुसंस्कारों की दीवारें ढह रही हैं जिन्हें चीनी राष्ट्र ने सैकड़ों वर्षों से अपनी छाती पर उठा रखा था। नया दृष्टिकोण, नये विचार और नये जीवन के साथ, नया समाज बन रहा है। इसका यह मतलब नहीं कि ये युवक अतीत की सब बातों के विद्रोही हैं। वस्तुतः वे इसके सर्वथा विपरीत हैं। उन्हें अपने पुराने इतिहास पर, अपनी संस्कृति पर और अपनी परम्परा पर गर्व है, पर वे आगे बढ़कर उन बुराइयों और रूढ़ियों को मिटाना चाहते हैं, उन व्याख्याओं के भक्त नहीं हैं जिन्होंने राष्ट्र ने अपने बढ़ाने और पतन के गर्त में धकेल, अत्याचार तथा अनाचार का रूप देकर नष्ट कर दिया था। ये नवयुवक ज्ञापक भाव रखते हैं। पुरातन की नयी व्याख्या, नयी आवश्यकता तथा परिवर्तित परिस्थिति के अनुकूल काम करनेवाले हैं और आज की दुनिया जो कुछ उत्तम दे रही है उसे ग्रहण करनेवाले हैं। इन दोनों के समन्वय से चीन में नयी सभ्यता और नये समाज तथा नये जीवन का निर्माण हो रहा है। राष्ट्रीय विपत्ति के समय नये भावों से भावित तथा नये मन्त्र से दीक्षित चीनी नवयुवक बुद्धि और भावनाओं में अपना सानी नहीं रखता। उसका ज्ञान, उसका तप, कुशलता और तूफान पसन्द करने वाली उसकी प्रकृति तथा कठिनाइयों और बाधाओं में आनन्द का स्वाद लेनेवाला उसका स्वभाव उसे भविष्य का विधाता बना रहा है। आज ये सच्ची क्रान्ति और सच्ची शान्ति, विनाश और निर्माण के एकान्त स्वरूप बनाये गये हैं।

चीन के सामाजिक जीवन का कोई वर्णन तब तक अधूरा ही रह जाता है जब तक चीन की नारी पर एक दृष्टि न डाली जाय। चीन की नारी आज जिस प्रकार जागृत है उसे देख कर आश्चर्य होता है। किसी समाज का उत्थान तब तक नहीं हो सकता जब तक उसके अर्द्धांग को बन्धन और अज्ञान के अन्धकार में जकड़ कर रखा जायगा। चीन की स्त्री सारे देश की भाँति रूढ़ियों और कुसंस्कारों की गुलाम थी। चीनी स्त्रियों के पैर बाँध कर उन्हें छोटा बनाये रखने की बर्बर प्रथा की कहानी हम बहुत दिनों से सुनते थे, पर आज चीन की नारी साक्षात् दुर्गा के रूप में अवतरित हुई है। वह राष्ट्र की उत्प्रेरणा-शक्ति, उत्थान और विकास का कारण बन गयी है। वहाँ स्त्रियों को वही अधिकार प्राप्त हैं जो पुरुषों को प्राप्त होते हैं। केन्द्रीय राजनैतिक

समिति में बीसियों महिलाएँ सदस्या हैं जो राष्ट्र की नीति के निर्माण में भाग लेती हैं। न जाने कितनी महिलाएँ प्रसिद्ध पत्रकार हैं जिनका प्रभाव देश पर छाया हुआ है। 'मादाम च्यांङ्काई शेक के नेतृत्व में चीन की स्त्रियाँ शत्रु से लोहा लेने में और देश का पुनर्निर्माण करने में वहाँ के पुरुषों से किसी प्रकार कम नहीं हैं।

आज चीन में महिलाओं की सवा तीन सौ संस्थाएँ स्थापित हैं जो नारी समाज तथा राष्ट्र के काम में लगी हुई हैं। जनरलेसिमो च्यांङ्काई ने जिस नव आन्दोलन का सूत्रपात किया था उसके सचालन का सारा बोझ वस्तुतः उनकी पत्नी ने उठा लिया है। उन्हीं के नेतृत्व में उक्त आन्दोलन के नारी विभाग का सगठन हुआ और एक सलाहकार समिति बनायी गयी। यह समिति उन तमाम सैकड़ों महिला-संस्थाओं को एक सूत्र में आबद्ध करके उनसे काम ले रही है। न जाने कितने शिक्षा के केन्द्र चीन में स्थापित हैं जिनमें महिलाओं को जनसेवा के लिए विविध क्षेत्रों और विषयों की शिक्षा दी जाती है। ग्राम सगठन, प्रौढ़ शिक्षा सहयोग-समितियों द्वारा जनसेवा, रोगियों और घायलों का उपचार करना और उनकी शुश्रूषा करना, सांस्कृतिक उन्नति के लिए विशेष प्रकार के विभिन्न आन्दोलनों में भाग लेना आदि अनेक बातें सिखायी जा रही हैं। सीखी हुई महिलाएँ गाँवों में घूम घूम कर ग्रामीण स्त्रियों में इन बातों का प्रचार करती हैं और उन्हें इसी की शिक्षा देती हैं। किसान स्त्रियाँ चीन की शिक्षित आधुनिक नारी के सम्पर्क और प्रभाव में आकर इतनी शीघ्रता से बदलती जा रही हैं कि देखनेवाला चकित हो जाता है।

किसी को स्वप्न में भी इसकी आशा न थी कि शताब्दियों के कुसंस्कार और आदतों का परित्याग करके कुछ वर्षों में ही चीन की नारी जो पुरुषों की दासी समझी जाती थी नया कलेवर ग्रहण करके नये रूप में प्रादुर्भूत होगी। आज चीनी महिलाएँ और किसान खानदान की महिलाएँ युद्ध क्षेत्र में काम कर रही हैं और राष्ट्रीय भवन की भव्य इमारत के निर्माण में सारी शक्ति के साथ जुटी हुई हैं। युद्ध सेवा विभाग में स्त्रियाँ अनाथ बच्चों की सेवा और पालन पोषण का भार उठाती हैं। उनका सहज मातृ हृदय इन सुकुमार बच्चों का भरण पोषण करने में अपने जीवन को सार्थक समझता है। सैनिकों के लिए कपड़े इकट्ठा करने, उनके परिवारवालों की सहायता करने तथा बम वर्षा से

पीड़ित नागरिकों की सेवा करने में महिलाओं ने आदरणीय ख्याति प्राप्त की है। सहस्रों महिलाएँ सामरिक अस्पतालों में नर्स का काम कर रही हैं। कितनी ही प्रचार का काम करती हैं, रंगरूट भरती करती हैं। और लोगों को हिम्मत बँधाती हैं तथा सैनिकों को गाना सुनाकर, नृत्य दिखा कर नाटक में अपने अभिनयों के द्वारा उनका मनोरंजन करती हैं। आज २५ हजार शरणार्थी बच्चों का, जो अनाथ हो गये हैं पालनपोषण नारी आन्दोलन कर रहा है। इन बच्चों को तरह-तरह का काम सिखाया जाता है। कपड़ा बुनना, जूते सीना, खिलौने बनाना, बर्तन बनाना आदि ऐसे काम सिखाये जाते हैं जिनके द्वारा ये आगे चलकर जीविका उपार्जन कर सकें और देश के प्रतिष्ठित नागरिक हो सकें।

महिलाओं ने औद्योगिक सहयोग-समितियों में भी बड़ा काम किया है। रेशम और सूत के कपड़े बुनना, बेल-बूटे बनाना आदि काम विशेष रूप से इन महिलाओं की समितियाँ करती हैं। एक केन्द्र में जारी सहयोगसमिति की पन्द्रह सौ सदस्याएँ कई उत्पादन के काम में लगी हुई हैं। महिला समाज की यह जागृति आधुनिक चीन की महत्त्वपूर्ण घटना है। चीन-सरकार के सरकारी अफसरों की स्त्रियों को 'मदाम च्याङ' ने विशेष रूप से काम में लगाया है। कोई कारण नहीं है कि कोई स्त्री यह समझ कर कि वह अमुक मन्त्री की पत्नी है सुख और विलास में जीवन व्यतीत करे। उनके सामने श्रीमती मेलिङ्ग का आदर्श उपस्थित है जो अपने जीवन का क्षण क्षण देश के काम में बिताती हैं। प्रत्येक विभाग के मन्त्री तथा सर्वोच्च अधिकारी की पत्नी का यह कर्तव्य होता है कि वह अपने पति के विभाग के अधीन काम करनेवाले समस्त मातहत कर्मचारियों की पत्नियों को संगठित करे। कहा जाता है कि युद्ध में मन्त्री के विभाग में इस प्रकार लाखों महिला कार्यकारियों का दल बन गया है जो स्वयम् काम करता है और अपने काम का आर्थिक बोझ भी स्वयम् ही उठाता है। यह कैसी मौलिक योजना है और किस प्रकार देश का पुनर्निर्माण हो रहा है।

चीन के महिला समाज ने जापानी सेनाओं के निकट रह कर जापानी जासूसों की गिरफ्तारी में अद्भुत काम किया है। ये महिलाएँ ऐसे गुप्तचरों की टोह लेती हैं, उनसे शत्रु की गुप्त योजनाओं को ढूँढ निकालती हैं और उन्हें गिरफ्तार करा देती हैं। महिलाओं के अनेक गुरिल्ला

घायल सैनिकों की सहायता के लिए चीनी बालिकाओं का संगठन

तुरिन में का नरों का जुलूस

चीनी नानचगों का प्रस्थान

दल हैं जो अस्त्र शस्त्र लेकर, हथफेंक बमों के द्वारा खाकी वर्दी पहने हुए शत्रुदलों पर छापा मारते हैं और उनसे सीधे सीधे लोहा लेते हैं। मर्दों की गैरहाजिरी में ये अपने गाँवों की रक्षा करते हैं और आगत विपत्तियों का सामना करते हैं। किसी भी समाज की उन्नति के लिए यह आवश्यक है कि महिलाओं को जागृत कर दिया जाय। नारी ही मानव समाज का आधार है। वह जननी है और पुरुष के चरित्र का और जीवन का निर्माण उसी के द्वारा होता है। बच्चे पर माता के द्वारा डाले गये संस्कार, उसके द्वारा मिली शिक्षा आजन्म के लिए अमिट हो जाती है। साहसी, बुद्धिमती वीरांगनाओं की गोद में पले बच्चों का चरित्र कैसा होगा इसकी कल्पना कर लेना कठिन नहीं है।

महिलाओं के जीवन पर किसी देश की विवाह पद्धति भी बड़ा प्रभाव रखती है। चीन में परिवार और पारिवारिक जीवन का बड़ा महत्त्व है। समाज के संगठन का आधार परिवार ही है। माता पिता की पूजा, उनका आदर और उनकी आज्ञा का पालन चीनी संस्कृति की मुख्य विशेषता है। आज भी उसने अपने इस गुण का परित्याग नहीं किया है। फिर भी समय की आवश्यकताओं ने इस पर नया रंग चढ़ाया है। एक समय था जब चीन में बाल विवाह प्रचलित था और लड़के लड़कियों की शादी माता पिता पक्की कर देते थे। आज इसमें भारी परिवर्तन हो गया है। यद्यपि साधारण लोगों में अब भी यह रिवाज है, पर नारी चेतना के कारण बाल विवाह तो रुका ही है, साथ साथ विवाहों की संख्या में भी कमी हो रही है। राष्ट्र के सामने इतना काम है और स्थिति इतनी अनिश्चित है कि लोग विवाहों का होना आवश्यक नहीं समझते। आर्थिक और सामाजिक आवश्यकताएँ उन्हें बाध्य करती हैं कि वे जहाँ तक हो सके उसे स्थगित ही रखें। आज पूर्व की अपेक्षा चीन में विवाह की संख्या कम हो रही है। असंख्य शिक्षित युवक और युवतियाँ अविवाहित जीवन बिताते हुए देश के आवश्यक काम में लगी हुई हैं। अपने देश की काया पलट पर और विशेषकर महिलाओं की नव-जागृति के सम्बन्ध में चीन की सर्वोत्कृष्ट नारी 'मदाम च्याङ्काई शेक' ने ठीक ही कहा है—"चीन के पुनर्निर्माण का कोई वर्णन तब तक पूरा नहीं कहा जा सकता जब तक उसमें चीनी नारी आन्दोलन तथा महिलाओं द्वारा किये गये अद्भुत काम का वर्णन न हो।"

उषा अपने गर्भ में दिनकर को लिये आकाश मे चढती ता नहीं दिखायी देनेवाली है ? कौन कह सकता है कि यह कल्पना निराधार है ?

जगत मे आज ऐसे काल्पनिकों की कमी नहीं है जो विश्वास करते है कि पश्चिम ने भूमडल में जिस व्यवस्था और आदर्श की स्थापना की है उसमे मौलिक रूप से कुछ ऐसे तत्त्वों का अभाव है जिनके कारण उसका जीवित रहना असम्भव है। वे तत्त्व ही मानवता के विकास में, उसकी स्थिति बनाये रखने तथा उसके सचालन मे सहायक हो सकते हैं। पश्चिम यदि उन तत्त्वों से वंचित है तो उसे उनका प्रदान पूरब करेगा। उनके अभाव का ही परिणाम है कि मनुष्य युग-युग के अपने अनुभव, ज्ञान और विवेक को भूल कर पशु बन रहा है तथा अब तक के अपने किये कराये पर हरताल फेर कर रक्त-तर्पण करने में अपनी सार्थकता समझ रहा है। वे तत्त्व क्या हैं इसका ज्ञान तथा उनके समावेश का उपदेश पूरब को करना है। मनीषियों और विद्वानों तथा विचारकों की धारणा है कि पूरब ने शताब्दियों पूर्व उन तत्त्वों का रहस्य समझा था। जीवन और जगत की रहस्यमय गुत्थियों को समझने और सुलझाने में ही मानव-समाज की चिर-सतत-सांस्कृतिक धारा का प्रवाहित होना सम्भव है। पूरब ने बडी सीमा तक उसे समझा और सुलझाया था, यह निर्विवाद है। उसका सहस्राब्दियों तक जीवित रहना और गिर कर भी निर्जीव न होना इस बात का अकाट्य प्रमाण है कि उसमें संजीवनी शक्ति निहित है। आज मरणासन्न तथा विनाशोन्मुख मानवता का उज्जीवन उसी सजीवनी से करना है। फलत पूरब के पास जग हिताय, विश्व सुखाय और जन कल्याणाय सन्देश है जिसे मानवता के सम्मुख उसे उपस्थित करना है। पूरब के सामने एक लक्ष्य है जिसे उसे पूरा करना है — उसे शिवमय, मगलमय रूप में वसुन्धरा के रंग-मच पर अभिनय करना है।

उस पूरब का प्रतिनिधित्व चीन और भारत ही कर सकते हैं। वह चीन जिसने हजारों वर्ष पूर्व ज्ञान पिपासुओं को भेज कर भारत भू का, ज्ञानामृत पान किया था, उसी चीन ने भगवान बोधिसत्व के पाद पद्मों में नत होकर जगत में शान्ति, प्रेम और त्याग तथा उदारता की लोल लहरी लहरा दी थी। वही चीन और वही भारत अतीत की अपनी स्मृति, युग-युग की तपस्या और साधना लेकर जागें और

"चीन में पश्चिमी दुनिया की अपेक्षा महान सिद्धान्तों को वहाँ शीघ्रता से ग्रहण किया जाता है और उसे तत्काल व्यावहारिक रूप दिया जाता है। चीनी महिलाएँ घर में रह कर भी परिवर्तित परिस्थिति के अनुकूल अपने को इस सरलता के साथ बना लेती हैं कि आश्चर्य होता है। चीनी स्त्रियों की सफलता का यही मूल मन्त्र है।"

उपसंहार

इस कहानी को अब यहीं समाप्त करना है। चीन में इतिहास का निर्माण हो रहा है। सम्प्रति वहाँ घटनेवाली घटनाओं का महत्त्व है, फिर भारत के लिए तो उनका और भी विशेष महत्त्व है। इन दो पुरातन पूर्वी देशों का इतिहास सहस्राब्दियों की घटनाओं का आगार है। यहाँ ईसा से हजारों वर्ष पूर्व भूमंडल के प्राची में ज्ञान और संस्कृति की प्रभातकालीन अरुणिमा आकाश में उदीयमान हुई थी। क्रमशः उसके प्रकाश से जगत जगमगा उठा और मानवता का पथ प्रदर्शन हुआ। भारत और चीन को अपने अतीत पर गर्व करने का अधिकार है। मालूम होता है कि ज्ञान-सूर्य यात्रा करता हुआ पश्चिम में पहुँचा, पूर्व अन्धकारावृत हुआ और अस्ताचलगामी भास्कर की स्वर्णमयी किरणों से प्रतीची जगमगा उठी। जिसने उस चकाचौंध को उत्पन्न करनेवाली ज्योति का दर्शन पाया वह उसके विमोहक सौन्दर्य से आकृष्ट हुआ, पर रजनी के पट में मुख छिपाने को उद्यत मार्तंड की ज्योति कितने दाण ठहर सकती। कुछ ही शताब्दियों के विकास ने पश्चिम के इतिहास का निर्माण किया और आज सहज ही उसे समाप्त करता दिखायी दे रहा है। मानवता अपने जिस रूप का परिचय पश्चिम में दे रही है वह आखिर है क्या? क्या गुहानिवासी आदि मानव की प्रवृत्ति जाग उठी है? क्या अब तक की सारी सांस्कृतिक विकास की धारा मरुभूमि में पहुँच कर सूख गयी है? अथवा मानव हृदय का दैत्य किसी उत्प्रेरणा के कारण अनायास ही जाग उठा है? अथवा कवि के शब्दों में '*नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण*' के अनुसार किसी समय पूर्वाकाश की ज्योति से प्रकाशित होकर कालान्तर में अन्धकारावृत हुआ तो अब पश्चिम भी प्रकाश से दीप्त होकर अन्धकार में पड़ा चाहता है। क्या इसके बाद पुनः प्रकृति के नियम के अनुकूल पूर्व में ही तेजोमयी

उषा अपने गर्भ में दिनकर को लिये आकाश में चढ़ती सी नहीं दिखायी देनेवाली है ? कौन कह सकता है कि यह कल्पना निराधार है ?

जगत में आज ऐसे काल्पनिकों की कमी नहीं है जो विश्वास करते हैं कि पश्चिम ने भूमंडल में जिस व्यवस्था और आदर्श की स्थापना की है उसमें मौलिक रूप से कुछ ऐसे तत्त्वों का अभाव है जिनके कारण उसका जीवित रहना असम्भव है। वे तत्त्व ही मानवता के विकास में, उसकी स्थिति बनाये रखने तथा उसके संचालन में सहायक हो सकते हैं। पश्चिम यदि उन तत्त्वों से वंचित है तो उसे उनका प्रदान पूरब करेगा। उनके अभाव का ही परिणाम है कि मनुष्य युग-युग के अपने अनुभव, ज्ञान और विवेक को भूल कर पशु बन रहा है तथा अब तक के अपने किये कराये पर हरताल फेर कर रक्त-तर्पण करने में अपनी सार्थकता समझ रहा है। वे तत्त्व क्या हैं इसका ज्ञान तथा उनके समावेश का उपदेश पूरब को करना है। मनीषियों और विद्वानों तथा विचारकों की धारणा है कि पूरब ने शताब्दियों पूर्व उन तत्त्वों का रहस्य समझा था। जीवन और जगत की रहस्यमय गुत्थियों को समझने और सुलझाने में ही मानव-समाज की चिर-सतत-सांस्कृतिक धारा का प्रवाहित होना सम्भव है। पूरब ने बड़ी सीमा तक उसे समझा और सुलझाया था, यह निर्विवाद है। उसका सहस्राब्दियों तक जीवित रहना और गिर कर भी निर्जीव न होना इस बात का अकाट्य प्रमाण है कि उसमें संजीवनी शक्ति निहित है। आज मरणासन्न तथा विनाशोन्मुख मानवता का उज्जीवन उसी संजीवनी से करना है। फलतः पूरब के पास जग हिताय, विश्व सुखाय और जन कल्याणाय सन्देश है जिसे मानवता के सम्मुख उसे उपस्थित करना है। पूरब के सामने एक लक्ष्य है जिसे उसे पूरा करना है — उसे शिवमय, मंगलमय रूप में वसुन्धरा के रंग-मंच पर अभिनय करना है।

उस पूरब का प्रतिनिधित्व चीन और भारत ही कर सकते हैं। वह चीन जिसने हजारों वर्ष पूर्व ज्ञान पिपासुओं को भेज कर भारत भू का, ज्ञानामृत पान किया था, उसी चीन ने भगवान बोधिसत्व के पाद पद्मों में नत होकर जगत में शान्ति, प्रेम और त्याग तथा उदारता की लोल लहरी लहरा दी थी। वही चीन और वही भारत अतीत की अपनी स्मृति, युग-युग की तपस्या और साधना लेकर जागें और

प्राप्त करना है। भारत को अपना अतीत भी भुला नहीं है। उसक वह काल ऐसा बीता है जिस पर वह उचित गर्व कर सकता है। उसके मन के किसी कोने में अपने बड़प्पन का यह ज्ञान अब भी बना हुआ है कि वह जगत को कुछ देने में और उसके विकास में सहायता पहुँचाने में किसी सीमा तक समर्थ हो सकता है। फिर जब इतना ज्ञान हो तो भला वह कैसे भविष्य की उपेक्षा कर सकता है? अपने चारों ओर देख कर यह देश एक निश्चित निर्णय पर पहुँच चुका है। वह समझ गया है कि चीन उसका मित्र है और वह चीन का मित्र है। इस मित्रता में सबका कल्याण है इसे भी वह भली-भाँति समझ गया है। यही कारण है कि वह चीन के प्रति अधिकाधिक रस लेना चाहता है, उसकी गोद में घटनेवाली घटनाओं को सतर्कतापूर्वक देखते रहना चाहता है और उसका परिचय विशेष रूप से प्राप्त करना चाहता है।

चीन वर्तमान विपत्तियों पर विजय प्राप्त करके निकले महाराष्ट्र के रूप में अवतरित हो और संसार की उन्नत शक्तियों की श्रेणी में अग्रणीय स्थान प्राप्त करे, यह हमारी कामना है। स्वतन्त्र भारत से उसकी मित्रता हो और दोनों मिल कर भावी जगत के निर्माण में भाग लें, यह हमारी इच्छा है। उस जगत के निर्माण में जो अधिक शुभकर और श्रेयस्कर, अधिक मानवीय और उन्नत हो, ये दोनों पथ-भ्रष्ट मनुष्यता को सहारा देकर विकास के राजपथ पर उसे अग्रसर करें और इस प्रकार अपना 'मिशन' पूरा करें, यही हमारी लालसा है!

देनेवाले मनुष्य हैं। यह कहना सरासर ग़लत है कि वे महत्त्वाकांक्षी तथा अधिनायकवादी हैं। उनकी महत्त्वाकांक्षा अपने लिए पद प्राप्त करने की नहीं है; पर चीन के लिए, उसकी एकता, स्वतन्त्रता और सम्मान की वृद्धि के लिए, वे अवश्य महत्त्वाकांक्षी हैं। उनके नेतृत्व में चीन इसी ओर बढ़ता जा रहा है।

आज च्याङ्कई के समान कौन व्यक्ति है ? युरोप के समान इतने बड़े महाद्वीप को जिसमें ५० करोड़ नर-नारी बसते हों, विविध प्रकार की भाषा बोलते हों, विभिन्न जीवन के ढंग बरतते हों तथा विभिन्न दृष्टिकोण तथा जाति के लोग हों—एक सूत्र में आबद्ध करना, एक पताका के नीचे ला खड़ा करना, नये जीवन की भावना से ओत-प्रोत करना, क्या सरल काम था ? सोचिये तो सही कि ऐसा काम किसके सिर आ पड़ा था ? न चर्चिल के, न रूजवेल्ट के, न हिटलर के और न मुसोलिनी के। पर च्याङ्कई के सामने यह लक्ष्य था और उन्होंने उसे पूरा किया। आवर्तों में पड़ी डगमगाती चीन की नौका की पतवार दृढ़ता से पकड़ कर उन्होंने उसे पार लगाया—ऐसे समय जब भयानक तूफ़ान चल रहा था, जब नौका के नाविक ही उसे खंड-खंड करने की चेष्टा कर रहे थे और जब उस पर आसीन लोग उसके भार की वृद्धि कर रहे थे—ऐसे समय इस व्यक्ति ने उसे लेकर सुरक्षित घाट तक किनारे पहुँचाया। आज वह जगत के महान व्यक्तियों में स्मरणीय है, एशिया की शोषित और उत्पीड़ित जातियों के लिए आदर्श है। उससे उन्हें उत्प्रेरणा मिल रही है, उनके सूखे जीवन में आशा की सरस धारा का संचार हो रहा है।

भारत को सौभाग्य से चीन के समान पड़ोसी मिला है और एशिया को च्याङ्कई के समान नेता। आज भारत का रोम-रोम चीन की शुभ-कामना से ओत-प्रोत है। बहुत दिनों तक हमारा उससे सम्बन्ध था। बीच में यह शृंखला टूट गयी थी। आज पुनः हम उसे जोड़ना चाहते हैं—अपने हित के लिए, चीन के हित के लिए, एशिया के हित के लिए, विश्व के कल्याण के लिए और मानवता की सेवा के लिए। भारत अब सुषुप्त नहीं रह सकता। वह उठा है और वेग से उठा है। उसे अपने दयनीय और घृणित बन्धनों को तोड़ फेंकना है। अपनी छाती पर वह दासता का बोझ क्षण भर के लिए भी रखने को तैयार नहीं है। आगत जगत में उसे अपने योग्य सम्मानपूर्ण पद

इसलिए इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हमें वैयक्तिक और जातीय निर्बलताओं को दूर करने के लिए अपने प्राचीन गुरुओं की शिक्षा की ओर ध्यान देना होगा। अशिष्टता और दुर्व्यवहार को सांस्कृतिक और कलात्मक शिक्षा द्वारा दूर किया जा सकता है और व्यक्तिगत चरित्र को ऊँचा करके हम राष्ट्र की पतित अवस्था को उन्नत बना सकते हैं। केवल साधारण शिक्षा और सरकारी क़ायदे-क़ानून के सहारे देश की पतित अवस्था को दूर करने में हम सफल नहीं हो सकते। यदि हमें अपने अन्दर सुधार करने हैं, तो वे सुधार मौलिक होने चाहिए। हमें सबसे पहले अपनी आदतों को सुधारना चाहिए, इसीलिए चीनी अपने यहाँ के नव-जीवन-आन्दोलन को देश के उद्धार की कुंजी समझते हैं।

डाक्टर सुख्यात सेन ने लिखा है—"लोगों के जीवन के अन्तर्गत लोगों की जीविका, समाज का अस्तित्व, राष्ट्र की भलाई और जन-सामान्य का जीवन शामिल है।" इस तरह यद्यपि लोगों का जीवन ४ भागों में बँटा है, फिर भी जीविका के अन्तर्गत बाक़ी तीनों भाग आ जाते हैं। सुरक्षा पर जीवन निर्भर है; भलाई के लिए उन्नति की आवश्यकता है और जीवन को विस्तार की ज़रूरत है। इन सारी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए हमें अपनी शक्तियों को काम में लगाना चाहिए क्योंकि काम करते रहने का ही नाम जीवन है।

हमारे सारे काम जीवन को विस्तार देने की भावना से होने चाहिए और यदि उनका उद्देश्य, जीवन की रक्षा और राष्ट्र की उन्नति और भलाई है, तो उसमें बदली हुई परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन भी आवश्यक हैं। समय चुपचाप नहीं खड़ा रहता। समय के साथ-साथ युग बदलता रहता है, इसलिए वही ठीक से जीवित रह सकते हैं जो समय के अनुसार अपने को बदलते रहते हैं। जब कोई जाति अपने को बदली हुई परिस्थितियों के अनुकूल बनाती है, तो उसे स्वयम् ही अपनी न्यूनताएँ दूर करनी पड़ती हैं। जिन बातों की आवश्यकता नहीं रह जाती उनको अपने जीवन से निकाल कर फेंकना पड़ता है। इसके बाद हम उसे 'नयी ज़िन्दगी' या 'नव जीवन' कहते हैं।

किसी भी जाति के नये जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए हमें कुछ हद तक सरकार के ऊपर निर्भर होना पड़ता है; क्योंकि किसी भी देश के नव जीवन को बनाने में सरकारी शिक्षा की गति-विधि, सरकारी

परिशिष्ट

चीन का नवजीवन-आन्दोलन

(लेखक—जनरलेसिमो च्याङ्काई शेक)

. . युगों की पुरानी आदत को बदल लेना या उसमें सुधार करना बड़ा मुश्किल काम है; फिर भी हमने सीधी-सादी, परन्तु सफल रीति से लोगों के विचार बदलने की कोशिश की है। हमारा विश्वास था कि हमारे देशवासी धीरे-धीरे अपने को नये युग और नवजीवन के अनुसार ढाल लेंगे। हमारे इस नव-जीवन-आन्दोलन का उद्देश्य चीनी-समाज को फिर से जगाना था।

इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हम राष्ट्र के पुरातन सद्‌गुणों की ओर लोगों का ध्यान दिला रहे हैं। ये सद्‌गुण हैं, न्याय, अभिन्नता और ज्ञान, जिन्हें चीनी भाषा में *लि इ ल्यङ* और *चिह्* कहते हैं, और इनके पालन करने के लिए हम लोगों पर जोर देते हैं। प्राचीन चीन में इन चारों गुणों का बेहद मान था और यदि देश के अन्दर फिर से नयी जागृति करनी है, तो चीनी जीवन में फिर से इन चारों गुणों पर जोर देना होगा।

चीन का सांस्कृतिक इतिहास ५ हजार वर्ष पुराना है। उसमें लोगों के नित्यप्रति के जीवन में उपयोगी बढ़िया से बढ़िया पथ-प्रदर्शक शिक्षाएँ मौजूद हैं। इसलिए लोगों की आधुनिक दुरवस्था का एक यही कारण हो सकता है कि लोग इन सद्‌गुणों को भुला बैठे हैं।

हमारी जनसंख्या ४० करोड़ से अधिक है। हमने अपने राष्ट्रीय सद्‌गुणों को भुला दिया है, इसीलिए हमारे समाज में अनाचार फैला हुआ है और लोगों का जीवन वैसा सुखी नहीं है जैसा कि होना चाहिए।

रह गया था, इसलिए जहाँ मौलिक बातों पर ध्यान देने की आवश्यकता होती थी, वहाँ साधारण बातों पर ज़ोर दिया जाता था और जहाँ साधारण बातों पर ज़ोर देने की आवश्यकता होती थी वहाँ मौलिक बातों का समर्थन होता था। परिणाम यह हुआ कि सरकारी अफ़सरों में बेईमानी और लालच घर कर गया, जनता निर्जीव हो गयी और उसमें कोई अनुशासन न रहा। सयानों में अज्ञान और पतित बातें भर गयीं, युवक बुराइयों और नशे के शिकार हुए, धनी अपव्ययी और विलासी हो गये और ग़रीब नीच और अव्यवस्थित बन गये। इस पतन का स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि राष्ट्रीय जीवन का सामाजिक अंग पूरी तरह उलट-पुलट गया—न हम अपने को प्राकृतिक आपदाओं से बचाने योग्य रह गये और न हम बाहर के आक्रमणों को ही रोक सके। व्यक्ति, समाज और सारा देश सभी महान विपत्ति में फँस गये। इस दयनीय दशा में जीवन-यापन कठिन हो गया और यह आवश्यक हो गया कि पिछड़ी हुई हालत से छुटकारा पाकर एक नये और वैज्ञानिक जीवन की ओर हम अपने क़दम बढ़ायें।

जन-साधारण के जीवनोद्देश्य को ऊँचा उठाकर, एक नये समाज-निर्माण के लिए यह आवश्यक था कि उसे सरकार से और शिक्षा-विभाग से पूरी सहायता मिले। दुर्भाग्य से पिछले दिनों सरकार और शिक्षा-विभाग दोनों की व्यवस्था निकम्मे लोगों के हाथों में थी। इनके संचालकों में काफ़ी ईमानदारी न थी। फल यह हुआ कि क़ानून और व्यवस्था पुस्तकों में बन्द होकर रह गये। न इन बातों का कोई व्यावहारिक उपयोग ही रहा—यहाँ तक कि मशीनों से भी ठीक-ठीक काम न लिया गया। आख़िर इसका क्या अर्थ है कि वे ही आदमी, उसी विधि से, वैसी ही मशीनों पर काम करके, वैसे ही परिणाम न प्राप्त कर सकें जैसे दूसरे देशवाले कर सके हैं! स्पष्ट है कि नियम और मशीन को चलाने भर के लिए क़ानून और मशीन पर निर्भर नहीं हुआ जा सकता, बल्कि उसके लिए योग्य आदमी चाहिए। सफलता व्यक्तियों के ऊपर निर्भर करती है। व्यक्ति अगर अच्छे हुए तो सफलता निश्चित है। इसलिए लोगों के चरित्र को थोड़े से समय में उन्नत बनाने के लिए सामाजिक आन्दोलन बहुत मूल्य रखता है। राजनैतिक उन्नति या शिक्षा की रीति समाज-सुधार से बढ़कर नहीं है। यह सही है कि राजनैतिक उन्नति और शिक्षा अत्यन्त आवश्यक

अर्थनीति और उसके अन्य दूसरे व्यवहार बड़ा अर्थ रखते हैं; किन्तु सरकारी नीति की सफलता भी उस समय के लोगों की आदतों और रीति-रिवाजों पर निर्भर करती है। जब समाज का एक पुराना ढर्रा टूटता है और नया ढर्रा उसकी जगह लेता है, तो उसमें खासी रुकावटें पड़ती हैं और यदि उसका मेल उस समय के रीति-रिवाजों से नहीं बैठता, तो रुकावटों की कोई हद नहीं होती। इसलिए यह आवश्यक है कि किसी भी नये आन्दोलन को शुरू करने से पहले जनता को प्रचार द्वारा इस बात की शिक्षा दी जाय, जिसमें वह अपने को नयी परिस्थितियों के अनुकूल बनाये। बग़ैर इसके किसी नये आन्दोलन को जनता का समर्थन नहीं मिल सकता। पानी सदा नीची भूमि की ओर बहता है और आग सूखी लकड़ियों में धधकती है। किसी भी सामाजिक आन्दोलन का काम है कि वह पानी के बहाव के लिए नीची भूमि और आग सुलगाने के लिए सूखी लकड़ियाँ तैयार करे। इसीलिए शायद हर देश अपनी बदलती हुई अवस्था में नयी नीतियों के स्थान पर बदलते हुए रीति-रिवाजों और प्रवृत्तियों पर अधिक ध्यान देता है। नये आन्दोलन की सफलता पर ही सरकार की नयी नीतियों की सफलता निर्भर करती है। इसी से चीन में नव-जीवन-आन्दोलन की बहुत आवश्यकता है। जो लोग इस तरह के आन्दोलन की आवश्यकता समझते हैं, उनसे प्रारम्भ होकर यह आन्दोलन बढ़ेगा। पहले सीधे-सादे सुधार होंगे, फिर जटिल समस्याओं में हाथ डाला जायगा। यदि कोई व्यक्ति अपने अन्दर ये नयी आदतें डाल ले तो सम्भव है इसका प्रभाव उसके परिवारवालों पर भी पड़े और मुमकिन है कि वह एक परिवार पूरी जाति पर अपना असर डाले। सामाजिक आन्दोलन राजनीति और शिक्षा के साथ-साथ चलता है। यह उनके ऊपर निर्भर नहीं करता, बल्कि उनके आगे-आगे चलता है।

पिछले दिनों चीनी जनता में न तो कोई उत्साह रह गया था और न कोई जान। भले-बुरे का अन्तर समझने वाला विवेक भी उनमें न रह गया था। वे व्यक्तिगत और सार्वजनिक बातों के अन्तर को भी न समझते थे। मौलिक और साधारण बातों में भी वे कोई भेद न करते थे। फिर चूँकि भले-बुरे का कोई विवेक न रह गया था, इसलिए अच्छाई-बुराई का पता न लगता था। और चूँकि सार्वजनिक और व्यक्तिगत बातों में कोई अन्तर न था इसलिए लोगों के व्यक्तिगत व्यवहार में दोष आ गया था। चूँकि मौलिक और साधारण बातों का विवेक न

हैं, जिनसे किसी जाति, दल अथवा देश का समान लाभ हो सकता है। जो इन नियमों का पालन नहीं करते, वे अपने ज्ञान और योग्यता का उपयोग शायद समाज का अहित करने में ही करें। इसलिए ये सद्गुण इतने अधिक महत्त्वपूर्ण हैं कि इन्हीं की भित्ति पर देश को दृढ़ता के साथ खड़ा किया जा सकता है।

एक दूसरा दल है, जो यह समझता है कि ये सद्गुण केवल अच्छे व्यावहारिक नियम ही हैं और इनका नित्यप्रति के जीवन की आवश्यकताओं से कोई सम्बन्ध नहीं। उनका प्रश्न होता है कि यदि कोई भूखा है तो क्या इन गुणों से उसका पेट भर जायगा। इस भ्रम का कारण शायद कुआङ्-चे की वह शिक्षा है जिसमें उसने कहा है—'जब किसी को अपने खाने-पहनने की चिन्ता नहीं होती, तब वह अपने व्यक्तिगत सम्मान का विचार करता है। जब नाज की कोठियाँ भरी रहती हैं तभी लोग अच्छी आदतें सीखते हैं।' ऐसे अविश्वासी यह भूल जाते हैं कि ऊपर के चारों सद्गुण मनुष्य को मनुष्य बनना सिखाते हैं। यदि किसी व्यक्ति में ये चारों सद्गुण नहीं हैं तब अत्यधिक खाने और कपड़ा पहनने से क्या लाभ? फिर कुआङ्-चे ने यह बात पूर्ण-सत्य की भाँति नहीं कही, बल्कि एक विशेष विषय पर, एक विशेष अवसर पर कही है। अन्यथा उसने एक जगह कहा है कि *लि, इ, लिअङ* और *चिह* इन्हीं चारों सद्गुणों रूपी खम्भों पर देश की स्थिति है। जब इन सद्गुणों का काफी प्रचार होता है तब यदि खाने और कपड़े का थोड़ी देर के लिए अभाव भी हो जाय तब भी लोग उन्हें बना सकते हैं और यदि गल्ले की कोठियाँ खाली भी हो जायँ, तब भी वह लोगों के प्रयत्नों से भर सकती हैं। परन्तु यदि लोगों में इन सद्गुणों का अभाव हो जायगा तो लोग अपनी आवश्यकता पूरी करने के लिए या तो भीख माँगेंगे और या फिर डाका डालेंगे। सामाजिक व्यवस्था के विचार से डकैती और भीख माँगने की प्रवृत्तियों से कोई देश उन्नति नहीं कर सकता। समाज तो इन्हीं सद्गुणों पर स्थिर है। यदि देश में सुशासन है तो सारी बातें ढंग से की जा सकती हैं; लेकिन यदि अराजकता फैली हुई है तो उससे बहुत कम लाभ हो सकता है।

संसार के धनी शहरों में आज-कल साधारणतः बेहद डकैतियाँ होती हैं। इन सद्गुणों के अभाव का यह प्राकृतिक परिणाम है। हमारे

हैं; परन्तु इन सबसे बढ़कर है समाज-सुधार। हमें यहाँ पर उसकी लम्बी चर्चा करनी आवश्यक नहीं मालूम पड़ती। इस तरह की जातीय विपत्ति में यदि हम हाथ पर हाथ धरे काल की प्रतीक्षा नहीं कर रहे, तो हमें प्रत्येक सम्भावित रीति से अपने समाज की फिर से रचना करनी होगी। हम प्रकृति पर ही विश्वास करके नहीं बैठ सकते। नव-जीवन आन्दोलन के सामने यह एक बहुत बड़ा काम है कि उसे तूफ़ानी वेग के साथ समाज की पिछड़ी हुई स्थिति को बदलना होगा और फिर मन्द-मन्द वायु के समान समाज में शक्ति और विवेक पैदा करना होगा।

नव-जीवन-आन्दोलन की खास बातों का उल्लेख करने के पूर्व *लि, इ, लिअङ और चिह* का वर्णन करना आवश्यक है। नव-जीवन-आन्दोलन चार सद्गुणों द्वारा जीवन को नियमित बनाना चाहता है। इन गुणों का व्यवहार खाना, कपड़ा, आश्रय और काम जैसे साधारण कृत्यों पर भी होना चाहिए। नैतिकता की वृद्धि के लिए ये चार सद्गुण अत्यन्त आवश्यक हैं। इन्हें उपयोग में लाकर लोगों का नित्यप्रति का व्यवहार सुधर सकता है; वे अपने को सुसंस्कृत बना सकते हैं और अपने आसपास की परिस्थितियों से अपना मेल बैठा सकते हैं। जो व्यक्ति इन सद्गुणों का उल्लंघन करता है उसका जीवन सफल नहीं हो सकता और जो राष्ट्र इनकी अवहेलना करता है वह जीवित नहीं रह सकता।

इस सम्बन्ध में हमें दो प्रकार के अविश्वासी व्यक्ति मिलते हैं। पहले तो वे हैं, जो यह समझते हैं कि ये चारों सद्गुण केवल सदाचार के नियम हैं। उनका विचार है कि ये सद्गुण अपने आपमें चाहे कितने ही अच्छे क्यों न हों, लेकिन यदि दूसरे देशों के मुक़ाबिले में हमारा ज्ञान और हमारी उद्योग-कुशलता घटिया है, तो इन सद्गुणों से देश को कोई लाभ नहीं पहुँच सकता। जो लोग यह राय रखते हैं वे महत्त्वपूर्ण और साधारण बातों का अन्तर नहीं समझते। सामाजिक और राष्ट्रीय दृष्टिकोण से केवल चरित्रवान व्यक्ति ही अपने ज्ञान और अपनी उद्योग-कुशलता को देश-हित के लिए अधिक उपयोगी बना सकते हैं; अन्यथा कार्य-क्षमता तो बुरी बातों के लिए भी उपयोग में लायी जा सकती है। लि, इ, लिअङ और चिह सदाचार के ऐसे नियम

ई के अनुसार है, यह बात ठीक है। जिस बात को हम ठीक समझते हैं उसको ग्रहण करना और जिसको असत्य समझते हैं, उसका त्याग करना इसी का नाम सद्‌विवेक या *लिभङ* है।

चिह का शाब्दिक अर्थ है आत्मचेतना। जब किसी व्यक्ति को यह चेतना होती है कि उसके काम *लि*, *इ* और *लिभङ* के अनुसार नहीं हैं, तो वह लज्जित होता है और जब उसके हृदय में यह चेतना होती है कि दूसरे आदमी ग़लत हैं तो भी उसे ग्लानि होनी सम्भव है। किन्तु यह चेतना सच्ची और व्यापक होनी चाहिए। इसी से वह बुराई से बचेगा और भलाई करेगा। तभी हम उसे *चिह* कह सकते हैं।

ऊपर की विवेचना से यह स्पष्ट हो जाता है कि *चिह* से कर्म की भावना प्रेरित होती है। *लिभङ* उसे ठीक रास्ता दिखाता है। *इ* उस कर्म को व्यावहारिक रूप देता है और *लि* उसे मूर्तिमान कर उसमें नियमितता पैदा करता है। इन चारों गुणों का एक दूसरे से सम्बन्ध है। किसी भी शुभ काम के करने में इन चारों गुणों की आवश्यकता होती है, अन्यथा *लि* के बिना *इ* बेईमानी हो जाता है और *लिभङ* के बिना *लि* उच्छृंखलता। इसी प्रकार *चिह* के बिना *लि* ख़ुशामद हो जाता है। यह सब *लि* की ही भाँति दिखायी देंगे परन्तु वह वास्तव में *लि* नहीं है। इसी तरह *लि* के बिना *इ* भद्दापन हो जाता है और *लिभङ* के बिना *इ* पिलपिला बन जाता है। फिर *चिह* के बिना *इ* बे-सिर-पैर की बात हो जाता है। ये सब वास्तव में *इ* नहीं हैं। इसी तरह बिना *लि* के *लिभङ* मिथ्या है। बिना *इ* के *लिभङ* तुच्छ है और बग़ैर *चिह* के *लिभङ* अनाचार है। ये *लिभङ* हैं ही नहीं। इसी तरह *लि* के बिना *चिह* अराजकता है और *इ* के बिना *चिह* हिंसा है और *लिभङ* के बिना *चिह* कुरूपता है। ये सब *चिह* हैं ही नहीं।

ये चारों सद्‌गुण यदि उलट-पुलट किये जायँ तो देशद्रोहियों और पापियों की चाँदी ही चाँदी है। इसी व्याख्या के अनुसार हमारे दैनिक जीवन के दो आवश्यक अंग हैं। एक का सम्बन्ध हमारे भोजन, वस्त्र, आश्रय और आवा-जाही के भौतिक साधनों से है और दूसरे का सम्बन्ध उनके सदुपयोग से। पहला मानव-जीवन का भौतिक पहलू है और दूसरा आध्यात्मिक।

देश में भी आज देश का क्रय-विक्रय करनेवाले भी मौजूद हैं और देशद्रोही भी; इसी प्रकार बेईमान सरकारी अफसर भी मौजूद हैं और कम्यूनिस्ट भी। और ये सब इसीलिए हैं कि हमने इन सद्गुणों की अवहेलना की है। यदि हम फिर से गौरव के शिखर पर पहुँचना चाहते हैं तो हमें इन सद्गुणों को देश के नव-जीवन में सिद्धान्त की भाँति व्यवहार में लाना होगा।

इस स्थान पर *लि*, *इ*, *लिअङ* और *चिह* का अर्थ भी जान लेना आवश्यक है। यद्यपि ये चारों सद्गुण सदा से देश के मूलाधार समझे गये हैं फिर भी युग और काल-परिवर्तन के साथ-साथ यह आवश्यक है कि इन सिद्धान्तों को नये अर्थ प्रदान किये जायँ। आजकल की अवस्था को देखते हुए हम इन चारों सद्गुणों का नीचे लिखा अर्थ कर सकते हैं:—

लि का अर्थ है अपनी वृत्तियों (इसमें मस्तिष्क और हृदय दोनों की वृत्तियाँ शामिल हैं) में नियमितता पैदा करना।

इ का अर्थ है (सभी बातों में) सद्-आचरण करना।

लिअङ का अर्थ है सद्विवेक; । इसमें व्यक्तिगत, सार्वजनिक और राष्ट्रीय जीवन के हर विषय सम्मिलित हैं।

चिह का अर्थ है वास्तविक आत्मचेतना। इसमें संयम और आत्म-सम्मान दोनों आ जाते हैं।

लि का शाब्दिक अर्थ है विचार। प्राकृतिक विषयों में यह प्राकृतिक नियम बन जाता है और सामाजिक विषयों में सामाजिक नियम। इसी प्रकार राष्ट्र के सम्बन्ध में यह अनुशासन बन जाता है, इसलिए *लि* का अर्थ हृदय और मस्तिष्क का नियमित संचालन करना अधिक युक्ति-युक्त होगा।

इ का शाब्दिक अर्थ है उचित। कोई भी व्यवहार जो प्राकृतिक नियम के अनुकूल हो, सामाजिक नियमों के अनुसार हो और राष्ट्रीय अनुशासन के विपरीत न पड़ता हो, उचित समझा जायगा। यदि कोई काम उचित नहीं है, या किसी काम को उचित तो समझा जाय, पर उसको व्यवहार में न लिया जाय, तो वह काम स्वभावतः ठीक नहीं है, इसलिए उसे हम *इ* नहीं कह सकते।

लिअङ का शाब्दिक अर्थ है स्पष्ट। यह हममें भलाई और बुराई को पहचानने का विवेक प्रदान कर देता है। जो बात *लि* और

गिरना।" यह कनफ्यूशियस की एक प्रसिद्ध कहावत है और इससे मेरा तात्पर्य स्पष्ट हो जाता है। अच्छी बुरी वस्तुओं की छान-बीन इ सिद्धान्त के अनुसार होनी चाहिए। परिस्थिति के अनुसार उचित काम होना चाहिए। एक बूढ़े आदमी के लिए यह अनुचित नहीं है कि वह रेशमी कपड़े पहने, गोश्त खाये और खूब आराम करे; लेकिन एक नव-युवक को कठिनाइयाँ झेलने की आदत होनी चाहिए। जाड़े के दिनों में जो बात उचित हो यह जरूरी नहीं है कि वही गरमियों में भी हो। जो बात देश के उत्तरी विभागों के लिए ठीक है वही दक्खिनी प्रदेशों के लिए सम्भव है ठीक न हो। इसी तरह से विभिन्न स्थितियाँ भी विभिन्न रीति से परिस्थिति पर प्रभाव डालती हैं। एक शासक या एक सेनानायक को कुछ न कुछ अधिकार प्राप्त होने चाहिए और उनके अनुयायियों को अनुशासन के नीचे रहना चाहिए। इस तरह जो उचित है उस पर भी ऋतु, काल, परिस्थिति और अवस्था का प्रभाव पड़ता है। विभिन्न परिस्थितियों में विभिन्न अवसरों पर वस्तुओं की अच्छाई-बुराई बदलती रहती है।

लि सिद्धान्त के अनुसार ही वस्तुओं का प्रयोग करना चाहिए अर्थात् हम जैसा ऊपर कह आये हैं प्राकृतिक नियम, सामाजिक नियम और राष्ट्रीय अनुशासन को ध्यान में रख कर ही चीजों का प्रयोग करना उचित होगा।

इन चारों सद्गुणों के पारस्परिक सम्बन्ध की हम यथोचित विवेचना कर चुके। दैनिक जीवन में तो इनकी अत्यन्त आवश्यकता है। इन सद्गुणों को हमें सावधानी से व्यवहार में लाना चाहिए। इनमें से एक की भी उपेक्षा करने से हमारा जीवन कलंकित हो सकता है।

अब हम नव-जीवन-आन्दोलन के कार्यक्रम पर भी ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं। इसमें सबसे पहले संगठन का काम है। प्रान्तीय समितियों द्वारा नव-जीवन-आन्दोलन का संचालन होना चाहिए। आन्दोलन चलाने के लिए म्युनिसिपैल्टियों और जिलों में भी समितियाँ उन्हीं के अधीन काम करेंगी।

प्रान्तीय, म्युनिसिपल और जिला समितियों का नियन्त्रण उक्त स्थानों के सबसे अधिक विश्वस्त व्यक्तियों द्वारा होना चाहिए। दीवानी और फौजदारी के मुहकमे, शिक्षा-विभाग, जनरक्षा-विभाग और स्थानीय

चीनी शब्द *सिंहन* का अर्थ व्यापक और संकुचित दोनों प्रकार से किया जा सकता है। संकुचित अर्थों में उससे तात्पर्य है चलना और उसका व्यापक अर्थ है कर्म। दैनिक जीवन के अन्तर्गत हर प्रकार का मानवी व्यवहार इस *सिंहन* शब्द के अन्तर्गत आ जाता है। डाक्टर सुक्यात सेन ने "जनता के तीन सिद्धान्तों" में भोजन, वस्त्र, आश्रय और आवा-जाही के साधनों की चर्चा करते हुए *सिंहन* शब्द को केवल आवा-जाही—चलने का ही बढ़ा हुआ रूप—के अर्थों में प्रयोग किया है। अपने *राष्ट्रीय पुनर्निमाण के सिद्धान्तों* में उन्होंने कहा है—"लोगों को यथेष्ट भोजन मिले इसलिए लोगों की खेती की उपज बढ़ाने में सरकार को हाथ बँटाना चाहिए। लोगों को यथावश्यक वस्त्र देने के लिए सरकार को कताई-बुनाई के धन्धों को बढ़ाना चाहिए। इसी तरह लोगों को अच्छा आश्रय मिले, इसके लिए मकान को बढ़िया बनाने में सरकार को मदद देनी चाहिए, और यातायात के साधनों को उन्नत करने के लिए सरकार को अच्छी सड़कें और नहरें बनवानी चाहिए।"

उपरोक्त उद्धरण में डाक्टर सुक्यात सेन ने *सिंहन* शब्द का प्रयोग संकुचित अर्थों में किया है। किन्तु यहाँ मैं *सिंहन* शब्द का प्रयोग संकुचित और व्यापक दोनों अर्थों में करूँगा। अब हमको यहाँ यह देखना है कि भोजन, वस्त्र, आश्रय और कर्म पर इन चारों सद्गुणों का प्रयोग किस प्रकार किया जाय। वस्तुओं की प्राप्ति, उपयुक्त वस्तुओं का संकलन और इनके उपयोग की विधि, इन्हीं तीन विभागों में जीवन-यापन के साधनों का विभाजन किया जा सकता है। यहाँ इसी की अलग-अलग चर्चा की जायगी।

लिअङ के सिद्धान्त के अनुसार हमें वस्तुओं को प्राप्त करने की चेष्टा करनी चाहिए। यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि कौन-सी चीज हमारी है और कौन-सी नहीं। जो चीज हमारी नहीं है उसे हमें नहीं लेना चाहिए। दूसरे शब्दों में दैनिक आवश्यकता की चीजों को हमें या तो अपने प्रयत्न से प्राप्त करना चाहिए या फिर दूसरे उपायों द्वारा। दंगा-फसाद को रोकना चाहिए। दूसरे को चूसकर जोंक की तरह जीवन बिताना कोई अच्छा उदाहरण नहीं। बेजा तरह से देना और लेना इन प्रवृत्तियों से भी हमें बचना चाहिए। "भूख से मरना उतनी बुरी बात नहीं है, जितना मनुष्यत्व से

जाँच के लिए समितियों को अपने प्रतिनिधि भेजने चाहिए। ऐसे व्यक्तियों को जिन्होंने अच्छा काम किया है पुरस्कार भी देना चाहिए। इस आन्दोलन की वृद्धि के लिए साप्ताहिक छुट्टियों, साधारण अवकाश और विश्राम के समय का उपयोग करना चाहिए। लोगों के दैनिक कार्यक्रम में इस आन्दोलन के काम से कोई बाधा नहीं पड़नी चाहिए।

संक्षेप में नव-जीवन-आन्दोलन का उद्देश्य यह है कि अवैज्ञानिक जीवन की जगह वैज्ञानिक जीवन को प्रोत्साहन दिया जाय, इसके लिए हमें अपने नित्यप्रति के जीवन में लि, इ, लिअरू और चिह इन चार सद्‌गुणों का उपयोग करना होगा। यह आशा की जाती है कि इन सद्‌गुणों के पालन करने में जनवर्ग की उद्दंडता और अशिष्टता दूर हो जायगी और हमारी जनता का जीवन उनकी संस्कृति और उनके औद्योगिक मापदंड के अधिक अनुकूल हो जायगा। इस औद्योगिक उन्नति का ही यह परिणाम है कि आज हमारे भीतर अविश्वास, ईर्ष्या, घृणा और पारस्परिक झगड़े आदि बर्बरता की निशानियाँ भरी पड़ी हैं। इनसे छुटकारा पाने के लिए हमें औद्योगिक शिक्षा का काम तुरन्त शुरू कर देना चाहिए।

इन सद्‌गुणों का पालन करने से आशा है हमारे अन्दर से भिखमंगापन और डकैतीवाली प्रवृत्तियाँ दूर हो जायँगी। हमारे अफ़सर ईमानदार और देशभक्त बन जायँगे। बेईमानी बन्द हो जायगी। लोग अच्छे-अच्छे व्यवसायों में लग जायँगे। हमारे देश की जो इतनी ग़रीबी है, उसका प्रमुख कारण यह है कि बहुत थोड़े व्यक्ति उत्पादन करते हैं और बहुत अधिक मनुष्य उसका उपयोग; इसलिए बहुत आदमियों को समाज में परोपजीवी जीवन बिताना पड़ता है। इस स्थिति को सुधारने के लिए हमें इन चारों गुणों के सम्पादन पर ज़ोर देना होगा और जन-साधारण में यह भाव उत्पन्न करना होगा कि वे खर्च कम करें और काम ज्यादा करें। सरकारी अफ़सरों को अधिक ईमानदार होना चाहिए। इन्हीं कारणों से चीन के प्राचीन राजकुल चि और चु को सफलता मिली थी।

यह आशा की जाती है कि इन गुणों का पालन करने से सामाजिक और राजकीय अव्यवस्था दूर हो जायगी। हमें अधिक से अधिक लोगों को सैनिक शिक्षा देनी है और इसके लिए आवश्यक है कि हम अपने

सैनिक अधिकारियों का एक-एक प्रतिनिधि और सामाजिक संस्थाओं के भी प्रतिनिधि इन समितियों में रह सकते हैं।

गाँव का मुखिया किसानों का, ट्रेड यूनियन के उत्तरदायी व्यक्ति या मैनेजर मजदूरों का, चेम्बर ऑव कामर्स के ट्रस्टी व्यापारियों का तथा विद्यार्थियों का उनके शिक्षक पथ-प्रदर्शन करें। इसी प्रकार मुल्की मन्त्री पोलोटिकल या सैनिक दल के प्रतिनिधि सिपाहियों का न्याय और शासन-विभागों के कर्मचारियों का उनके अफसर और स्त्रियों का उनकी विशिष्ट संस्थाएँ—किन्तु स्थानीय नव-जीवन-समितियाँ इन सबका नियन्त्रण करें।

इस आन्दोलन का काम होगा, (१) अन्वेषण करना, (२) योजनाएँ बनाना, और (३) निर्मित योजनाओं को व्यावहारिक रूप देना। इसके प्रसार के लिए समिति के धन को बहुत बचा-बचा कर खर्च करना होगा। इन सब कामों के लिए या तो स्थानीय संस्थाओं से धन इकट्ठा करना चाहिए या फिर आन्दोलन के संगठन-कर्ताओं से। जनता से कोई चन्दा नहीं लेना चाहिए। समिति की केन्द्रीय शाखा सारे आन्दोलन के लिए देशव्यापी नीति निश्चित करेगी। प्रारम्भ में आन्दोलन केवल दो बातों अर्थात सद्वृत्ति और सफाई सिखाने तक सीमित रहेगा। इस आन्दोलन का श्रीगणेश पहले अपने आपसे करना चाहिए। फिर उसे सरकारी नौकरों में फैलाना चाहिए और तब धीरे-धीरे उसका प्रचार साधारण जनता में होना चाहिए। ध्यान रहे कि पहले सीधी-सीधी बातों पर इन सिद्धान्तों के प्रयोग होना चाहिए और बाद में जटिल समस्याओं पर। इसी प्रकार पहले सीधी-सादी और ऐसी बातें उठानी चाहिए जिनके पूरा करने में कोई खर्च न पड़े; और तब स्कूल, दफ्तर, स्टेशन, बन्दरगाह, थियेटर, पार्क इत्यादि सार्वजनिक संस्थाओं और सार्वजनिक स्थानों को सुधारना चाहिए।

इस आन्दोलन के व्यावहारिक उपयोग में शिक्षा देने के पहले अपना उदाहरण उपस्थित करना अधिक आवश्यक है। शिक्षा तो बाद में दी जानी चाहिए। जनता को अपने व्यक्तिगत उदाहरण से, और फिर व्याख्यान देकर या दिलाकर, चित्र दिखाकर और नाटकों और बाइसकोप के प्रदर्शन से तथा साहित्य के प्रकाशन द्वारा शिक्षित बनाइये। इसके बाद समय-समय पर आन्दोलन की प्रगति की



देशवासियों में व्यवस्था, सफाई, सादगी, फुर्ती, ठीक समय पर काम करने और कम खर्च करने की आदतों को बढ़ावें। हमको अपने अन्दर व्यवस्था रखनी होगी, संगठन को दृढ़ बनाना होगा, अनुशासन और उत्तरदायित्व की भावना की वृद्धि करनी होगी और किसी भी क्षण अपने देश पर मरने के लिए तैयार रहना पड़ेगा।

संक्षेप में, चीनी जनता में औद्योगिक-शिक्षा की वृद्धि से सुरुचि बढ़ेगी। यदि हम उत्पादन अधिक करेंगे तो आर्थिक दृष्टि से हमारा देश धनी होगा। जितने ही अधिक हम देशभक्त, शिक्षित और अपनी रक्षा करने के सुयोग्य बनेंगे, उतना ही हमारा देश सुरक्षित रहेगा। यह वैज्ञानिक जीवन *लि*, *इ*, *लिअङ* और *चिह* के सिद्धान्त पर स्थित है। इन चारों सद्गुणों का व्यवहार भोजन, वस्त्र, आश्रय और कर्म पर बारी-बारी से हो सकता है। यदि हम यह कर लें तो हम अपनी जनता के दैनिक जीवन में क्रान्ति पैदा कर देंगे और अपने देश को ठोस और सुदृढ़ नींव पर स्थित कर देने में समर्थ होंगे।

एक चीनी कहावत में किसी घनी जनसंख्या वाले विस्तृत भू-प्रदेश का उल्लेख किया गया है। भारत और चीन दोनों ही घनी आबादी वाले विस्तृत प्रदेश हैं। इसके अलावा दोनों देशों की भूमि सुन्दर और उर्वर तथा उसके निवासी ईमानदार सच्चरित्र और परिश्रमी हैं। धरती से उत्पन्न पदार्थ और श्रम से उपार्जित फूलफल न केवल हमारे राष्ट्रीय जीवन की आवश्यकता की पूर्ति के लिए पर्याप्त हैं अपितु सारे जगत की समृद्धि में भी सहायक हो सकते हैं।

हमारी सभ्यता सहस्रों वर्ष पूर्व उस अतीत युग से प्रारम्भ हुई है जो अज्ञात है। निश्चित ऐतिहासिक आधार के अनुसार चीन में ईसा से २,६६७ वर्ष पूर्व ह्वाङ्गति साम्राज्य की स्थापना हो गयी थी। इसके अनुसार चीन का इतिहास साढ़े चार सहस्र वर्ष पुराना है। परन्तु प्राग ऐतिहासिक युग कहीं अधिक पुरातन और घटनापूर्ण रहा होगा। चीन की कुछ पुरानी पुस्तकों के अनुसार चीनी संस्कृति की अठारह सहस्राब्दियाँ ह्वाङ्गति साम्राज्य के पूर्व बीत चुकी हैं। कुछ पुस्तकों में तो यहाँ तक दावा किया गया है कि चीनी संस्कृति का आरम्भ ह्वाङ्गति साम्राज्य से भी पचास हजार वर्ष पूर्व हो चुका था। पर यह उल्लेख इतने पुरातन हैं कि उन पर विश्वास नहीं किया जा सकता, यद्यपि वे सत्य हो सकते हैं। ह्वाङ्गति साम्राज्य के बाद ही उस असन्दिग्ध ऐतिहासिक युग का आरम्भ होता है जिसकी घटनाओं की प्रामाणिकता स्पष्टतः सिद्ध हो जाती है। भारत का ऐतिहासिक अतीत यद्यपि यथेष्ट रूप में उल्लिखित नहीं मिलता तथापि बौद्ध धर्म सम्बन्धी चीनी पुस्तकों में हुई तत्सम्बन्धी चर्चा से इतना आभास तो मिल ही जाता है कि प्राचीन भारत की स्थिति प्रायः प्राचीन चीन के समान ही थी। इतिहास के आधुनिक विद्वान यह स्वीकार करते हैं कि वेदों की रचना का काल ईसा से तीन हजार वर्ष पूर्व से लेकर दो हजार वर्ष पूर्व तक किसी तरह कम नहीं हो सकता। इस प्रकार भारतीय संस्कृति के पाँच सहस्र वर्ष पुरानी होने में किसी प्रकार का सन्देह नहीं किया जा सकता।

किसी भी देश की सभ्यता के इतिहास को समझने के लिए उस देश की लिपि के आविष्कार का ज्ञान एक कुंजी के समान है; क्योंकि किसी भी देश की सभ्यता की प्रगति का सब से बड़ा और आवश्यक अंग वहाँ की लिपि का आविष्कार माना जा सकता है। चीनी लिपि

भारत और चीन का सांस्कृतिक विनिमय

[लेखक—प्रोफ़ेसर ताञ्युङ शान]

समय तीर की भाँति उड़ता चला जाता है। तीन वर्ष हुए जब मैं भारत से अपनी मातृभूमि के लिए रवाना हुआ था। इस अवधि में एक दिन भी ऐसा नहीं बीता जब मुझे भारत का ध्यान न आया हो। मुझे 'शान्ति निकेतन' से वैसा ही प्रेम है जैसा अपने गाँव से और भारत से वैसा ही स्नेह है जैसा अपनी मातृभूमि से। भारत में मेरा पुनरागमन मेरे लिए जिस हर्ष का कारण हो रहा है उसे शब्दों द्वारा अभिव्यक्त नहीं कर सकता।

भारत और चीन स्वभावतः दो सहोदरा भूमियों की तरह हैं। उनके साम्य और उनका सम्बन्ध, आन्तरिक, अनेक और महान हैं। यदि हम जगत के अनेक राष्ट्रों की भौगोलिक स्थिति और इतिहास पर दृष्टि डालें तो हमें कोई भी दो देश ऐसे नहीं मिलते जिनसे इन दोनों देशों की तुलना की जा सके—चाहे जिस दृष्टि और जिस कोण से देखा जाय यह बात सत्य है।

हमारे ये दोनों उज्ज्वल और महान् देश एशिया महाद्वीप के प्रमुख अंग हैं। यद्यपि भारत उसके दक्षिण-पश्चिम और चीन उसके उत्तर-पूर्व दो परस्पर विरोधी दिशाओं में सगर्व फैले हुए हैं, तथापि किसी रथ के दो पहियों अथवा किसी पक्षी के दोनों पक्षों की तरह अथवा किसी एक ही व्यक्ति के दोनों हाथ, दोनों पैर या दोनों नेत्रों की भाँति एक ही मुख्य आधार से जुड़े हुए हैं। और दोनों के बीच उज्ज्वल, विशाल हिमाचल मेरुदंड, स्कन्ध, ग्रीवा अथवा स्नायु-तन्तु-केन्द्र के रूप में समान रूप से स्थित है। यद्यपि इन दोनों देशों की सीमाएँ पृथक रूप से निर्धारित हैं तथापि उनके भौतिक स्वरूप में बड़ा साम्य है।

धूमिलाभा में उनकी सभ्यता भी लय हो गयी। उनकी प्राचीन भूमि और नगरियाँ पुरातत्ववेत्ताओं के शोध और अनुशीलन की सामग्री मात्र रह गयी हैं जिन्हें खोद-खोद कर विद्वान संचय करते हैं और जिनकी गुणगाथा गाकर कवि सन्तोष-लाभ। काल-प्रवाह ने न जाने कितने राष्ट्रों का निर्माण और लोप किया, न जाने कितनों का उत्थान और पतन हुआ; पर हमारे ये दो राष्ट्र, भारत और चीन, आरम्भ से लेकर आज तक, सहस्राब्दियों का सन्तरण करते हुए मस्तक ऊँचा किये दृढ़ता के साथ खड़े रहे हैं। यद्यपि हमारी भूमि विदेशियों द्वारा एकाधिक बार निर्दलित और विलोड़ित की गयी, हमारा आर्थिक और राजनीतिक शोषण किया गया तथापि हमारी उन्नत परंपराओं और संस्कारों ने हमारे उपदेश और आदर्शों ने बर्बर और हिंस्र आक्रमणकारियों को बहुधा ग्रहण करके उन्हें शिक्षित और सुसंस्कृत बनाया और इस प्रकार ये दोनों राष्ट्र न केवल अपने अस्तित्व की रक्षा कर सके वरन् अस्थायी रूप से चमकते भी रहे हैं। भारत और चीन के महान् इतिहास की यही अभिनव विशेषताएँ रही हैं।

चीन के राष्ट्रीय चरित्र का मूल और प्राण प्रेम तथा विनम्रता है। इन दोनों गुणों का समावेश 'जेन' शब्द में होता है। भारत के राष्ट्रीय चरित्र की विशेषता 'दया' और 'शान्ति' के आधार पर स्थित है, जिनका प्रतिनिधित्व 'अहिंसा' शब्द करता है। प्रेम और नम्रता, दया तथा शान्ति यद्यपि विभिन्न रूप में व्यक्त होते हैं; पर मूलतः उनका भाव एक ही है।

चीनी जीवन का निर्वाह करने के लिए उस 'मध्यमावृत्ति' के मार्ग को ग्रहण करता है जिसे 'स्वर्ण-पथ' कहा जाता है। इसके फलस्वरूप जीवन और प्रकृति के प्रति वह सन्तुलन स्थापित करने की दृष्टि ग्रहण करता है। भारतीय जीवन में निग्रह को उसके आधार के रूप में ग्रहण करता है; अतः प्रकृति पर विजयी होकर उसे अपने में लय करने की प्रक्रिया उसके जीवन की धारा बन जाती है। चीनी और भारतीयों में समान रूप से पितरों और गुरुजनों के प्रति आदर, अतिथियों और कुटुम्बीजनों के प्रति प्रेम, समान रूप से प्रचलित है; जिसके फलस्वरूप पारिवारिक जीवन युग-युग से एक ही रूप में बराबर बना हुआ है। भारतीय अपनी जन्मभूमि से अलग होना नहीं चाहता, अपनी कुल-परम्परा और उसके गौरव की रक्षा में संलग्न रहता है और यही

ह्वाङ्गति साम्राज्य के समय पूर्णतः प्रचलित थी। इससे यह स्वीकार करना स्वाभाविक है कि उस युग के बहुत वर्ष पूर्व ही उसका जन्म और विकास हो गया होगा। प्राचीन चीनी ग्रन्थों में ऐसे अनेक उल्लेख मिलते हैं जो इस बात को सिद्ध करते हैं। फ़ायुवाङ-चु-लिङ नामक चीनी ग्रन्थ में एक महत्त्वपूर्ण अनुच्छेद भारतीय लिपि के सम्बन्ध में मिलता है। यह ग्रन्थ ताङ्ग राज्यवंश के समय प्रसिद्ध भिक्षु ताउशिह द्वारा लिखा गया था। उसमें कहा गया है: –

"प्राचीन काल में लिपियों के तीन महान आविष्कारक हुए हैं। प्रथम ब्रह्मा हुए जिनके लिखने की पद्धति बायें ओर से दाहनी ओर को थी। दूसरे हुए खारू जो दाहनी ओर से बायीं ओर को लिखते थे और तीसरे थे त्सङ्क्या जो ऊपर से नीचे की ओर लिखते थे।"

यहाँ ब्रह्मा से अर्थ ब्राह्मी लिपि, खारू से खरोष्ठी और त्सङ्क्या से मतलब है चीनी शब्द चित्रों का। इन चीनी शब्द-चित्रों के प्रवर्तक थे त्सङ्क्या जो ह्वाङ्गति सरकार में उच्चपदस्थ कर्मचारी भी थे। वास्तव में त्सङ्क्या चीनी लिपि के आविष्कारक न थे। उन्हों ने चीन के लिपि-साहित्य का संकलन और सम्पादनमात्र किया था। उपर्युक्त पुस्तक में इसी सम्बन्ध में आगे यह भी लिखा है कि "ब्रह्मा सबसे बड़े थे और खारू उनसे छोटे। ये दोनों म्लेच्छ (भारत) के निवासी थे। त्सङ्क्या, तीनों में सबसे छोटे थ जो मध्य राज्य (चीन) में रहते थे।"

इस प्रकार यह सिद्ध हो जाता है कि भारतीय लिपि का निर्माण निस्सन्देह अशोक से न जाने कितनी शताब्दियों पूर्व हो गया रहा होगा। उसका समय कम से कम यह तो अवश्य था जब त्सङ्क्या ने चीनी लिपि-साहित्य का संकलन किया था। हाल में पुरातत्त्ववेत्ताओं ने भारत में अनेक ऐतिहासिक शोध किये हैं और मुझे विश्वास है कि मैंने जो कुछ कहा है उसकी पुष्टि उन नयी खोजों से मिले प्रमाण के द्वारा हो जायगी। आज यह बहुत कुछ स्पष्ट हो गया है कि भारतीय और चीनी संस्कृतियों के उत्थान के युग और उनकी घटनाओं के सम्बन्ध में बहुत कुछ साम्य है।

प्राचीन जगत के सभ्य देशों में मिस्र और बाबुल तथा चीन और भारत चार ही मुख्य हैं। पर पुरातन मिस्र और बाबुल आज केवल इतिहास के पृष्ठों के उल्लिखित घटना के रूप में रह गये हैं। न केवल उन देशों के मूल-निवासी लुप्त होगये अपितु अतीत की

'पंच विद्या' का उदय होगया था, जिसे हम चीनी भाषा में 'वू मिङ' कहते हैं। शब्द विद्या, शिल्प कर्मस्थान-विद्या चिकित्सा-विद्या, हेतु विद्या और आध्यात्म विद्या भारत की पंच विद्याओं में थीं। चीन में 'लु-यि' (षष्ठ-कला) का उदय बहुत प्राचीन काल में होगया था। 'लि' (नीति-शास्त्र), 'यो' (संगीत), 'सिह' (धनुर्विद्या), 'यू' (अश्व-विद्या) 'शू' (लिपि-शास्त्र) और 'सू' (गणित) ये षष्ठ-कला के नाम से प्रचलित थे। इनके सिवा चिकित्सा, शस्त्र-चिकित्सा, ज्योतिष, निर्माणकला आदि अनेक शास्त्र प्रचलित थे। आधुनिक सभ्यता आज जल पोत, ट्रेन, वायुयान रण-पोत, पनडुब्बे, तोप, बन्दूक, टैंक और गोलेबारूद तथा विषैली गैस और प्राण-नाशक किरणों पर ही तो गर्व करती है, जो उसके विज्ञान ने उत्पन्न किये हैं। पर भारत और चीन में संहार और हिंसा तथा रक्त-पान के विविध और भयावने साधनों की उत्पत्ति में ज्ञान तथा विज्ञान का प्रयोग करने की प्रवृत्ति वस्तुत: नहीं थी।

चीन और भारत के सांस्कृतिक सम्बन्ध के विषय में चीन के अनेक प्राचीन ग्रन्थों में अनेक उद्धरण मिलते हैं। 'लीह्-सु', 'यो-सु-चयी', 'लिसिङ-च्वाङ', 'सिह्-लाओ-चिह्', "टिंग-सु", 'चिङ्सु', 'फूत्सु तुङ्गचि' आदि अनेक ग्रन्थों की तालिका उपस्थित की जा सकती है जिनमें तत्सम्बन्धी वर्णन मिलते हैं। यद्यपि अतीत के उस युग का वास्तविक चित्र पाना सरल नहीं है, पर उससे इतनी बात तो स्पष्ट हो ही जाती है कि इन दोनों देशों का पारस्परिक सम्बन्ध अति आरम्भिक काल से आरम्भ होकर बहुत दिनों तक चलता रहा है। जिस समय बौद्ध धर्म ने चीन में प्रवेश किया उस समय से तो इन देशों के सम्बन्ध का ऐतिहासिक और निश्चित उल्लेख मिल ही जाता है। ईसवी सन ६७ में हान राज्यवंश के 'मिङ-ति' साम्राज्य के दसवें वर्ष में बौद्ध-धर्म के चीन में प्रवेश करने का उल्लेख मिलता है। कहा जाता है कि उस समय चीनी सम्राट ने अपनी राजनगरी 'लाओ-याङ्ग' में उसका स्वागत किया और उसे अपना संरक्षण प्रदान किया; पर इसका यह अर्थ नहीं है कि बौद्ध-धर्म ने वास्तव में इसी काल में अपना कदम चीन की भूमि में रखा और न इसका यही अर्थ है कि बौद्ध-धर्म की स्वीकृति के बाद ही भारत और चीन का सांस्कृतिक सम्बन्ध आरम्भ हुआ। इस घटना का अर्थ केवल इतना ही है कि पहले पहल

प्रवृत्ति चीनियों में भी होती है। सामाजिक जीवन में चीनी 'हानि-लाभ' की स्वार्थमयी प्रवृत्ति को घृणित समझता है और न्याय तथा ईमानदारी की भावनाओं पर जोर देता है। और यही बात भारतीयों में भी होती है। नर-नारी के सम्बन्ध में भारतीय सदाचरण, पवित्रता तथा लज्जा को अत्यधिक मूल्य प्रदान करता है। चीनी भी इन्हीं बातों पर जोर देता है। इन सबके सिवा दोनों देशों के सन्तों, महात्माओं तथा ऋषियों ने जिन महान् और उज्ज्वल नैतिक आदर्शों का उपदेश किया है वे भी प्रायः समान ही हैं। कनफ्यूशियस ने जिस "वूचाङ्ग" का उपदेश चीन में किया है उसके अनुसार पाँच महान् नैतिक आदर्शों की स्थापना की गयी है। इनमें 'जेन' (उदारता), 'मि' (सचाई) लि (औचित्य) चिह् (विवेक) और हिमिन (विश्वासपात्रता), यही कनफ्यूशियस द्वारा उपदिष्ट 'वूचाङ्ग' है। भारत में भगवान बुद्ध और महात्मा वर्धमान ने जिस 'पंच-शील' का उपदेश किया है उसमें 'सत्य, अपरिग्रह, अहिंसा, अस्तेय, और ब्रह्मचर्य का समावेश किया गया है। चीनी सृष्टि के मूल में 'चिह्जेन्युङ्ग' को उसके मौलिक नैतिक विधान के रूप में स्वीकार करता है। 'चिह' का अर्थ है विवेक जेन का उदारता और 'युङ्ग' का साहस! उसका विश्वास है कि ये ही वे आधार हैं जिन पर जीवन आश्रित है। भारतीय 'शील' समाधि और प्रज्ञा को जीवन की दिशा का संकेत करने वाले प्रकाश के रूप में ग्रहण करता है। इस प्रकार चीन और भारत के सांस्कृतिक साम्य के अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं जिनके लिए यहाँ पर्याप्त स्थान नहीं है।

यदि हम दोनों देशों के सांस्कृतिक विनिमय पर दृष्टिपात करते हैं, तो देखते हैं कि उसका सूत्रपात कम से कम दो सहस्र वर्ष पूर्व से ही ऐसे युग में होगया है जब वर्तमान की कतिपय जातियों और राष्ट्रों के अस्तित्व का भी पता न था। जब वे लोग विशुद्ध बर्बर स्थिति में थे, हमारे ये दोनों राष्ट्र उज्ज्वल तथा गौरवपूर्ण सांस्कृतिक शिखर पर पहुँच गये थे। हमारा ऐश्वर्य और हमारी समृद्धि उस स्थिति को पहुँची हुई थी, जहाँ तक युरोप और अमेरिका के राष्ट्र जीवन के वास्तविक अर्थ के रूप में आज भी नहीं पहुँच पाये हैं। पाश्चात्य सभ्यता की विशेषता तो उसका वह विज्ञान है जिस पर पश्चिमी लोग गर्व करते हैं। भारत और चीन ने अति प्रारम्भिक काल में भी वैज्ञानिक ज्ञान की ओर कदम बढ़ाया था। युगों का समय बीत गया जब भारत में

'त्सिङ' राजाओं के समय तक (ईसवी सन् २२०–२६४) कनफ्यूशियस और ताओ के धार्मिक विचार भारतीय विचार-धारा से दार्शनिक दृष्ट्या मिल कर एक हो गये थे। समन्वय की यह प्रक्रिया ताङ्ग राजाओं (ईसवी ६१८ से ९०६) तक तथा उसके बाद १० वीं शती से १३ वीं शती के 'पाँच-राजवंशों' के समय तक बराबर जारी रही और अधिकाधिक विकसित होती गयी। सुङ्ग राजाओं के समय तक चीनी दार्शनिक विचार पर, चीन के साहित्य और काव्य पर हम स्पष्ट रूप से भारतीय विचारों और साहित्य की छाप पड़ी पाते हैं। चीन के लिपिबद्ध साहित्य की पद्धति पर भी हम भारतीयता की झलक और प्रभाव देखते हैं। संस्कृत वर्णमाला के आधार पर ताङ्ग राजाओं के समय 'शु-वेङ' नामक चीनी बौद्ध भिक्षु ने छत्तीस अक्षरों की वर्णमाला बना डाली और इस प्रकार चीन के शब्द-लिपि में एक क्रान्ति ही उपस्थित कर दी। कला की दृष्टि से चीन ने भारत से बहुत कुछ सीखा। चित्रकला, मूर्तिनिर्माण-कला तथा चीनी बौद्ध मन्दिरों के निर्माण आदि की शिक्षा भारत से ग्रहण की। भारतीय ग्रन्थों के चीनी भाषा में जो उत्तम, उन्नत और सुन्दर अनुवाद हुए हैं वे तो जगत के इतिहास की अमूल्यतम वस्तु हैं। किसी आधुनिक देश का अनुवाद-साहित्य आज भी उसकी तुलना नहीं कर सकता। न केवल प्रमुख बौद्ध साहित्य का अपितु ज्योतिष, गणित, आयुर्वेद सम्बन्धी भारतीय ग्रन्थों के भी अनेक अनुवाद हुए हैं। सैकड़ों जिल्दों में इन अनुवादों की पूर्ति की गयी थी। भारतीय दार्शनिक विचार रीति-रिवाज, संस्कार, परम्परा, आचरण-पद्धति—संक्षेप में सारी भारतीय संस्कृति का चित्र अनूदित चीनी ग्रन्थों में चित्रित हो गया है और इस प्रकार उनके द्वारा चीन का समस्त सांस्कृतिक जीवन प्रभावित हुआ है। कार्यकारण-सम्बन्ध, पुनर्जन्म और कर्मवाद का प्रभाव साधारण चीनी जनता के जीवन पर स्पष्ट रूप से पड़ चुका है।

पर जहाँ भारत का इतना प्रभाव चीन पर हुआ है वहाँ भारत पर चीनी संस्कृति का प्रभाव नहीं के बराबर है। चीन में हम सर्वत्र भारतीय रंग और झलक का दर्शन कर सकते हैं; पर भारत में कहीं चीनी प्रभाव दिखायी नहीं देता। मैंने अनेक बार इसका कारण खोजने की चेष्टा की है। क्या कारण है कि किसी चीनी ग्रन्थ का

इसी युग में जाकर से बौद्ध-धर्म को चीनी सम्राट ने स्वीकार किया और भारत तथा चीन का सम्बन्ध जो शताब्दियों पूर्व से स्थापित था अधिकतर घनिष्ठ तथा निकट का हो गया। इसके बाद भारत के कतिपय महान् ऋषियों, विद्वानों और भिक्षुओं ने चीन आने की कृपा की और इसी प्रकार अनेक चीनी साधु-सन्तों और विद्वानों ने भारत की यात्रा की। विविध युगों के साधुओं के जीवन-चरित्र के सम्बन्ध में लिखी गयी प्रसिद्ध प्राचीन चीनी पुस्तक *लिताई-काओ-संड-च्वाङ* के अनुसार दो सौ चीनी विद्वानों ने भारत जाकर सफलता के साथ ज्ञानार्जन किया और चौबीस भारतीय सन्तों ने चीन जाकर अपने उपदेशामृत से उसे पावन किया। पर इसे ही अलम् न समझना चाहिए। स्मरण रखना चाहिए कि इनके सिवा न जाने कितनी संख्या जिज्ञासु तपस्वियों की होगी जो चीन से भारत गये, जो रास्ते में ही विनष्ट होगये अथवा जिन्होंने ईषणाओं का त्याग करके भावी सन्तति के लिए अपने पार्थिव नाम को भी छोड़ना उचित न समझा। एक प्रसिद्ध चीनी पुस्तक में कहा गया है कि 'इस देश से पश्चिम की ओर ज्ञानार्जन के लिए अनेक भिक्षु जाते हैं पर सैकड़ों में दस भी वापस नहीं आते।'

स्पष्ट है कि हजारों ने भारत की यात्रा की पर चीन वापस लौट कर जाने वाले भाग्यवान थोड़े ही थे। यही बात भारतीय सन्तों के लिए भी होगी। उस समय के मार्ग की कठिनाइयों की कल्पना कैसे की जाय। मध्य एशिया से पैदल यात्रा करनी पड़ती थी। निर्जन मरुस्थलों और घने वनों को पार करते हुए क्षुधा, पिपासा को सहते, हिंस्र और भयावने पशुओं का सामना करते हुए, शीतोष्ण का सुख-दुख सहते हुए वर्षों के कठिन परिश्रम और अध्यवसाय के बाद लक्ष्य तक पहुँचना क्या सरल बात थी ? इन बाधाओं की कल्पना कर लेना कठिन नहीं है और वह साधकों का पवित्र हृदय ही था जो उनका सामना करते हुए भी पथ से विचलित नहीं होता था। अपने दृढ़-संकल्प, धीर, तपस्यापूर्ण पुरुषों की यह निष्ठा और तपस्या न केवल हमारे आदर की वस्तु है प्रत्युत वह आज भी हमें प्रेरणा और जीवन प्रदान कर रही है।

चीनी सभ्यता पर भारतीय संस्कृति का जो प्रभाव पड़ा है उसे शब्दों में व्यक्त करना सम्भव नहीं है। वे राजवंश के [illegible] से लेकर

विक्षुब्ध महोदधि में आ मिली। युरोपियन संस्कृति अभी बालिका है अतएव उसका दर्शन, उसका धर्म और उसकी नैतिकता इतनी परिपुष्ट और सुदृढ़ नहीं हुई हैं कि वह मानव वर्णन की उत्ताल तरंगों का नियमन और नियन्त्रण कर सके। दुर्भाग्य की बात यह है कि उनकी उत्पत्ति के साधन सबके विनाश के कारण बन चले हैं। उनकी स्वार्थ-परता और लोलुपता तथा रुधिर-पिपासा ने उन पापपूर्ण और विनाशक अस्त्र-शस्त्रों का प्रजनन कर डाला है जो विघातक और संहारकारी युद्धों को जन्म प्रदान कर रहे हैं। प्रत्येक राष्ट्र उन्मत्त है, प्रत्येक वस्तु गलत है और प्रत्येक स्थान विक्षुब्ध है। प्रथम महा-युद्ध उस भौतिकवादी उन्मत्तता का प्रथम विस्फोट था। न केवल पश्चिम विक्षिप्त है प्रत्युत पूर्व भी उससे उत्पीड़ित है। विशेष कर हमारे ये दो पुरातन राष्ट्र चीन और भारत—विनाश और संकट के आवर्त्त में पड़ गये हैं। जो संस्कृति जितनी ही अधिक उन्नत है यह उतनी ही अधिक आक्रान्त है। हमारी सभ्यता का उपहास किया जाता है, हमारी राष्ट्रीय पद्धति विशृङ्खल की जाती है, हमारा सामाजिक जीवन उत्पीड़ित किया जाता है और हमारे देशभाई तिरस्कृत किये जाते हैं। परिणामतः पार्थिवता के इस पागलपन से लड़ने में हमारी शक्ति इस प्रकार क्षय हो रही है कि हमें अपने पुरातन महत्वपूर्ण सांस्कृतिक सम्बन्ध को पुनः जोड़ने का अवकाश ही नहीं मिल रहा है।

पर यह सब होते हुए भी हमारे हृदयों का बिलगाव नहीं हुआ है। परस्पर के प्रति प्रेम और सहानुभूति कभी कम न रही, यद्यपि हमारे सम्बन्ध में बाह्य विछिन्नता दृष्टिगोचर हो रही है। जैसे ही अवसर मिलेगा हम उसे ग्रहण करेंगे और अपने पुराने सम्बन्ध को स्थापित कर लेंगे। सन् १९२४ ई० में स्वर्गीय गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने चीन की यात्रा की थी। उन्होंने अपनी यात्रा से चीनियों के जीवन पर जो छाप डाली वह अतीत के सन्तों से किसी प्रकार कम न थी। चीनी गुरुदेव और महात्मा गान्धी को आधुनिक बुद्ध के रूप में देखते हैं। अँगरेजी भाषा में लिखे हुए गुरुदेव के ग्रन्थों का अनुवाद चीनी भाषा में हो गया है। एशियाई राष्ट्रों की एकता का उनका आदर्श चीनियों को प्रिय है। अब समय आ गया है जब चीन और भारत अपने पुराने सांस्कृतिक सम्बन्ध को पुनः सुदृढ़ और परिपुष्ट करें।

अनुवाद संस्कृत में न हुआ जब संस्कृत ग्रन्थों के अनेक अनुवाद चीनी भाषा में हुए। चीनी आचार शास्त्र और चीनीकला का साहित्य वैसे ही अपूर्व, अतुलनीय और अभिनव है जैसे भारतीय दार्शनिक वाङ्मय। फिर भी यह बात क्यों न हुई? मेरी समझ में इसके तीन कारण हो सकते हैं। सम्भव है चीन का प्रभाव पहले कुछ समय तक भारत पर रहा हो पर बाद में काल प्रवाह से धुल-मिट गया हो। यह भी सम्भव है कि भारतीयों की प्रबल धर्म-भावना ने उन्हें विदेश से कुछ लेने और ग्रहण करने के लिए उत्साहित न किया हो और यह भी सम्भव है कि चीनियों की प्रकृति ग्रहणशील रही हो पर वे अपनी संस्कृति के प्रचार के प्रयत्न में संकोच का अनुभव करते रहे हों। जो भी हो, इतना स्पष्ट है कि भारत से चीन ने बहुत कुछ ग्रहण किया पर उसका कोई प्रतिफल भारत को प्रदान न किया। फलतः आज चीन को भारत के प्रति न केवल कृतज्ञ होना है वरन् कृतज्ञता के साथ-साथ जो मिला है उसका प्रतिदान करने का कर्तव्य भी पूरा करना है।

हाँ, अप्रत्यक्ष रूप से चीन ने भारत की एक सेवा अवश्य की है। उसने विविध युगों में भारत से जो पाया उसकी रक्षा करने में, उसका आदर करने में, उसका प्रचार और उसकी उन्नति करने में, अपनी शक्ति अवश्य लगायी है। चीनी भाषा में अनूदित भारतीय ग्रन्थ वास्तव में भारतीय संस्कृति के ही अमूल्य रत्न हैं। भारत की यात्रा करने वाले चीनी यात्रियों के कुछ मौलिक ग्रन्थ—जैसे फाहाङ, हुएनसाङ और इत्सिङ्ग के वर्णन प्राचीन भारत के अध्ययन के लिए अमूल्य सहायक साधन हैं। इन ग्रन्थों का अनेक विदेशी भाषाओं में अनुवाद हो गया है। पर कदाचित् इन सबसे अधिक चीन ने भारत की जो सेवा की है वह है बौद्ध धर्म के सम्बन्ध में उसका कार्य। यह कहा जा सकता है कि बौद्ध-धर्म का उदय भारत में हुआ, विकास हुआ चीन में और तब वह जगती में व्याप्त हो गया।

इस प्रकार भारत और चीन का पुरातन सम्बन्ध स्पष्ट है; पर खेद की बात है कि गत कुछ शतियों से हमारा यह सम्बन्ध विच्छिन्न और अवरुद्ध हो गया है। इसी समय आधुनिक विज्ञानवाद और युरोप का भौतिकवाद प्रबल होकर पशुबल के द्वारा प्रचंड गर्जन करने लगा जिसके फलस्वरूप औद्योगिक क्रान्ति की धारा मानवता के

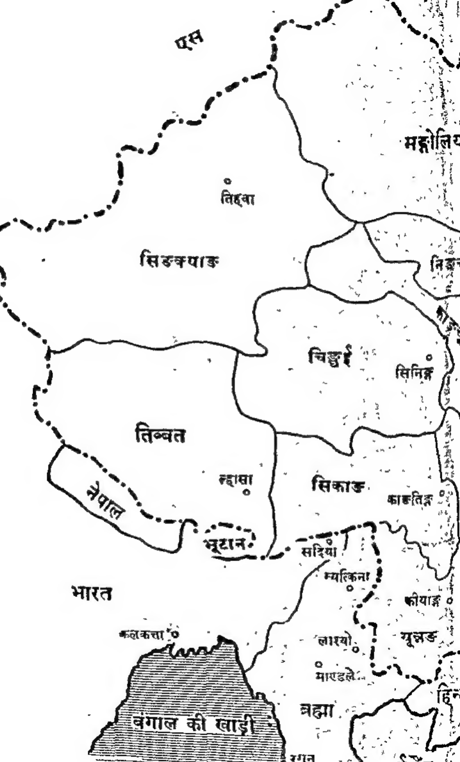
की त्रुटियों का अनुभव कर रहे हैं और उससे विक्षत हुई मानवता के उपचार के लिए चीनी और भारतीय संस्कृतियों से शीतल आलेपन प्राप्त करने की चेष्टा में लगे हैं।

फलतः यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि वह समय आ गया है जब हम भारतीयों और चीनियों को जागृत हो जाना चाहिए और अपने उस पुरातन राष्ट्रीय सम्बन्ध को पुनरुज्जीवित करना चाहिए। इस पारस्परिक सांस्कृतिक विनिमय से हम अपनी सभ्यता को पुनः जागृत कर सकेंगे, जिसके आधार पर विश्व के लिए नव-संस्कृतिका निर्माण होगा जो मानवता को पीड़ा से मुक्त करने में समर्थ होगी।

अतीत में हमने उज्वल जगत की रचना की थी क्या भविष्य में पुनः वैसी ही दुनिया नहीं बना सकते ?

आधुनिक जगत विनाश और अव्यवस्था के गर्त में पहुँचा दिखायी दे रहा है। दुष्टता का जो झंझावात चल रहा है वह हमारी कल्पना के भी परे है। जो देश-प्रेम और शान्ति की जितनी ही बात करता है वह उतना ही घृणा और उतने ही द्वेष मे जलता रहता है। जो मित्रता का जितना ही सम्बन्ध स्थापित करने का दावा करता है वह उतना ही अधिक खड्ग का सहारा लेता है। यह सोचना भी कष्टकर प्रतीत होता है कि खुले आम तथा गुप्त रूप से भी अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण तथा रहस्यमय संहार-साधनों की उत्पत्ति अविच्छिन्न रूप से रातदिन की जा रही है। आज के राजनीतिशास्त्र-विशारद तथा राष्ट्र नायक कहते हैं कि यह सब आधुनिक राजनीतिक समस्या का परिणाम है। अर्थशास्त्री कहता है कि इन सब के मूल में आर्थिक प्रश्न ही मुख्य है। पर मेरी समझ में वस्तुतः जगत के सम्मुख सांस्कृतिक प्रश्न उपस्थित है। यदि सांस्कृतिक दृष्टि से इस समस्या का हल और उपाय नहीं ढूँढ़ा जाता तो वर्तमान दुरवस्था और भावी संकट का निराकरण करना असम्भव हो जायगा। युरोप और अमेरिका के राष्ट्रों की बुद्धि का तो दिवाला पिट चुका है। फलतः पूर्व को—विशेषकर भारत और चीन को – मानवता के कल्याण का उत्तरदायित्व अनिवार्य रूपेण उठाना पड़ेगा। मैं यह इसलिए नहीं कह रहा हूँ कि युरोप या अमेरिका के राष्ट्रों पर आक्षेप करूँ अथवा उनका तिरस्कार करूँ; पर इसलिए कह रहा हूँ कि मुझे इस बात का विश्वास हो गया है कि युरोप का भौतिकवाद तथा विज्ञान का दुरुपयोग ही जगत की पीड़ा के मूल में है। फलतः यह आवश्यक है कि भारत और चीन की पुरातन सभ्यता के प्रकाश में मानवता के लिए नये पथ की स्थापना की जाय।

मेरा यह तात्पर्य नहीं है कि समस्त आधुनिक वैज्ञानिक ज्ञान ठुकरा दिया जाय; पर मैं यह अवश्य मानता हूँ कि इस विज्ञान के उपयोग और प्रयोग पर नियन्त्रण स्थापित किया जाय तथा उन्हें भारतीय और चीनी संस्कृतियों के मूल भावों से ओतप्रोत किया जाय। उनका संचालन और समन्वय, उदारता सामंजस्य, सहानुभूति और सेवा भाव के अनुसार हो। तभी उस नवीन संस्कृति का जन्म होगा जो जगत के निर्माण और मानवता के कल्याण का कारण होगी। युरोप और अमेरिका के मनीषी आज अपनी सभ्यता


रूस
तिह्वा
सिङ्कयाङ
मङ्गोलिय
चिङ्हई
सिनिङ्ग
तिब्बत
ल्हासा
सिकाङ
काङतिङ्ग
नेपाल
भूटान
सदिया
म्यत्किना
भारत
कीयाङ्ग
कलकत्ता
लाश्यो
मांडले
ब्रह्मा
बंगाल की खाड़ी

हीलुङ्क्याङ्ग
चिचिहार
उर्गा
किरिन
चहार
जेहोल
फ्योङ्ग्
मुकदन
सुइयुआन
कालगान
चेङ्गतेह
कीशुई
पेपिङ्ग
निङ्ग्सिया
लान्चाउ
तात्युयान
होपेई
चिनान
शान्सी
शान्तुङ्ग
कालफेङ्ग
होनान
क्याङ्ग्सू
सियान
आन्हवई
नानकिंग
शंघाई
सेच्वान
हाङ्काउ
चुङ्किङ्ग
हूपे
नानकिंग
हाङ्चाउ
चेक्याङ्ग
चाङ्गशा
नानचाङ्ग
क्वेचाउ
हुनान
क्याङ्ग्सी
फूचाउ
फूकेन
कुनमिङ्ग
क्वाङ्ग्सी
क्वाङ्गतुङ्ग
केण्टन
हाङ्काङ्ग
काङ्चाउ
हाइनान
हिन्द चीन